रसूलुल्लाह की पवित्र जीवनी

मुहम्मद ग़ज़ाली

अनुवादक :

मुहम्मद सलीम सिद्दीक़ी

TAJ
PUBLISHERS & PERFUMERS
36 - MOHAMMED ALI ROAD, BOMBAY - 3.

रसूलुल्लाह (सल्ल०) की पवित्र जीवनी

—लेखक—
मुहम्मद ग़ज़ाली

—अनुवादक—
मुहम्मद सलीम सिद्दीक़ी एम.ए.

प्रकाशक

TAJ
PUBLISHERS & PERFUMERS

TAJ
PUBLISHERS & PERFUMERS

पहली बार ११०० अक्तूबर १९८४

मूल्य : ४०-००

TAJ
PUBLISHERS & PERFUMERS

विषय-सूची

क्या ? | कहां ?

अध्याय—६

अध्याय—७

अध्याय—८

जानकारी है कि जिस चौ
आमन्त्रित करता हूं ? मैं ने
परन्तु क्या मैं अपने उद्दे
(धारणा) नैतिकता, व्यवह
लिखी हैं उन सब की वर्णन
पवित्र जीवनी से ही प्राप्त क

'यह पुस्तक रसूलुल्लाह
नहीं करती है, न रसूल के
हैं, और न आप (सल्ल०)
प्रकट हुई है।

यद्यपि कि इन बातों प
मैं ने इस पुस्तक के लिख

निश्चित उद्देश्य था जिस के विषय में मुझे आशा है कि उस तक अवश्य पहुंचूंगा।

आज के मुसलमान रसूल की पवित्र जीवनी के विषय में कुछ मोटी मोटी बातें ही जानते हैं जिन से न हृदय में गति उत्पन्न होती है न उन से इरादों में उभार पैदा होता है, बरन् केवल एक मोरूसी (वंशानुक्रामक) अनुकरण तथा अति न्यून अध्ययन एवं जानकारी है जो 'नबी' (सल्ल०) और आप के 'सहाबा' (साथियों) के आदर सम्मान पर उभारती है। यह सम्मान भी मात्र मौखिक (जुबानी) होता है जिसका कर्म पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

'सीरत' (रसूल की पवित्र जीवनी) के विषय में यह ऊपरी जानकारी अज्ञानता के समान है। इसलिये कि इस से बड़ा अन्याय और क्या होगा कि सब से बड़ी वास्तविकता को उपन्यास या मन्त्र बना दिया जाये और शक्ति एवं बल तथा जीवन एवं गति से भरपूर सन्देश को मुर्दों के कफ़न में लपेट दिया जाये। रसूलुल्लाह की पवित्र जीवनी मुसलमान के निकट किसी बेकार एवं निकृष्ट व्यक्ति के लिये न तो मनोरंजन का साधन है न किसी आलोचक शत्रु के लिये आलोचन, निन्दा तथा अपमान का अभ्यास। यह 'जीवनी' तो जीवन के उत्तम आदर्श का स्रोत एवं केन्द्र है जिस की उसे पैरवी करनी है। यह जीवनी उस 'महान् शरीअत' का स्रोत है जिसे वह अपनाये हुए है अतः इस 'सीरत' के वर्णन में साधारण सी कोताही और घटनाओं के उल्लेख में छोटी से छोटी त्रुटि एवं असावधानी स्वतः ही ईमान को नष्ट कर सकती है।

मैं ने पूर्ण चेष्टा की है कि पाठकों के सामने रसूलुल्लाह (सल्ल०) के जीवन का सच्चा चित्र पेश कर दूं तथा घटनाओं एवं वृत्तान्तों के बीच से तत्वदर्शिता, नसीहत व उपदेश के पहलू उभार दूं जो स्वतः ही पाठकों के मन एवं हृदय को प्रभावित कर देंगे।

मैं ने प्राचीन तथा आधुनिक लेखकों की पुस्तकों से भरपूर लाभ उठाने का प्रयत्न किया है। आधुनिक लेखकों ने 'तालील' (सप्रमाण पेश करना) 'तजजिय:' (विश्लेषण) तथा 'मुआजना' (तुलना) का ढंग अपनाया है तथा 'सीरत' की विभिन्न घटनाओं को एक लड़ी में पिरोने का यत्न किया है जो एक अच्छी शैली है। परन्तु प्राचीन लेखकों ने घटनाओं तथा वृत्तान्तों को संग्रहीत करने, मूल लेखों व प्रमाणों की जांच परख करने तथा छोटी बड़ी सभी घटनाओं को एकत्रित करने में अति परिश्रम किया है। इस सुरक्षित निधि से बड़े मूल्यवान मोती मिल सकते हैं यदि तर्क शैली उचित

हो और यथा स्थान प्रयोग किया जाये ।

मैं ने उक्त वर्णित दोनों पद्धतियों को एक नए रूप में जमा कर दिया है। दोनों के हितकारी तथा कल्याणकारी पहलुओं को जमा कर 'सीरत' की समस्त घटनाओं को एक दूसरे से सम्बद्ध कर दिया है जिस के विभिन्न तत्वों को एक ही रूह व्यवस्थित किये हुए है फिर मैं ने स्पष्ट आदेशों (नसूस) रिवायतों तथा वृत्तान्तों का इस प्रकार विभाजन किया है कि वे विषय से समरूप हो सकें तथा एक उत्तम रूप एवं पूर्ण वास्तविकता को पेश कर सकें।

इन समस्त प्रयत्नों के पीछे मेरा उद्देश्य यह था कि रसूल की सीरत लोगों के जीवन में ईमान की शक्ति उत्पन्न कर दे, उन की नैतिकता को पवित्र कर दे, 'हक़' तथा 'बातिल' (सत्य एवं असत्य) के संघर्ष को तेज़ कर दे। जनसाधारण इस का अध्ययन करके 'सत्य' को स्वीकार कर के उस की ज़िम्मेदारियों को अदा करने लगें तथा उसे अपने जीवन में मार्ग दीप बना लें ।

रसूल की सीरत लिखते समय मेरा तरीक़ा उस इतिहासकार जैसा नहीं रहा जो उस व्यक्ति तथा नायक से सम्बन्ध ही न रखता हो वरन् मैं ने श्रद्धा बनाये रखने का पूर्ण प्रयत्न किया है तथा इस प्रकार लिखा है जैसे कोई सैनिक अपने कमाण्डर-इन-चीफ़ के विषय में, कोई अनुयायी अपने नायक के विषय में तथा कोई शिष्य अपने गुरू के विषय में लिखता है।

पुस्तक लिखते समय मुसलमानों की चिन्तनात्मक, मानसिक तथा बुद्धिहीनता एवं भावनात्मक सम्बन्धों के ह्रास के चिन्ताजनक दृश्य भी मेरे सामने घूमते रहे हैं। अतः इस में कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि सीरत लिखते समय मैं ने ऐसा ढंग अपना लिया हो जो किसी न किसी प्रकार हमारी चिन्ताजनक स्थिति एवं दशा की ओर इशारा करता हो। जब भी किसी घटना का वर्णन किया गया है उसकी तह में सच्ची भावुकता, सही चिन्तन, उचित कर्म एवं व्यवहार विद्यमान रहा है ताकि इस हीनता, पस्ती और बेबसी का इलाज हो सके ।

—•—

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की पवित्र जीवनी कोई कथा नहीं है जिसे आप (सल्ल०) के जन्म दिन पर पढ़ कर सुना दिया जाये, जैसा कि वर्तमान युग में लोग करते हैं, न इस का उद्देश्य यह है कि

इसे सुन्दर शब्दों तथा स्वरचित नातों में ढाल कर दुहरा लिया जाये, न: प्रेम एवं श्रद्धा का इजहार इस प्रकार उचित है कि कुछ प्रशंसनीय कविताएं तथा 'नातें'[1] कही जायें जिसे रसूल के प्रेमी दिन रात अलापते रहें। ऐसा कदापि नहीं है ! एक मुसलमान का सम्बन्ध अपने रसूल से इस से अधिक घनिष्ट है तथा इन स्वरचित एवं झूठे बन्धनों से बहुत ज़्यादा दृढ़ एवं मजबूत हैं।

अपने नबी से श्रद्धा एवं विमुग्धता के प्रदर्शन के इन बनावटी तरीक़ों को मुसलमानों ने उस समय से अपनाया जब से वे वास्तविकता से दूर हुए तथा अनावश्यक बातों में फंस गये, रूह छोड़ कर बाह्य रूप पर मरने लगे। क्यों कि इस्लाम में इस प्रकार के रूप बहुत कम तथा सीमित हैं अत: नये नये रूप गढ़ने के फ़ितने में मुब्तिला हो गये जिस का परिणाम यह हुआ कि वे परिश्रम तथा कर्म से दूर हो गये जब कि आवश्यकता थी की वास्तविकता तथा मूल को अपनाते और अनावश्यक बातों से बचते तथा 'दीन' की रूह एवं सार की ओर वापस आते। रसूलुल्लाह (सल्ल०) की पवित्र जीवनी को उत्तम स्वर तथा राग भरी आवाज में सुनने के बजाए अपने मन तथा आत्मा को पवित्र करने का प्रयत्न करते अपने वातावरण को अनुकूल बनाते ताकि वे दुनिया तथा आखिरत में, सन्धि तथा युद्ध में, ज्ञान तथा कर्म में एवं व्यवहारिकताओं तथा इबादतों में हजरत मुहम्मद (सल्ल०) के तरीक़े पर चल सकते।

जिस मुसलमान के मन तथा अन्तरात्मा में रसूल का प्रेम न हो तथा कर्म व फ़िक्र (चिन्तन) के जगत में यह प्रेम उसे व्यस्त, सचेष्ट और प्रयत्न-शील न कर दे, वह चाहे दिन रात सहस्रों बार रसूल पर दरूद-सलाम भेजे उसे क़तई लाभ न होगा।

इस में कोई हानि नहीं है कि हम क्रीड़ा तथा खेल कूद के लिये एक समय निश्चित कर लें तथा परिश्रम व कर्म के लिये एक समय, फिर इस में कोताही न करें।

यदि कोई व्यक्ति गीत व संगीत से आनन्द लेना चाहता है तो उसे इस का अधिकार है। परन्तु यदि वह चाहे कि 'इस्लाम' को राग एवं संगीत में ढाल दे, 'क़ुरआन' को मधुर लय बना दे तथा 'सीरत' को कहानी और उपन्यास के रंग में प्रस्तुत करे तो इस की अनुमति कदापि नहीं दी जा सकती है। इस बात को वही लोग स्वीकार करेंगे जो अज्ञानी एवं जाहिल

---

१. रसूलुल्लाह की प्रशंसा में कही गयी कविता को 'नात' कहते है। —अनुवादक

हों। इस युग में इस्लाम के विषय में यह चिन्ताजनक परिवर्तन उत्पन्न हो चुका है तथा दीन (धर्म) कर्म एवं व्यवहार से निकल कर खेल कूद की सीमाओं में दाखिल हो चुका है। इस प्रकार के व्यक्तियों के लिये ईश्वर का यह आदेश कितना उचित है—

> 'छोड़ो ऐसे लोगों को जिन्होंने अपने दीन को खेल और तमाशा बना लिया है, और जिन्हें सांसारिक जीवन ने धोखे में डाल रखा है। और इस (क़ुरआन) के द्वारा उन्हें चेताते रहो।"
>
> —अनआम ७०

आज क़ुरआन की 'तिलावत' मधुर स्वर तक सीमित कर दी गयी है जिसे उस संगीत के प्रेमी लोग सुनते हैं जिसे यहूदी और ईसाईयों ने इस विश्वास के साथ विश्व में फैलाया है कि मुर्दा दिलों में गर्मी उत्पन्न न होने पाये। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की सीरत दास्तानों तथा मनबहलावे के क़िस्सों में परिवर्तित कर दी गयी है, दुरूद सलाम तथा प्रशंसनीय कविताओं से आगे इस विषय में कुछ भी नहीं है। मेरे विचार में इन 'नातों' (हज़रत मुहम्मद की प्रशंसा की कविताओं) का सुनना, सुनाना समाज के विकार तथा स्वभाव से उभरने वाली अवज्ञा एवं मन के बिगाड़ का एक अंश बन चुका है।

इन कपटी तथा बहानाबाज़ों को चाहिये कि वे राग-रंग और संगीत ही को अपनायें तथा जब उन्हें होश आ जाये एवं परिश्रम तथा कर्म का इरादा कर लें तो वे सुकर्मों का उपदेश देने और अवज्ञाओं से रोकने वाले 'क़ुरआन' की ओर आयें, तथा उस की व्याख्या एवं स्पष्टीकरण के लिये रसूल की 'सुन्नत' (तरीक़ा) से सहायता लें ताकि हिदायत के मार्ग पर गतिशील और उसकी तत्वदर्शिता से परिचित हो सकें और उच्च नैतिकता, दृढ़ सिद्धान्त एवं शुद्ध राजनीति से मालामाल हो सकें।

'यह है इस्लाम ?'

—०—

मैं ने इन पंक्तियों को पवित्र नगर 'मदीना मुनव्वरः' में लिखना शुरू किया था। जहां ईश्वर की अनुकम्पा (रहमत) तथा सम्पन्नता (बरकत) की वर्षा होती रहती है। अतः मुझे पवित्र सीरत व सुन्नत के पूर्ण तथा गहन अध्ययन का अवसर प्राप्त हुआ।

प्रशंसा, स्तुति तथा कृतज्ञता के समस्त शब्द अल्लाह ही के लिये शोभनीय हैं, कदाचित् वह मुझे अपने से और अपने रसूल से प्रेम करने

जिन्हें अकेला छोड़कर आप

रसूलुल्लाह से प्रेम एवं
योग्य नहीं है न उन के पवि
होगी। अल्लाह के नबी का
में अधिक दृढ़ तथा मज़बूत हो

इस्लाम के शत्रुओं ने इ
तथा इस्लाम के अनुयायी
जनक स्थिति कैसे सहन की
को लूटते रहें ? जन साधार
लोटते रहें ? क्या इस खत
सकता है ? क्या यह रसूल से

'क्या अच्छा होता कि मुसलमान अपने महान रसूल की 'सीरत' को समझते !'

रसूलुल्लाह की 'सीरत' उसी समय समझ में आ सकती है जब उन के सन्देश तथा मिशन को समझ लिया जाये तथा जो महान पुस्तक (क़ुरआन) आप लेकर आये उसे अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय समझा जाये।

यह प्रेम कितना सस्ता होता है जब केवल शब्दों तथा ज़बान तक सीमित होता है।

मुझे इस बात का अहसास होता है कि मैं सीरत के विषय का हक़ अदा नहीं कर सका क्योंकि रसूलुल्लाह का मामला बड़ा महान् है तथा आप की 'सीरत' को शब्दों का लिबास देने के लिये एक "दूसरी भाषा" की आवश्यकता होती है।

मेरे लिये यह काफ़ी है कि मैं ने इस क्षेत्र में प्रयत्न किया है।

दुरूद सलाम का अनुवाद—

'हे अल्लाह ! शान्ति भेज मुहम्मद पर और मुहम्मद के परिवार पर जैसा कि तू ने शान्ति भेजी थी इब्राहीम पर और इब्राहीम के परिवार पर। बेशक तू ही स्तुति योग्य और महान् है। और बरक़त फ़रमा मुहम्मद पर और मुहम्मद के परिवार पर जैसा कि तू ने बरक़त फ़रमायी इब्राहीम पर और इब्राहीम के खानदान वालों पर। बेशक तू ही स्तुति योग्य और महान है।

—मुहम्मद गिज़ाली

कुछ इस पुस्तक की हदीसों के विषय में ?

यह बड़े हर्ष की बात है कि इस संस्करण में प्रसिद्ध' 'मुहद्दिस' (हदीस के ज्ञाता) 'अल्लाम: नासिरुद्दीन अलबानी' की तख़रीज्-अहादीस'[1] भी सम्मिलित है। अलबानी महोदय ने इस पुस्तक में वर्णित समस्त हदीसों, रसूलुल्लाह के वृत्तान्तों तथा घटनाओं को शुद्धता की तराज़ू में परखने तथा उनकी समीक्षा व समालोचना करने का सफल प्रयास किया है।

आशा है कि इस प्रकार इल्मी हक़ीक़त को प्रकट करने तथा ऐतिहासिक घटनाओं को क्रमबद्ध करने में सहायता मिलेगी। रसूलुल्लाह की 'सीरत' अथवा अन्य मानव घटनाओं के इतिहास के संकलनकर्ता शुद्धता, प्रमाण, वाद-विवाद, समालोचना तथा जांच पड़ताल के कठिन रास्तों से बहुत कम गुज़रते हैं। मैं ने जब रसूलुल्लाह (सल्ल०) की पवित्र सीरत (जीवनी) संकलित करने का प्रारम्भ किया तो मेरा प्रयास रहा कि मैं उपयुक्त एवं सही तरीक़ा अपनाऊं तथा विश्वसनीय व मान्य मूल पुस्तकों से सहायता लूं।

मेरे विचार से इस क्षेत्र में मुझे सफलता मिली तथा मैं ने केवल उन्हीं घटनाओं एवं वृत्तान्तों को संग्रहित किया जिन के विषय में उच्चस्तरीय आलिम संतुष्ट हैं।

जिस पद्धति को मैं ने अपनाया है उसका स्पष्टीकरण कर देना आवश्यक है—

हदीस के ज्ञाताओं के बीच किसी 'हदीस' के शुद्ध तथा अशुद्ध होने के विषय में मतभेद हो सकता है। अल्लामा महोदय ने प्रमाणों की खोज तथा जांच पड़ताल के बाद किसी हदीस को यदि अशुद्ध कहा है तो चूंकि इस क्षेत्र की दक्षता के कारण उन्हें इस का अधिकार है, पर हो सकता है कि वह हदीस समस्त हदीस ज्ञाताओं के निकट अशुद्ध हो। परन्तु यदि मूल

---

१. हदीस का वह ज्ञान जिसके द्वारा यह जाना जाये कि अमुक हदीस का स्रोत तथा प्राप्ति स्थान क्या है। —अनुवादक

में कुछ भी इस ढंग
है और रसूलुल्लाह के पूरे ज
निशान भी नहीं मिलता। अ
स्वीकार नहीं किया है।

मैं ने उस हदीस का सह
किया है। यह हदीस अशुद्ध हो
से पूरी तरह सामंजस्य रखती
ही चढ़ाई जाइज़ है। परन्तु
अनभिज्ञ हों उन पर किसी भी प्र

वनी मुस्तलिक़ से सम्बन्धि

---

१. अरब का एक प्रसिद्ध क़बीला।

शुद्ध (क़वी) हदीसों के विषय

जो हदीसें 'सहीह' (शु
स्वीकार एवं अस्वीकार करने
आलिम मानते हैं। कोई भी
अति शुद्ध हदीस को स्वीकार
हम किसी भी फ़िरक़े से ईश्वर
बाद इस्लाम का दूसरा स्रोत

परन्तु हदीस के अध्ययन
के साथ इस विषय में एकरूप
(इस्लाम का संदेश) तथा प
तक़ाज़े पूरे हो जायें। किसी प्र

यदि इस के विपरीत कोई बात आती है तो उसे कैसे स्वीकार किया जा सकता है ?

अल्लाह तआला अपने नबी को क़ुरआन में हुक्म देता है—

> "(हे नबी !) कहो, मेरे पास तो बस यह 'वह्य' (फ़रिश्ते के द्वारा ईश्वर का सन्देश नबी के पास लाना) आती है कि तुम्हारा 'इलाह' (इष्ट पूज्य) अकेला अल्लाह है। तो क्या तुम मुस्लिम होते हो ?
>
> यदि वे मुंह फेरें, तो कह दो, मैं ने तुम्हें खुल्लमखुल्ला सूचित कर दिया है और मैं यह नहीं जानता कि जिस की तुम्हें धमकी दी जा रही है वह क़रीब है या दूर।" —अंबिया १०८,१०९

इस आम उद्घोषणा के बाद—जिस में आवाहक तथा आमन्त्रित दोनों से सम्बोधन है—मुझे कोई इस रिवायत के स्वीकार करने को बाध्य नहीं कर सकता है, क्योंकि 'रसूलुल्लाह' तथा खुलफ़ाए-राशिदीन' ने समस्त युद्धों में यह तरीक़ा अपनाया था कि पहले दावत (सन्देश) को स्पष्ट किया जाए तथा लोगों को स्वीकार या रद्द करने का पूरा मौक़ा दिया जाये।

यह हदीस अब्दुल्लाह बिन औन से 'रिवायत' की गयी है, वह कहते हैं कि मैं ने युद्ध से पहले दावत देने के विषय में हज़रत नाफ़ेअ' (रह०) से लिखित प्रश्न किया, तो उन्हों ने उत्तर दिया कि इस्लाम के आरम्भ-काल में ऐसा हुआ है। रसूलुल्लाह ने 'बनू मुस्तलिक़' पर ग़फ़लत की अवस्था में आक्रमण किया, उन के लड़ाका व्यक्ति क़त्ल कर दिये गये, उन के बच्चों को क़ैदी बना लिया गया तथा उसी दिन 'जुवैरिया' (रज़िअल्लाहु अन्हा) को प्राप्त किया।

वह कहते हैं मुझे इस की सूचना अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) ने दी जो उस सेना में शरीक थे।

मैं ने जिस प्रकार इस हदीस की उपेक्षा की है इसी प्रकार उस हदीस को भी स्वीकार नहीं किया कि अल्लाह के रसूल ने अपने साथियों को क़यामत तक होने वाले फ़ित्नों तथा उन के दायी लोगों के बारे में सचेत किया।

क़ुरआन तथा हदीस से यह बात निश्चित रूप से प्रमाणित है कि अल्लाह के रसूल विस्तार पूर्वक परोक्ष ज्ञान से परिचित नहीं थे।

—o—

मैं ने सीरत लिखने में इसी तरीक़े को अपनाया है। अतः मैं ने उस

प्राचीन सभ्यताओं पर मूर्ति-पूजा ग़लबः

'मानव इतिहास बड़ा शोकजनक है !'

जब से 'आदम' (अलैहिस्सलाम) इस पृथ्वी पर उतरे, उन की सन्तान बढ़ी तथा विभिन्न सभ्यताओं ने जन्म लिया। एक पीढ़ी समाप्त हुई तो दूसरी ने उस के स्थान को ग्रहण किया, उसी समय से इंसानों में विभिन्न वर्ग, गिरोह तथा विचारधाराएं पायी जाती रही हैं। यदि उन्हें सत्यता का मार्ग मिल भी जाता तो वे दोबारा विभिन्न पगडंडियों में बहक जाते तथा जब भी 'हक़' (सत्यता) का प्रकाश दिखाई देता 'बातिल' (असत्य) का अन्धकार बढ़ कर उन्हें अपने अंचल में छुपा लेता। यह संघर्ष इसी प्रकार चलता रहा है।

यदि हम 'ईमान तथा परलोक' की धारणा के प्रकाश में मानव इतिहास की समीक्षा करें तो हमें पूरा विश्व उस शराबी के समान दिखाई देगा जो चेतनावस्था में भी अचेत रहता है तथा पीड़ा ग्रस्त होते हुए भी अपने कष्टों का अनुभव नहीं कर पाता। परन्तु जीवन के अनुभव यह पता देते हैं कि मनुष्य के अन्दर एक ऐसी 'अन्तरात्मा' मौजूद है जो उसे बुराई से रोकती तथा भलाई व उपकार की ओर प्रोत्साहित करती है, परन्तु जब उस पर मनोकामना ग़ालिब आ जाये तो फिर उसे कोई ज्ञान परिचय लाभ नहीं पहुंचा सकता।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) के समय तक दुनिया एक लम्बा काल (समय) बिता चुकी थी। जिस में उस ने अनेकों कला कौशल तथा ज्ञान विज्ञान से फ़ायदा उठाया था, नित्य नए अनुभव किये थे, शिष्टता तथा नैतिकता के प्रकाश से अपने जीवन को प्रकाशमान भी किया था, तथा दर्शन, विचारधाराओं एवं धारणाओं की अनेकों बस्तियां बसाई थीं।

इस के बावजूद दुनिया भटकती रही, क़ौमें मारी मारी फिरती रहीं परन्तु अपने अभिप्रेत अवस्थान तक न पहुंच सकीं।

मिस्र तथा यूनान में, भारत और चीन में, रोम और फ़ारस (ईरान) में सभ्यताओं का परिणाम क्या हुआ ? यह प्रश्न मैं राजनीति तथा

शासन के विचार से नहीं वरन् बुद्धि एवं भावनाओं के पहलू से उठा रहा हूं।

मूर्ति-पूजा इन सभ्यताओं की जान थी इसी ने उन्हें पस्ती तथा पतन की अन्तिम सीमा तक पहुंचा दिया था। मनुष्य, जिसे ईश्वर ने तमाम प्राणियों में श्रेष्ठ तथा अपना 'खलीफ़ा' (प्रतिनिधि) बनाया था वह अति तुच्छ चीज़ों का दास एवं गुलाम बन गया। यह हीनता इस सीमा तक बढ़ी कि पत्थरों तथा शिलाओं की पूजा होने लगी, लकड़ियों, पेड़ों तथा पशुओं तक को पूज्य बना लिया गया तथा तमाम क़ौमें इन की रसिया बन गयीं।

चूंकि मूर्ति-पूजा मनुष्य के अन्दर से उत्पन्न होती है, बाहर से नहीं। जिस प्रकार शोक ग्रस्त व्यक्ति को पूरा वातावरण दुःख एवं सन्ताप से भरा दिखाई पड़ता है, तथा भयभीत व्यक्ति छाया से भी डरने लगता है इसी प्रकार स्वयं अपनी नज़रों में हीन तथा मूर्ख व्यक्ति अपने वातावरण से प्रभावित व भयभीत हो कर पेड़ों, पत्थरों एवं पशुओं को अपना 'पूज्य' बना लेता है।

जैसे ही दिलों की संकीर्णता दूर होती है, बुझा हुआ 'चिन्तन' प्रकाशमान हो जाता है तथा मनुष्य श्रेष्ठ मूल्यों व अर्थों से परिचित हो जाता है वैसे ही मूर्ति-पूजा के ये रेत रूपी ढेर हवा में उड़ जाते हैं।

इसीलिये दीन, कर्म तथा क्रिया मनुष्य के अन्दर से शुरू होती है। यदि पवित्र गायों का वध कर दिया जाये, मनगढ़ंत तथा काट छांट कर बनायी गई मूर्तियों को तोड़ दिया जाये तथा मानव मन को पुराने अन्धकार में रहने दिया जाये तो मूर्ति पूजा के विरोध में इस संघर्ष से क्या प्राप्त होगा ? लोग अन्य नए नए पूज्य (माबूद) खोज लेंगे। आज संसार में मूर्ति पूजकों की संख्या कितनी अधिक है तथा लोग कितनी शीघ्रता से ईश्वर के अस्तित्व के इन्कार तथा नवीन भ्रम एवं शंकाओं के मानने में अग्रसरता दिखा रहे हैं।

—०—

'बातिल' (असत्य) कभी जीवन में क़दम नहीं जमा सकता यदि उस का मिथ्या होना स्पष्ट हो जाये तथा उस की व्यर्थताएं ज़ाहिर हो जायें। इसी कारण वह 'हक़' (सत्य) का वस्त्र पहन कर सामने आता है बल्कि उस की कुछ भूमिकाएं तथा परिणाम भी स्वीकार कर लेता है फिर छलित तथा फ़रेब खाये हुए व्यक्तियों को सुगमता से अपने जाल में फांस लेता है।

यही उपाय मूर्ति-पूजा ने अपनाया। इस ने सच्चे दीन (सत्य धर्म)

आधुनिक ईसाइ

पाप से शुद्धि के लिये
के अक़ीदे ने और सं
को दुबारा सफलता
'तस्लीस' का वस्त्र ओ

छठी शताब्दी अ
चुके थे। 'शंतान' खु
फ़सल अब तैयार हो
चीन तथा समूचे अ
(अनेकेश्वरवाद) का

ईसाइयों ने हिन्दु

कर ली थीं जो 'मरयम' को ईश्वर की पत्नी तथा 'ईसा' को उस का बेटा (ईश्वर अपनी शरण में रखे) क़रार दे रही थी, तथा रोम, मिस्र, व क़ुस्तुनतुनिया में शिर्क के प्रगतिशील रूप का अनुसरण करने पर अपने अनुयायियों को प्रेरित कर रही थी। यह 'शिर्क' की ऐसी क़िस्म थी जिस में किसी सीमा तक 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) भी शामिल थी।

परन्तु ईसाइयत द्वारा एकत्रित इन परस्पर विरोधी चीजों का मूल्य एवं महत्व क्या था ? क़ुरआन कहता है--

> 'लोगों का कहना है : अल्लाह ने अपना एक बेटा बनाया है— महिमावान् है वह ! वह अपेक्षारहित है ! आकाशों और धरती में जो कुछ है उसी का है। तुम्हारे पास इन का कोई प्रमाण नहीं। क्या तुम अल्लाह के बारे में ऐसी बात कहते हो जो तुम नहीं जानते।
>
> कह दो : जो लोग अल्लाह पर झूठा आरोप लगाते हैं वे सफल नहीं होते।
>
> दुनिया का सुख है (भोग लें) फिर हमारी ओर उन्हें पलट कर आना है। फिर जो कुफ़ वे करते हैं उस के बदले में हम उन्हें यातना का मज़ा चखायेंगे।" —युनुस ६८,६९,७०

इस से मालूम होता है कि मजूसियत तथा अन्य धर्मों पर इसी शिर्क की गहरी छाप का प्रभाव था जिस ने इस समस्त गिरोहों को मुसलमानों का जानी दुश्मन बना दिया क्योंकि मुसलमान केवल एक ईश्वर की इबादत का आमन्त्रण देने खड़े हुए थे। तथा ईश्वर ने पहले ही इस उम्मत को सचेत कर दिया था कि उन्हें अनेकेश्वरवादियों तथा ईशग्रन्थधारियों की ओर से विरोध का सामना करना पड़ेगा तथा नसीहत कर दी थी कि वे धैर्य एवं सहनशीलता के द्वारा उस का मुक़ाबला करेंगे। क़ुरआन कहता है—

> 'तुम्हारे माल और तुम्हारे प्राण में तुम्हारी परीक्षा हो कर रहेगी, और तुम्हें उन लोगों से जिन्हें तुम से पहले किताब दी जा चुकी है और उन लोगों से जिन्हों ने 'शिर्क' किया बहुत सी दुख देने वाली बातें सुननी पड़ेगी। और यदि तुम ने धैर्य से काम लिया और अल्लाह का डर रखा तो निस्सन्देह ये महान् साहस के कार्यों में से होगा।" —आले इम्रान १८६

—०—

प्रांकित कर दिया।

अन्तिम नुबूव्वत का

मुहम्मद सल्लल्लाहु
नुबूव्वतों से श्रेष्ठ तथा
तक के लिये है।

अल्लाह तआला ह
प्रश्न यह है कि जब
तमाम युग धर्म गुरुओं
एक ही सर्वश्रेष्ठ हस्ती
सही बात यह है कि

तथा अनुरूप है जो थोड़े से शब्दों में अर्थों का समुद्र भर देता है।

मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का प्रेषण (बे'सत) समस्त देशों व युगों के 'नबियों' का पूर्ण बदला है। वरन् इस धरती पर जब तक जीवन बाक़ी रहेगा तथा हिदायत एवं मुक्ति को देखने वाली कोई आंख बाक़ी रहेगी उस समय तक के लिये इस सिलसिले को बन्द कर दिया गया है।

परन्तु ऐसा क्यों हुआ ?

आतंकित मार्गों से गुज़रने के लिये आप का कोई शुभ चिन्तक तथा हितैषी व्यक्ति आप से कह सकता है कि अपनी दृष्टि को नीचे जमा लो और मेरे पीछे चले आओ अथवा मुझ से कोई ऐसा प्रश्न न करना जो तुम्हें परेशान कर दे। कभी कभी उस के आज्ञा पालन ही में शान्ति मिलती है अतः आप उस का अनुसरण करते हैं यहां तक कि अपने सुरक्षित अवस्थान तक पहुंच जाते हैं। इस अवसर पर यह व्यक्ति आपका सहयोगी एवं सहायक मार्ग दर्शक होता है जो आप के लिए चिन्तित रहता है, मार्ग की ऊंच नीच पर नज़र रखता है तथा आप का हाथ पकड़ लेता है यदि वह वधित होगा तो उस के साथ आप का भी वध होगा।

परन्तु यदि कोई सदाचारी, व्यक्ति आप को यात्रा के आरम्भ ही में मिल जाये जो मार्ग रेखाओं को स्पष्ट कर दे, उस के उतार चढ़ाव से अवगत करा दे, मार्ग की कठिनाइयों व यातनाओं से परिचित करा दे तथा आप के साथ कुछ दूर चले ताकि मार्ग पर चलने का आप को अभ्यास हो जाये तो इस दशा में आप स्वयं अपने मार्ग दर्शक बन जायेंगे तथा अपने चिन्तन एवं विचार के द्वारा दूसरों से बे पर्वाह हो जायेंगे।

प्रथम स्थिति बच्चों तथा सीधे व्यक्तियों के लिये उपयुक्त एवं उचित है जब कि दूसरी विधि पुरुषों तथा शुद्ध मतधारियों के लिये शोभनीय है।

अल्लाह ने जब मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को संसार के मार्ग दर्शन के लिए प्रेषित (मबऊस) किया तो आप की 'रिसालत' में वे सिद्धान्त सम्मिलित करा दिये जो बुद्धि एवं मस्तिष्क के लिये ज्ञान तथा परिचय के द्वार खोल देते हैं।

आप (सल्ल०) के हृदय पर उसने जो 'क़ुरआन' उतारा वह अल्लाह पालनहार की ओर से भेजी हुई पुस्तक है जो प्रत्येक जाग्रत चित्त एवं ईश्वर भक्ति में संलग्न हृदय को आमन्त्रित करती है ताकि उसे कल्याण के विषय में बताये तथा उस के मन में हिदायत एवं संमार्ग को स्पष्ट करे।

मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ऐसे लोगों के मार्ग दर्शक तथा

नातक न थे जो आप के सुव्यवहार तथा संयम से प्रभावित हो गये थे तथा जब आप इस भौतिक संसार से सिधारे तो वे भी पुरातन कथा बन गये, नहीं ! वरन् आप (सल्ल०) 'ख़ैर' (कल्याण) की एक शक्ति थे जिस का अर्थ के विचार से वही प्रभाव हुआ जो भाप तथा बिजली के आविष्कारों का भौतिक जगत में हुआ है। आप के प्रेषण से पूर्व मानव अस्तित्व एक बच्चे के समान था फिर वह व्यस्कावस्था को पहुँचा और स्वतः ही अपने दायित्वों को अंजाम देने को तैयार हो गया, तो मुहम्मद (सल्ल०) के द्वारा ईश्वरीय सन्देश (इलहामी पैग़ाम) आया कि वह किस प्रकार जीवन व्यतीत करे तथा अपने ईश्वर की ओर किस प्रकार वापस लौटे। अब यदि मुहम्मद (सल्ल०) जीवित रहें या न रहें, इस से इस सन्देश में कोई दोष उत्पन्न नहीं होता। आप (सल्ल०) का सन्देश नेत्रों, कानों, दिलों एवं मन व बुद्धि को खोलने वाला सन्देश है तथा यह 'किताब' (क़ुरआन) व 'सुन्नत' (रसूल का तरीक़ा) अर्थात् 'हदीस' के रूप में सुरक्षित है।

आप की 'बे'सत' (प्रेषण) इस लिए नहीं हुई कि आप अपने चारों ओर कुछ लोगों को एकत्रित कर लें, वरन् यह 'बे'सत' मानव-जाति तथा उस के अधिकार के बीच सम्बन्ध की 'बे'सत' थी जिस के द्वारा उस का अस्तित्व क़ायम था तथा उस प्रकाश की 'बे'सत' थी जिस के द्वारा वह अपने अभिप्रेत स्थान को देख सकती थी। अतः जिस ने अपने जीवन में 'हक़' (सत्य) तथा उस के प्रकाश को पहचान लिया तो उस ने मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को पहचान लिया तथा वह आप के भण्डे के नीचे आ गया।

> 'हे लोगो ! तुम्हारे पास रब की ओर से स्पष्ट प्रमाण आ चुका है, और हम ने तुम्हारी ओर एक प्रत्यक्ष प्रमाण उतारा है। तो जो लोग अल्लाह पर ईमान लाये और उस से चिमटे रहे उन्हें वह जल्द ही अपनी दयालुता और अनुग्रह (की छाया) में प्रवेश करेगा, और उन्हें वह अपने तक (पहुंचने) का सीधा मार्ग दिखा देगा।
> —निसा १७५, १७६

—०—

यदि आप कुछ लोगों को देखें कि वे अपने गुरु की शिक्षाओं को भूल चुके हैं परन्तु उस के दामन को चूम रहे हैं या उस के निधन के पश्चात् उस की हड्डियों को चूमते हैं तो जान लीजिए कि ये अज्ञान तथा अपात्र

बच्चे हैं जो इस योग्य नहीं हैं कि रिसालत की शिक्षा का इन से सम्बोधन किया जाए क्योंकि ये रिसालत के कार्यक्रम एवं कार्य-पद्धति को समझने में असमर्थ हैं।

नबी (सल्ल०) की मस्जिद (मदीना में) मैं ने लोगों के एक बड़े समूह को देखा कि वह जाली से चिमटा रहा है तथा वहीं पूरी आयु व्यतीत करने का इच्छुक है।

यदि अल्लाह के नबी (सल्ल०) जीवित होते और इन लोगों को देखते तो चिन्ता व्यक्त करते तथा उन से अप्रसन्न होते। इन की बुद्धिहीनता, ऊपरीपन, बेकारी, ग़फ़लत तथा बरबादी ने नबी (सल्ल०) से इन के सम्बन्ध को मकड़ी के जाले से भी अधिक कमज़ोर कर दिया है।

मैं ने उन से पूछा, तुम रसूलुल्लाह की समीपता से क्या लाभ उठा सकोगे? या स्वयं रसूलुल्लाह को तुम्हारे समीप आने से क्या फ़ायदा पहुंचेगा? जो लोग रसूलुल्लाह के सन्देश को समझे हुए तथा समुद्र पार उसे जीवित किये हुए हैं वे रसूलुल्लाह की वास्तविकता को तुम से अधिक समझते हैं। आध्यात्मिक तथा बौद्धिक व मानसिक समीपता ही वह एक-मात्र सम्बन्ध है जो आप (सल्ल०) तथा आप के अनुयायियों के बीच रस्सी का काम दे सकता है।

इन बीमार रूहों तथा निःसहाय बुद्धियों को क्या प्राप्त हो सकता है जो उस अस्तित्व से अपना नाता जोड़ें जो अक़्लों और रूहों में दीन एवं दुनिया की शान्ति एवं सुख भरने आया था।

क्या यह समीपता प्रेम का लक्षण तथा क्षमादान व मोक्ष का साधन बन सकती है?

तुम ईश्वर के लिए उस समय तक प्रेम नहीं कर सकते जब तक उस का ज्ञान परिचय प्राप्त न कर लो। प्राकृतिक क्रम यह है कि सर्वप्रथम यह ज्ञान प्राप्त करो कि तुम्हारा 'रब' कौन है? तुम्हारा 'दीन' (धर्म) क्या है? जब तुम शुद्ध बुद्धि के द्वारा इस वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त कर लोगे तो तुम्हारे दिल में उस अस्तित्व से प्रेम उत्पन्न हो जायेगा जिस ने ईश्वर का सन्देश तुम तक पहुंचाया है। तथा तुम्हारे लिए कष्ट सहन किये हैं। यही अर्थ है इस हदीस का—

> 'अल्लाह से प्रेम करो क्योंकि उस ने तुम्हें सुखसामग्री तथा अपनी असीम कृपाएं प्रदान की हैं, तथा अल्लाह से प्रेम के कारण मुझ से भी प्रेम करो।' —तिर्मिज़ी

तथा यही आशय इस आयत का है—

> 'कह दो कि यदि तुम अल्लाह से प्रेम करते हो तो मेरा अनुसरण करो, अल्लाह तुम से प्रेम करने लगेगा और तुम्हारे गुनाहों को क्षमा कर देगा। और अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है।' —आले इम्रान ३१

रसूलुल्लाह ने सम्पन्नताएं तथा मोक्ष प्रदान करने का कोई द्वार नहीं खोला क्योंकि छल-कपट से आप का कोई सम्बन्ध नहीं था। क़ुरआन तो आप (सल्ल०) को इस प्रकार दुआ करने का आदेश देता है—

> 'हमें सीधा मार्ग दिखा, उन लोगों का मार्ग जिन पर तू ने कृपा की, न कि उन का (मार्ग) जिन पर तेरा प्रकोप हुआ और न उन का जो भटक गये।' —फ़ातिहा ५, ६, ७

यदि आप के दिल में इस 'नबी' से प्रेम उत्पन्न हो जाये तो उस के लिये अल्लाह से दुआ कीजिए तथा यदि आप के मन में उस के आचरण तथा श्रेष्ठता का मूल्य एवं महत्त्व बैठ जाए तो उसे महसूस कीजिए और उन रिश्तों की सूची में सम्मिलित हो जाइए जो उस का स्थान पहचानते तथा उस के सत्कर्म फल को बढ़ाने की दुआ करते हैं—

> 'निश्चय ही अल्लाह और उस के 'फ़रिश्ते' 'नबी' पर रहमत भेजते हैं। हे लोगो जो ईमान लाये हो! तुम भी उन पर रहमत भेजो और खूब सलाम भेजो।' —अह्ज़ाब ५६

मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह काम नहीं है कि वे आप को पकड़ कर जन्नत में प्रवेश दिला दें। वरन् उन का दायित्व केवल इतना है कि आप की अन्तरात्मा में प्रतिभा एवं बुद्धिमत्ता पैदा कर दें जिस से आप 'हक़' (सत्य) को देख सकें। इस का साधन वह 'किताब' (क़ुरआन) है जिस में लेशमात्र भी बातिल की मिलावट नहीं है जो हर प्रकार की गुमराही, परिवर्तन तथा संशोधन से पवित्र है तथा यही आप की रिसालत के सर्वकालिक होने का प्रमाण है।

अब हम इस बात की ओर आते हैं कि रसूलुल्लाह ने अपनी रिसालत के इस परिवर्तनीय एवं निश्चित स्वभाव एवं प्रकृति के प्रकाश में उस वातावरण का सुधार कैसे किया जिस में आप भेजे गए थे? तथा उस समय की परिस्थितियों पर भी गौर करते चलें।

चालबाज़ी के द्वारा खूब कम
आश्चर्य होगा कि एक व्यक्ति
रखता परन्तु वह इस बात को
से आगे न बढ़ पाये।

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम
हीन बुद्धि तथा अज्ञानता की
नूह (अलै०) ने अपनी क़ौम
किया तो क़ौम का उत्तर आम
आमन्त्रणकर्ता से सम्बन्धित था

इस पर उस की जाति
कहने लगे : यह तो ब
कि तुम पर श्रेष्ठता प्रा

'फ़रिश्ते' भेजता। यह तो हम ने अपने अगले पूर्वजों में नहीं सुना। —मोमिनून २४

आचरण तथा आदेशों में, कामनाएं एवं स्वभाव कितने पीछे रहे हैं ? इस के विपरीत नैतिकता व कर्म, चिन्ता व विचारधाराएं ईश्वर की खोज एवं राजनीति के क्षेत्रों में इन की रुचि कितनी खेदजनक रही है ?

'बे'सत' के समय कामवासनाओं एवं अश्लीलताओं की आंधियां चल रही थीं। तथा उस वातावरण में जो लोग भी थे वे घटिया तथा हीन कामनाओं, विकृत विचार, अश्लीलता एवं दुराचार के उच्चतम आदर्श थे।

ईश्वर तथा आख़िरत (परलोक) का इन्कार, दुनिया की सुख सामग्री पर टूट पड़ना तथा उस से अधिकाधिक लाभान्वित होना, नेतृत्व, श्रेष्ठता, आधिपत्य एवं प्रभुत्व की आकांक्षा युद्ध एवं सन्धि का प्रेरक द्वेषपूर्ण पक्षपात, परम्परागत एवं पूर्वजीय अनुकरण आदि सभी चीजें विद्यमान थीं जो व्यक्ति के भौतिक एवं आन्तरिक जीवन पर प्रभाव डाल रही थीं।

बड़ी भूल होगी यदि हम यह समझ लें कि मक्का नगर उस समय विश्व से कटा हुआ मरुस्थल में एक गांव था अन्य विश्व से केवल आजीविका प्राप्ति का सम्बन्ध रखता था। ऐसा नहीं है। वरन् मक्का ने धन-दौलत तथा माल एवं सत्ता व प्रभुत्व के जगत में बड़ी उन्नति की थी। यहां तक कि वह तृप्त हो चुका था। लोगों के मन में अधर्म तथा धर्म-विमुखता के कीटाणु जड़ पकड़ चुके थे, वे सत्य एवं यथार्थता से अपरिचित अथवा उस के इन्कारी थे। उस समाज में जहां कोई उल्लेखनीय बौद्धिक सभ्यता परवान न चढ़ सकती थी व्यक्ति का अभिमान तथा घमण्ड अपनी चरम सीमा को पहुंच चुका था तथा उस समाज में ऐसे अन्यायी एवं अत्याचारी व्यक्ति भी मौजूद थे जिन से 'फ़िर्औन' जैसा अत्याचारी भी पराजित एवं लज्जित हो जाये।

अबू जहल बिन हिश्शाम अपने कुफ़्र का स्पष्टीकरण एवं कारण बताते हुए कहता है कि 'बनू अब्द मनाफ़' (एक क़बीले का नाम है) ने हम से सदैव सम्मान तथा सत्ता के विषय में होड़ की है यहां तक कि जब हम प्रभुत्व-शाली होने को हुए तो यह कहने लगे कि हमारे बीच एक ऐसा नबी है जिस पर 'वह्य' आती है, ईश्वर की क़सम हम उस समय तक उस पर ईमान नहीं ला सकते न कभी उस का अनुसरण कर सकते हैं जब तक कि हमारे पास भी इसी प्रकार 'वह्य' न आये जिस प्रकार उस व्यक्ति के पास आती है।

> है। मदीना निवासी अब्दुल्लाह बिन उबई को अपना नेता मान चुके थे तथा उसे राजमुकुट पहनाया जाने वाला था। परन्तु जब अल्लाह ने आप को इस 'सत्य' के द्वारा सम्मानित कर दिया तो वह अपने आप ही अपमानित हो गया अतः उसी की यह प्रतिक्रिया है कि उस ने आप के साथ दुर्व्यवहार किया।'
>
> —बुखारी, मुस्लिम, अहमद

'अब्दुल्लाह बिन उबई' की इस्लाम से शत्रुता केवल इस कारण थी कि वह इसे अपनी सरदारी एवं नायकता के लिए महान खतरा समझता था। मक्का में 'अबू जहल' के विरोध का कारण भी यही था। जो लोग 'हक़' (सत्य) का जान बूझ कर विरोध करते हैं वे स्वयं न किसी विचारधारा के अनुयायी होते हैं न कोई तर्क एवं प्रमाण रखते हैं। ये लोग भी इसी प्रकार थे अतः इन्होंने इस्लाम का विरोध भी किया और उस से युद्ध भी!

इन मिश्रित जिहालतों के बीच और अत्याचार एवं ज़ुल्म व शत्रुता के इस वातावरण में तथा गुमराही एवं ग़फ़लत की इन परिस्थितियों में इस्लाम ने धीरे-धीरे अपनी किरणें फैलायीं तथा एक गिरोह (उम्मत) को अन्धकार से निकाल कर प्रकाश में ले आया बल्कि उसे दीपस्तम्भ बना दिया जो हिदायत तथा प्रचार की सेवा अंजाम देता रहा। वे चिन्तन एवं विचारधारायें, जिन के द्वारा विशाल इन्क़लाब आया तथा मानवता को जिस ने हीनता (पस्ती) से उठा कर श्रेष्ठता तक पहुंचाया, सामयिक तथा तत्कालीन परिस्थितियों के जनक न थे वरन् मनुष्य के स्वभाव एवं उस की प्रकृति में परिवर्तन किया गया तथा जब तक मानव जीवित है और इस धरती पर जीवन बाक़ी है यह सन्देश इन्सानों को सम्मान एवं श्रेष्ठता प्रदान करता रहेगा तथा जीवन में इन्क़लाब उत्पन्न करता रहेगा।

रसूल शिक्षक के रूप में

ईश ग्रन्थधारियों (यहूदी तथा ईसाइयों) में यह बात जन-प्रसिद्ध थी कि एक 'नबी' के प्रकट होने का समय बिलकुल क़रीब आ गया है। तथा इस के उचित तर्क भी थे अतः लोग समझते थे कि 'नए नबी' का आना देर तक नहीं रुक सकता। इस से पूर्व ऐसा भी हुआ है कि एक ही समय में विभिन्न इलाक़ों में एक से अधिक नबी भी आये परन्तु 'ईसा' (अलै०) के पश्चात् परिस्थितियां पूर्ण रूप से बदली हुई थीं और ६ शताब्दियां बीत चुकी थीं परन्तु अभी तक कोई नया नबी प्रकट नहीं हुआ था।

जैसे-जैसे धरती पर उपद्रव, उत्पात एवं गुमराहियां बढ़ती गयीं नए नबी के आने की आवश्यकता का अहसास बढ़ता गया। यद्यपि उस वातावरण में यदा-कदा ऐसे भी व्यक्ति थे जो इस अज्ञानता तथा गुमराही के विरोधी भी थे तथा इस 'महान पद' के इच्छुक भी। वे चाहते थे कि ईश्वर उन का चयन कर ले। इन्हीं लोगों में से एक 'उमैया बिन सलत' भी था जिस का काव्य 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) तथा 'आखिरत' की चर्चा से भरा हुआ था। यहां तक कि रसूलुल्लाह ने उस के विषय में फ़रमाया था—

> 'सम्भव है कि उमैया मुसलमान हो जाये।'
>
> —मुस्लिम, इब्ने माजा
>
> 'अम्र बिन शुरैद' कहते हैं कि एक दिन मैं रसूलुल्लाह के पीछे सवारी पर बैठा हुआ था, आप ने पूछा, 'क्या तुम्हें 'उमैया बिन सलत' की कोई कविता याद है', मैं ने कहा 'जी हां', तो आप ने कहा, 'सुनाओ' मैं ने एक कविता सुनायी तो आप ने फिर कहा, 'और सुनाओ' यहां तक कि मैं ने सौ शेर (पद्य) सुना दिये।'
>
> —मुस्लिम, इब्ने-माजा

परन्तु भाग्य ने इन कवियों तथा विचारकों की उपेक्षा कर दी तथा इस महान कार्य के लिए ऐसे व्यक्ति का चयन किया जिस ने न कभी इस की इच्छा की थी न इस के विषय में सोचा ही था। क़ुरआन कहता है—

> '(हे नबी!) तुम इस की आशा नहीं रखते थे कि तुम्हारी ओर किताब उतारी जाएगी, यह तो बस तुम्हारे रब की दयालुता है, अतः तुम काफ़िरों के पृष्ठ-पोषक न होना।'
>
> —क़सस ८६

इस का चयन इच्छा तथा आकांक्षा से नहीं किया जाता वरन् शक्ति एवं योग्यता के कारण किया जाता है। अनेकों ऐसे असफल व्यक्ति होते हैं जो चुप रहते हैं परन्तु जब उन्हें कोई उत्तरदायित्व दिया जाता है तो आश्चर्यजनक कारनामे अंजाम दे जाते हैं।

दिल एवं आत्मा का महत्त्व उन का पैदा करने वाला स्वामी ही जान सकता है। तथा जो शक्ति (ईश्वर) समूचे विश्व की हिदायत चाहती थी उस ने महान उद्देश्य के लिए महान व्यक्ति को चुन लिया। अरब निवासी अज्ञानता के युग में मुहम्मद (सल्ल०) का बड़ा सम्मान करते थे। वे आप के व्यक्तित्व एवं चरित्र में 'पूर्ण व्यक्तित्व' के लक्षण देख रहे थे। परन्तु वे यह न जानते थे कि उन का भविष्य इसी महापुरुष से सम्बद्ध होगा।

का वर्णन करता और उन का खण्डन करता है। विरोधियों के तर्कों का उल्लेख करके उन का पीछा करता है। क़ुरआन का कार्यारम्भ उस जाति में हुआ जिस के दिलों तथा दिमाग़ों पर 'कुफ्र' आच्छादित हो चुका था। ज़ुबानें उसी कुफ्र का कलिमा (मन्त्र) पढ़ती थीं। मानों तक़दीर ने इस समाज का चयन अन्य समस्त समाजों के प्रतिनिधि के रूप में किया था कि यदि इस्लाम इस समाज में संदेहों तथा शंकाओं को दूर करने में सफल हो गया तो अन्य समाजों में भली-भांति तथा निश्चित रूप से सफल हो जायेगा।

जो प्रश्न नबी (सल्ल०) के सम्मुख उपस्थित थे अथवा धारणा, विश्वास तथा आदेशों की दुनिया में पेश आ सकते थे, उन सब के पर्याप्त तथा सन्तोषप्रद उत्तर क़ुरआन में मौजूद हैं, इस प्रकार कि प्रश्न केवल पूछने वाले का प्रतिनिधित्व नहीं करता वरन् युग परिवर्तन के साथ लोगों की नित्य नई आवश्यकताओं का भी प्रतिनिधित्व करता है।

प्रश्नों तथा आपत्तियों के इस वातावरण में रसूलुल्लाह (सल्ल०) को 'इल्हाम' (ईश्वरीय संकेत) होता था कि इस प्रकार उत्तर दीजिए तथा अमुक प्रवृति रखने वालों को इस प्रकार समझाइए। इस प्रकार की आयतें अनन्त हैं जो वर्तमान तथा भविष्य में पेश आने वाले प्रश्नों के उत्तर देती हैं।

आप जब इन उत्तरों को पढ़ेंगे तो ऐसा लगेगा कि आप के हृदय पर विश्वास की वर्षा हो रही है तथा इन के द्वारा शंकाओं, भ्रमों तथा संदेहों की धूल-मिट्टी धुलती चली जा रही है।

क़ुरआन जीवित रसूल के समान है इस से प्रश्न कीजिए तथा जो उत्तर दे उसे ध्यानपूर्वक सुनिए आप सन्तुष्ट हो जायेंगे।

एक उदाहरण—क़ुरआन किस प्रकार एक प्रश्न के उत्तर में मरणोपरान्त उठाये जाने तथा कर्मफल की धारणा दिलों में बिठाता है? तथा संकल्प एवं सामर्थ्य को किस प्रकार उत्तेजित करता है? किस प्रकार स्वीकार एवं खण्डन करने, आपत्ति तथा उस के निवारण के द्वारा अपनी बातें मन में बिठाता है? मानो कोई साक्षात्कार है जो 'क़ियामत' (महाप्रलय) तक के समस्त लोगों को एकत्रित कर लेगा—

> 'क्या मनुष्य ने देखा नहीं कि हम ने उसे वीर्य से पैदा किया? फिर क्या देखते हैं कि वह प्रत्यक्ष झगड़ालू (अनुचित वाद-विवाद करने वाला) बन गया।

और उस ने हमारे लिए मिसाल दी, और अपनी सृष्टि को भूल गया, कहने लगा : कौन इन हड्डियों में जान डालेगा जबकि ये गल गयी होंगी ?

कहो : इन में वही जान डालेगा जिस ने इन्हें पहली बार पैदा किया, और वह पैदा करने का हर काम जानता है,

वही जिस ने तुम्हारे लिए हरे वृक्ष से आग बना दी, अब यह है कि तुम उस से आग दहकाते हो।

क्या वह जिस ने आकाशों और धरती को पैदा किया इस का सामर्थ्य नहीं रखता कि इन जैसे को पैदा कर दे ? क्यों नहीं ! जबकि वह कुशल स्रष्टा और ज्ञाता है,

वह तो जब किसी चीज़ का इरादा करता है, तो उस का काम बस यह है कि उसे कह दे कि हो जा ! और वह हो जाती है।

तो महिमावान् है वह जिस के हाथ में हर चीज़ का पूर्ण अधिकार है ! और उसी की ओर तुम्हें पलटना होगा।

—या'सीन० ७७ से ८३

यह सच्चे चिन्तन एवं सोच-विचार पर क़ायम तर्क का एक उदाहरण है जिस का सम्बन्ध किसी स्थान या समय विशेष से नहीं है वरन् यहां समस्त मानवता को सामान्य बुद्धि से संबोधन किया गया है। क़ुरआन के थोड़ा-थोड़ा नाज़िल होने की यही तत्वदर्शिता है। रसूल को हिदायत की गयी कि दीन की दावत के बीच जो प्रश्न सामने है उस का उत्तर यह दीजिये, फिर प्रश्न और उत्तर दोनों को वर्णन कर दिया ताकि लोग क़ियामत तक इस से लाभान्वित होते रहें।

—०—

यहां 'क़ुल' शब्द (कहो) विचारणीय है। इस विषय में 'आलिमों' ने कहा है कि इस शब्द के द्वारा अल्लाह ने अपने रसूल को शिक्षा दी है तथा रसूल इस के द्वारा जन-साधारण को शिक्षा देता है। इस आदेश के पश्चात् अन्य बातें भी जिन्हें अल्लाह ने चाहा बयान किया है जैसे शिक्षाएं, आदेश तथा उपदेश आदि।

अतः जब मुश्रिकों ने आदत के अनुसार 'दीन' की वास्तविकता से विमुख होकर रसूल के व्यक्तित्व तथा उस के अनुयायियों के जीवन पर वाद-विवाद करना चाहा तो ये आयतें नाज़िल हुई —

'कह दो : क्या तुम ने सोचा : अल्लाह मुझे विनष्ट करे और उन्हें भी जो मेरे साथ हैं या हम पर दया करे, जो भी हो

काफिरों को दुःख भरी यातना से कौन बचायेगा ?

कह दो : वह रहमान (कृपाशील ईश्वर) है। हम उस पर ईमान लाये हैं और उसी पर हम ने भरोसा किया। तो जल्द ही तुम्हें मालूम हो जायेगा कि कौन खुली गुमराही में पड़ा हुआ है।' —अल-मुल्क २८, २९

देखिये वाद-विवाद के बीच किस प्रकार सार (निचोड़ कर रख दिया) गया है ? तुम रसूल और उस के साथियों की निन्दा तथा अपमान कर के क्या लोगे, पहले अपने विषय में सोचो कि कुफ्र तथा गुमराही ने तुम्हें किस प्रकार विनाश में घेर रखा है तथा सन्मार्ग से दूर फेंक दिया है। तथा उस के साथी अपने स्वयं (अस्तित्व) के विषय में कभी नहीं सोचते, वे 'रहमान' की ओर आमंत्रित करते हैं क्योंकि वे उस पर ईमान लाये हैं तथा उसी पर भरोसा किया है। यदि तुम चाहो तो रहमान का रास्ता सब के लिए खुला हुआ है।

आवश्यक नहीं कि अल्लाह की ओर से 'कुल' (कह दो) के द्वारा कोई सन्देश देने के लिए प्रश्न ही उभारा जाये वरन् अधिकांश समय 'दावत' के नियम तथा व्यवहार बताते हुए केवल प्रारम्भ के रूप में 'क़ुल' से बात शुरू की जाती है जिस का उद्देश्य इस्लाम, उस के रसूल तथा उस की शिक्षाओं से पूर्ण रूप से परिचित करना होता है। तथा संदेहों एवं शंकाओं को जन्म लेने से पहले ही उन का द्वार बन्द करना अभिप्रेत होता है : जैसे—

'कह दो : निश्चय ही मेरे रब ने मुझे सीधा मार्ग दिखाया है, बिल्कुल ठीक 'दीन' इब्राहीम का पन्थ जो सब से कट कर एक ही का हो रहा था, और वह मुश्रिकों में से न था।
कह दो : मेरी नमाज और मेरी कुर्बानी, मेरा जीना और मेरा मरना अल्लाह के लिए है जो सारे संसार का रब है।
उस का कोई शरीक नहीं। इसी का मुझे हुक्म हुआ है, और सब से पहले आत्मसमर्पण करने वाला मैं हूं।

कहो : क्या मैं अल्लाह के सिवा कोई और 'रब' तलाश करूं, हालांकि वही हर चीज़ का 'रब' है ? और प्रत्येक व्यक्ति जो कुछ कमाई करता है उस का वह स्वयं उत्तरदायी है, कोई बोझ उठाने वाला किसी दूसरे का बोझ नहीं उठाता।'

—अल-अन्-आम १६२ से १६५

यहां रसूल से सम्बोधन वास्तव में प्रत्येक उस व्यक्ति से सम्बोधन है जो जाग्रतात्मा तथा बुद्धि-कुशल रखता हो ताकि जो शिक्षा उस के सामने पेश की जा रही है उस पर ग़ौर करे तथा उस के विषय में अपने मन से फ़ैसला करे।

यदि उस के हृदय में ईमान उत्पन्न हो गया तो वही सारे संसार के रब पर ईमान लाना है तथा इस स्थान पर आकर रसूल का काम समाप्त हो जाता है क्योंकि मन एवं बुद्धि अपने पैदा करने वाले तक पहुंच चुके हैं तथा उस के सामने संमार्ग स्पष्ट हो चुका है, इस के पश्चात् 'ख़ैर'व'शर' (अच्छाई, बुराई) ग्रहण करने का पूर्ण दायित्व मनुष्य पर आ जाता है।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का स्थान किसी साधन या माध्यम का नहीं है अर्थात् आप के कर्म का उम्मत के कर्म फल पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। क्योंकि क़ुरआन का सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक व्यक्ति जो कर्म करेगा उस का सुप्रतिफल या कुप्रतिफल उसी को मिलेगा। तथा कोई भारग्रस्त किसी अन्य का भारग्रस्त न होगा। इस स्थान पर आकर इस्लाम तथा ईसाइयत के बीच अन्तर स्पष्ट हो जाता है।

इस्लाम मनुष्य के महत्त्व को भली-भांति जानता है तथा बुलन्दी या पस्ती पर उसे भरपूर सुकर्मफल देता है परन्तु ईसाइयत में मनुष्य इतना पस्त (हीन) है कि वह प्रत्यक्ष रूप से संसार के 'रब' से अपना सम्बन्ध नहीं जोड़ सकता। इस स्थिति में एक ऐसे व्यक्ति का होना आवश्यक है जो उस की क़ुर्बानियों तथा इबादतों को उस के 'रब' तक पहुंचाये तथा उस की तौबा (पश्चाताप) को क़ुबूल कराये, परन्तु यह व्यक्ति कौन होगा ? कोई तथाकथित व्यक्ति ! अब कोई यह पाप या अपराध करे तो यह 'क़िसास' (प्रतिहत्या) नहीं देगा क्योंकि इस पाप के बदले वह पहले ही क़ुर्बानी दे चुका है। अब यदि वह मोक्ष चाहता है तो 'सदक़ा' (दान) कर दे।

इस प्रकार की अनर्थ तथा बुद्धिहीनता की बातों का जीवन संघर्ष में स्वीकार किया जाना कठिन है क्योंकि यह बातें बुद्धि तथा तर्क के विपरीत और शुद्धता एवं सत्यता से अति दूर हैं।

परन्तु इस्लाम का मामला पूर्णतः वास्तविक है। अल्लाह तआला अपने नबी से ऐसी साफ़-साफ़ बातें कहता है कि मन एवं हृदय के पट खुल जाते हैं—

> 'इन से कहो : आकाशों और धरती का रब कौन है ?—कहो : अल्लाह ! कहो : तो क्या तुम लोगों ने उस के सिवा दूसरों

को अपना संरक्षक बना रखा है, जिन्हें स्वयं अपने लिए भी किसी लाभ और हानि का अधिकार प्राप्त नहीं है ? कहो : क्या अन्धा और आंखों वाला बराबर हुआ करता है, या बराबर बराबर होते हैं अंधेरा और उजाला ? या इन्होंने जिन को अल्लाह का शरीक ठहराया है उन्हों ने भी अल्लाह की तरह कुछ पैदा किया है जिस के कारण पैदाइश का मामला इन के लिए गड्ड-मड्ड हो गया है ?—कहो हर चीज़ का पैदा करने वाला अल्लाह है, और वह अकेला और प्रभुत्वशाली है।'

—अर-रअद १६

इस प्रकार के निरन्तर प्रश्न 'बातिल' (असत्य) की धज्जियां उड़ा देते हैं। गहरी नींद सोये हुए इन्सानों को जगा देते हैं तथा उन के अन्दर सत्य को स्वीकार करने और उसे श्रेष्ठ करने हेतु मर मिटने की भावनाएं उत्पन्न कर देते हैं।

इस्लाम का रसूल इन्हीं बातों की आम घोषणा करता है एवं स्वयं उसी के लिए दौड़-धूप करता है।

—o—

इस्लाम को प्रचलित मूर्तिपूजा से घोर मुक़ाबले करने पड़े हैं। मूर्तिपूजा एक-दो युद्धों से सन्तुष्ट न हुई वरन् उस ने ज़मीन के छोटे-छोटे क्षेत्रों के लिये भीषण युद्ध किये। आम विचार यह है कि मूर्तिपूजा की आवाहक शक्तियों को उस समय अभिलाषाएं पूरी करने का अवसर मिला जब रसूलुल्लाह अपनी जिम्मेदारी पूरी कर के अपने अल्लाह से जा मिले और 'अबूबक्र' (रज़ियल्लाहु अन्हु) के शासन काल में समूचा अरब द्वीप इस्लाम के पीछे पड़ गया और फिर मुसलमान पुनः इस्लाम परित्याग के फ़ित्ने के तूफ़ान में ऐसे घिरे कि असत्य से युद्ध में उलझ गये। अतः इस फ़ित्ने को दबाने और इस का सिर कुचलने के लिए उन्हें जो क्षति एवं हानि उठानी पड़ी वह मुश्रिकों से रसूलुल्लाह की जंगों के समय में भी नहीं उठानी पड़ी थी।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) की मृत्यु के पश्चात् जो 'हक़' (सत्य) के अनुयायी हक़ पर डटे रहे, सही अर्थों में वे ही मुसलमान थे क्योंकि 'इस्लाम' सिद्धान्तों से रिश्ता स्थिर करने का नाम है व्यक्तियों से नहीं। अल्लाह तआला ने अपने नबी को तथा उन के माध्यम से समस्त मुसल-मानों को शिक्षा दी है कि जिस चीज़ को उन्होंने 'सत्य' या सही समझ लिया है उस से चिमटे रहें और उस से लेशमात्र भी विमुख न हों चाहे

मेधावी से कहते है : 'ग़फ़लत
इन दोनों के विषय में कमज़ो
में अभिप्रेत शक्ति तथा वीरता
प्रोत्साहित करना होता है। ि
दिखाओ तो वह मौत के मुंह में
जो भी अर्थापन किया जाय
हसन:' (सदाचार का आदर्श)
अपना कर ही लोग उत्तम मानव
को भी तथा उस के हाथ हमें भी
भ्रष्ट लोगों से दूर रहें। उनकी
और उन की साज सज्जा, साथ
समझें क्योंकि ऐसा समय भी आ

है जिसका ग्रहण करना कठिन हो जाता है दूसरी ओर 'बातिल' (असत्य, मिथ्या) शक्तिशाली हो जाता है और उस से मित्रता करना या उस के साथ उदार बनना सुगम हो जाता है।

यह अक़ीदे या धारणा के मानने वालों की जिम्मेदारी है कि वे अपने पहलू को सशक्त बनायें और सामने के अवरोधों तथा बाधाओं को पार कर जायें।

इन भावनाओं और अहसासों को परवान चढ़ाने वाले आदेश अति स्पष्ट हैं। अतः ईश्वर के इस आदेश के पश्चात् टाल मटोल की क्या गुंजाइश रह जाती है ?

> '(हे नबी !) यदि तुम ने शिर्क किया तो तुम्हारा किया-धरा अकारथ जायेगा और निश्चय ही तुम घाटा उठाने वालों में से हो जाओगे। नहीं, बल्कि अल्लाह ही की इबादत करो, और कृतज्ञता दिखलाने वालों में से हो।' —अज़-ज़ुमर ६५,६६

इस सम्बोधन तथा शैली में बड़ा प्रभाव है। इस हिदायत से मुसलमान शिर्क से न केवल दूर-दूर रहेंगे वरन् सहस्रों बार बचेंगे।

मुसाफ़िरों के जो मत ऊपर बयान हुए हैं वे निम्नलिखित आयत के भी अनुकूल हैं—

> 'यदि तुझे उस चीज के बारे में कोई सन्देह हो जो हमने तुझ पर उतारी है, तो उन लोगों से पूछ ले जो तुझ से पहले से किताब पढ़ रहे हैं।' —यूनुस ९४

इस स्थान पर सम्बोधन पाठक से हो, श्रोता से हो, या प्रेरणा के लिए रसूल से हो—हालांकि रसूल का अपनी नुबूव्वत के विषय में सन्देह करने का प्रश्न ही नहीं है—जैसा कि अन्य सूरः में कहा गया है—

> '(हे नबी !) कहो यदि रहमान (कृपाशील अल्लाह) की कोई औलाद होती तो सब से पहले इबादत करने वाला मैं होता।' —अज़-ज़ुख़रूफ़ ८१

परन्तु किताबधारियों से प्रश्न करने का मतलब क्या है ? मुफ़स्सिरों का मत है कि यहां अभिप्राय उन किताबधारियों (अहलेकिताब) से है जो सत्य एवं संमार्ग पर चलते हैं जिन्होंने पूछे जाने पर सत्य की गवाही कभी नहीं छिपाई।

मेरे मतानुसार किताबधारियों में सच्चे एवं सत्यनिष्ट बहुत कम थे जिन्हें आधार बनाकर इस प्रकार की कोई बात नहीं कही जा सकती थी

एक मुसलमान का ध

तथा स्रोतों के क्रम का ध्

प्राप्त करता है। तथा

और सुरक्षित रखने वाल

सुरक्षित प्रवचन व कथन

क़ुरआन इस्लाम की

स्पष्ट आयतों में इस्ल

मौजूद है और अल्लाह

अत: इस के द्वारा दीन व

तक के लिए इस की

(रसूलुल्लाह) जिसे अ

या उस का व्यवहारिक कार्यि
फ़र्ज़ आयद होता है कि जिस
उसी प्रकार इस के कार्यान्यन
(आदेशों) व 'नवाही' (नि
अनिवार्य ठहराया है। क्योंकि
वरन् अपने 'रब' के आदेशानु
अल्लाह का आज्ञा पालन है।
अल्लाह तआला फ़रमाता है—
(१) 'जिस ने रसूल का अ
आदेश माना, और जि

लोगों पर कोई रखवाला बना कर तो भेजा नहीं है।'

—अन्-निसा ८०

(२) और (हे मुहम्मद !) हम ने तुम पर अनुस्मारक उतारा है ताकि तुम लोगों के सामने खोल-खोल कर बयान कर दो जो कुछ उन की ओर उतारा गया है, और ताकि वे सोच विचार करें।'

—अन-नह्ल ४४

(३) 'और रसूल तुम्हें जो कुछ दे, उसे ले लो। और जिस चीज से तुम्हें रोक दे, उस से रुक जाओ।'

—अल-हश्र ७

यह एक वास्तविकता है कि 'इलहाम' (ईश्वरीय संकेत) प्रगतिशील मनुष्य की योग्यताओं में बाधक नहीं होता। नबी तथा रसूल फ़रिश्तों के नियन्त्रण में न थे कि जब वे चाहते बुलवाते जब चाहते मौन रखते। यदि ये लोग सन्देष्टागण न भी होते तो अपनी योग्यताओं, प्रमुखताओं तथा अधिकार की बुनियाद पर आदर योग्य तथा सम्मानित व्यक्ति अवश्य थे तथा जीवन के प्रत्यक्ष क्षेत्र में अग्रगामी रह सकते थे।

'वह्य' किसी मनुष्य पर आकस्मिक नहीं आती, वरन् इस का पात्र वही होता है जो इंसानों में सब से अधिक सं मार्गी अनुग्रही एवं सत्यशील होता है जिस का आचरण सब से श्रेष्ठ तथा चिन्तन सब से दृढ़ होता है। इन लोगों का चरित्र यूं ही बरबाद नहीं किया जा सकता है। न उन की उपेक्षा की जा सकती है, जबकि इस शिष्टता की जमानत ले ली गयी हो और इस स्वभाव व प्रकृति तथा प्रतिभा व विवेक को उचित दिशा दे दी गयी हो ?

पैग़म्बरों का पूरा सिलसिला कल्याण व हिदायत का भण्डार है। इसी मुहम्मद (सल्ल०) का तरीक़ा अल्लाह की किताब के साथ उस की शरीअत का स्रोत था परन्तु उद्धरित सुन्नतें वही स्वीकार की जायेंगी जो इस शरीअत को लेने तथा ग्रहण करने में जागृति व गति उत्पन्न कर दें। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ओर सम्बंधित प्रत्येक चीज को स्वीकार नहीं किया जा सकता है न यह जरूरी है कि प्रत्येक वह हदीस जिसका सम्बन्ध उचित हो, तथा उसे भली भांति समझा भी गया हो या समुचित स्थान पर रखा भी गया हो।

मुसलमानों को गढ़ी हुई हदीसों से इतनी तकलीफ़ नहीं पहुंची जितनी उन हदीसों से जिनका अर्थ नहीं समझा जा सका तथा उन का अवसर व स्थान ठीक निश्चित न हो सका। यहां तक कि अन्तिम काल में ऐसे

परन्तु इस के बावजूद इस्ला

को उन्हीं लोगों तक सीमित

हों।

(१) अत: हदीसों में स

जो क़ुरआन के ज्ञान का अध्य

लाभान्वित न हो चुका हो ?

सूक्ष्मता व कुशलता से एक

अधिकारों को निश्चित कर

निर्धारण इस प्रकार करता

सन्तुलित रहे और इबादतें

महत्व पर आच्छादित न हों।

जो व्यक्ति क़ुरआन की इन वास्तविकताओं को नहीं समझ पाता उस के लिए कोई अन्य चीज़ इन का बदल सिद्ध नहीं हो सकती तथा उस के मन में इस्लाम का जो स्वरूप बनता है वह क़ुरआन में इस्लाम के स्वरूप तथा विचार से वंचित होता है। जिस में गोत्र वंश और रंग व वर्ण भेद भी अपना काम कर जाते हैं। जबकि दोनों में प्रायः बड़ा विरोध होता है।

सहाबा किराम इस बात के इच्छुक तथा लोभी दिखाई देते हैं कि क़ुरआन ही उन के जीवन का आरम्भ तथा अन्त हो वही हृदयों में सर्व-श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करे तथा कोई अन्य चीज इस सम्मान तथा स्थान को प्राप्त न कर सके।

'इब्न्-अब्दुल बर्र' अपनी पुस्तक 'जामे बयानुल इल्म' में कहते हैं—

जाबिर बिन अब्दुल्लाह बिन यसार से रिवायत है कि मैंने अली (रज़ि०) को कहते हुए सुना कि मैं प्रत्येक उस व्यक्ति से आग्रह करता हूं जिसके पास कोई किताब है कि वह उसे मिटा दे क्योंकि पिछली जातियां इस लिए नष्ट हुईं कि उन्होंने अपने आलिमों की बातों का अनुसरण किया और अपने रब की किताब (क़ुरआन) को छोड़ दिया।

ज़ुह्री से रिवायत है, वह उर्वा से रिवायत करते हैं कि उमर बिन खत्ताब ने हदीसें लिखने का इरादा किया और इस विषय में सहाबा से परामर्श किया तो उन का परामर्श था कि लिख सकते हैं अतः हज़रत उमर (रज़ि०) एक माह तक इस्तिखारा (ईश्वर से खैर चाहना) करते रहे फिर एक दिन अल्लाह ने उन के दिल में दृढ़ संकल्प उत्पन्न कर दिया और उन्होंने फ़रमाया, मैं हदीसें लिखना चाहता हूं मुझे वे जातियां मालूम हैं जिन्हों ने तुम से पहले पुस्तकें लिखीं तथा उन्हीं पर अड़ी रहीं और अल्लाह की किताब को छोड़ दिया और मैं खुदा की क़सम कभी गलत मलत नहीं कर सकता।'—एक रिवायत में ये शब्द हैं कि—'मैं अल्लाह की किताब को किसी भी चीज के कारण कभी नहीं भूल सकता।'

'इब्न्-सीरीन' कहते हैं कि बनू इस्राईल (यहूदियों) के अन्दर गुमराही उन पुस्तकों के द्वारा आयी जिन्हें उन्हों ने अपने पूर्वजों से विरासत में प्राप्त किया था।

'अल्कमः' और 'अस्वद' 'अब्दुल्लाह बिन मस्ऊद' (रज़ि०) के पास एक 'सहीफ़ः' (धर्म ग्रन्थ) ले कर आये जिस में एक मनोरंजक कथा थी, अब्दुल्लाह बिन मस्ऊद ने अपनी दासी को हुक्म दिया कि पानी लाये और उसे अपने हाथ से मिटाने लगे और क़ुरआन की यह आयत पढ़ने लगे—

'इस क़ुरआन को तुम्हारी ओर 'वह्य'[1] कर के हम तुम्हारे सामने उत्तम ढंग से (वृत्तांत तथा घटनाएं) बयान करते हैं।'

—यूसुफ़ ३

उन दोनों ने कहा : 'इस में एक मनोरंजक कथा है' आप उसे मिटाते जाते कि ये हृदय खाली बर्तन के समान हैं, इन्हें क़ुरआन से भरो और कोई चीज़ इन में न रखो। यह धर्म ग्रन्थ किताब धारियों की मनोरंजक घटनाओं पर आधारित था।

'आमिर शो'बी' 'क़ुर्ज़ा बिन का'ब' से रिवायत करते हैं कि हम इराक़ की यात्रा के इरादे से चले तो हज़रत 'उमर' रज़ि०) हमारे साथ 'हरीर' तक आये। उन्होंने पूछा : 'जानते हो मैं तुम्हारे साथ क्यों चल रहा हूं ?' लोगों ने कहा : 'हम अल्लाह के रसूल के सहाबी हैं आप हमारे साथ चल कर हमारा सम्मान तथा उत्साह बढ़ाना चाहते हैं।' आप ने कहा : तुम लोग ऐसी बस्ती में जा रहे हो जहां क़ुरआन इतना पढ़ा जाता है जैसे मधुमक्खियां हर समय भनभनाती रहती हैं, तुम उन्हें हदीसों के लिये विवश न करना, क़ुरआन को सुरीति से पढ़ो तथा रिवायतों को कम बयान करो। जाओ मैं तुम्हारे काम में तुम्हारा साझी हूं।' जब क़ुर्ज़ा आये तो लोगों ने उन से हदीसें बयान करना शुरू किया, उन्होंने कहा, 'उमर बिन ख़त्ताब ने हमें इस से रोक दिया है।'

हज़रत उमर (रज़ि०), अली (रज़ि०) और अन्य सहाबा सुन्नत के इन्कारी न थे परन्तु वे क़ुरआन को तवज्जुह एवं सम्मान का सर्वप्रथम पात्र समझते थे और यही स्वाभाविक प्रशिक्षण भी है। कुछ तत्वों के विवरण व आंशिकताओं में पड़ने से पहले पूरे क़ानून का बोध होना आवश्यक है क्योंकि इन विवरणों व आंशिकताओं की प्रत्येक व्यक्ति को आवश्यकता नहीं पड़ती वरन् अधिकांश समय उन आंशिकताओं से मन इस प्रकार भर जाता है कि बुनियादी सिद्धान्त और अनिवार्य नियमों के लिये उन में कोई स्थान बाक़ी नहीं रहता। यह सिद्धान्त इस लिये भी महत्वपूर्ण है कि हदीसों की रिवायतों का जो तरीक़ा ग्रहण किया जाता है वह एक ही स्थान पर उन समस्त सुन्नतों और रसूल के कथनों को एकत्रित कर देता है जो विभिन्न स्थानों, विभिन्न परिस्थितियों, तथा विभिन्न समयों में बिखरे हुए हैं।

'उर्वा बिन ज़ुबैर' 'आइशा' (रज़िअल्लाहु अन्हा) से रिवायत करते हैं कि उन्हों ने फ़रमाया : 'क्या तुम्हें अबू हुरैरा पर आश्चर्य नहीं होता वह आकर मेरे कमरे की बग़ल में बैठ जाते

हैं और हदीसों की रिवायतें बयान करते हैं और मुझे सुनाते हैं जब कि मैं 'तस्बीह' (ईश्वर प्रशंसा का जप) में लीन होता हूं। वह मेरी नमाज समाप्त होने से पहले ही चले जाते हैं यदि मैं उन्हें पाती तो उन से कहती कि अल्लाह के रसूल तुम्हारी तरह हदीसें नहीं बयान करते थे।'

—बुखारी, मुस्लिम, अबू दाउद

(२) क़ुरआन के समझाने में दक्षता प्राप्ति के पश्चात् हदीसों के समझने का चरण आता है। जो व्यक्ति हदीसों को समझ ले उस के लिये अच्छा यही है कि अपनी जबान पर क़ाबू रखे और हदीसों का अभिप्रेत तथा उद्देश्य जाने बिना उन्हें रिवायत न करे यद्यपि स्पष्ट शब्द उस की समझ में आ चुके हों।

प्राचीन समय से ही ऐसे व्यक्तियों के कारण 'सुन्नत' बरबाद होती रही है जो अनगिनत हदीसें याद तो कर लेते हैं परन्तु बहुत कम हदीसों को समझ पाते हैं। 'हज़रत आइशा' (रजि०) हजरत अबू हुरैरा की, रिवायतों पर इस लिये आश्चर्य नहीं कर रही थीं कि उन्हें झूठा समझ रही हों वरन उन के रिवायत करने की शैली तथा ढंग उन परिस्थितियों और वातावरण को मिथ्या ठहराते थे जिन में ये हदीसें कही गयी थीं। मुस्लिम ने रिवायत की है कि हजरत उमर ने अबू हुरैरा को मार दिया जब उन से इस हदीस की रिवायत सुनी कि, 'जिस ने 'ला इलाहा इल्लल्लाहु' को कहा वह जन्नत में दाखिल हो जायेगा।' इस लिये कि हजरत उमर ने देखा कि अबू हुरैरा इस हदीस को उन लोगों के सामने बयान कर रहे हैं जो केवल यह जानते हैं कि 'इस्लाम एक कलिमा है जो जबान से अदा हो जाये तथा उसके पीछे कर्म न हो।' (मुस्लिम) यदि स्थिति यह हो तो हदीस रिवायत करने की अनुमति देने से रोक देना अच्छा है चाहे वह हदीस सहीह हो।

इब्न्-अब्दुल बर्र ने हजरत अबू हुरैरा ही से रिवायत की है कि 'मैं तुम से ऐसी हदीसें बयान कर रहा हूं कि यदि उन्हें उमर बिन खत्ताब के समय में बयान करता तो वह दुर्रे से मेरी पिटाई कर देते।'

मेरे विचार में इस मनाही के लिये हजरत उमर की नीति यह कार्य कर रही थी कि सर्वप्रथम समाज की बुनियाद क़ुरआन की शिक्षाओं पर होनी चाहिये, उन्हीं पर सोच विचार होना चाहिये तथा उन्हीं से मसलों का निष्कर्षण होना चाहिये। यदि इस के पश्चात् हदीसें रिवायत की जायें

उस समय याद की थी जब तुम्हारा वुजूद भी न था परन्तु उस का अर्थ मुझे आज मालूम हुआ ।'

अबू यूसुफ़ फ़क़ीह ने वह चीज़ पा ली जो आ'मश जैसे हदीस के हाफ़िज़ से निहित रही। डर की बात यह नहीं है कि बिना समझे याद कर ली जाये बल्कि सावधानी इस बात की होनी चाहिये कि मामले को मूल वास्तविकता के अतिरिक्त न समझ लिया जाये।

हदीसों का कलात्मक क्रम यह है कि ईमान का अध्याय अलग है और न्याय तथा फ़ैसले सम्बन्धी अध्याय अलग। इसी प्रकार अध्यायों में विभाजित हैं जैसी कि ये संग्रहीत हम तक पहुंची हैं।

चूंकि इस्लाम इन समस्त वास्तविकताओं का नाम है अतः 'सुन्नत' कपड़ों के व्यापार स्थान के समान बन गयी है जिस में इस के विभिन्न पहलुओं में विभाजित कर दिये गये हैं। कहीं टोपी है तो कहीं पाजामा किसी दुकान पर कुर्ते बिक रहे हैं तो किसी पर चादरें।

प्राकृतिक तरीक़ा यह है कि जो कपड़ा खरीदना चाहता है वह समस्त पहलुओं पर नज़र रखे कि सर से पैर तक अपना शरीर छिपा सके, परन्तु प्रायः देखने में आता है कि कोई दो टोपियां ही खरीद रहा है तो कोईरूमाल या तौलिया, बड़े चाव से ख़रीद रहा है परन्तु नग्न है।

यह उन गिरोहों का उदाहरण है जो सुन्नत की प्राप्ति में लगे, फिर लम्बे चक्कर लगाने के पश्चात् अवाम के सामने आये तो किसी के हाथ में मिस्वाक (टूथ ब्रश) तथा अमामा (पगड़ी) था जिसे उस ने सुन्नत समझ लिया था और इस्लामी शिआर (चिन्ह) क़रार दे लिया था। इस का कारण यह है कि ये उस बाज़ार से दाख़िल हुए जिस में सब कुछ था। दीन को किसी एक हदीस या सीमित सुन्नत में परिवेष्टित (घिरा हुआ) समझकर उस से बाहर निकल आये और उस के परिणामस्वरूप क़ुरआन और सुन्नत दोनों को ग़लत समझने लगे।

(३) सुन्नत में पर्याप्त समय जुटाने के बावजूद अपने अभीष्ठ को न पा सकना मुसलमानों के हक़ में अत्यधिक हानिकारक सिद्ध हुआ। उन के अन्दर नित्य नये तरीक़े व आदेश संकीर्ण एवं सीमित रीतियां एवं संस्कार फैल गये जिन का क़ुरआन व सुन्नत की रूह से कोई सम्बन्ध नहीं था। यदि हदीसों का अध्ययन किया जाये तो वे बुनियादहीन ठहरें और फ़िक़्ह में खोज की जाये तो उन का कहीं सुराग न लग सके।

इस्लाम तमाम महत्वपूर्ण मामलों में आदेश का एक संग्रह प्रस्तुत करता है जो क़ुरआन और हदीसों में बयान हुए हैं। वे समस्त आदेश पूर्ण

हैं, एक दूसरे से सम्बद्ध हैं तथा प्रत्येक दूसरे का समर्थन तथा पुष्टि करता है। यदि क़ुरआन व सुन्नत के किसी प्रमाण में कोई बात ऐसी है जो अन्य प्रमाणों से टकराती है तो उसका इस प्रकार अर्थापन किया जायेगा कि उन तमाम प्रमाणों में अनुकूलता सम्भव हो सके या जो तर्क एवं प्रमाण के विचार से प्रधानता योग्य होगा उसे स्वीकार कर लिया जायेगा और दूसरे प्रमाण को रद्द कर दिया जायेगा।

इसी कारण जांचकर्ताओं का कहना है कि 'आहाद हदीसें' (वे हदीसें जिन के उल्लेखकर्ता संख्या में निरन्तर न हों) स्वीकार योग्य न होंगी यदि क़ुरआन के शब्दों से टकराती हों या स्पष्टादेश (नस्स) की विरोधी हों, या ऐसे 'क़ियास' (अनुमान) से टकराती हों जिस की बुनियाद क़ुरआन हो। परन्तु जांचकर्ता, फ़ुक़हा (शास्त्रवेत्तागण) और हदीस के हाफ़िज़ों की रिवायत की हुई हदीसों के बीच अन्तर करते हैं।

हम एक उदाहरण पेश करते हैं। एक हदीस को ग़लत समझने के कारण मुसलमानों को बरबाद और बेकारी में फांस दिया गया है।

अधिकांश मुसलमान कहते हैं कि स्त्री किसी को न देखे और न कोई पुरुष उसे देखे। अतः नगर में औरतें सिर से पांव तक ढकी हुई चलती हैं तथा ऊपर से कपड़े के दो टुकड़े (मुख पर) लगे रहते हैं ताकि देखने की सम्भावना ही न रहे।

> इस प्रचलित विचार की बुनियाद वह हदीस है जिसे मैं ने 'इमाम-हरम' (काबा के इमाम) को जुमा के ख़ुत्बे में कहते सुना कि रसूलुल्लाह ने अपनी पत्नियों के लिए यह नापसन्द किया कि वे अब्दुल्लाह बिन-उम्म् मकतूल (यह नेत्रहीन थे) को देखें। अतः आप की पत्नियों ने यह तर्क दिया कि वह तो नेत्रहीन हैं हमें नहीं देख सकते, तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया: तो क्या तुम दोनों भी नेत्रहीन हो।[1]
>
> —अबू दाऊद, तिर्मिज़ी

मुझे इमाम के इस हदीस के बयान करने पर बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि हदीस के आलिमों ने इस पर आपत्तियां उठायी हैं। और यह सुन्नत से अनभिज्ञता का परिणाम है कि स्त्रियों के नित्यकर्म, उन की जीवनशैली तथा समाज से उन के सम्बन्ध की दशा के विषय में उस से तर्क किया

---

१. इस अवसर पर रसूलुल्लाह की दो पत्नियां हज़रत मैमूना उम्म्-सल्मः घर में थीं।

—अनुवादक

जाये। न जाने हम उन हदीसों को क्यों भूल जाते हैं जिन्हें बुख़ारी ने हदीसोल्लेख किया है जब कि ये हदीसें अधिक 'सहीह' तथा प्रमाणित व शुद्ध हैं ?

> इमाम बुखारी ने हज़रत अनस द्वारा उल्लेख किया है कि जब 'उहुद' के युद्ध में मुसलमानों को पराजय हुई और उन्होंने नबी का साथ छोड़ दिया तो मैं ने आइशा बिन्त अबू बक्र और उम्म्-सुलैम को देखा कि वे दोनों पांयचे चढ़ाये हुए थीं मैं उन दोनों की पिंडलियों की 'पाजेब' देख रहा था। दोनों अपनी पीठों पर मशकीजे भर कर लातीं और घायलों के मुंह में डाल देतीं। फिर जातीं और पानी भर कर लातीं और उन के मुंहों में उंडेल देती थीं' —बुख़ारी

इमाम बुखारी उल्लेख करते हैं कि मैं ने हज़रत 'अनस' (रज़ि०) को कहते सुना कि अल्लाह के रसूल 'बिन्ते सल्मान' के पास गये और टेक लगाकर बैठ गये। फिर आप हंस पड़े तो उन्हों ने हंसने का कारण पूछा आप (सल्ल०) ने फ़रमाया—'मेरी उम्मत के कुछ लोग अल्लाह के मार्ग में 'कैसपियन' समुद्र की यात्रा करेंगे। वे सिंहासन पर बैठे महाराजाओं के समान होंगे।' उन्हों ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! दुआ कीजिये कि अल्लाह मुझे भी उन्हीं लोगों में शामिल कर ले।' अतः आप (सल्ल०) ने दुआ की कि, हे ईश्वर ! तू इस स्त्री को इन लोगों में शामिल कर ले।' फिर आप दोबारा हंस पड़े तो उन्हों ने फिर हंसने का कारण पूछा। आप (सल्ल०) ने फिर वही उत्तर दिया तो उन्हों ने पुनः निवेदन किया कि 'अल्लाह से दुआ कीजिये कि मुझे उन्हीं लोगों में शामिल फ़रमा ले।' रसूलुल्लाह ने फ़रमाया कि 'तुम अग्रिम लोगों में हो' पीछे वालों में नहीं। हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि इस ख़ातून ने उबादा बिन सामित से शादी कर ली और बिन्ते क़ुरज़ा के साथ समुद्र की यात्रा की। वापसी में अपनी सवारी से गिर गयीं और उन का निधन हो गया।'

'जंग में स्त्रियों का पुरुषों तक मशकीजे ढोने का अध्याय, में इमाम बुख़ारी बयान करते हैं कि उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) ने मदीना की औरतों में बालियां (कानों में पहना जाने वाला गहना) वितरित कीं तो एक अति उत्तम बाली बच गयी। आप के कुछ साथियों ने कहा : 'अमीरुल

पुरुषों के प्रशिक्षण की विधि
कारावास तथा क़ैद की पा
परिणाम निकलना चाहिये
छोड़ कर हदीसों को औ
इमामों के मतों की ओर बढ़े
फिर इमामों के मतों से
के ढंग तक पहुँचे।

---

१. हज़रत अली की पुत्री थ
था। इन की माता फ़ाति
हुई।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु
प्राकृतिक नियमों के अनुसार
नियमों व तरीक़ों से क्षण भर

इंसान होने की हैसिय
पश्चात् सन्तुष्टि भी होती थी
थे। आराम भी करते थे त
दयनीयता व दुखद स्थिति प्र
आप को बिच्छू ने भी काटा
अनुवादक) परन्तु अवाम स्व
हैं जिन्हें कोई सामान्य नि
अपनी आवश्यकताओं पर

थे और आप का जीवन अल्लाह
रखता था जो विशिष्ट व्यक्तियों

परन्तु आप का जीवन एक
आमन्त्रण का कर्तव्य अंजाम दे
काफ़िरों से संघर्ष व युद्ध करता है
व्यस्त रहता है, यहां तक कि विश्व
जीवन का निर्माण निस्सन्देह क़ुरआ
यद्यपि क़ुरआन चमत्कारी
योग्यताओं को जाग्रत करती है।
रूप है जो आप के सामने पेश अ
करने पर उभारते हैं। इस हैसि

के सामान्य विवेक को सुदृढ़ एवं समुचित बनाने में सहायक होती है।

(१) 'निश्चय ही हम ने इसे अरबी क़ुरआन बनाया है ताकि तुम समझो।' —अज-ज़ुख़रूफ़ ३

(२) 'एक किताब है जिस की आयतें खोल खोल कर बयान हुई हैं, 'क़ुरआन' है अरबी में उन लोगों के लिये जो ज्ञान रखते हैं। शुभ सूचना देने वाला और सचेत कर्ता है।'

—हा० मीम० अस-सजदा ३,४

अरबों तथा यहूदियों में मूल अन्तर यह है कि अरबों के लिये क़ुरआन हिदायत का वह प्रकाश है जो बुद्धिमान को मार्ग दिखा देता है, और यहूदियों के लिये यातना वह कोड़ा है जो बुद्धिहीन पशु पर आगे चलने के लिये बरसाया जाता है वह एक पग आगे बढ़ता है तो विवशतापूर्वक कई पग पीछे लौट आता है।

अब्दुल्लाह बिन रवाहा यह कविता पढ़ा करते थे— कविता का अनुवाद,

'और हमारे बीच अल्लाह के रसूल हैं वह ईश्वर की पुस्तक की तिलावत (पाठ) करते हैं जब प्रातः होता है और प्रभात की सफ़ेदी प्रकट होती है।
हम मार्ग से भटके हुये तथा पथभ्रष्ट थे आप (सल्ल०) ने हमें हिदायत का मार्ग दिखाया अतः हमारे हृदय सन्तुष्ट हैं कि जो कुछ आप ने फ़रमाया है वह अवश्य होकर रहेगा।

आप रात बिताते हैं तो आप के पार्श्व बिस्तर से अलग रहते हैं जब कि मुश्रिकों के शयन स्थान रात भर बोझिल रहते हैं।'

कुछ विचारक समझते हैं कि रसूलुल्लाह का 'मोजज़ा' (ईश्वरीय चमत्कार) केवल क़ुरआन है, वे इस के शाब्दिक अर्थ को सामने रखते हैं अर्थात् ऐसी चीज़ जो अस्वाभाविक हो तथा जिस के विषय में चुनौती दी जा सके। इस प्रकार की चुनौती केवल क़ुरआन ही ने दी है।

इस मत के निकटवर्ती अर्थ की ओर हमारा झुकाव है परन्तु 'मोजज़े' के शाब्दिक अर्थ के कारण नहीं वरन् उन श्रेष्ठ उद्देश्यों के मुक़ाबले में जिन्हें इस्लाम लेकर आया है।

परन्तु इन 'मोजज़ों' का न अक़ीदे से कोई सम्बन्ध है न कोई कर्म से। जो व्यक्ति उपद्रव तथा अशान्ति फैलाये तो उसे, उस का यह ईमान, कि अल्लाह के रसूल पर बदली ने छाया की थी या पत्थर ने आप (सल्ल०) से बात की थी, अपराधी होने से नहीं बचा सकता। इस के विपरीत किसी

सुकर्मी पुरुष का स्थान तथा सम्मान 'मोजजों' के इन्कार के कारण कम नहीं हो जाता।

इन विवादों का सम्बन्ध ज्ञान सम्बन्धी तर्कों से है क्योंकि इन घटनाओं में बहुत से अर्थ निहित हैं जिन के उचित या अनुचित होने का ईमान से कोई सम्बन्ध नहीं है।

—०—

मुसलमानों में पुण्यात्माओं तथा शुद्ध चरित्रवानों के लिए 'मोजजों' और 'करामतों' (चमत्कारों) की बड़ी धूम है। सामान्यत: लोग 'दीन' में प्रतिष्ठित स्थान प्राप्ति तथा कारणों के नियमों की अवज्ञा को खलत-मलत कर देते हैं। यहां तक कि एकेश्वरवादी ज्ञान के लेखकों ने यह दावा भी कर दिया है कि—

'ईश्वर भक्तों के लिए 'करामत' (चमत्कार) सिद्ध हो चुकी है अत: जो इस का इन्कारी हो उस की बात मत सुनो।'

एकेश्वरवादी ज्ञान से इस सिद्धि का केवल इतना ही सम्बन्ध है जितना व्याकरण तथा खगोल शास्त्र से है। अर्थात् दीन की वास्तविकता इन विवादों से बहुत श्रेष्ठ है चाहे वह नकारात्मक हो अथवा हकारात्मक।

ईश्वर भक्तों के मोजज़े तथा करामतें जिन में जन-साधारण फंसे हुए हैं, वास्तव में उन मूर्खताओं, सुस्ती, शिथिलता तथा काहिली के दोषों के निकृष्टतम रूप हैं जो उन के सीनों में निहित हैं। जैसे सोने वाला विभिन्न प्रकार के स्वप्न देखता है जो उस व्याकुलता, विकलता तथा अस्तव्यस्तता के रूप होते हैं जो दिल एवं मस्तिष्क पर आच्छादित होते हैं तथा स्नायु व्यवस्था को अपनी पकड़ में विवश रखते हैं।

अमुक 'बुज़ुर्ग' ने बिना चाबी के ताला खोल दिया, बिना परों के हवा में उड़ान भरी, किसी ने पत्थर पर पेशाब कर दिया तो सोना हो गया, अमुक व्यक्ति परोक्ष ज्ञानी है और उस ने ईश्वर से समझौता कर रखा है।

इस प्रकार की अनेकों व्यर्थताएं हैं जो दीन तथा दुनिया की वास्तविकताओं से अनभिज्ञ तथा अन्जान होने का पता देती हैं। और बताती हैं कि इन के जनक तथा प्रचलितकर्ता बुद्धिहीन, दिल के कोरे तथा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आप के प्रिय सहाबा की पवित्र जीवनियों से अपरिचित थे।

मुहम्मद (सल्ल०) कोई काल्पनिक दर्शनशास्त्री न थे जो अपनी कल्पनाओं तथा तरीक़ों में भटकता रहे फिर व्यर्थताओं पर अपने जीवन

कहा—

'और जब तुम उन

हालत) में उन्हें न

उन में से एक गिर

हथियार साथ

तुम्हारे पास से हट

नमाज़ नहीं पढ़ी है

भी अपने बचाव

काफ़िर चाहते हैं

आसावधान हो ज

यदि वर्षा के कार

तुम पर इस में को

अपने बचाव का सामान लिए रहो। —अन्-निसा १०२

ध्यान देने योग्य बात है कि ठीक नमाज़ में जबकि वे अल्लाह के सामने खड़े हैं इन्हें सावधानी तथा चेतावनी की कितनी शिक्षा दी जा रही है? अल्लाह ने इस आशा और विकार की कोई समायी नहीं छोड़ी कि उनकी सहायता के लिए फ़रिश्ते उतरेंगे! यदि वे स्वयं अपनी खिदमत नहीं करेंगे तो कोई उन की सेवा नहीं करेगा। यह है अल्लाह का सम्बोधन अपने नबी तथा उस के सहाबियों (साथियों) से!

'उहुद' की लड़ाई में जब मुसलमान इस शिक्षा से असावधान हो गये तो उन्हें एक शक्तिशाली तमाचा पड़ा, उन के सत्तर वीर पुरुष मारे गये तथा पराजय का अपमान सहना पड़ा। उस समय कुफ़्र के सरदार अबू-सुफ़ियान ने खड़े हो कर नारा लगाया: 'हुबूल'[1] की जय हो!'

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को सख़्त परीक्षाओं तथा कड़ी परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। आप ने जंग की, घायल हुए और चोटें खायीं।

हज़रत अबू हुरैरा से हदीसोल्लेख है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने 'उहुद' की लड़ाई के दिन फ़रमाया—

> 'अल्लाह का कठोर प्रकोप उस क़ौम पर जिस ने अपने नबी के साथ यह व्यवहार किया—और आप अपने सामने के दांत की ओर इशारा कर रहे थे—अल्लाह का भयानक प्रकोप हुआ उस व्यक्ति पर जिसे अल्लाह का रसूल अल्लाह के मार्ग में क़त्ल करे।' —बुख़ारी, मुस्लिम

अनस (रज़ि०) कहते हैं कि उहुद के युद्ध में रसूलुल्लाह का सामने का दांत शहीद हुआ अर्थात् टूटा और सर पर चोट आयी। आप (सल्ल०) अपने चेहरे से ख़ून पोंछते जाते थे और कहते जाते थे—

> 'वह क़ौम कैसे सफल हो सकती है जो अपने नबी को घायल कर दे और उस के दांत तोड़ दे जबकि वह उन्हें अल्लाह की ओर बुला रहा हो?'

तो अल्लाह ने यह आयत उतारी—

> 'तुम्हें इस मामले में कोई अधिकार नहीं है—चाहे वह उन्हें क्षमा करे या उन्हें यातना में ग्रस्त करे क्योंकि वे ज़ालिम हैं।' —आले-इम्रान १२८

---

१. हुबूल, मुहम्मद (सल्ल०) से पूर्व अरबों का एक बड़ा देवता था जिस की मूर्ति काबे में रखी थी। —अनुवादक

क्या आप समझते हैं कि विजय एवं सहायता के साधन जुटाने में कोताही का परिणाम पराजय का तथा असफलता के अतिरिक्त कुछ और निकल सकता है ? क्या पराजित होने वाले तौहीद तथा सत्य के आवाहक और नुमाइन्दा न थे ? तथा विजेता मूर्तिपूजा के ठेकेदारों के अतिरिक्त और कौन थे ?

—०—

अल्लाह के रसूल जब 'ग़ज़्वः'[1] (धर्मयुद्ध) का इरादा करते तो 'तौरियः' (अर्थात् छिपाना तथा जो दिल में हो उसे ज़ुबान पर न लाना) से काम लेते थे। तथा वास्तविकता को छिपाते और फ़रमाते—

'जंग चालबाजी का नाम है।'

यद्यपि अल्लाह के रसूल उन समस्त साधनों को जुटाते जो अल्लाह ने अनिवार्य किए हैं तथा उन प्राकृतिक व स्वाभाविक नियमों का सम्मान दृष्टिगत रखते जो मानव-जीवन को सुव्यवस्थित रखते हैं। इस के होते हुए भी कुछ अरब क़बीले आप को धोखा देने में सफल हो गए और सहाबा में से क़ुरआन के श्रेष्ठ पढ़ने वालों को साथ ले गए और उन्हें वहाने से 'बीर्-मऊना' (एक कुंए का नाम है) पर क़त्ल कर डाला। इस घटना की सूचना केवल उन पक्षियों के द्वारा मिल सकी जो शहीदों की लाशों पर आकाश में मंडला रहे थे।

यह सहाबी जो विश्वासघात की भेंट चढ़ गए अल्लाह के निकट अति अभिप्रेत इन्सान थे परन्तु इन में से किसी को अल्लाह ने यह अनुमति नहीं दी कि बिना परों के उड़ जायें या इस निश्चित भाग्य को बदल दें जैसा कि बाद के मुसलमान समझते हैं।

यदि सावधानी तथा पूर्वदर्शिता नुबूव्वत की नीति है तो उस में परिश्रम तथा प्रयास करना एवं भरपूर तैयारी करना इन सुन्नतों (नीतियों) की बुनियादी मांगें हैं। आख़िर मुहम्मद (सल्ल०) ने कैसे विजय प्राप्त की थी ?

आप (सल्ल०) ने अपने साथियों का प्रशिक्षण ईमान के द्वारा इस प्रकार किया था जैसे गर्मी अपनी धीमी आंच से फल को पकाती है। जब आप ने उन्हें संसार के विभिन्न क्षेत्रों में भेजा तो वे तेज़ आंधी के समान हर स्थान पर अपनी धाक जमाते चले गए।

---

१. 'ग़ज़्वः' उस जंग को कहते हैं जिस में अल्लाह के रसूल स्वयं सम्मिलित हों। अपितु 'सरियः' कहते हैं। —अनुवादक

इस्लाम प्रथम दिन से जिहाद था जिस का नेतृत्व 'वह्य' के द्वारा होता था अतः उस ने अपने सन्देशों को और उन के वाहकों को बिजली और गरज चमक वाली आंधी से उपमा दी है—

> 'या (इन की मिसाल) ऐसी है जैसे आकाश में वर्षा हो रही हो, उसमें अंधियारियां हों, गरज और चमक हो। ये बिजली के कड़ाके के कारण मौत के भय से, अपने कानों में उंगलियां ठूंसे ले रहे हों। हालांकि अल्लाह काफ़िरों को अपने घेरे में लिए हुए है।'
>
> —अल-बक़रः

क्या आप इन सीसा पिलाई हुई (मजबूत) दीवारों में वचन देकर पूरा न करने या अशपिन का कोई सूराख़ देखते हैं ? अफ़सोस ! मुसलमान कितने अज्ञान हैं कि मोजज़ों व अस्वाभाविक कार्यों की प्रतीक्षा में हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं और विरुद्ध शक्तियां उन्हें जड़-मूल से उखाड़ फेंकने के लिए सचेष्ट हैं।

हम इस के इन्कारी नहीं हैं कि संसार में कुछ अस्वाभाविक बातें भी प्रकट होती हैं परन्तु यह अस्वाभाविकताएं मोमिन, काफ़िर, सालेह (ईश्वरभक्त) सभी प्रकार के लोगों द्वारा प्रकट होती हैं। यदि कोई व्यक्ति पानी पर चले और उस के पांव न भीगें तो यह उस के मुरिचदवान होने का तर्क तो नहीं है ? क्योंकि सदाचारिता का सम्बन्ध ईश्वर ने केवल ईमान और कर्म से जोड़ा है। इन अप्राकृतिक चीज़ों का स्वीकार तो विशुद्ध इतिहास का मसला है जिस का ईमान व अमल से कोई रिश्ता नहीं है। परन्तु पैग़म्बरों के मोजज़ों की स्थिति भिन्न है। ये उन की नुबूव्वत की सत्यता का प्रमाण होते हैं। परन्तु मोजज़ों तथा चमत्कारों व अस्वाभाविकताओं की नुबूव्वतों का काल बहुत पहले समाप्त हो चुका है। इन पर वाद-विवाद करना निरर्थक है जबकि यह मालूम है कि मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह का मोजज़ा उक्त लिखित अस्वाभाविक बातों से भिन्न था। वह तो स्थायी, बौद्धिक तथा इन्सानी मोजज़ा था। अल्लाह ने आप के जीवन और सन्देश को साधनों तथा कारणों के नियम के अधीन व्यवस्थित कर दिया था।

—०—

मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम परोक्ष ज्ञान से अनभिज्ञ थे। दूसरे समस्त इन्सानों की भांति आप भी यह जानते थे कि कल क्या होने वाला है ?

आप (सल्ल०) के विषय में हमें इस प्रकार की किसी भी चीज़ की

अल्लाह् तआला ने विशे
कुछ बातें बता दी थीं जैसा कि
की पराजय की सूचना दी
मज़ाक़ उड़ाया था।

शुद्ध तथा प्रमाणित हदीस
अर्थ से ज्ञात होता है कि आप
नज़र रखते थे। उदाहरणस्व
मैं रसूलुल्लाह के पास बैठा हु
उस ने 'फ़ाक़ा' (निराहार)
आया और उस ने मार्ग में लु
'हे अदी! क्या तुम ने 'हीर

अध्ययन करने के पश्चात उचित निर्णय तक पहुंच जाता है और ठीक परिणाम निकाल लेता है। और जो व्यक्ति हृदयगत बातें जान लेता है और उस में निहित बातों को पा लेता है।

मुहम्मद (सल्ल०) इन्सानों के गोत्र वंश उन के परिवार, संसार और उस के रीति, नीति, आचार व्यवहार, युग और उस के उलट-फेर, गत धर्मों तथा उन के अनुयायियों के विषय में विस्तृत जानकारी रखते थे। तमाम 'नबी' (सन्देष्टागण) उत्तम बुद्धि तथा योग्यताओं के स्वामी होते हैं। और उन का स्वभाव शुद्ध, पवित्र तथा स्वच्छ होता है। वे 'इल्हामी' (ईश्वरीय संकेत) मन एवं मस्तिष्क के मालिक होते हैं। फिर नबियों के नायक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का क्या पूछना जिनकी सुरक्षा तथा दीक्षा जन्म ही से अल्लाह तआला ने की थी ताकि अपना सन्देश उस की शैली में पेश कर सकें और उस शैली की बुनियाद प्राकृतिक उठान और बुद्धि की स्वच्छता पर थी।

यही कारण है कि आप परिस्थितियों पर सब से गहरी निगाह रखने वाले और भविष्य में पेश आने वाली घटनाओं व परिस्थितियों के सब से अधिक जानकार थे। क्या उत्तरी क्षेत्र का निवासी यात्रा करते समय यह सोच सकता है कि वह अन्तरिक्ष को कुहरे से साफ़ पायेगा? या भूमध्य रेखा के क्षेत्रों में कोई यात्री गर्मी एवं गर्म हवा के झक्कड़ों से सुरक्षित रहने की आशा कर सकता है? तो फिर दीन के एक महान आवाहक के लिए यह कैसे सम्भव था कि वह इस दीन (धर्म) और उसकी शिक्षाओं को पेश आने वाले निकटवर्ती या सुदूर के वाह्य या आन्तरिक फ़ित्नों से आंखें बन्द कर ले?

इसी कारण फ़ित्नों के विषय में अनेकों हदीसें हैं तथा उद्देश्य सूचना देना नहीं वरन् उन से सचेत करना है। ये हदीसें उन फ़ित्नों की ख़बर देती हैं जो चिन्तन के मतभेद तथा स्वभाव की पारस्परिक घृणा के कारण व्यक्तियों में पाये जाते हैं। इन में ऐसे फ़ित्ने भी बयान हुए हैं जो दुनिया से प्रेम तथा पारस्परिक ईर्ष्या व द्वेष के रूप में दिलों पर आक्रमण करते हैं। उन फ़ित्नों की ओर भी संकेत किया गया है जो उम्मत को पराजय के रूप में कुफ्र की ओर पलट आने के कारण उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार आप ने अपने सहाबा को विभिन्न हदीसों में इन फ़ित्नों से सचेत तथा सावधान किया है।

सब से बड़ा फ़ित्ना (उपद्रव) वह है जो स्वयं इस्लाम की शिक्षाओं को उदासीन व पतनग्रस्तता के रूप में उपस्थित होगा। नमाज़ अपनी रूह

(कविता) पढ़ा, इसके पश्चा
क्योंकि मेरे होंठ बड़बड़ा रहे
'है मिट्टी में दफ़न तम
इस की पवित्रता से व
हो गए।'
और मैं वापस हो गया
हां मैंने और हंगामों अं
इबारतें दोहरायी जा रही
हाफ़िज़ से तिलावत सुनी ज
था। तथा नमाज़ियों को इस
ही शोर-गुल तथा कोलाहल

क्या अल्लाह के रसूल इसे पसन्द करते ? जबकि आप ने फ़रमाया था—

'हे ईश्वर ! मेरे बाद मेरी क़ब्र को उपासनागृह न बनाना ।'

—बुख़ारी

जब मक्का तथा ग्राम निवासियों की दशा और मस्जिद में उन के व्यवहार से मुझे परिचय प्राप्त हुआ तो मैं ने उस में नमाज़ पढ़ना छोड़ दिया क्योंकि 'बिदअत' (नया काम) गुमराही, अज्ञानता तथा अराजकता से मुझे सख़्त घृणा थी ।

मुझे 'उरवा बिन ज़ुबैर' का वाक़िआ याद आ गया । उन्होंने वादी (घाटी) अक़ीक़ में घर बना लिया और मदीने से हो गये । तो लोगों ने कहा कि आप रसूलुल्लाह की मस्जिद से दूर हो गए क्या उसे बिल्कुल छोड़ दिया ? उन्होंने उत्तर दिया : 'मैं ने तुम्हारी मस्जिदों में खेल-तमाशे देखे, तुम्हारे बाज़ारों में झूठी बातों का चलन देखा और तुम्हारे गली-कूचों में अश्लीलता को पाया । यहां इन बुराइयों से सुरक्षा है ।' कहा जाता है कि जब उन की निन्दा की गयी तो फ़रमाया : 'अब बचा ही कौन है ? वही लोग रह गए हैं जो अपने भाई को मुसीबत में देख कर हंसते हैं या उसे सुख सामग्री एवं सम्पन्नता में देख कर जलते हैं ।'

'हम अल्लाह से क्षमा तथा सुरक्षा के इच्छुक हैं ।'

—o—

अध्याय—१

जन्म से नुबूव्वत के आरम्भ तक

- शुभ जन्म
- शक्के-सद्र (सीना विदीर्ण) की घटना
- बहीरा राहिब का क़िस्सा
- परिश्रमी जीवन
- हर्बे फ़िजार
- हिलफ़ुलफ़ुज़ूल
- शक्ति एवं आनन्द का ज़माना
- हज़रत ख़दीजा (रज़ियल्लाहु अन्हा)
- काबा का नव निर्माण
- सत्य के खोजी
- हिरा ग़ार (गुफा) में
- वर्क़ा बिन नौफ़ल

वे इस्लाम में भी अच्छे होंगे यि

मुहम्मद (सल्ल०) ऐसे कु
सफलता में बड़ा हिस्सा है। क
पक्षपात पर क़ायम था। जो अ
की सुरक्षा के लिए तमाम अ
सकता था।

इस्लाम एक अवधि तक इ
शक्तियों की सुरक्षा में जीवि
खड़ा हो गया जिस प्रकार ए
पश्चात् किसी सहारे की आवश

हज़रत नूह (अलैहिस्सलाम
तरफ़ से खतरा महसूस किया

आवश्यकता महसूस की थी परन्तु उन्हें कोई ऐसा कुटुम्ब न मिल सका जो सुरक्षा करता या जिन्हें क़ौमी और कौटुम्बिक गौरव व सम्मान रक्षा के लिए तैयार करता। उन्होंने अपनी क़ौम से कहा—

> 'तो अल्लाह से डरो और मुझे मेरे मेहमानों के मामले में रुसवा न करो। क्या तुम में कोई भला आदमी नहीं ?'

फिर फ़रमाया—

> 'क्या अच्छा होता कि मुझ में तुम से निमटने की शक्ति होती या मैं किसी मज़बूत सहारे का आश्रय ले सकता।' —हूद ७९

परन्तु मुहम्मद (सल्ल०) श्रेष्ठ वंश के होने के साथ धन-दौलत तथा सम्पत्ति से वंचित थे। अतः उच्च कुल तथा वंश के साथ धन की कमी ही वह चीज़ थी जिस ने आरम्भ आयु ही में मानव वर्गों के उच्चतम स्तर को एकत्रित कर दिया। धन बड़े परिवारों की सन्तान को सत्ता प्राप्ति पर उभारता है। और जब वे इस हथियार को खो देते हैं और उनके पास श्रेष्ठ परम्पराएं होती हैं तो अपने पद तथा सम्मान की सुरक्षा हेतु वे अथक प्रयत्न करते हैं। अधिकांश लोग तो इस में कोई बुराई नहीं समझते कि अपने 'फ़ाक़े' (निराहार) को प्रकट करें तथा अपनी दयनीय दशा ज़ाहिर कर दें।

परन्तु कुछ लोग इस प्रकार के होते हैं जो अपने संकल्पों तथा इरादों को छिपाये रखते हैं तथा अकस्मात् दुनिया के सामने बड़े गौरव के साथ प्रकट होते हैं। अब्दुल मुत्तलिब इसी प्रकार के लोगों में से हैं।

अब्दुल मुत्तलिब मक्का के सरदार थे परन्तु यह सरदारी इन्हीं पर समाप्त हो गयी तथा उन की शाखा में उन के बाद प्रचलित न रह सकी। अतः मक्के की सरदारी तथा चौधराहट के लिए प्रतियोगिता प्रारम्भ होगी। कुछ ही वर्षों में 'अब्द शम्स' का ख़ानदान प्रभुत्वशाली हो गया। फिर कुछ समय के पश्चात् 'अबू-सुफ़ियान' मक्के का नेतृत्व करने लगा। इस प्रकार 'बनू हाशिम' से यह नेतृत्व परिवर्तित हो गया।

अब्दुल मुत्तलिब के सब से छोटे पुत्र का नाम अब्दुल्लाह था। पिता अपने इस पुत्र को बहुत चाहते थे। उन्हों ने अब्दुल्लाह का विवाह 'आमिना बिन्त वह्ब' से किया था। फिर उन्हें जीवन संघर्ष के लिए स्वतन्त्र तथा अकेला छोड़ दिया आमिना से विवाह के कुछ महीना बाद जीविकोपार्जन के लिये ग्रीष्म ऋतु में सीरिया की यात्रा की परन्तु वापसी न हो सकी। क़ाफ़िले ने वापस आ कर उन की बीमारी की सूचना दी। कुछ दिनों के पश्चात् उन की मृत्यु की सूचना भी आ गयी।

श्री आमिना अपने सुन्दर तथा सजीले पति के स्वागत के लिये सर्वांग प्रतीक्षा बनी बैठी थीं। वह शीघ्रातिशीघ्र अपने पति को यह शुभ सूचना देना चाहती थीं कि उन की कोख में एक बच्चे का पोषण शुरू हो चुका है जो उन दोनों की आंखें ठण्डी कर देगा। परन्तु भाग्य ने श्रेष्ठ तत्वदर्शी के अधीन इन सुखद स्वप्नों को चकनाचूर कर दिया तथा नयी नवेली दुल्हन (वधू) विधवा हो गयी।

समय बीतता रहा और यह विश्वविख्यात एवं श्रेष्ठ अनाथ बच्चा अपनी माता के उदर में पलता रहा।

इमाम जुहरी कहते हैं कि अब्दुल मुत्तलिब ने अपने पुत्र अब्दुल्लाह को मदीना भेजा ताकि उन के लिये खजूरें जमा करें परन्तु वहां पहुंच कर उन का निधन हो गया। एक अन्य रिवायत में यह है कि मदीना नहीं वरन् सीरिया गये थे और कुरैश कबीले के यात्री दल के साथ लौटते हुए मदीना पहुंचे और वहां रोग ग्रस्त हो गये और वहीं मृत्यु हो गयी तथा 'नबिग़ा जा'दी' के घर में दफ़्न हुए। उस समय उनकी आयु २५ वर्ष थी आप की मृत्यु रसूलुल्लाह (सल्ल०) के जन्म से (कुछ महीने) पूर्व हुई थी।

—०—

मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम 'मक्का' में सामान्य परिस्थितियों में पैदा हुए, कोई आश्चर्यजनक या प्रभावकारी व विचारणीय घटना घटित नहीं हुई। इतिहासकार आप के जन्म दिवस, मास तथा वर्ष निश्चय न कर सके। सम्भवत: ५७० ई० में आमुलफ़ील को १२ रबीउल अव्वल को जन्म हुआ अर्थात् हिजरत से ५३ वर्ष पूर्व।

जन्म तिथि का निर्धारण इस्लामी विचार धारा में कोई महत्व की चीज़ नहीं है। इस से सम्बंधित जो समारोह मनाये जाते हैं वे विशुद्ध सांसारिक रीतियां हैं जिन का इस्लाम से कोई सम्बन्ध नहीं है।

कुछ उल्लेख इस प्रकार के भी हैं कि जन्म के समय नुबूव्वत के चिन्ह प्रकट हो गये थे। अतः आप के जन्म के समय 'किसरा' के महल के चौदह कलस धराशायी हो गये। मजूसियों के पूजा स्थान की अग्नि ठण्डी पड़ गयी तथा 'सावा' के आस पास के कलीसा विध्वस्त हो गये तथा कुछ कवियों ने स्तुतिपूर्ण कविताओं में और अतिशयोक्ति से काम लिया है।

इस प्रकार के साहित्य तथा कविताओं में उचित चिन्तन का गलत अर्थ लिया गया है। यह सही है कि मुहम्मद (सल्ल०) का जन्म अन्याय

अत्याचार के पतन की घोषणा था। और 'क़ैसर' (रोम का राजा) तथा तथा 'क़िस्रा' (ईरान का राजा) के महलों की विध्वस्तता का स्पष्ट चिन्ह था यही स्थिति 'मूसा' (अलै०) के जन्म की थी। जब ईश्वर ने फ़िरऔन के अत्याचार तथा दमनकारी नाती को बयान किया तथा आम लोगों की दुर्दशा व पतन की समीक्षा की फिर लोगोंकी स्वतन्त्रता तथा दुर्बलों की मुक्ति की घोषणा करनी चाही तो उस शूरवीर का क़िस्सा हमारे सामने बयान किया जो उन कार्यों के करने का संकल्प करता है, अत: फ़रमाया

'हम ने' मूसा की मां को 'वह्य' की कि उसे दूध पिला।' --क़सस ७

मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह का सन्देश बौद्धिक तथा मानसिक व आध्यात्मिक स्वतन्त्रता के लिये उन समस्त इंक़लाबों से अधिक भयानक था जिन से विश्व के लोग अब तक परिचित थे। तथा क़ुरआनी सेना इन सब से अधिक न्यायशील एवं न्यायप्रिय थी जिससे इतिहास परिचय प्राप्त कर चुका है। तथा जिसकी कीर्तियां जालिमों और अत्याचारियों के उन्मूलन और उन की शक्ति व वैभव को तोड़ कर रख देने के विषय में सुरक्षित की हैं।

अत: अन्याय व अत्याचार के षड्यंत्रों से निकलने के पश्चात् जब लोगों ने इस वास्तविकता का चित्रण करना चाहा तो उन्हों ने अस्वाभाविकताओं (चमत्कारों) का सहारा लिया और उस के लिये आधाररहित रिवायतें गढ़ लीं यद्यपि मुहम्मद (सल्ल०) का व्यक्तित्व उन सब से निःसपृह है क्योंकि आप के शानदार तथा अद्वितीय कारनामे हमें इन रिवायतों से बेपर्वाह कर देते हैं।

—०—

अब्दुल मुत्तलिब ने अपने पौत्र का सहर्षोल्लास एवं उत्साह पूर्ण स्वागत किया क्योंकि इस में अपने जवान पुत्र का बदल दिखाई दे रहा था अत: उन्होंने इस का प्रशिक्षण एवं पोषण अति सहानुभूति एवं कठोर परिश्रम से किया और अपने जिगर का खून निचोड़ कर रख दिया।

यह भी एक विचित्र दैवयोग है कि अब्दुल मुत्तलिब ने अपने पौत्र का नाम 'मुहम्मद'[1] रक्खा। इस नामकरण के विषय में फ़रिश्ते ने उन की

---

१. 'मुहम्मद' का शाब्दिक अर्थ हर प्रकार से प्रशंसा तथा स्तुति योग्य, है। वह जिसे सब पसन्द करें तथा सब अच्छा कहें। सातवें दिन दादा ने 'अक़ीक़ा' किया। दावत में आये हुए लोगों के पूछने पर भी 'मुहम्मद' नाम बताया।

—अनुवादक

को नियमानुसार गौतशाल र
पिता की जिन्दगी कोई लाभ
उस समय कैसे सम्भव थी जब
'याकूब अलैहिस्सलाम' जै
तत्वदर्शिता की अधिकता थ
पास थी। एक दिन देखा कि
और खतरनाक अवस्था में उनं
अति गन्दो व चिन्ता जनक थी
तथा व पवित्रता के ताप में पवि
अन्धकार में भी दीपमान रहे
लम्बी अवधि के पश्चात् मु
नबी पाया (अल्लाह को अपा

अब्दुल्लाह दुनिया से सिधार गये तथा बेटे को यतीम कर गये। परन्तु यह 'यतीम' पहले ही दिन से एक महान् उद्देश्य के लिए तैयार किया जा रहा था। उसे नबियों व सुकर्मियों का 'सरदार' (नायक) बनना था। ये बाप दादा, सम्बन्धी तथा दूर के लोग, ये ज़मीन, आसमान, सब के सब ईश्वर की मंशा की पूर्ति के लिये वशीभूत साधन हैं।

—o—

श्री आमिना अपने पुत्र पर प्रेम तथा स्नेह के फूल निछावर करती रहीं। ग्रामीण क्षेत्रों से दूध पिलाने वाली स्त्रियों के आगमन की प्रतीक्षा में रहीं जो प्रतिष्ठित परिवारों के बच्चों की दीक्षा के अवसर खोजती रहती थीं। इस उद्देश्य के लिए मक्का आने वाली स्त्रियां जीविकोपार्जन तथा उचित पारिश्रमिक हेतु ऐसा करतीं। मुहम्मद के पिता तो थे नहीं जो उपहार का प्रबन्ध करते और उचित पारिश्रमिक देते। अतः यदि स्त्रियां 'मुहम्मद' को लेने से कतराती थीं तो कोई आश्चर्य की बात न थी।

क़बीला बनी सअद की हलीमा, अबू ज़ुएब की बेटी, उन स्त्रियों में से एक थी जो मक्का बच्चे लेने आयी। प्रारम्भ में यतीमी के कारण वह भी मुहम्मद को साथ ले जाने को तैयार न थी परन्तु जब कोई बच्चा न मिला तो खाली हाथ वापस जाना पसन्द न कर के आमिना के पास गयी ताकि मुहम्मद को ही ले जायें।

इस बच्चे के शुभागमन के साथ ही हलीमा के यहां कृपाओं, सम्पन्नताओं तथा अधिकताओं की वर्षा होने लगी। ऊंटनियों के थन दूध से भरे रहने लगे, और चारों तरफ़ से सम्पन्नता एवं समृद्धि ने उन पर छाया कर ली। अतः हलीमा तथा उन के पति 'हारिस बिन अब्दुल उज़्ज़ा, को आभास हो गया कि मक्के से उन की वापसी समृद्धि के साथ हुई है दरिद्रता एवं दीनता के साथ नहीं। अतः बच्चे से उन का सम्बन्ध, प्रेम तथा स्नेह और अधिक बढ़ गया। तथा वे बच्चे का आदर सम्मान करने लगे।

ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों की दीक्षा का कारण यह था कि उन का पोषण खुली हवा तथा वातावरण में हो तथा सरल एवं प्राकृतिक परिस्थितियों से उन की योग्यताओं के विकास तथा उठान का पूर्ण अवसर मिल सके।[१] प्राकृतिक शुद्धीकरण, शारीरिक अंगो व अवयवों तथा अनुभवों व संवेदनाओं

---

१. एक उद्देश्य यह भी था कि बच्चा मूल अरबी साहित्य की अलंकारिक शैली तथा सरल एवं सुन्दर व मिलावट रहित भाषा से परिचित हो जाये और उस में दक्ष हो जाये।

—अनुवादक

आधार में करना चाहिए। परन्तु
मिलता है जिसे बाद में 'श
गया है।

'अनस कहते हैं कि रसू
(एक फ़रिश्ता) आये
रहे थे। जिब्राईल ने अ
लिया और पछाड़ दिया
लिया उस में से एक वो
का भाग था।' फिर
उसे धोया फिर उसे
बच्चे दौड़े हुए आप की

पहुंचे और सूचना दी कि मुहम्मद क़त्ल कर दिये गये। लोग दौड़ कर आप के पास पहुंचे तो देखा कि आप का रंग मलीन था।'

—मुस्लिम

आप (सल्ल०) जब हलीमा सअदिया तथा उन के पति के यहां दूध पीने की अवस्था व्यतीत कर रहे थे, इस घटना ने दोनों को भयभीत कर दिया। परन्तु यह घटना दोबारा उस समय घटित हुई जब आप (सल्ल०) पचास वर्ष की आयु से भी आगे निकल चुके थे। मालिक बिन सासिआ से हदीसोल्लेख है कि अल्लाह के रसूल ने उन से एक रात्रि की घटना सुनायी और फ़रमाया :

'इस बीच में कि मैं 'हतीम' (काबे में एक स्थान है) में था-- कभी फ़रमाया मैं 'हिज्र' में था— अभी मैं ऊंघ तथा निद्रालस में था कि मेरे पास एक व्यक्ति आया और उस ने मेरा सीना चाक कर दिया तथा मेरा हृदय निकाल लिया फिर मेरे पास सोने का एक थाल लाया गया जो 'ईमान' से भरा हुआ था अतः उस ने मेरा दिल धो कर फिर उसे उसने यथास्थान रख दिया (और सीना सी दिया)।'

—बुखारी, नसाई

यदि 'शर' (बुराई) लसीका या गन्दगी के प्रकार की चीज़ होती जो उसके निष्कासन के साथ समाप्त हो जाती या 'ख़ैर' (कल्याण, भलाई) कोई ऐसा पदार्थ होता जिस से हृदय को शक्तिशाली बनाया जा सकता है जिस प्रकार वायुयान में शक्ति पैदा कर दी जाती है और वह अन्तरिक्ष में उड़ने लगता है, तो हम कहते हैं कि हदीस का वाह्य अर्थ अभिप्रेत है परन्तु यहां मामला यह है कि 'ख़ैर' व 'शर' इस भौतिकता से अति दूर हैं वरन् बुनियादी बात यह है कि ये दोनों चीजें मनुष्य के अन्दर आध्यात्मिक पहलू से सम्बन्धित हैं। जब मामला रूह से सम्बन्धित हो गया जहां रूह के आदेश चलते हैं या दूसरे शब्दों में जब बहस यहां तक आ गयी कि उन साधनों को जुटाने की आवश्यकता है जिन के द्वारा रूह (आत्मा) मास के उस अंग तथा आवरण को चलाती है तो यह बहस निरर्थक हो जाती है क्योंकि मानव शक्ति का इस में कोई दख़ल नहीं रहता।

इन हदीसों से केवल एक चीज़ का निष्कासन सम्भव है। वह यह कि 'मुहम्मद' जैसे महान् तथा श्रेष्ठ व्यक्ति के हृदय को अल्लाह तआला भ्रमों, शंकाओं तथा मिथ्या विचारों से सुरक्षित कर देता है। यदि 'शर' बुराई की लहरें समूचे विश्व पर छा जाती हैं तो उन से लोगों के हृदय प्रभावित हो जाते हैं परन्तु ईश्वर की विशेष अनुकम्पा तथा दया से नबियों के दिल

तुम पर से तुम्हारा बोझ उतार दिया जो तुम्हरी कमर तोड़ डाल रहा था।'
—अल-इनशिराह १-३

यहां जिस 'शरह्-सद्र' (सीना खोल देना) का उल्लेख है वह किसी फ़रिश्ते या किसी चिकित्सक की शल्य अर्थात् चीर फाड़ का परिणाम नहीं है। उचित होगा कि सुन्नत में वर्णित यथार्थता तथा भौतिकता (ईश्वर के अतिरिक्त जो कुछ है, उर्दू में 'मजाज') के प्रयोग की शैलियां भली भांति समझ ली जायें।

हज़रत आइशा से हदीसोल्लेख है कि आप की कुछ पत्नियों ने पूछा :

'हे अल्लाह के रसूल ! हम में से कौन सब से पहले आप से जा मिलेगी ? (अर्थात् मृत्यु होगी) आप ने फ़रमाया : 'जो तुम में सब से लम्बे हाथ वाली है।' अतः हम ने एक दूसरे के हाथ नापे तो हज़रत 'सौदा' का हाथ सब से लम्बा निकला। बाद हमें मालूम हुआ कि उस हाथ की लम्बाई सद्क़ा (दान) के कारण है वह दान करना पसन्द करती थीं और हम सब से पहले आप (सल्ल०) से जा मिलीं।' —बुख़ारी

ग्रामीण क्षेत्र में कुछ वर्ष व्यतीत करने के पश्चात् हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) मक्का वापस आये ताकि अब दयालु माता की ममता छाया में पालन हो सके जो सर्वांग प्रतीक्षा बनी हुई थीं। कृपालु एवं मेहरबान दादा की दीक्षा में रह सकें जो पोते के रूप में अपने उस जवान बेटे की रूह देख रहे थे जो ठीक युवावस्था में अल्लाह में जा मिले।

ज़माने ने इस दयावान तथा ममतामय सीनों में पलने वाले प्रेम को भी बाक़ी न रहने दिया तथा शनैः शनैः उन दोनों से आप (सल्ल०) को महरूम कर दिया।

श्री आमिना ने अपने मृत पति की याद से विकल हो कर 'यस्रिब'[1] जाने का इरादा किया ताकि उन की समाधि के दर्शन कर सकें। अतः पांच सौ किलो मीटर की दूरी तय कर के यस्रिब पहुंचीं जिन्हें मक्का वापस लौटना नसीब न हुआ। इस यात्रा में श्रीमति आमिना के साथ उन का लाडला बेटा 'मुहम्मद' और 'बरका' दासी जो बाद में 'उम्म्-ऐमना'[2] के

१. मदीना का असली नाम यस्रिब है। रसूलुल्लाह के वहां हिजरत करने के बाद 'मदीनतुन्नबी' (नबी का नगर) प्रसिद्ध हुआ। अब केवल मदीना ही कहा जाता है। यहां रसूलुल्लाह की क़ब्र है। —अनुवादक

२. अब्दुल्लाह ने जो सम्पत्ति छोड़ी उस में दो ऊंट तथा 'बरका' दासी थी। जो

नाम से प्रसिद्ध हुई, साथ थीं। अब्दुल्लाह की मृत्यु किसी अंजान स्थान पर नहीं वरन् उन के मामा बनू नज्जार के घर पर हुई थी। इब्नुल असीर की रिवायत है कि : 'हाशिम' ने सीरिया के व्यापार का इरादा किया अतः जब वह मदीना आया तो 'उम्र बिन जैद बिन लुबैद अल खजरजी' के यहां अतिथि रहा। इसकी पुत्री 'सलमा' को देखा तो उस पर मोहित हो गया और उस से शादी कर ली। लड़की के पिता ने यह शर्त लगायी कि बच्ची गर्भावस्था अपने परिवार ही में पूरी करेगी। फिर हाशिम अपनी यात्रा पर चला गया। वहां से लौटने पर मदीना में उस लड़की के साथ रात गुजारी फिर अपने वतन मक्का उसे अपने साथ ले गया और वह गर्भवती हो गयी। जब गर्भ स्पष्ट हुआ तो उसे उस के माता पिता के परिवार में यस्रिब भेज दिया गया। 'हाशिम' की मृत्यु (सीरिया के नगर) 'गज्जा' में हुई और सलमा के 'अब्दुल मुत्तलिब' पैदा हुए। अतः अब्दुल मुत्तलिब (शैबा) मदीना में सात वर्ष तक रहे।'

जनाब मुहम्मद अपने मामा के परिवार में अपने पिता की क़ब्र के पास एक महीने तक रहे। फिर अपनी माता के साथ मक्का लौटे। परन्तु उन की माता रोग ग्रस्त हो गयीं तथा यात्रा के प्रारम्भ ही में रोग बढ़ गया। अतः वे 'अब्वा' के स्थान पर निधन कर गयीं। तथा बच्चा (मुहम्मद) अकेला दासी 'बरका' के साथ रह गया।

कितनी दयनीय दशा थी जब माता के गर्भाशय में थे तो पिता का निधन हो गया और पांच वर्ष के हुए तो माता भी साथ छोड़ गयीं।

इस नई आपत्ति ने पुराने घाव ताजा कर दिये जिस के कारण अब्दुल मुत्तलिब के दिल में स्नेह, दया और प्रेम का समुद्र ठाठें मारने लगा। तथा वे 'मुहम्मद' पर हृदय तथा आत्मा से निछावर होने लगे। अतः दादा पौत्र को अकेला न छोड़ते, हर समय साथ लिये फिरते। जब 'काबे' में सरदारों और शैखों की बैठक होती उस समय भी 'मुहम्मद' को अपने पास ही बिठाते थे।

अब्दुल मुत्तलिब ने बड़ी लम्बी आयु पायी। कहा जाता है कि मृत्यु के समय उन की आयु एक सौ बीस वर्ष की थी। उन की मृत्यु के समय 'मुहम्मद' की आयु आठ वर्ष की थी। अतः अपनी मृत्यु से पूर्व ही पौत्र को

रसूलुल्लाह को वर्से में मिली। इन का पहला विवाह उबैदुल्लाह हब्शी से हुआ था जिस से एक लड़का ऐमन जन्मा। अतः उम्मे ऐमन (ऐमन की माता) कहलायीं।

—अनुवादक

उस के चाचा 'अबू तालिब' की अभिभावकता में दे दिया।

'अबू तालिब' ने भतीजे की दीक्षा तथा अभिभावकता का हक़ अदा कर दिया। उसे सदा अपने बच्चों के साथ रखा वरन् अपने बच्चों पर उसे प्रमुखता दी तथा उस के विशेष सम्मान को विचार में रखा। और चालीस वर्ष की आयु से भी अधिक उस की अभिभावकता करते रहे। उस के पक्षपाती तथा संरक्षक बने रहे और भतीजे ही के कारण मित्र तथा शत्रु बनाते रहे।

मुहम्मद (सल्ल०) का अबू तालिब के घर में पालन पोषण होता रहा। समय बीतने के साथ साथ आप के अन्दर बुद्धि एवं विवेक तथा समझ बूझ की उन्नति होती रही। अतः आप ने अपने चाचा के ग़मों में उन का साथ देने का निर्णय किया, क्योंकि अबू तालिब अधिक सन्तान के कारण निर्धन थे। अतः जब चाचा ने सीरिया के लिये व्यापार यात्रा का संकल्प किया तो भतीजे ने साथ देने का इरादा ज़ाहिर किया। उस समय आप की आयु तेरह वर्ष के लगभग थी।

'बहीरा राहिब का क़िस्सा'

इस यात्रा का उल्लेख हदीस की किताबों में नहीं मिलता। विभिन्न स्थानों की यात्राएं ज्ञान वृद्धि तथा परिचय का साधन हैं तथा मानव जीवन पर काफ़ी प्रभाव डालती हैं। मुहम्मद जैसे अद्भुत व्यक्तित्व, साफ़ सुथरे मन, तथा सचेत दिमाग़ के मालिक व्यक्ति से वस्तुओं में निहित शिक्षा कैसे छिपी रह सकती थी। यात्रा के दौरान तथा ठहरने के अवस्थानों पर आप जिन चीज़ों को देखते उन की वास्तविकता से कैसे अचेत रह सकते थे। परन्तु यह बात निश्चित थी कि आप (सल्ल०) किसी धर्म तथा दर्शन की शिक्षा प्राप्त करने नहीं निकले थे। न इस यात्रा में किसी ऐसे व्यक्ति से मुलाक़ात हुई जो इस विषय पर आप से बात करता। रिवायतों की पुस्तकों में कुछ अस्वाभाविक घटनाओं तथा मो'जिज़ों का उल्लेख मिलता है जिन में से एक घटना 'बहीरा राहिब' से आप की मुलाक़ात है। बहीरा ने आप के अन्दर वैभव, महानता एवं श्रेष्ठता की निशानी देखी तथा आप के दोनों कन्धों के बीच एवं आप के चेहरे पर नुबूव्वत की मोहर भी देखी। जब उस ने अबू तालिब से पूछा कि यह आप का कौन है?' उन्होंने कहा कि 'मेरा बेटा है।' बहीरा ने कहा कि 'इस लड़के का बाप जीवित नहीं हो सकता' तब अबू तालिब ने बताया 'यह

परमात्मा : हां मैं पारि

चलाया करता था।'

क्या आप समझते हैं कि इस

तथा उन की सुरक्षा के लिये र

अभिप्रेत न था ?

प्रश्न किया जा सकता है कि

विवेक तथा परिपक्व व उन

सहसा उत्पन्न हो जाती हैं और

की दीक्षा की आवश्यकता नहीं

इस उत्तर है, 'कदापि नहीं

नियमों की ज्ञान प्राप्ति नहीं

सीखते हैं, परन्तु उन के अन्दर

तथा दृष्टि की दृढ़ता पायी जाती

देती है कि यद्यपि वे इन विधियों तथा शैलियों से ज्ञान प्राप्ति नहीं करते जिनके हम आदी हैं।

वह कौन सा ज्ञान है जिस के द्वारा आत्मा तथा मन विकासोन्मुख होता है ? क्या उस के पाठ याद कर लेना या उस के नियम तथा सिद्धान्त जान लेना काफ़ी है ?

तोतों का उदाहरण हमारे सामने है वे सोचे समझे जो सुनते हैं दुहरा देते हैं। छोटे बच्चों को देखिये कि अभ्यास तथा प्रशिक्षण द्वारा बड़े बड़े नेताओं और राजनीतिज्ञों के भाषण ठीक उन्हीं के ढंग तथा अंदाज़ में पेश कर देते हैं।

परन्तु बच्चे नेताओं के भाषण याद कर लेने से नेता नहीं बन जायेंगे और न तोते इंसानों की बातें दुहराने से इंसान हो जायेंगे।

अनेकों ऐसे मनुष्य मिलेंगे जो याद करने, समझने, वादविवाद करने तथा ग़ालिब होने की क्षमता रखते हैं परन्तु ज्ञान के विषय में उन का उदाहरण ऐसा है जैसे पत्थर की चट्टान में सोने की डली का अभाव।

क़ुरआन ने यहूदी आलिमों को गधों के समान कहा है जो 'तौरात' (आसमानी पुस्तक जो मूसा पर उतरी) को उठाये तो फिरते हैं परंन्तु उस का प्रभाव उन के जीवन पर नहीं है :

> 'उन लोगों की मिसाल जिन पर 'तौरात' का बोझ डाला गया फिर उन्होंने उस का बोझ नहीं उठाया ऐसी ही हैं जैसे कोई गधा किताबें लादे हुये हो।' — अल-जुमुआ ५

जो व्यक्ति ज्ञान तो रखते हैं परन्तु उस से लाभ नहीं उठाते वे अनुचित मार्गों में बहक जाते हैं और उन का ज्ञान धरा रह जाता है। अतः रसूलुल्लाह फ़रमाते हैं :

> 'अयोग्य व्यक्तियों को ज्ञान तथा विद्या सिखाने वाले का उदाहरण ऐसा है जैसे वह शूकर की गर्दन में मोती, रत्न तथा सोना पहनाये।'[1] —इब्ने माजा

कुछ ऐसे खुराफ़ाती तथा व्यर्थता प्रिय एवं अयोग्य लोग भी होते हैं जो स्वयं ही तथ्यों को ग़लत रंग में पेश करते हैं मानो उन की बुद्धि में कोई तराज़ू है जिस का एक पल्ला अकारण एक ओर झुक जाता है। ऐसी तुला कभी भी उचित वजन नहीं दे सकती। ये लोग अस्वाभाविक

१. यह हदीस अशुद्ध तथा अप्रमाणित है अतः इस पर आपत्ति उठायी गयी है। —अनुवादक

खामोशी दिन रात पर व्याप्त
प्रकार की आबादी पर आच्छ
विचार तथा सत्य की निरन्तर
थे। और आत्मा के विकास
(हाफ़िज़े) से जिस में विवेक त
के साथ नैतिकता हो, प्रधानता
के विषय में इस की मिसाल पे
उत्तम है जो भ्रमों तथा खुरा
तथा इस के लिये उन का जीव
निस्सन्देह इस विचित्र त
तमाला ने आप की देख रेख त
जब भी दुनिया की सजावटों

'और इस से पहले हम ने इब्राहीम को उस की चेतना (सूझ-बूझ) प्रदान की थी, और हम उसे भली भांति जानते थे। याद करो जब उस ने अपने बाप और अपनी जाति वालों से कहा। ये मूर्तियां कैसी हैं जिन के साथ तुम लगे बैठे हो।'

—अल-अंबिया ५१-५२

इस विषय में मुहम्मद (सल्ल०) अपने दादा इब्राहीम के समान थे। उन्हों ने अपने काल में किसी राहिब, काहिन (शकुन विचारक, ज्योतिषी) अथवा दर्शन शास्त्री से ज्ञान प्राप्त नहीं किया था वरन् अपनी पूर्ण तथा शुद्ध बुद्धि और सही प्रकृति के द्वारा जीवन के तथ्य, इंसानों के व्यवहार तथा गिरोहों व देशों के विषय में परिचय प्राप्त किया था। अतः व्यर्थताओं से दूर रहे और वास्तविक स्थिति को सामने रख कर लोगों से व्यवहार किये। जिस व्यक्ति में भलाई का अंश देखा उस से सम्बन्ध रखा वरना एकान्तवास अपनाया। और ब्रह्माण्ड में प्रभुत्व के विषय में सोच विचार जारी रखा। यह पद्धति उन विद्याओं तथा विज्ञानों की प्राप्ति से, जो मिश्रित अज्ञानता के समान होते हैं, अधिक लाभ दायक सिद्ध हुई तथा उस समाज से दूरी और पृथकता अच्छी रही जो शताब्दियों से संमार्गी व्यक्तियों की खोज में था। तथा जो समाज प्रतिदिन सूर्योदय के साथ ही गत गुमराहियों में एक नई गुमराही को बढ़ा देता था।

आप (सल्ल०) ने सोचा कि उन सामूहिक तथा सार्वजनिक कामों में शिर्कत करनी चाहिये जिन से पूरी जाति परेशान थी क्योंकि आप ने इस सम्मिलित होने को बुरा न समझा। इस प्रकार के कामों में हर्बे 'फ़ज्जार' तथा 'हिलफ़ुल फ़ुज़ूल' में आप की शिर्कत इतिहास का एक अध्याय बन गयी।

हर्बे फ़िजार

'फ़िजार' का यह युद्ध कुरैश की ओर से प्रतिष्ठित एवं पवित्र महीनों पवित्र भूमि के आदर तथा प्रतिष्ठा की रक्षा हेतु लड़ा गया। इब्राहीम के दीन (धर्म) में सम्मिलित प्रतीकों का अरब आदर करते थे तथा इस में उन का बड़ा लाभ भी था। इस के द्वारा उन के हित सुरक्षित हो जाते थे तथा शत्रुताएं ठन्डी पड़ जाती थीं। इन महीनों में वधित (मक़तूल) के वारिस हत्यारे को स्वतन्त्र छोड़ देते थे। तथा 'हरम' (मक्के के आस-पास का क्षेत्र) के आदर की भावना उन्हें बदला लेने से रोके रखती थी। जब इस्लाम आया तो उस ने इब्राहीम के दीन के इस मौरूसी आदर सम्मान

को स्वीकार किया :

> 'निस्सन्देह महीनों की गिनती—अल्लाह की किताब में उस दिन से कि उस ने आकाशों और धरती को पैदा किया—अल्लाह की दृष्टि में बारह महीनों की है। इन में चार आदर के हैं यही सीधा दीन (धर्म) है। तो तुम इन में (युद्ध और रक्तपात कर के) अपने-आप पर ज़ुल्म न करो।' —अत-तौबा ३६

परन्तु इस्लाम से पूर्व के अरब इसे शीघ्र ही वैद्य समझने लगे और इन महीनों में भी अपने ऊपर ज़ुल्म करने लगे। हर्ब-फ़िजार इसी ज़ालिमाना वैद्यता का परिणाम था। यहां हम इस का विवरण नहीं दे रहे हैं। यह युद्ध चार वर्ष तक चला। उस समय मुहम्मद (सल्ल०) की आयु पन्द्रह से उन्नीस वर्ष के बीच थी। कहा जाता है कि आप ने स्वयं युद्ध में हिस्सा लिया था, एक कथनानुसार युद्ध में भाग नहीं लिया था वरन् योद्धाओं की सहायता की थी।

हिलफ़ुल फ़ुज़ूल

यह सन्धि इस बात की प्रतीक है कि संसार में अंधकार का कितना भी राज्य हो जाए तथा बुराईयां चारों ओर फैल जायें, परन्तु ऐसे लोगों से धरती कभी खाली नहीं रही जो पवित्र नैतिकता के लिये गतिशील हो जाते हैं तथा उत्पीड़ितों के समर्थन में खड़े हो जाते हैं।

अज्ञानता के अन्धकारमय वातावरण में कुछ पुण्य स्वभाव व्यक्ति उठ खड़े हुए तथा उन्होंने तय किया कि हर स्थिति में न्याय पर स्थिर रह कर अत्याचार और हिंसा के विरुद्ध जंग की जाये और 'हरम' (मक्के के आस पास का क्षेत्र जिस के अन्दर किसी प्राणी की हिंसा करना महा पाप है) की धरती में नैतिकता बरबाद हो रही थी उस को नवजीवित किया जाये।

> 'इब्न्-असीर की रिवायत है कि क़ुरैश के कुछ क़बीले इस सन्धि में शरीक हुए तथा उन्हों ने अब्दुल्लाह बिन जुद्आन के घर में परस्पर प्रतिज्ञा की जिन में बनू हाशिम, बनू मुत्तलिब, बनू असअद बिन अब्दुल उज्ज़ा, ज़ुहरा बिन क्लाब और तमीम बिन मुर्रा आदि थे। अत: उन्हों ने आपस में समझौता किया कि मक्का या अन्य स्थानों के जिन लोगों पर अत्याचार अथवा अन्याय होता देखेंगे उन की सहायता करेंगे। उस अन्याय के विरुद्ध उठ खड़े होंगे तथा उत्पीड़ितों को उन का अधिकार

दिलायेंगे। इस समझौते का नाम क़ुरश ने 'हिलफ़ुल फ़ुजूल'[1] रक्खा। इस सन्धि में रसूलुल्लाह भी सम्मिलित हुए। अतः नुबूव्वत के पश्चात् एक अवसर पर आप ने फ़रमाया कि मैं अब्दुल्लाह बिन जुद्आन के घर में अपने चाचाओं के साथ एक ऐसे समझौते में शरीक हुआ कि यदि इस के बदले मुझे सुर्ख ऊंट भी मिलते तो उसे छोड़ कर उन्हें स्वीकार न करता और यदि आज इस्लामी युग में भी ऐसे किसी समझौते की ओर बुलाया जाये तो मैं उसे स्वीकार करूंगा।' —इब्न् इस्हाक़

इस समझौते से रसूलुल्लाह को जो खुशी हुई वह आपके उल्लिखित शब्दों से विदित है। क्योंकि प्रत्येक अत्याचारी के विरुद्ध स्वाभिमान चाहे वह कितना ही बड़ा हो तथा प्रत्येक उत्पीड़ित से सहानुभूति चाहे वह कितना ही नीच तथा हीन हो, अपनाना ही इस्लाम की रूह है जो अनुकूल कर्मों का हुक्म देने वाला तथा बुराइयों से रोकने वाला और ईश्वरीय नियमों की सीमाओं की सुरक्षा करने वाला है। इस्लाम का स्वभाव ही यह है कि वह राष्ट्रों की राजनीति तथा व्यक्तियों के आपसी व्यवहारों में समान रूप से ज़ुल्म तथा हिंसा के विरुद्ध युद्ध करे।

कुछ रिवायतों में इस प्रकार है कि एक व्यापारी ज़ुबैद (यमन का एक नगर) का रहने वाला व्यापारिक सामान लेकर 'मक्का' आया तथा मक्का के एक सरदार आस बिन वाइल ने उससे माल खरीदा परन्तु मूल्य अदा न किया। उसने क़ुरैश के क़बीलों तथा समर्थकों से फ़रयाद की परन्तु कोई भी उस की सहायता को तैयार न हुआ। निराश होकर काबे के पास (अबू क़ैस पर्वत पर खड़ा हो गया, अरब परम्परा के अनुसार सर में मिट्टी डाली और अपना गिरहबान फाड़ लिया—अनुवादक) खड़ा हो गया और इस प्रकार चिल्लाना प्रारम्भ किया।

'हे आल्-फ़हर! दौड़ो, सहायता करो, मक्के की घाटी में उस व्यक्ति का माल लूट लिया गया है जो अपने घर व बच्चों से दूर है।

एक परेशान व्यक्ति 'अहराम' बांधे हुए है जिसने अभी अपना

---

१. यह सन्धि कई वर्ष की लड़ाई के पश्चात् हुई थी उस समय रसूलुल्लाह की आयु १६ वर्ष थी। और आप इसमें शरीक थे। पहले जिन लोगों ने यह सन्धि लिखी थी उन में से प्रत्येक का नाम 'फ़ज़्ल' था। अतः यह सन्धि 'हिलफ़ुल फ़ुजूल' के नाम से प्रसिद्ध हुई। फ़ुजूल फ़ज़्ल का बहु वचन है। (अनुवादक)

किया और कहा : मुझे

औलाद ? क्या उसने

उसने रहमान से कोई

कुछ यह कहता है हम

बढ़ाते चले जायेंगे और

होंगे, और यह अकेला

व्यापार तथा राजनीति के

---

१. अर्थात् लोहारगीरी का पेशा

थे। मुहम्मद (सल्ल०) उनके शत्रुओं से अधिक समीप थे तथा मुहम्मद के समीप वे लोग थे जिन्होंने इन अत्याचारियों के विरुद्ध आवाज़ उठायी तथा उन से युद्ध किया।

शक्ति एवं आनन्द का ज़माना

जब फ़िजार का युद्ध समाप्त हो गया और हिलफ़ुल फ़ुज़ूल समझौता हुआ तो उन दिनों मुहम्मद (सल्ल०) अपनी आयु के तीसरे चरण में प्रवेश कर रहे थे। यह और इससे पहले का काल युवावस्था की उमंगों, आवेग-पूर्ण स्वभाव तथा साहस का काल होता है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) शक्तिशाली शरीर, उत्साहपूर्ण, तथा प्रतिष्ठित व्यक्तित्व के मालिक थे। आपकी शक्ति का प्रदर्शन इसके पश्चात् ४० वर्ष की आयु तक होता रहा। अबू हुरैरा कहते हैं :

> 'मैंने अल्लाह के रसूल से अधिक सुन्दर किसी को नहीं देखा मानो सूर्य भी आपके मुख पर निछावर हो रहा है। और आप से अधिक किसी को तेज रफ़्तार नहीं देखा, लगता था कि धरती ने अपनी दूरी समेट ली हो। हम आपके साथ चलते तो थक जाते परन्तु आप को लेशमात्र भी कठिनाई न होती।'
>
> (तिर्मिज़ी)

यदि इस प्रकार का व्यक्ति दुनिया (भौतिकता) की ओर आकृष्ट नहीं होता तो स्वयं दुनिया उसके पीछे दौड़ती है। इसके पश्चात् दुनिया कैसे लोगों की ओर बढ़ती है? उनकी ओर जो काल्पनिक संसार में रहते हैं तथा अपशकुन लेते हैं।

मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम साधनों के होते हुए भी न काम वासनाओं की ओर आकृष्ट हुए न इनका शिकार हुए। न आपने पद एवं धन दौलत की प्राप्ति का प्रयत्न किया वरन् इसके विपरीत मक्का और उस के चारों ओर आपका जीवन प्रकाशमान तथा अपने साथियों में श्रेष्ठ एवं अद्वितीय था। कुछ ही दिनों में मधुर विशेषताओं, सुचरित्र, दृढ़ चिन्तन, सच्ची गुफ़्तगू तथा सत्य निष्ठता एवं विश्वसनीय व्यवहार के कारण पूरे क्षेत्र में लोकोक्ति बन गये।

मन की श्रेष्ठता यह नहीं है कि काम वासना नष्ट कर दी जाये, अथवा काम वासना तो हो परन्तु उसकी सन्तुष्टि के साधन न हों। वरन् श्रेष्ठता यह है कि सतीत्व एवं संयम की शक्ति काम वासना से अधिक हो। अतः

क्षेत्रों में थोड़ी सी आजीविका जि
को चराने में आनन्द महसूस करते
क्या यह धन तथा भौतिक जी
वरन् यह उन उच्च वास्तविकता
है। उच्च कोटि के व्यक्ति जब स
भण्डार भी उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर
है कि वे अपनी जाति के बादशाह
वता पस्ती में गिरती चली जा र
मूल्यों के मरघट में दफ़न होता च
इसी प्रकार मुहम्मद सल्लल्ल
तीसरे चरण में क़दम रखा। यह

खदीजा बिन्त ख्वैलिद से परिचय प्राप्त हुआ।

'हज़रत खदीजा' (रजिल्लाहु अन्हा)

खदीजा (रजि०) उस स्त्री का उत्तम उदाहरण हैं जो किसी महापुरुष के जीवन को पूरा करती है। पैग़म्बर (सन्देष्टागण) बड़े भावुक हृदय के होते हैं तथा जिस स्थिति एवं वातावरण को वे बदलना चाहते हैं उसकी ओर से उन्हें बड़ी कठिनाई तथा कष्टों का सामना करना पड़ता है। वे जिस बात को फैलाना चाहते हैं उसके मार्ग में उन्हें बड़ा जिहाद (महा-संघर्ष) करना पड़ता है। उन्हें किसी ऐसे व्यक्तित्व की अति आवश्यकता होती है जो उनके निजी जीवन में रस घोल सके तथा उनकी सहायता कर सके। हज़रत खदीजा में ये समस्त गुण अत्यधिक पाये जाते थे। अतः आपने मुहम्मद सल्ल० के जीवन पर काफ़ी प्रभाव डाला।

इब्न्-असीर कहते हैं कि हज़रत खदीजा एक व्यापारी स्त्री थीं। किसी व्यक्ति से व्यापारी शर्ते तय करके अपना माल व्यापार के लिये देती थीं। वापसी में उसका निश्चित हिस्सा उसे दे देती थीं। जब उन्हें मुहम्मद सल्ल० की सत्यता, अमानत तथा उच्च नैतिकता के विषय में मालूम हुआ तो उन्होंने आपके द्वारा व्यापार का माल सीरिया (शाम) भेजने के लिये कहलवाया कि मैं जितना अन्य लोगों को देती हूं उससे अधिक दूंगी। तथा आप सल्ल० के साथ अपने दास 'मैसिरा' को भी भेज दिया।

आप सल्ल० व्यापारिक मामला तय करके खदीजा के माल को लेकर शाम चले गए। रसूलुल्लाह को व्यापार में सफलता मिली तथा अपने चाचा के साथ की गत यात्रा से अधिक लाभ कमाया और अन्य लोगों की तुलना में दुगना लाभ प्राप्त करके खदीजा को दिया। वे इस लाभ की अधिकता से प्रसन्न हो गयीं परन्तु जिस व्यक्ति को उन्होंने आज़माया था उस की अमानत तथा ईमानदारी व विश्वास से वह अधिक प्रभावित हुईं।

खदीजा रजि० उत्तम कुल की धनवान स्त्री थीं। उनके क़बीले में उन की प्रतिभा तथा सूझबूझ प्रसिद्ध थी। क़ुरैश के अनेकों सरदारों ने शादी की इच्छा की परन्तु वह उन्हें घृणा की दृष्टि से देखती थीं क्योंकि वे धन के लोभी थे। लेकिन जब उनकी निगाह हज़रत मुहम्मद पर पड़ी तो उन्हें अनोखे प्रकार का व्यक्ति पाया। उन्होंने भांप लिया कि यह व्यक्ति माल तथा धन का लोभी नहीं है न जीवन सामग्री पर आप सल्ल० की ललचाई हुई नज़र है। जब दूसरे लोगों से व्यापार का हिसाब किताब करती होंगी

तो उसमें अरब के अन्य लोगों की धोखाधड़ी तथा लालच की बीमारी दिखाई पड़ती होगी। परन्तु मुहम्मद सल्ल० का व्यवहार बताता था कि आप के अन्दर पुनीत व्यवहार, गम्भीरता, बुद्धिमत्ता तथा सत्य प्रियता कूट-कूट कर भरी थी। आप सल्ल० ने ख़दीजा के माल की ओर नज़र उठाकर भी न देखा न उनके सौन्दर्य को उद्देश्य बनाया। आपने तो अपना उत्तर-दायित्व पूरा किया तथा खुश-खुश घर लौट आये।

ख़दीजा को अपनी खोई हुई सम्पत्ति मिल गयी और उन्होंने अपनी सहेली 'नुफ़ैसा बिन्त मुनिया' से दिल की बात कह दी। तथा नफ़ीसा मुहम्मद सल्ल० को ख़दीजा से विवाह करने के लिये राज़ी करने गयीं। आपने इसे स्वीकार करने में देर न की, तुरन्त अपने चाचाओं से परामर्श किया और अबू तालिब तथा हमज़ा आदि ख़दीजा के चाचा 'अम्र बिन असद' के पास गये, क्योंकि उनके पिता हर्बेफ़ुज्जार में मर चुके थे। शादी तय हो गयी 'मह्र' में ४० ऊंट तय किये गये। तथा अबू तालिब ने शादी उत्सव में खड़े होकर इस प्रकार ख़ुत्बा (भाषण) दिया :

> 'मुहम्मद की तुलना क़ुरैश के जिस युवक से भी की जायेगी वह शिष्टता, बुद्धि, विवेक तथा नैतिकता व व्यवहार में निम्न ही होगा। यद्यपि माल की इसके पास कमी है परन्तु माल तो ढलती छाया है तथा यह उधार मांगी हुई चीज़ है जिसे वापस करना है। इसे ख़दीजा बिन्त ख़ुवैलिद से रुचि है और ख़दीजा को इस से।'

> तत्पश्चात् ख़दीजा के अभिभावक ने उत्तर में कहा :

> 'यह वह पुरुष है जो नाक नीची नहीं होने देगा तथा मैंने अपनी भतीजी का निकाह मुहम्मद से कर दिया।'

कहा जाता है कि इसी प्रकार के शब्द अबू सुफ़ियान ने उस समय कहे थे जब रसूलुल्लाह सल्ल० ने उसकी पुत्री हबीबा से शादी की थी। यद्यपि उस समय दोनों के बीच युद्ध बड़े ज़ोरों पर था। अबू सुफ़ियान ने इन शब्दों में अपनी प्रसन्नता प्रकट की : मुहम्मद के अन्दर वह योग्यता है कि उनसे रिश्ता प्रशंसा का कारण है और हम दोनों के बीच का उचित विरोध मुहम्मद के आदर सम्मान को कभी कम नहीं करेगा। तथा अबू सुफ़ियान की पुत्री का आपके साथ विवाह अबू सुफ़ियान के लिये लज्जा का कारण न होगा यद्यपि इस समय दोनों में भारी शत्रुता है।'

—o—

*शादी के समय रसूलुल्लाह की आयु २५ वर्ष थी। तथा ख़दीजा ४०

वर्ष की थीं। यह रिश्ता अन्तिम समय तक स्थिर रहा, यहां तक कि खदीजा ६५ वर्ष की आयु में निधन कर गयीं। पुत्र इब्राहीम के अतिरिक्त सारी सन्तान ख़दीजा ही से हुई थीं।

हजरत खदीजा के गर्भ से सर्व प्रथम क़ासिम जन्मे जिनके कारण नुबूव्वत के पश्चात् आप अपने को अबुल क़ासिम (क़ासिम के पिता) लिखाते थे। फिर जैनब, रुक़ैया, उम्म्-कुलसूम, फ़ातिमा रज़िअल्लाहु अनहुम तथा अब्दुल्लाह रज़ि० पैदा हुए। अब्दुल्लाह को तैयिब और ताहिर भी कहा जाता था। क़ासिम (रज़ि०) की एक साल की आयु में मृत्यु हो गयी। अब्दुल्लाह की शिशु अवस्था में ही मृत्यु हो गयी। रसूलुल्लाह की समस्त पुत्रियां फ़ातिमा रज़ि० को छोड़ कर आप के जीवन काल ही में मृत्यु प्राप्त कर चुकी थीं। फ़ातिमा का निधन आप के स्वर्गवास के छः महीने पश्चात् हुआ था।

ख़दीजा से आप की शादी दोनों के लिए शुभ सिद्ध हुई। निस्सन्देह यह नया परिवार 'का'बे' के 'रब' के रंग में रंगा हुआ था, जाहिलियत (ग़ैर इस्लाम) की गन्दगियों से पवित्र था तथा मूर्ति पूजा के अभिशाप से दूर था।

शादी के पश्चात् आप ने पुनः एकान्तवास तथा सोच विचार प्रारम्भ किया तथा उन खेल कूद, व्यर्थ के काम, जुआ, मदिरा तथा अन्य मनोरंजन के कामों से पृथक रहे जिन में अरब के युवक व्यस्त थे। यद्यपि व्यापारिक प्रयासों, तथा आजीविका के उपायों से कभी सम्पर्कहीन न रहे और बाज़ारों में घूमना और यात्रा करना न छोड़ा। बुद्धिमान तथा विवेकपूर्ण व्यक्ति का जीवन एक अशान्त गिरोह के बीच अनेकों सावधानियों तथा चेतावनियों की मांग करता है। विशेषतः उस समय जब वह व्यक्ति उच्च स्वभाव का एवं सुचरित्रवान हो जिस की मांग है कि वह विनम्र, कोमल, रूपवान, सुशील तथा स्मितमुख हो।

इस अवधि में कोई चिन्ताजनक घटना नहीं हुई। परन्तु हजरत खदीजा को अपने पुत्र की मृत्यु का अति दुःख हुआ क्योंकि पुत्रों का उस जाति में बड़ा स्थान था जहां लड़कियों को जीवित गढ़े में दबा दिया जाता था तथा पिता के मुख पर पुत्री की सूचना मिलते ही सियाही छा जाती थी।

आश्चर्य की बात है कि अरब नबी होने के पश्चात् मुहम्मद (सल्ल०) को ताना देते थे और कहते थे कि हम आप का वंश समाप्त होने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। इब्न्-अब्बास से हदीसोल्लेख है कि क़ुरैश की उद्दण्डता तथा अवज्ञा में तेज़ी आती गयी और कहने लगे कि जिस धर्म पर

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सल
जिस का आदर करने पर इस्ल
मजबूत पत्थरों से बनी हुई एक
जिन पर छत स्थिर थी। इस
पश्चात्) इब्राहीम और उन
का उद्देश्य यह था कि यह ईश्वर
केन्द्र स्थान बने जिस में केवल ई
इब्राहीम (अलै०) ने मूर्तियों
कष्ट झेले थे। अतः अल्लाह
घर का निर्माण करें ताकि यह
प्रतीक बने तथा शान्तिगृह करार

गुंजाइश नहीं थी। अतः इसे और इस के आस पास के क्षेत्रों को 'हरम' (आदर स्थान जहां किसी भी प्राणी की हत्या करना पाप है) क़रार दिया गया।

इस का अर्थ यह है कि स्वयं 'का'बा' केवल पत्थरों की एक इमारत है जो न लाभ पहुंचा सकती है न हानि। परन्तु इस का आदर उन अर्थों तथा स्मृतियों के कारण है जो इस से सम्बन्धित हैं। इसी लिये रसूलुल्लाह ने साग्रह फ़रमाया है कि जान, माल और आदर सम्मान इस 'का'बा' से अधिक पवित्र और ईश्वर के निकट अधिक सम्मानित हैं।

इस्लाम जिस मूर्ति पूजा का अन्तिम समय तक विरोधी रहा उसी का यह परिणाम है कि लोग 'का'बा' या उस से सम्बन्धित उस के किसी अंश को लाभ हानि पहुंचाने वाला समझने लगे हैं।

आप भली भांति जानते हैं कि नेतागण, नायक तथा सेना जब अपने राष्ट्र की किसी महत्वपूर्ण स्मृति को सलामी देती हैं तथा उस के सामने अपनी भक्ति का प्रदर्शन करती हैं तो यह उन की पूजा या उपासना (इबादत) नहीं करती हैं वरन् उन निश्चित स्थानों व चिन्हों की पवित्रता तथा उन का सम्मान अभिप्रेत होता है। अतः संसार की इस सब से पहली मस्जिद को महत्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थान मिलना चाहिये और बाद में बनने वाली सभी मस्जिदों का इसे 'क़िब्ला' (जिस की ओर मुंह करके नमाज़ पढ़ते हैं, दिशा केन्द्र) होना चाहिये।

परन्तु प्रत्येक नमाज़ में उद्देश्य तथा प्रत्येक 'ख़ुशूअ व ख़ुज़ूअ' (नम्रता तथा विनय) के अवसर पर अपेक्षित केवल ईश्वर ही हो।

हज़रत अबू ज़र (रज़ि०) से हदीसोल्लेख है कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा : दुनिया में सर्वप्रथम कौन सी मस्जिद निर्मित हुई ?

आप ने फ़रमाया : 'मस्जिद्-हराम'
मैं ने पूछा : फिर कौन सी ?
आप ने फ़रमाया : 'मस्जिद्-अक्सा'
मैं ने पूछा : इन दोनों के बीच कितनी अवधि का अन्तर है ?
आप ने फ़रमाया : चालीस वर्ष का, इस के पश्चात् पूरी धरती तुम्हारे लिये मस्जिद है, जहां कहीं भी नमाज़ का समय हो जाये तुरन्त नमाज़ अदा कर लो, इसी में तुम्हारी भलाई है।

—बुख़ारी, मुस्लिम आदि

कि जो व्यक्ति सब से पहले 'बाबुस्सफ़ा' (सफ़ा द्वार) से प्रवेश करने वाले रसूलुल्लाह (सल्ल०) थे। लोगों ने आप को देखते ही कहा, यह 'अमीन' (विश्वसनीय) हैं, हम सन्तुष्ट हैं, यह तो मुहम्मद हैं।'

> हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने एक चादर बिछा कर उस के बीच में 'हज्र-अस्वद' रख दिया तथा झगड़ने वाले समस्त क़बीलों के सरदारों से चादर पकड़ने को कहा, सब ने चारों ओर से चादर उठाई यहां तक कि 'हज्र-अस्वद' अपने यथा-स्थान तक उठा लिया गया फिर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने उसे अपने हाथों से उस के स्थान पर लगा दिया। —अहमद

यह सर्वोत्तम समाधान था उस खतरनाक विवाद का जिसे पूरी क़ौम ने स्वीकार किया तथा सर्व सम्मति से आप के 'अमीन' होने की न केवल गवाही दी वरन् आप की बुद्धिमत्ता को भी देख लिया। यह घटना बताती है कि क़ौम में आप (सल्ल०) को कितना विश्वास तथा सम्मान प्राप्त था।

'का'बे' के निर्माण में क़ुरैश ने बड़ी रुचि ली फिर भी सामग्री की कमी के कारण उसे हज़रत इब्राहीम के निर्माण तक न पहुंचाया जा सका। इस के पश्चात् इस्लाम के शासनकाल में भी रसूलुल्लाह ने इस के नव निर्माण या किसी परिवर्तन की आवश्यकता महसूस न की तथा उसे पूर्व निर्माण पर बाक़ी रहने दिया।

हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि मुझ से रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया —

> तुम ने देखा नहीं कि तुम्हारी क़ौम ने जब का'बे का निर्माण किया तो इब्राहीम के निर्माण चिन्हों तक न पहुंच सकी?' मैं ने कहा, 'हे अल्लाह के रसूल! क्या आप इसे इब्राहीम के निर्माण तक नहीं पहुंचा सकते?' आप ने फ़रमाया: 'यदि तुम्हारी क़ौम के कुफ़्र में ग्रस्त होने की शंका न होती तो मैं अवश्य ऐसा करता!'
>
> इब्न्-उमर (रज़ि०) कहते हैं कि यदि आइशा ने यह बात रसूलुल्लाह से सुनी है तो मैं ने भी अल्लाह के रसूल को कभी नहीं देखा कि 'हज्र-अस्वद' के निकटवर्ती दोनों स्तंभों के चुम्बन की उपेक्षा की हो, हां का'बे का निर्माण इब्राहीम के निर्माण चिन्हों पर नहीं हुआ।'

आलिमों का कहना है कि रसूलुल्लाह के उक्त कथन का अर्थ यह है

हैं। प्रायः ये लोग जान बूझ कर उसे छुपा जाते हैं वरन् जिन वास्तविकताओं को वे पहचानते हैं। उन्हीं से जंग शुरू कर देते हैं। ऐसे लोग कम होते हैं जो समाज को दृढ़ परमपराओं के विरुद्ध आवाज उठायें तथा 'सत्य' की घोषणा करें। तथा ऐसे लोग तो आटे में नमक के समान होते हैं जो 'सत्य' के लिये जीवित रहें तथा उसी के मार्ग में प्राण तेज दें।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) के नबी होने से पूर्व ऐसे लोग मौजूद थे जो अरबों की मूर्ति पूजा को घृणा की दृष्टि से देखते थे तथा उस की खिल्ली उड़ाते थे। वे भली भांति जानते थे कि उन की जाति मनगढ़ंत 'बातिल' (मिथ्या) के पीछे पड़ी हुई है परन्तु उन में इतना सामर्थ्य या शक्ति न थी कि वे उसे रोक सकते!

> 'इब्न् उमर (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह 'बल्द' की तराई में 'वह्य' (वही) आने से पूर्व ज़ैद बिन अम्र बिन नुफ़ैल से मिले तो आप (सल्ल०) ने उस के सामने खाना लगाया जिस में गोश्त भी था। उस ने खाने से इंकार कर दिया और बोला, 'तुम लोग थानों पर जो जानवर चढ़ाते हो' मैं उन का गोश्त नहीं खाता। मैं केवल वही वध्य (ज़बीहा) खाता हूं जिस पर ईश्वर का नाम लिया गया हो।' वह क़ुरैश के ज़बीहों की निन्दा करता था। वह कहता था, 'बकरी को ईश्वर ने पैदा किया, उसी ने उस के लिये आकाश से पानी उतारा, धरती से चारा उगाया' फिर भी तुम लोग ईश्वर के अतिरिक्त अन्य लोगों के नाम पर वध कर देते हो।' वह घृणा के कारण ऐसा कहता था। —बुख़ारी

एक अन्य रिवायत में है कि ज़ैद बिन अम्र बिन नुफ़ैल सीरिया की ओर वास्तविक धर्म तथा उस के अनुयायियों की खोज में निकला। अतः उस की भेंट एक यहूदी आलिम से हुई, उस ने उस का दीन पूछा और कहा, कदाचित मैं तुम्हारा धर्म ग्रहण कर लूं।' उस ने कहा, तुम हमारा धर्म ग्रहण न करो अन्यथा ईश्वर के प्रकोप के पात्र बन सकते हो। ज़ैद

---

१. उसे भ्रम हुआ कि अन्य अरबों के समान यह गोश्त भी मूर्ति के स्थानों पर चढ़ाया हुआ होगा अतः हराम है यद्यपि रसूलुल्लाह का परिवार ऐसा खाना न खाता था ज़ैद ने जानना चाहा कि यह हराम तो नहीं है। तथा उस ने अपने मत तथा विचारधारा को स्पष्ट किया था। रसूलुल्लाह को यह बात पसन्द आयी अतः आप ने इसे याद रखा। —अनुवादक

ने कहा कि मैं तो ईश्वर के प्रकोप से भाग रहा हूं क्योंकि मैं उसे सहन नहीं कर सकूंगा। तो फिर तुम मुझे किसी अन्य व्यक्ति का पता बताओ उस ने कहा मैं नहीं जानता, परन्तु तुम 'हनीफ़' बन जाओ। जैद ने पूछा, यह हनीफ़ क्या चीज है ? आलिम ने बताया, 'हनीफ' इब्राहीम अलैहिस्सलाम का अनुयायी होता है जो न यहूदी थे न ईसाई, वह केवल ईश्वर की इबादत करते थे।' जैद आगे चला गया और उस की भेंट एक ईसाई आलिम (धर्मज्ञाता) से हुई। उस से भी यही प्रश्न किये तो उस ने कहा, 'तुम हमारे दीन (धर्म) को ग्रहण न करना, अन्यथा ईश्वर की 'लानत' के अधिकारी बनोगे।' जैद ने कहा, 'जहां तक हो सकेगा मैं ईश्वर की भर्त्सना से भागूंगा, तो तुम मुझे किसी और का पता बता दो।' उस ने कहा, 'मैं नहीं जानता, परन्तु तुम 'हनीफ़' बन जाओ।' जैद ने पूछा, हनीफ़ क्या होता है ?' बोला, 'इब्राहीम का दीन (धर्म), वह न यहूदी थे न नसरानी (ईसाई) वरन् केवल अल्लाह की इबादत करते थे।' अत: जब जैद ने समझ लिया कि उस की पसन्द की चीज इब्राहीम के तरीक़े में है तो वह आलिम के पास से उठ कर बाहर आया और अपने दोनों हाथ उठा कर कहा, हे 'ईश्वर ! मैं तुझे साक्षी बनाता हूं कि मैं इब्राहीम के 'दीन' (तरीक़े) पर हूं।'

यह हदीस उस हैरानी तथा विस्मयता की ओर इशारा कर रही है जो उस समय पूरे विश्व पर आच्छादित थी। तथा जिस के घने कुहरे ने धर्मों को अपने में छिपा लिया था। यहूदी इस बात को भली भांति जानते थे कि वे धरती में अनादर पा चुके हैं अत: उन के दीन (धर्म) में प्रवेश करने वाला उस सजा से नहीं बच सकेगा जिस को वे स्वयं भोग रहे थे।

ईसाइयों में मसीह के स्वभाव, उन के जन्म तथा उन की माता के शिशु प्रसव के विषय में बड़े मतभेद उत्पन्न हो गये थे। जिन के परिणाम स्वरूप बड़े हिंसक युद्ध हो चुके थे। तथा वे कई गुटों में बंट चुके थे जो एक दूसरे की निन्दा में लगे रहते थे।

सीरिया के ईसाई जिन से जैद ने प्रश्न किया था, रोम के गिरजा के परम्परागत धर्म के कट्टर विरोधी थे अत: यह आश्चर्य की बात नहीं है कि जैद को उन्हों ने बताया हो कि यदि वह इस दीन में प्रवेश कर गया तो यातना का अधिकारी ठहरेगा। कदाचित यह निन्दा तथा धिक्कार उस ग़लती का परिणाम था जो आदम (अलै०) से हुई थी जिसे उन के पश्चात् उन की सन्तान भोग रही थी। जैसा ईसाई दावा करते हैं तथा मसीह को सूली पर चढ़ाने को वैध बताते हैं। अत: जैद इस बात के अधिकारी थे

कि इन समस्त सम्प्रदायों तथा गिरोहों से दूर रहें तथा इब्राहीम के दीन की खोज में रहें।

> 'अस्मा बिन्त अबी बक्र' (रजि०) से हदीसोल्लेख है, वह कहती हैं कि मैं ने ज़ैद बिन अम्र बिन नुफ़ैल को 'का'बे' से टेक लगाए खड़े देखा। वह कह रहा था : 'हे क़ुरैश के लोगो! मैं ईश्वर की शपथ ले कर कह रहा हूं कि तुम में से कोई भी इब्राहीम के दीन पर नहीं है।' वह जीवित गाड़ी हुई बलिकाओं के पालन पोषण का प्रबन्ध करता था। जब कोई व्यक्ति अपनी पुत्री को ज़िन्दा धरती में गाड़ना चाहता तो वह कहता, मैं तुझे इस के कष्ट से बचाता हूं तथा उस बालिका को ले लेता और जब वह पल बढ़ कर जवान हो जाती तो उस के पिता से कहता, 'यदि तुम चाहो तो तुम्हारे अधिकार में दे दूं अन्यथा इस के भरण पोषण के व्यय को मैं स्वयं ही सहन करूं!' —बुख़ारी

ज़ैद उन विचारकों में से हैं जो जाहिलियत (ग़ैर-इस्लाम) की ख़राबियों पर चिन्तित थे। सत्य को ग्रहण करने पर शुक्र अदा करते थे परन्तु वह अन्य लोगों के साथ जाति के मूल्यों का इन्कार न करते थे। परन्तु ईश्वर इस कार्य के लिए एक ऐसे व्यक्ति का चयन कर रहा था जो सत्य पर न केवल दृष्टि रखता था वरन् वह शक्ति एवं सामर्थ्य भी रखता था जो उसे कुफ़ तथा अन्धकार के सामने खड़ा रख सके तथा प्राण एवं माल के बलिदान के लिए समय से तत्पर रख सके।

इस महान उत्तरदायित्व का बोझ उठाने के लिए प्रकृति एक महान व्यक्ति की दीक्षा कर रही थी।

महान कार्य महान लोगों के द्वारा ही होते हैं।

हिरा गुफा में

मुहम्मद (सल्ल०) की आयु चालीस वर्ष के लगभग हो गयी। सोच-विचार तथा चिन्तन के अन्तर ने आप के तथा आप की जाति के मध्य बड़ा फ़ासला उत्पन्न कर दिया था। आधुनिक शैली में—आप अपनी जाति की ओर इस प्रकार देख रहे थे जिस प्रकार अन्तरिक्ष विज्ञान का विशेषज्ञ उन लोगों की ओर देखता है जो धरती को गाय के सींग पर टिकने में विश्वास रखते हैं। या जैसे परमाणु बमों का विशेषज्ञ उन लोगों को देखता है जो आपसी गृहयुद्ध में पत्थरों का प्रयोग करते हैं या पशुओं द्वारा यात्रा करते हैं।

सन्दृष्टाओं के बुल की इच्छा में
महसूस कर रही थी जिस में
है। जब मिट्टी और सोना एक
किसी साधारण व्यक्ति का काम

इस से पहले हज़रत मुहम्
हिस्सलाम) ने उद्विग्नता की
किया था तथा अपनी एवं अ
हिदायत की खोज में मरण-
ऐमन पहाड़ी से आग दिखाई
आवाज़'(पवित्र स्वर) ने उन
कर दिया—

'निस्सन्देह मैं अल्लाह

नहीं। अतः तू मेरी इबादत कर और मेरी याद (स्मरण) के लिए नमाज़ क़ायम कर।' —ता०हा० १४

आग की यह चिंगारी शताब्दियों के बाद पुनः इस कन्दरा में प्रकाशमान हुई जिस की गोद में एक ऐसा व्यक्ति भक्ति तथा उपासना में लीन था जो कुफ़ की गन्दगियों तथा बुराइयों से कोसों दूर था। परन्तु यह चिंगारी आग न थी जो दर्शक के क़रीब होती वरन् एक ऐसी ज्योति थी जो 'शुभ वह्य' की मंगल सूचना बन कर आयी। जो हृदय को हिदायत, इल्हाम (ईश्वरीय संकेत), धैर्य तथा ईश्वरीय ध्यान से ढांक लेती थी। सहसा हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) भय तथा डर के साथ फ़रिश्ते की आवाज़ सुनते हैं, वह कह रहा था—

'पढ़ो'! आप उत्तर देते हैं : 'मैं पढ़ा हुआ नहीं हूं।'

यही प्रश्नोत्तर कई बार होते हैं यहां तक कि क़ुरआन की ये आयतें नाज़िल (अवतरित) होती हैं—

'पढ़ो अपने 'रब' का नाम ले कर, जिस ने पैदा किया। पैदा किया मनुष्य को एक लोथड़े से। पढ़ो, और तुम्हारा 'रब' बड़ा ही उदार है जिस ने क़लम द्वारा ज्ञान दिया, ज्ञान दिया मनुष्य को उस चीज़ का, जिसे वह नहीं जानता था।' —अलक़ १ से ५

वर्क़ा बिन नौफ़ल

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हमारे जैसे इन्सान थे परन्तु दुनिया एक ही योनि के व्यक्तियों के बीच वैसा अन्तर नहीं करती जैसा उसे मानव योनि में दिखाई देता है। कुछ व्यक्ति नक्षत्रों से भी ऊंचे होते हैं जबकि कुछ मैंगनी के बराबर भी सम्मान नहीं रखते यद्यपि सभी 'मनुष्य' कहलाते हैं।

यही अन्तर 'वह्य' से प्रतिष्ठित एवं उस से वंचित व्यक्तियों के बीच होता है आम व्यक्तियों से उस व्यक्ति की क्या तुलना हो सकती है जिसे चुन लिया गया हो? और उस की आम प्रतिष्ठा के चरणों में एक नये चरण की वृद्धि कर दी गयी हो! और उस में उपदेश, क्षमता, सामर्थ्य तथा सहायता की किरणें विद्यमान हों!

'वह फ़रिश्तों को रूह के साथ अपने शब्दों में से जिस पर चाहता है उतारता है, कि सचेत कर दो कि मेरे सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं, अतः मुझ से डरो।' अन्-नह्ल २

आया और कहा : 'पढ़ो' ! आप ने फ़रमाया, 'मैं पढ़ा हुआ नहीं हूं।' आप का वर्णन है कि फिर फ़रिश्ते ने मुझे पकड़ कर भींचा, यहां तक कि मेरी सहन शक्ति समाप्त होने लगी। फिर उस ने मुझे छोड़ दिया और कहा, 'पढ़ो'। मैं ने कहा, 'मैं पढ़ा हुआ नहीं हूं।' उस ने पुनः मुझे दबाया तथा मेरी सहनशक्ति समाप्त होने लगी। फिर मुझे छोड़ दिया और कहा, 'पढ़ो' मैं ने फिर कहा, 'मैं पढ़ा हुआ नहीं हूं।' उस ने तीसरी बार मुझे भींचा तथा मेरी सहन शक्ति जवाब देने लगी, फिर मुझे छोड़ दिया और कहा, 'पढ़ो अपने रब के नाम से जिस ने पैदा किया' तथा 'जिसे वह न जानता था' तक पहुंच गया अर्थात सूरः 'अलक़' की पांच आयतें पढ़ीं।

तत्पश्चात् रसूलुल्लाह सल्ल० कांपते हुए घर की ओर आये और हज़रत 'ख़दीजा' से कहा, 'मुझे उढ़ाओ, मुझे उढ़ाओ'। अतः आप को उढ़ा दिया गया। कुछ समय पश्चात भय की दशा समाप्त हो गयी फिर आप ने ख़दीजा से फ़रमाया, 'हे ख़दीजा! यह मुझे क्या हो गया है?' फिर पूरी घटना उन्हें सुनाई और कहा, 'मुझे अपनी जान का भय है।'

हज़रत ख़दीजा ने कहा, 'कदापि नहीं! आप प्रसन्न हो जायें, ख़ुदा की क़सम ईश्वर आप को अपमानित न करेगा। आप निकटतम सम्बन्धियों के साथ सुव्यवहार करते हैं। सत्य बोलते हैं, निःसहाय लोगों का भार सहन करते हैं, निर्धन तथा दरिद्रों को कमा कर देते हैं, आतिथ्य (मेहमानदारी) करते हैं और सुकर्मों में सहयोग करते हैं।'

इस के पश्चात वह रसूलुल्लाह (सल्ल०) को 'वर्क़ा बिन नौफ़ल' के पास ले गयीं जो उन के चचा सम्बन्धी भाई थे। वे इस्लाम से पूर्व मूर्ति-पूजा त्याग कर ईसाई हो गये थे। 'अरबी' तथा 'इब्रानी' भाषाओं में बाईबिल लिखते थे। अति वृद्ध तथा नेत्रहीन हो गये थे। हज़रत ख़दीजा ने उन से कहा, 'भाईजान, ज़रा अपने भतीजे का क़िस्सा सुनो।' वर्क़ा ने कहा, 'भतीजे! तुम को क्या दिखाई दिया'? रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने जो कुछ देखा था वर्णन कर दिया। वर्क़ा ने कहा, यह वही जिब्रील फ़रिश्ता है जो अल्लाह ने मूसा पर उतारा था। क्या अच्छा होता कि मैं युवक व शक्तिशाली होता, ईश्वर करे मैं आप के नुबूव्वत काल तक जीवित रहूं जब आप की जाति आप को (मक्का) से निकाल देगी। रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने कहा, 'क्या ये लोग मुझे निकाल देंगे?' वर्क़ा ने कहा, हां! कभी ऐसा नहीं हुआ कि कोई व्यक्ति वह चीज़ ले कर आया हो जो आप लाये हैं और उस से शत्रुता न की गयी हो। यदि मैं उस समय तक जीवित रहा तो आप की सहायता करूंगा।' परन्तु अधिक समय न बीता था कि

वर्क़ा का देहान्त हो गया। तथा इधर 'वह्य' का आना कुछ दिनों के लिए रुक गया।
—बुखारी, मुस्लिम

मानो गत चालीस वर्ष एक दिन में सिमट आये हों। 'वह्य' एक नव दिवस का प्रकाश ले कर आयी। विस्मित, निःसहाय तथा खोजी बुद्धि 'सत्य' का प्रकाश देखने लगी, तथा संकीर्ण, सीमित तथा बोझल सीना विश्वास की पुनः प्राप्ति और आशाओं की विशालता महसूस करने लगा तथा नुबूव्वत की किरणों से प्रकाशमान होने लगा।

निस्सन्देह यह प्रतिष्ठा तथा श्रेष्ठता कितनी उच्च थी एवं मुहम्मद (सल्ल०) जिन मामलों तथा जीवन की घाटियों को तय कर रहे थे, वे कितनी महान थीं।

शीघ्र ही आप को सन्तोष हो गया। उस समय हज़रत ख़दीजा का स्थान पहले तथा बाद के समस्त युगों की स्त्रियों के लिए अनुकरण योग्य था जो प्रशंसनीय था। उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को ढारस बंधाई, आप परेशान हुए तो आप को सुख पहुंचाया, आप ने थकन का अनुभव किया तो आप के उच्च व्यवहार का वर्णन किया और कहा कि ऐसे व्यक्ति कभी अनादर नहीं पाते। अल्लाह ने आप के अन्दर उच्च नैतिकता, श्रेष्ठ गुण तथा सुव्यवहार इस लिए उत्पन्न कर दिये हैं कि वह आप को सम्मान तथा प्रतिष्ठा प्रदान करे। इसी दृढ़ मत तथा शुद्ध हृदयता के कारण हज़रत 'ख़दीजा' इस बात की पात्र हुईं कि अल्लाह, सारे संसार का रब, उन्हें 'सलाम' भेजे। अतः जिब्राईल फ़रिश्ते के द्वारा ईश्वर उन्हें सलाम भेजता था[1]।

---

१. लेखक का संकेत उस हदीस की ओर है जो अबू हुरैरा से रिवायत है। वह कहते हैं कि जिब्राईल रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास आये और कहा, 'हे अल्लाह के रसूल (सल्ल०)! यह ख़दीजा अपने साथ खाना या शराब लायी है। तो जब वह आपके पास आयें तो उन्हें उनके 'रब' और मेरी ओर से सलाम कहें। तथा उन्हें जन्नत में एक घर की शुभ सूचना दे दें जहां न शोर होगा न कोलाहल न थकन।'
—बुखारी, मुस्लिम

इस समय तक शराब हराम नहीं हुई थी।
—अनुवादक

अध्याय—२

दीन की दावत का आरम्भ

बयान फ़रमाया—

'एक दिन मैं रास्ते में ज
वाणी सुनी, सर उठाया
गुफा में मेरे पास आया
कुर्सी पर बैठा हुआ है।
पर गिर पड़ा। फिर
और कहा, 'मुझे उढ़ाओ
मुझे लिहाफ़ (या कम्बल
'वह्य' नाज़िल की (उ
'हे चादर लपेटने वाले !
और अपने कपड़ों को
अलग रहो।'

ये आदेश इस बात की उद्घोषणा थे कि अब भूतकाल सन्तोष तथा शान्ति के साथ बीत गया और अब आप को एक ऐसा नवीन कार्य करना है जो जागृति, बुद्धिमत्ता, डरावा तथा शुभ सूचना की मांग करता है। अब आप 'रिसालत' का भार उठायें, मनुष्यों की ओर ध्यान दें, वह्य से सहयोग लें तथा उन के कष्टों को सहन करें क्योंकि वही आप की रिसालत का स्रोत तथा दावत का हथियार है।

'वह्य' वह दैवी प्रेरणा (इल्हाम) है जो ईश्वरेच्छा से स्पष्ट एवं निशंक रूप से हृदय पर आती है। इस के विभिन्न चरण एवं श्रेणियां हैं जिन में से कुछ सुगम हैं, कुछ कठिन तथा जटिल। हज़रत उमर से हदीसोल्लेख है—

'रसूलुल्लाह (सल्ल०) पर जब 'वह्य' नाज़िल होती तो आप के सिर के पास मक्खी की भनभनाहट जैसी आवाज़ सुनाई देती।' —तिर्मिज़ी

कभी 'वह्य' घण्टी की आवाज़ के समान आती—यह चरण सब से कठिन होता—फ़रिश्ता आप से बात करता था यहां तक कि प्रचण्ड सर्दी में भी 'वह्य' के प्रभाव से आप पसीने से भीग जाते थे। (बुख़ारी) और यदि आप ऊंट पर बैठे होते तो वह भार से बैठ जाता था। (अहमद, हाकिम) एक बार आप ज़ैद बिन साबित (रज़ि०) की जांघ पर सर रखे लेटे थे कि 'वह्य' आ गयी, उस समय उन पर इतना बोझ पड़ा कि उनकी जांघ टूटने लगी थी। (बुख़ारी) कभी-कभी 'वह्य' इससे सुगम तथा हल्के ढंग से आती थी।

प्रायः यह प्रश्न किया जाता है कि 'वह्य' के समय इतनी कठिनाई क्यों होती थी? क़ुरआन के अवतरण का आरम्भ स्वप्नावस्था में 'इल्हाम' के रूप में क्यों न हुआ? अथवा जाग्रतावस्था में 'इल्हाम' हो जाता? जैसा कि अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया है—

'रूहुलक़ुदुस' (जिब्राईल फ़रिश्ता) ने मेरे हृदय में यह बात डाल दी कि कोई प्राणी उस समय तक नहीं मरेगा जब तक अपनी जीविका (रोज़ी) पूरी न कर दी जाए, तो अल्लाह से डरो और रोज़ी सुरीति से प्राप्त करो। —हाकिम

क्या यह भय तथा थकावट रहित उत्तम ढंग नहीं था?

इस का उत्तर यह है कि क़ुरआन के अवतरण का यह ढंग आरम्भ में इस लिए अपनाया गया और फ़रिश्ता इस रूप में इस लिए स्पष्ट हुआ ताकि क़ुरआन के शब्दों का ईश्वर की ओर से होने में कोई भ्रम तथा शंका

न रह जाये। तथा यह कि मुहम्मद (सल्ल०) इस के भारग्रस्त उस समय बनाये गये जब उन को चुन लिया गया तथा इस महत्वपूर्ण कर्मों के लिए सर्वश्रेष्ठ कर दिया गया। यह क़ुरआन किसी एकान्तवासी भक्त के विचारों का परिणाम नहीं है न किसी दक्ष दर्शनशास्त्री की कला है जो तर्कों का ढेर लगा देता है। यह उस पूज्य परमेश्वर के शब्द हैं तथा उस का कोई साझी नहीं है—

'यह तो बस 'वह्य' होती है, जो (उस पर) की जाती है, उसे सिखाया प्रबल शक्तियों वाले ने, जो सुदृढ़ है, पूर्ण रूप से प्रकट हुआ जबकि वह आकाश के सब से ऊंचे किनारे पर था। फिर वह निकट हुआ और उतरता चला आया अब दो कमान के फ़ासले पर था बल्कि और निकट, फिर उस ने 'वह्य' की अल्लाह के बन्दे की ओर जो कुछ भी की। दिल ने उसे धोखा नहीं दिया जो कुछ उस ने देखा। तो क्या तुम उस से झगड़ते हो उस पर जो वह देखता है?' —अन-नज्म १—१२

इस्लामी दावत की बुनियादें

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम लोगों से उस दीन (धर्म) के विषय में वार्ता तथा प्रचार करने लगे जो ईश्वर की ओर से भेजा गया था।

क़ुरआन की वे सूरतें (अध्याय) जो मक्का (निवासकाल) में अवतरित हुईं, उन विश्वासों, धारणाओं तथा कर्मों व आचरणों को स्पष्ट करती हैं जिन का भारित मनुष्य बनाया गया है। तथा जिन के प्रचलन एवं स्थापना की अल्लाह ने अपने रसूल को ताकीद की थी। इन में सर्वप्रथम विशुद्ध एकेश्वरवाद की शिक्षा थी।

१. विशुद्ध एकेश्वरवाद

मनुष्य ब्रह्माण्ड की किसी भी सृष्टि या प्राणी का दास नहीं है क्योंकि प्रत्येक चीज़ ईश्वर की दास है उस के प्रताप को स्वीकार करती तथा केवल उसी के आगे झुकती है। अतः यहां किसी साझेदार, किसी सिफ़ारशी अथवा साधन की समायी नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति की ज़िम्मेदारी है कि बिना किसी प्राणी के सहारे प्रत्यक्ष रूप से अपने रब की ओर लौटे। प्रत्येक व्यक्ति का यह फ़र्ज़ है कि उस मनुष्य का विरोध करे जिस ने अपने को या दूसरों ने उस को ईश्वर का समीपवर्ती मान रखा हो। उन्हें उनके

सीमित स्थान पर रखे चाहे वे इन्सान हों, पत्थर हों अथवा कुछ और। मनुष्यों को समस्त व्यक्तिगत तथा सामूहिक इबादतें अल्लाह के प्रभुत्व में अकेलेपन की बुनियाद पर अन्जाम देनी चाहियें। तथा विशुद्ध ऐकेश्वरवाद ग्रहण करना चाहिए।

इस धारणा का परिणाम यह हुआ कि अरब निवासी जिन पत्थरों की पूजा करते थे उन का स्थान घरों तथा सड़कों पर बिछाये जाने वाले पत्थरों के बराबर भी न रहा। और अन्य समस्त धर्मों में जिन इन्सानों को ईश्वर मान लिया गया था उन का स्थान उन के सृष्टिकर्ता के दास का हो गया। क्योंकि ये लोग ईश्वर के आज्ञापालन में तो आगे-आगे थे परन्तु अवज्ञाओं में पीछे थे। और उन्हें पैदा करने या अन्न देने की शक्ति प्राप्त न थी।

२. 'आख़िरत'

मरणोपरान्त एक ऐसे दिन का आना अनिवार्य है जब लोगों को अपने पालनहार के सम्मुख खड़ा होना होगा और वह उन के गत जीवन का गिन-गिन कर हिसाब लेगा। अतः जिस ने कण-भर भी कोई भलाई की होगी वह उसे देख लेगा तथा उस का सुप्रतिफल भोगेगा और जिस ने कण-भर भी बुराई की होगी वह उसे देख लेगा तथा उस के दण्ड से अपने को बचा न सकेगा। एक ओर सदाबहार बाग़ तथा नेमतों की अधिकता होगी जिन में व्यक्ति विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करेंगे तथा दूसरी ओर दहकती हुई आग होगी जिस में दुष्ट लोग जल रहे होंगे।

व्यक्ति के किसी भी कार्य करने या न करने में 'आख़िरत' का विचार रखना इस्लामी दीक्षा का बुनियादी सिद्धान्त है। अतः जिस प्रकार एक यात्री यह विश्वास रखता है कि वह अगले स्टेशन पर उतर जायेगा इसी प्रकार एक मुसलमान भली-भांति यह विश्वास रखता है कि उस का यह जीवन एक दिन समाप्त हो जायेगा और वह अपने 'रब' से जा मिलेगा जहां उसे उम्र भर की कमाई मिलेगी तथा दुनिया के जीवन में उस ने जो खेती बोई थी उस की फ़सल वहां काटेगा।

३. मन का शुद्धीकरण (नफ़्स का तज़्किया)

तीसरा बुनियादी सिद्धान्त मन की पवित्रता तथा उस का विशुद्धीकरण है। मन की शुद्धि उसी समय सम्भव है जब व्यक्ति उन निश्चित इबादतों को उस रसूल के तरीक़े के अनुसार अदा करे जिन्हें अल्लाह ने वैध ठहराया

है तथा प्रतिकूल चीज़ों को छोड़ दे।

'कह दो : आओ, मैं तुम्हें बताऊं कि तुम्हारे रब ने तुम पर क्या चीज़ें हराम की हैं : यह कि उस के साथ किसी चीज़ को शरीक न ठहराओ, और माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार करो, और ग़रीबी के कारण अपनी औलाद की हत्या न करो, हम ही तुम्हें भी रोज़ी देते हैं और उन्हें भी। और अश्लील बातों के पास भी न फटको चाहे वे खुली हों या छिपी, और किसी जीव को जिस (की हत्या) को अल्लाह ने हराम कर दिया है, क़त्ल न करो, सिवाय इस के कि हक़ के कारण ऐसा करना पड़े। ये बातें हैं जिन की उस ने तुम्हें ताकीद की है, ताकि बुद्धि से काम लो। और यह कि अनाथ के माल के निकट भी न जाओ परन्तु उस तरह जो उत्तम हो, यहां तक कि वह युवावस्था को पहुंच जाये। और तुम इन्साफ़ के साथ पूरा-पूरा नापो और तोलो। हम किसी व्यक्ति को उस की समाई से बढ़ कर बोझ नहीं डालते। और जब बात कहो तो न्याय से काम लो, चाहे मामला अपने नातेदार ही का क्यों न हो, और अल्लाह के साथ किए हुए वादे को पूरा करो। ये बातें हैं जिन की उस ने तुम्हें ताकीद की है, ताकि तुम ध्यान रखो। और यह (ताकीद की है) कि यह मेरा मार्ग है बिल्कुल सीधा, अतः तुम इसी पर चलो। और दूसरे मार्गों पर न चलो कि वे तुम्हें उस मार्ग से हटा कर बिखेर देंगे। यह बात है जिस की उस ने तुम्हें ताकीद की है, कदाचित तुम डरते रहो।'

—अल-अन्आम १५२—१५४

अक्तम बिन सैफ़ी कहते हैं, 'मुहम्मद (सल्ल०) की शिक्षाएं यदि धर्म के रूप में न होतीं तो भी लोगों के आचरण तथा व्यवहार को उत्तम बनाने के लिए प्राप्त थीं।'[1]

८. इस्लामी जमाअत (संगठन) के वजूद की सुरक्षा

इस्लामी संगठन एक शक्तिशाली एवं सुदृढ़ वहदत (एकत्व) होती है। इस की बुनियाद पारस्परिक भ्रातृत्व तथा एक दूसरे का सहयोग करना है। तथा इस की मांग है कि उत्पीड़ित की सहायता की जाये, अभावग्रस्त को प्रदान किया जाए, तथा दुर्बल को शक्तिशाली बनाया जाए। सूरः

मुदस्सिर वह प्रथम सूर: है जिस में अल्लाह ने अपने रसूल को आम दावत का आदेश दिया है—

'प्रत्येक जीव अपनी कमाई के साथ बंधा हुआ है, सिवाय दाहिने वालों के। बाग़ों में होंगे एक-दूसरे से पूछते होंगे अपराधियों के बारे में : क्या चीज़ तुम्हें 'सक़र' ('जहन्नम') में ले आयी ? उन्होंने कहा : हम 'नमाज़ियों' में से न थे, और मुहताज को खाना नहीं खिलाते थे। और इधर-उधर की बातें बनाने वालों के साथ हम भी बातें बनाया करते थे, और हम बदला पाने के दिन को झुठलाते थे, यहां तक कि हम पर वह यक़ीनी चीज़ आ गयी। अब सिफ़ारिश करने वालों की सिफ़ारिश उन के काम न आयेगी।'

—अल-मुदस्सिर ३८-४८

हज़रत अबूबक्र रज़ियल्लाहु अन्हु जब किसी दुर्बल तथा पीड़ित मुसलमान को देखते कि वह सताया जा रहा है तो उसे स्वतन्त्र करने तथा पीड़ा से मुक्त कराने में अपना धन और समय व्यय करते क्योंकि यह व्यक्ति जमाअत पर हक़ (अधिकार) है।

गुप्त दावत का ज़माना

मक्का में इस्लाम की दावत फैलने लगी तथा साहसी लोगों को प्रभावित करने लगी। लोग तेज़ी से पुरानी गुमराही को छोड़ कर नए दीन में प्रवेश करने लगे तथा क़ुरआन की आयतें उन के हृदयों में उतर कर ईमान का बीजारोपण करने लगीं जैसे हरी-भरी भूमि पर मूसलाधार वर्षा हो रही हो—

'(फिर तुम भूमि को देखते हो कि सूखी पड़ी है) फिर जहां हम ने उस पर पानी बरसाया कि उस में ताज़गी आ गई और वह उभर आई। और उस ने हर प्रकार की शोभायमान वस्तुएं उगाईं।

—अल-हज्ज ५

इन अक़ीदों के अनुयायी प्रेमभाव के साथ एकत्रित होने लगे तथा चारों ओर से टूट-टूट कर सहर्ष इस्लामी अक़ीदों के लिए जमा होने लगे तथा सावधानीपूर्ण अपने चिन्तन के सिद्धान्तों के स्पष्टीकरण में लग गये।

ईमान की शक्ति जादू के समान होती है, जब हृदयांकित हो जाती है तथा उस की गहराइयों में उतर जाती है तो असम्भव को सम्भव बना देती है।

हम ने ऐसे वयोवृद्ध तथा युवकों को देखा है जो एक चिन्तन को ग्रहण करते हैं तथा उसे दृढ़ अक़ीदे का स्थान दे देते हैं हालांकि वह विशुद्ध भौतिक चिन्तन होता है। उस की प्रेरणा के लिये अपने जीवन से ईंधन फ़राहम करते हैं तथा कठोरतम कष्ट तक सहन कर लेते हैं।

इस समय कारावासों में ऐसे युवक आप को मिल जायेंगे जो पाश्चात्य विश्वविद्यालयों से शिक्षा प्राप्त हैं तथा उन्हों ने अपने जीवन का काफ़ी समय डाकुओं तथा हत्यारों के साथ गुज़ार दिया है।

अपने सिद्धान्तों की सफलता तथा उन की उन्नति के लिये क़ुरबानी देने को वे साधारण बात समझते हैं। और इस्लाम के आरम्भ में जब ईमान दिलों में अंकित हुआ होगा तो उन की दीवानगी की क्या दशा हुई होगी! तथा ईमान भी कैसा होगा? धरती तथा आकाश के विधाता पर ईमान! आख़िरत पर ईमान! जहां मनुष्य दुनिया के झमेलों से निकल कर अल्लाह की रहमत की छाया में स्थान पायेगा जहां घने बाग़ होंगे, ऊंचे-ऊंचे महल होंगे। उन के नीचे नहरें बह रही होंगी और सर्वकालिक सुख सामग्री होगी!

इस प्रकार सन्मार्गी क़ाफ़िला बनता गया तथा नित्य प्रति दिन उस की संख्या बढ़ती ही गयी।

स्वाभाविक बात थी कि रसूलुल्लाह सर्वप्रथम अपने निकटतम सम्बन्धियों, मित्रों तथा कुटुम्ब के लोगों को इस्लाम की दावत दें। इन के मन में मुहम्मद (सल्ल०) की महानता, स्थान तथा सच्चाई के प्रति कोई सन्देह न था। अतः आवश्यक था कि ये लोग सर्वप्रथम आप की दावत की तस्दीक़ करें, आप का साथ दें और आप का अनुसरण करें।

> सर्वप्रथम आप (सल्ल०) पर आप की पत्नी हज़रत ख़दीजा, आप के दास ज़ैद बिन साबित, चचेरे भाई अली बिन अबी तालिब (जो अभी बच्चे थे तथा रसूलुल्लाह के भरण पोषण में थे) और आपके घनिष्ठ मित्र अबूबक्र ईमान लाये फिर अबूबक्र ने प्रचार में प्रयत्नशीलता दिखाई तथा अपने मित्रों और विश्वास-पात्र साथियों को दाख़िल किया। उस्मान बिन उफ़्फ़ान, तल्हा बिन उबैदुल्लाह तथा सअद बिन वक़्क़ास आप ही के द्वारा इस्लाम में प्रविष्ट हुए। वरक़ा बिन नौफ़ल[1] ने भी ईमान ग्रहण

---

१. रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया 'वरक़ा' को बुरा मत कहो क्योंकि मैं ने उस के लिये एक या दो बाग़ देखे हैं। —हाकिम

किया। उल्लेख किया गया है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उन्हें मरणोपरान्त अच्छे रूप में स्वप्न में देखा जो ईश्वर के निकट उन के सम्मान की गवाही था।

—अहमद तथा जुबैर बिन अव्वाम, अबू जर गिफ़ारी,

'अम्र बिन अबसा' और 'सईद बिन आस' रजिअल्लाहु अन्हुम भी इस्लाम में प्रवेश कर गये तथा मक्का में इस्लाम उन लोगों में अपना स्थान पैदा करने लगा जिन के हृदय प्रकाशमान थे यद्यपि इस्लाम गुप्त रूप से फैल रहा था। इन दिनों किसी स्पष्ट बहादुरी या चुनौती का प्रदर्शन न किया गया।

जब ये सूचनाएं क़ुरैश तक पहुंचीं तो उन्हों ने कोई परवाह न की। शायद मुहम्मद (सल्ल०) को भी उन्हीं धार्मिक व्यक्तियों में से समझा गया जो ईश्वर तथा उस के अधिकार की चर्चा करते रहते थे जैसे उमैया बिन सलत, क़ैस बिन साइदा और अम्र बिन नुफ़ैल आदि ऐकेश्वरवादी थे। परन्तु इस दीन के प्रचार एवं प्रभाव के कारण उन्हें कुछ चिन्ता हुई और और वे प्रतीक्षा करने लगे कि इस व्यक्ति तथा इस के आन्दोलन का क्या अंजाम होता है।

गुप्त दावत का यह चरण तीन वर्ष तक चला। फिर वह्य के द्वारा आम तथा खुल्लमखुल्ला दावत का आदेश किया गया और असत्य (बातिल) का मुकाबला करने तथा उन की मूर्तियों से लड़ने का स्पष्ट आग्रह किया गया।

दावत की आम घोषणा

इब्न्-अब्बास (रजि०) से हदीसोल्लेख है कि जब क़ुरआन में यह आदेश—'और अपने निकट तथा नातेदारों को सचेत करो'

—अश-शुअरा २१४

अवतीर्ण हुआ तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) 'सफ़ा' पर्वत पर चढ़ गये और उच्च स्वर में पुकारा, 'हाय प्रातः की विपत्ति'।[1] आप की आवाज सुन कर लोग दौड़ पड़े, जब सब एकत्रित हो गये और जो न आ सका उस ने अपना आदमी भेज दिया। आप (सल्ल०) ने सब खानदानों का नाम ले ले कर पुकारा,

---

१. अरब में यह पुकार वह व्यक्ति लगाता था जो प्रातः के झुटपुटे में किसी शत्रु को अपने क़बीले पर आक्रमण करने के लिये आता देख लेता था। —अनुवादक

'हे बनू फ़िह्र ! हे बनू अदी ! हे बनू हाशिम ! हे बनू अब्दुल मुत्तलिब ! आदि, यदि मैं तुम्हें सूचना दूं कि पहाड़ के पीछे एक सेना दल तुम पर आक्रमण करने के लिए तैयार है तो क्या तुम बात सच मानोगे ?' लोगों ने कहा हमें कभी तुम से झूठ सुनने का अनुभव नहीं हुआ है। आप ने फ़रमाया, 'तो मैं तुम्हें सचेत करता हूं कि आगे एक 'अज़ाब' (यातना) आ रहा है।' क़ुरैशियों में अबू लहब (आप का चाचा) भी आया था, इस से पहले कि कोई और बोलता तुरन्त बिगड़ कर बोला, 'तेरा बुरा हो, क्या तूने इसी लिये हमें जमा किया है ?' अतः सूरा अल-लहब उतरी। —बुख़ारी

'अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते है कि जब अल्लाह ने सूरा शुअरा की आयत नं० २१४ उतारी तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने खड़े हो कर पुकारा : 'हे क़ुरैश के गिरोह ! अपना बचाव कर लो मैं ईश्वर के सामने तुम्हारे कुछ भी काम नहीं आ सकता ! हे नबी अब्दुल मुत्तलिब ! मैं तुम्हें अल्लाह से नहीं बचा सकता। हे अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब ! मैं ख़ुदा से तुम्हें नहीं बचा सकता। हे (रसूल सल्ल० की फूफी) सफ़िया ! मैं तुम्हारे काम नहीं आ सकता। हे (रसूल सल्ल० की पुत्री) फ़ातिमा ! जो भी धन चाहो ले लो परन्तु मैं अल्लाह के यहां तुम्हें नहीं बचा सकता।' —बुख़ारी

यह पुकार उच्च कोटि की तब्लीग़ थी जिस में रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने अपनी क़ौम को प्रत्यक्ष शब्दों में दावत दी थी और अपने निकटतम सम्बन्धियों पर स्पष्ट कर दिया था कि इस रिसालत की तस्दीक़ ही उन के बीच रिश्ते का साधन बन सकती है। अतः रिश्ते नाते का पक्षपात जिस के अरब प्रेमी थे इस ईश्वरीय उद्घोषणा के ताप से पिघल कर रह गया।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपने वतन में महा सम्मान के स्वामी, विश्वास का चिन्ह तथा प्रेम का केन्द्र थे। परन्तु अब वह उस क्षेत्र में घृणित व्यक्ति बनते जा रहे थे तथा बुद्धिहीनों और स्वाभिमानियों से संघर्ष करने का समय क़रीब आता जा रहा था। सर्वप्रथम जिन लोगों ने अपनी कृपा दृष्टि फेरी वे आप के निकटतम नातेदार ही थे परन्तु ये दुःख तथा कष्ट सत्य के मार्ग में क्या स्थान रखते थे ? इस डरावे तथा ऐ'लान के पश्चात् आप को सुख की नींद सोना सम्भव न था जब कि मक्का

अतः अपने घर मे
की बहनें) हाल पू
तकलीफ़ नहीं है
अपने कुटुम्ब के लो
वालों को बुला लो
आप के सन्देश को
दो तथा लोग उपसि
पहले ही अबू लह
भाई मौजूद हैं जो
बात न कहना। तु
से लड़ने की शक्ति
तुम्हें रोकने के सब

के लोग हैं। यदि तुम जिस काम को कर रहे हो उस पर क़ाइम रहे तो तुम्हें रोकना इस से अधिक आसान है कि तुम पर क़ुरैश के दूसरे खानदान टूट पड़ें। तथा अरव उन की सहायता करें। मैं ने ऐसा व्यक्ति नहीं देखा जो अपने खानदान वालों पर तुम से अधिक विपत्ति लाया हो।'

अल्लाह के रसूल मौन रहे। तथा इस बैठक में कुछ न बोले, अगले दिन फिर बुलाया और ईश्वर की स्तुति के बाद फ़रमाया—

'सूचनादाता अपने ख़ानदान वालों से झूठ नहीं बोलता। उस ख़ुदा की क़सम है जिस के सिवा कोई पूज्य नहीं है मैं तुम लोगों की ओर विशेष तौर से भेजा गया हूं तथा अन्य लोगों की ओर सामान्यतः। जिस प्रकार तुम्हें नींद आती है इसी प्रकार तुम को मौत भी आयेगी तथा जिस प्रकार तुम जागते हो उसी प्रकार मरने के पश्चात् पुनः उठाये जाओगे। तथा जो कुछ कर्म किया है उस का तुम से हिसाब लिया जायेगा फिर या तो सर्वकालिक जन्नत होगी या जहन्नम!'

श्री अबू तालिब ने कहा, 'हमारे लिये तुम्हारी सहायता करने, तुम्हारे उपदेशों पर चलने और तुम्हारी बातों की तस्दीक़ करने से अधिक उत्तम कोई और बात नहीं है। तुम्हारे सब चचा तथा भाई मौजूद हैं मैं तो इन में से केवल एक हूं। जिस बात का आदेश तुम्हें दिया गया है उसे जारी रखो' ख़ुदा की क़सम मैं सदा तुम्हारी सुरक्षा तथा समर्थन करूंगा। परन्तु मेरा मन अब्दुल मुत्तलिब के दीन को त्यागने को तैयार नहीं है।'

अबू लहब ने कहा—

'ख़ुदा की क़सम यह बहुत बुरी बात है दूसरों से पहले ही इस का हाथ पकड़ लो।'

अबू तालिब बोले—

'ख़ुदा की क़सम हम इस की सुरक्षा करेंगे जब तक हमारी जान में जान है।'

अबू तालिब

यद्यपि 'अबू तालिब' शिर्क (अनेकेश्वरवाद) पर चलते रहे और अपने पूर्वजों के दीन को न छोड़ा फिर भी अपने भतीजे से बड़ी सहानुभूति रखी

तथा उस की हिमायत का दम भरते रहे। वह भली भांति जानते थे कि उन्हें तथा उन के कुटुम्ब वालों को इस समर्थन का कितना मूल्य चुकाना पड़ेगा और उन्हें कितने कष्ट सहन करने पड़ेंगे ? परन्तु क्योंकि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का सम्मान दृष्टिगत था और आप को कष्टों तथा ख़तरों से बचाना था अतः आप (सल्ल०) को उन की ओर से सोच, विचार तथा धर्म की स्वतन्त्रता का समर्थन मिलता रहा बल्कि आप की सुरक्षा के लिए तत्पर रहे तथा रसूलुल्लाह (सल्ल०) प्रचार एवं तब्लीग़ का कार्य करते रहे।

अबू तालिब मक्का के गिने चुने लोगों में से थे। अपने ख़ानदान में आदरणीय थे तथा आम लोगों की दृष्टि में सम्मानित थे अतः किसी को उन की शरण भंग करने की हिम्मत न हुई। मक्के में उन की मौजूदगी आप (सल्ल०) के प्रभाव को बढ़ाने में बड़ी सहयोगी सिद्ध हुई। तथा आप के अधिकारों की रक्षा होती रही।

परन्तु अबू लहब उन सत्ताधारियों तथा शासकों का आदर्श था जो सत्य व असत्य में अन्तर किये बिना अपने हितों तथा ख्याति पर मर मिटते हैं। जिस काम से उन के हितों की हानि होती है या उन के सम्मान को कोई धक्का लगता है तो उन का रोष अत्यधिक बढ़ जाता है जो उन्हें भांति भांति की मूर्खताओं तथा अवज्ञाओं पर विवश करता है।

अबू लहब के स्वभाव में बड़ी कठोरता थी जो उसे ऊपरी तथा घटिया हरकतों पर प्रेरित करती रहती थी उस के दो बेटों का विवाह हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की पुत्रियों से हुआ था अतः उस ने तलाक़ दिलवा दी। 'उत्बा' तथा 'उतैबा' ने 'रुक़ैया' तथा 'उम्म्-कुलसूम' को तलाक़ दी।'

सम्भव है कि इस रोष तथा द्वेष में उस की पत्नी उम्म्-जमील का हाथ भी हो। यह अबू सुफ़ियान की बहन थी। कड़ी कटु भाषी, दुष्ट तथा बद्-ज़ुबान स्त्री थी। विभिन्न कारणों ने उसे मुहम्मद (सल्ल०) तथा उन के दीन के विरुद्ध कर दिया था। इसी कारण उस की ज़बान बड़ी तेज़ी से चलती थी। यह अभागी रसूलुल्लाह पर मिथ्यारोपण तथा आरोप लगाने में सब से आगे थी।

जब इस्लाम से दुश्मनी की भावना ने चचा को भतीजे के विरुद्ध इतना बना दिया था तो दूर के लोगों की क्या दशा हुई होगी। जिन लोगों की रुचि ही यह थी कि प्रत्येक साधवी पर आरोप लगायें तथा प्रत्येक निर्दोष व्यक्ति को आलंकित करें।

परन्तु अबू लहब, क़ुरैश, अरब तथा समूचे विश्व के लोग उस व्यक्ति

इस्लाम तथा उसके अनुयायियों के विरुद्ध छिछोरी तथा हीन चालें चलने के लिये एक संगठन का निर्माण किया गया। जैसे आधुनिक युग में विरोधी संस्कृति करती है। अतः जब विरोधी पक्ष की ओर से स्पष्टता के लिये बयान प्रकाशित किया जाता है तो जन साधारण में उस के अपमानित करने के लिये हास्य पूर्ण 'कार्टून' (व्यंग्यचित्र) तथा भांति भांति के हथकण्डे प्रयोग किये जाते हैं।

द्वेष के इन दोनों प्रकारों के साथ मुसलमान चक्की के दो पाटों के बीच फंस गये और उनके रसूल को उन्मादी कहा गया :

> 'और वे (काफ़िर) लोग कहते हैं : हे वह व्यक्ति जिस पर नसीहतनामा उतरी है, तू अवश्य दीवाना है।' —अल-हिज्र ६

रसूलुल्लाह जादूगर तथा झूठा होने का आरोप लगाया गया :

> 'और इन्हों ने इस पर आश्चर्य किया कि एक सचेत करने वाला इन्हीं में इन के पास आ गया। और काफ़िर कहने लगे : यह एक जादूगर है, बड़ा झूठा है।' —साद ४

विभिन्न प्रकार के हथकण्डे अपनाये गये, उत्तेजित करने वाले वाक्य प्रयोग किये गये तथा हर प्रकार से बदनाम करने की कोशिश की गयी :

> 'और ये कुफ़्र करने वाले जब 'ज़िक्र' (कुरआन) सुनते हैं तो ऐसा लगता है कि ये अपनी निगाहों से तुम्हें फिसला ही देंगे और कहते हैं : यह तो उन्मादी है।' —अल-क़लम ५१

आम मुसलमानों की दशा आप (सल्ल०) से भिन्न न थी, वे दिन रात निन्दा तथा व्यंग्य का निशाना बनते :

> 'जो अपराधी हैं वे ईमान लाने वालों पर हंसते थे, और जब उन पर से गुज़रते तो आपस में इशारे करते थे, और जब अपने घर वालों की ओर पलटते, तो चहकते हुये पलटते थे, और जब उन्हें देखते तो कहते : ये लोग तो भटके हुये हैं। हालांकि ये इन पर निगरानी करने वाले बना कर नहीं भेजे गये थे।'
>
> —अल-मुतफ़्फ़िफ़ २९-३३

फिर यह संघर्ष निःसहाय तथा दुर्बल मुसलमानों के वध तथा रक्तपात में परिवर्तित हो गया तथा जिन बेबस मुसलमानों की रक्षा करने वाले तथा अपमान एवं क़त्ल से बचाने वाले नातेदार न थे उन्हें यातनाओं तथा कष्टों की चक्की में उस समय तक पीसा जाता जब तक उन की मृत्यु न हो जाती या वे कुफ़्र की ओर न पलट जाते या अत्याचारी थक न जाता।

अम्मार बिन यासिर (रजि०)

इन बेबस पीड़ितों में से एक 'अम्मार बिन यासिर' (रजि०) भी थे। यह पहले वालों में से भी प्रथम थे तथा बनू मख़जूम के दास थे। जब इस्लाम आया तो इनके बाप इन की माता आदि सब मुसलमान बन गये। अतः यह पूरा खानदान यातना ग्रस्त कर दिया गया। मुश्रिक इस खानदान के लोगों को खुले मैदान में ले जाते और जब रेत खूब गर्म हो जाती तो उन्हें तरह तरह से यातना दी जाती। एक बार रसूलुल्लाह (सल्ल०) उस स्थान से गुज़र रहे थे जहां उन को यातनाएँ दी जा रही थीं। आप ने फ़रमाया :

> 'हे यासिर की सन्तान ! सब्र करो, तुम्हारे लिये जन्नत का वादा है।' —तबरानी, हाकिम

हज़रत यासिर रज़िअल्लाहु अन्हु की मृत्यु यातना तथा कष्ट सहते सहते हो गयी। उन की पत्नी सुमैया रज़िअल्लाहु अन्हा ने अबू जहल की किसी बात का कठोर स्वर में उत्तर दिया तो उन ने उस के सीने में भाला भोंक दिया और उनकी मृत्यु हो गयी। ईश्वरीय मार्ग में शहीद होने वाली यह सर्वप्रथम भाग्यशाली महिला थीं। हज़रत अम्मार (रजि०) को कठोर कष्ट दिये गये। कभी तपती रेत पर लिटाया गया कभी पानी में गोते लगवाये गये। मुश्रिकों ने कहा, 'हम तुम्हें उस समय छोड़ेंगे जब तुम 'मुहम्मद' को गाली दे दो या 'लात' व 'उज्जा' (दोनों मूर्तियाँ थीं) के प्रति सद्भावना प्रकट कर दो अतः अम्मार से कष्ट सहन न हो सका तो उन की शर्त मान कर जान बचायी। फिर रोते हुए रसूलुल्लाह के पास आये और पूरा वृत्तान्त बताया। आप सल्ल० ने पूछा 'अपने हृदय की क्या दशा पाते हो ?' उन्हों ने कहा कि ईमान पर पूर्ण सन्तुष्टि है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, 'हे अम्मार ! भविष्य में ऐसा मौक़ा आये तो फिर यही कुछ कह देना।' अतः अल्लाह ने यह आयत उतारी :

> 'जिस किसी ने अपने ईमान के बाद अल्लाह के साथ कुफ़्र किया सिवाय उस के जो (इस के लिये) विवश कर दिया गया हो और दिल उस का ईमान पर सन्तुष्ट हो।' —नह्ल १०६

बिलाल बिन रबाह (रजि०)

इन्हीं पीड़ितों में से हज़रत बिलाल बिन रबाह (रजि०) भी एक थे। आप का स्वामी उमैया बिन ख़लफ़ था। मध्यान्ह के समय जब धूप तथा गर्मी तेज़ होती तो गर्म रेत पर उन्हें पीठ या पेट के बल लिटा देता और

ऊपर से भारी पत्थर रख देता फिर कहता, ख़ुदा की क़सम तू इसी प्रकार पड़ा रहेगा, जब तक कि तुझे मौत न आ जाये या मुहम्मद का इन्कार न कर दे और लात व उज़्ज़ा की इबादत शुरू न कर दे।'

परन्तु वह केवल 'अहद! अहद!' ही कहते रहे। अर्थात् अल्लाह एक है, अल्लाह एक है।

हज़रत ख़ब्बाब बिन् अरत (रज़ि०)

जब कमज़ोरों तथा निस्सहाय लोगों पर (जिन में दास अथवा गुलाम अधिक थे) क़ुरैश के अत्याचार बढ़ गये तो उन में से एक पीड़ित—ख़ब्बाब बिन् अरत—रसूलुल्लाह के पास फ़रयाद ले कर आये। ख़ब्बाब (रज़ि०) स्वयं कहते हैं कि एक दिन हम ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से अर्ज़ किया,—उस समय आप 'का'बा' की दीवार की छाया में बैठे हुए थे। हे अल्लाह के रसूल! आप हमारे लिये दृढ़ता तथा सफलता की दुआ नहीं करते? अब तो अत्याचार बहुत बढ़ गये हैं।'

आप ने फ़रमाया—

> 'तुम से पहले जो ईमान वाले गुज़र चुके हैं उन पर इस से भी अधिक अत्याचार तोड़े गये। उन में से किसी को गढ़ा खोद कर बिठाया जाता और उस के सिर पर आरा चला कर उस के दो टुकड़े कर दिये जाते और किसी के शरीर पर लोहे के कंघे किये जाते जिस से उस का शरीर छिल जाता, ताकि वह ईमान का मार्ग त्याग दे परन्तु फिर भी अपने सत्य धर्म से न फिरते थे। निस्सन्देह अल्लाह इस काम को पूरा कर के रहेगा यहां तक कि एक समय आयेगा जब एक व्यक्ति 'सन्आ' से 'हज़र मौत' निर्भीक हो कर यात्रा करेगा और उसे अल्लाह के अतिरिक्त किसी का भय न होगा परन्तु तुम लोग शीघ्रता मचा रहे हो।'
>
> —बुख़ारी, अबू दाऊद, नसाई

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) इन दुर्दशाग्रस्त पीड़ितों की क्या सहायता कर सकते थे। आप उन में से किसी पर समर्थन तथा हिमायत की चादर न फैला सकते थे क्योंकि आप के पास इतनी शक्ति व सामर्थ्य भी न था जो स्वयं अपनी रक्षा कर पाते? नमाज़ें पढ़ते समय सज्दे की दशा में आप (सल्ल०) के ऊपर कूड़ा करकट और पशुओं का ओझ (पेटा) डाल दिया जाता था। आपके घर के सामने मल मूत्र तथा गन्दगी डाल दी जाती थी परन्तु आप सब्र कर के रह जाते।

दिन अवश्य
होगा तथा कौन तबाह
कर्मशील हैं और कौन
हुये :

'और उन लोगों
जगह कर्म करते
करो! हम भी
छिपी हुई चीजें
उसी की ओर
कर और उसी
तेरा रब उस से
अल्लाह के रसूल

तथा इस्लाम के प्रभुत्व, सत्य के प्रचार और पूर्व एवं पश्चिम से ईश्वरीय सेना के सामने सरकशों के पतन एवं बरबादी की शुभ सूचनायें सुनाते और उन के दिलों को उस आशा से प्रकाशमान रखते जिससे अल्लाह ने स्वयं आप का हृदय प्रकाशित कर रखा था। मुश्रिक इस आत्म विश्वास की खिल्ली उड़ाते। अतः अस्वद बिन अब्दुल मुत्तलिब और उस के मित्र जब मुसलमानों को देखते तो उन की ओर इशारा कर के कहते : तुम्हारे निकट दुनिया के वे राजा आ चुके हैं जो कल ही किस्रा तथा क़ैसर के शासनों पर प्रभुत्व प्राप्त करेंगे।' फिर सीटी बजाते और तालियां पीटने लगते।

जब इस्लामी दावत की स्थिति दृढ़ होने लगी तो मक्का के मुश्रिकों ने निश्चय किया कि बाहर से आने वालों को मुहम्मद (सल्ल०) का सन्देश सुनने से रोका जाये। वलीद बिन मुग़ीरा ने क़ुरैश के सरदारों से कहा कि यदि तुम लोग मुहम्मद के विषय में विभिन्न बातें कहोगे तो तुम्हारा विश्वास समाप्त हो जायेगा। कोई ज्योतिषी कहेगा, कोई कवि एवं उन्मादी होने का आरोप लगायेगा, कोई जादूगर बतायेगा परन्तु ये सारी बातें निरर्थक आरोप समझी जायेंगी अतः प्रभावकारी जो बात कही जा सकती है वह जादूगर होने की है। मुहम्मद ऐसी वाणी (कलाम) पेश कर रहा है जो मनुष्य को उस के पिता, भाई, माता, बच्चों तथा सारे परिवार एवं कुटुम्ब से अलग कर देती है। इस के पश्चात् समस्त लोग 'हज्ज' के ज़माने में विभिन्न मार्गों पर बैठ गये और बाहर से आने वालों को सचेत करना शुरू कर दिया। तथा चारों ओर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के जादूगर होने का प्रचार आरम्भ कर दिया गया।

दूसरी ओर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) हाजियों के एक एक शिविर पर जाते, उनसे इस्लाम के विषय में बातें करते तथा सहायता की गुज़ारिश करते।

> 'जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ि०) से हदीसोल्लेख है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) किसी ऊंचे स्थान पर खड़े हो जाते और पुकार कर कहते, कौन है जो मुझे अपनी जाति (क़बीले) में ले जाये? क्योंकि क़ुरैश ने मुझे अपने रब का सन्देश देने से रोक दिया है।' —अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा

समझौता एवं सौदेबाज़ी का प्रयत्न

मुश्रिकों ने समझा था कि दुर्बलों तथा निस्सहाय लोगों एवं ग़ुलामों पर ज़ुल्म और अत्याचारों का दमन चक्र आम लोगों को इस्लाम के मार्ग

जाओगे। यदि तुम सम्मान चाहते हो तो हम तुम्हें अपना सरदार मान लें। यदि राजा बनना चहते हो तो हम अपना राजा भी मान लेंगे और यदि तुम्हें सोते जागते कुछ दिखाई देने लगा है तो हम मानसिक वैद्य आदि को बुलाकर तुम्हारा इलाज अपने व्यय से करा देंगे।'

जब 'उत्वा' अपनी बात कह चुका तो अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया, 'अब मेरी सुनो!' तथा आप ने सूरा 'हा० मीम० अस-सजदा' का पाठ शुरू कर दिया, और उस का निम्नलिखित अनुवादित अंश पढ़ा :

'हा०मीम०। अवतरण है अत्यन्त कृपाशील और दयावान की ओर से, एक किताब है जिस की आयतें खोल-खोल कर बयान हुई हैं, 'क़ुरआन' है अरबी में उन लोगों के लिए जो ज्ञान रखते हैं। शुभ सूचना देने वाला और सचेतकर्ता है। फिर भी उन में से अधिकतर लोगों ने विमुखता बरती तो वे सुनते नहीं हैं। और कहते हैं : जिस बात की ओर तुम हमें बुलाते हो उस की ओर से तो हमारे दिल पर्दों में हैं, और हमारे कानों में डाट है, और हमारे और तुम्हारे बीच ओट है, तो तुम (अपना) काम करो, हम (अपना) काम करते हैं। हे नबी! कहो : मैं तो बस तुम ही जैसा एक आदमी हूं। मेरी ओर 'वह्य' की जाती है कि तुम्हारा 'इलाह' (पूज्य) केवल अकेला इलाह है, तो तुम सीधे उस की ओर रुख करो और उस से क्षमा की प्रार्थना करो। और तबाही है शिर्क करने वालों के लिए, जो ज़कात नहीं देते, और वे आख़िरत का इन्कार करते हैं। लोग जो ईमान लाये और अनुकूल कर्म किए उन के लिए ऐसा बदला है जो कभी समाप्त न होगा। हे नबी! कहो : क्या तुम उस (अल्लाह) का इन्कार करते हो जिस ने धरती को दो दिन में पैदा किया, और तुम उस के प्रतिद्वन्द्वी ठहराते हो। वह सारे संसार का रब है। और उस ने उस में ऊपर से पहाड़ जमाये, और उस में बरकत रखी और उस में उस की ख़ूराकें ठहरायीं चार दिन में, बराबर है मांगने वालों के लिए,......

फिर आकाश की ओर रुख किया और वह एक धुंवा (जैसा) था, और उस से और धरती से कहा : तुम दोनों (वजूद में) आओ स्वेच्छापूर्वक या अनिच्छापूर्वक! उन्होंने कहा : हम स्वेच्छापूर्वक हाज़िर हैं। फिर उस ने दो दिन में इन सात

दिया और दुनिया से इस प्र
भी न छोड़ा।

'उत्वा' चाहता था कि
(प्रचार) का कार्य, और इन
का काम छोड़ दें। क्या जीव
सूर्य या कोई अन्य नक्षत्र अप
तथा गर्मी से महरूम कर दे

कितनी आश्चर्यजनक
व्यक्ति जो अपने स्थान तथ
सीमोल्लंघन न करे। अत
उस का निहित चिन्तन जा

तो उस की सोयी हुई भावनाएं जाग गयीं—

'फिर यदि ये काफ़िर लोग किनारा खींचें (विमुख हों) तो कह दो : मैं ने तुम्हें वज्रपात से सावधान कर दिया है, वैसा ही वज्रपात जैसा 'आद' और 'समूद' पर हुआ।'

'उत्वा' अपने दोनों हाथ पीछे को ओर ज़मीन पर टेके हुए ध्यानपूर्वक सुनता रहा। सहसा वह उठ खड़ा हुआ मानो आने वाला 'अज़ाब' (यातना) उसे हड़प करने ही वाला हो। वापस आ कर उस ने क़ुरैश को सुझाव दिया कि 'मुहम्मद' को उस के हाल पर छोड़ दो।

क़ुरैश का एक प्रतिनिधिमण्डल अबूतालिब से मिला और कहा—

'हे अबू तालिब! आप के भतीजे ने हमारे 'मा'बूदों' (पूज्यों) का अपमान किया, हमारे धर्म में खोट बतायी, हमारी बुद्धि को मूर्खता बताया, हमारे पूर्वजों को गुमराह ठहराया। अतः उसे या तो हमें दुःख देने से रोको या हमारे और उस के बीच से हट जाओ क्योंकि आप स्वयं मुहम्मद के दीन के विरुद्ध हैं अतः हम स्वयं ही निमट लेंगे।' अबू तालिब ने उन को अति नम्र उत्तर दे कर ठंडा किया तथा वे चले गए।

रसूलुल्लाह सल्ल० अपने कर्तव्यों को पूरा करते रहे जिस के कारण क़ुरैश के सरदार मन ही मन में क्रुद्ध होते रहे तथा जब उन से सब्र न हो सका तो उन्होंने फिर षड़यन्त्र रचा और दोबारा अबू तालिब के पास गए और कहा—

'हे अबू तालिब! आप हमारे बीच वृद्ध एवं सम्मानित हैं, मान तथा स्थान रखते हैं हम ने आप से कहा था कि आप इस की हिमायत से रुक जायें परन्तु आप नहीं रुके। हम अपने पूर्वजों की बुराई, अपने 'पूज्यों' (मा'बूदों) का अपमान तथा अपनी बुद्धि की मूर्खता सहन नहीं कर सकते हैं। अब या तो आप इसे रोकें या हमारा और आप का मुक़ाबला होगा और इस का फ़ैसला हो जायेगा।' फिर वे वापस चले गए।

अबू तालिब को अपनी जाति की शत्रुता एवं पृथकता दुःख का कारण बनी अतः उन्होंने भतीजे को बुलाया और पूरी स्थिति से अवगत कराया और कहा—

'प्रिय भतीजे! तुम्हारी जाति ने मुझ से ये बातें कही हैं तुम मेरे लिए और अपने लिए भी जीवित रहने की समायी बाक़ी रखो और मुझ पर इतना भार न डालो जिसे मैं और तुम दोनों

सहन न कर सकें। अतः अपनी जाति से ऐसी बातें कहना छोड़ दो जो उन्हें नापसन्द हैं।'

अबू तालिब की वार्ता से आप (सल्ल०) को अन्दाज़ा हो गया कि अब चचा के लिए मेरी हिमायत करना कठिन हो गया है और वे मेरी सहायता में विवश तथा मुझे मेरी यथास्थिति पर छोड़ने को तैयार हो रहे हैं। तब आप ने फ़रमाया—

'हे चचा! मेरे सीधे हाथ पर सूर्य और उल्टे हाथ पर चन्द्रमा भी रख दिया जाए तब भी मैं यह कार्य न त्यागूंगा यहां तक कि अल्लाह इसे सफल कर दे या मैं इस मार्ग में समाप्त हो जाऊं।' —इब्ने इस्हाक़, इब्ने जरीर

आप इतने दुःखित हुए कि रो पड़े और वहां से चलने लगे तो अबू-तालिब ने बुलाया और कहा—

'भतीजे! अपना काम जारी रखो, और जो चाहो करो, खुदा की क़सम मैं किसी चीज़ की वजह से तुम्हें दुश्मनों के हवाले नहीं करूंगा।'

इस प्रकार प्रलोभन तथा भय के ओछे हथियार बेकार हो गये तथा क़ुरैश ने भांप लिया कि यह व्यक्ति जिस सन्देश को पेश कर रहा है उस के प्रभाव बहुत गहरे हैं। अतः उन का गत तरीक़ा फिर पलट आया और मुसलमानों पर उन के क्रोध, रोष तथा यातनाओं के कोड़े बरसने लगे। तथा प्रत्येक व्यक्ति उन्हें कठोरतम यातना देने और इस्लाम से उन्हें फेरने में अपनी समस्त शक्तियां जुटाने लगा।

रसूलुल्लाह सल्ल० इन घटनाओं से अत्यधिक दुखित तथा चिन्तित थे। परन्तु आप उन्हें रोक न सकते थे। अतः निस्सहाय तथा उत्पीड़ित मुसलमानों को आप ने परामर्श दिया कि वे मक्का छोड़ कर 'हब्शा' की ओर 'हिजरत' (स्वदेश परित्याग) कर जायें। यह घटना आप की बे'अत के पांचवें वर्ष या आम दावत के ऐलान के दो वर्ष बाद घटित हुई।

हब्शा को हिजरत

'हब्शा' की यात्रा गुप्त रूप से हुई ताकि क़ुरैश को इस की सूचना न हो जाए और वे पीछा न करने लगें। इसी कारण हिजरत बड़े पैमाने पर नहीं हुई। पहली टुकड़ी केवल कुछ ही व्यक्तियों पर आधारित थी। इन में रसूलुल्लाह की सुपुत्री हज़रत 'रुक़य्या' तथा उन के पति हज़रत उस्मान बिन अफ़्फ़ाना रज़ि० भी सम्मिलित थे। तथा अन्य लोगों को मिला कर

सोलह से अधिक संख्या न थी। ये लोग समुद्र तट की ओर गए जहां उन्हें दो नौकायें 'हब्शा' की ओर जाने वाली किराए पर मिल गयीं। जब क़ुरैश ने पीछा किया तो पता चला कि वे लोग सुरक्षित रवाना हो चुके हैं।

अभी शरणार्थीगण अधिक समय तक न रह सके थे, सहसा उन्हें यह सूचना मिली कि मुश्रिक इस्लाम के प्रति उदार हो गए हैं तथा उस के अनुयायियों को मुक्त कर दिया है तथा पुराना यातना देने का तरीक़ा भी छोड़ दिया है अतः स्वदेश लौटने में कोई हानि नहीं है।

इस सूचना ने मुसलमानों के दिलों को प्रभावित किया और उन्होंने वापस लौटने का निर्णय कर लिया यहां तक कि जब मक्का के निकट पहुंचे तो उन्हें दुखदायी वास्तविकता का इल्म हुआ। उस समय पता चला कि मुश्रिकों की खुदा तथा रसूल से शत्रुता और अधिक बढ़ गयी है तथा उन का अत्याचार एक दिन भी नहीं रुका।

बहुत से निर्बुद्धि व्यक्ति समझते हैं कि इस्लाम और मूर्तिपूजा में समझौता हो गया था। इस की बुनियाद उन के निकट यह है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने मुश्रिकों की मूर्तियों की प्रशंसा करके और उन के स्थान व सम्मान को स्वीकार करके सामीप्य प्राप्त कर लिया था तथा इस वास्तविक चाटुकारिता ने ही मुसलमानों को 'हब्शा' से वापस आने पर आमादा किया था।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने बुतों की प्रशंसा में क्या कहा था? ये मूर्ख कहते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया था: 'ये उच्च श्रेणी की देवियां हैं और इन की शफ़ाअत (अभिस्ताव) अवश्य आशान्वित है।'

तथा इन शब्दों को स्थान कहां मिला था? 'सूरा नज्म' में लात उज्जा तथा मनात मूर्तियों के उल्लेख के बाद है। इस प्रकार इन आयतों का अर्थ यह हो जाता है कि मुझे अपने बुतों (मूर्तियों) के विषय में बताओ क्या ये अमुक अमुक मूर्तियां हैं? इन की शफ़ायत (अभिस्ताव) तो आशान्वित है। ये वे नाम हैं जिन की अपनी वास्तविकता है ये खुराफ़ात नहीं हैं तुम्हें क्या हो गया है कि (तुम) इन्हें स्त्रीलिंग क़रार देते हो और अल्लाह की ओर इन का सम्बन्ध बताते हो जब कि स्वयं अपनी ओर पुत्रियों के सम्बन्ध को बुरा समझते हो यह तो बड़ी ग़लत बात है।'

अल्लह की 'वह्य' की बात तो बहुत बड़ी है, क्या इस प्रकार के शब्द किसी बुद्धिमान व्यक्ति के हो सकते हैं?

परन्तु ये खुराफ़ातें हमारी रिवायतों की किताबों में मौजूद हैं! तथा

यहां तक कि जब आप निम्नलिखित आयतों पर पहुंचे :

'और उल्टी हुई बस्तियों को भी उस ने उठा फेंका, फिर उन्हें ढक दिया जिस चीज से ढक दिया फिर तू अपने रब के कौन से चमत्कार के बारे में भगड़ता है ? यह अगले सचेत करने वालों में से एक सचेत करने वाला है। वह आने वाली आ पहुंची। अल्लाह के सिवा कोई उसे हटाने वाला नहीं। तो क्या तुम इस बात पर आश्चर्य करते हो, और हंसते हो, रोते नहीं, और तुम मद के माते हो ? अच्छा अब अल्लाह को सज्दा करो और इबादत करो।'

तो क़ुरआन के सौन्दर्य तथा प्रभाव ने घमंडियों के द्वेष तथा शत्रुता को दबा दिया और वे मूर्छित हो गये अतः पाठ समाप्ति पर अन्य मुसलमानों के साथ वे भी सज्दे में गिर गये।

जब मुश्रिकों को होश आया और उन्हें पता चला कि ईमान के प्रताप ने उन का रुख मोड़ दिया है तो उन्हें बड़ी ग्लानि हुई और उन्हों ने इस का प्रभाव यह कह कर समाप्त करना चाहा कि हम ने मुहम्मद (सल्ल०) के साथ उस समय सजदा किया जब उन्हों ने हमारी मूर्तियों के विषय में प्रशंसनीय तथा सम्मान पूर्ण शब्द कहे।' (परन्तु इस मिथ्कर्ता का शुद्ध हदीसों में प्रमाण नहीं है।) इस प्रकार की बात ऐसी क़ौम से असम्भव नहीं जो मुसलमानों की फब्ती उड़ाने के लिये भांति भांति के चुटकुले गढ़ते थे और उस में से कोई रसूलुल्लाह की खिल्ली उड़ाते हुए यह तक कहने से न चूकता था कि : 'हे मुहम्मद ! क्या आज आप ने आकाश से बात की है।'

मुश्रिकों ने इस मनगढ़त क़िस्से के प्रचार में एड़ी चोटी का जोर लगा दिया ताकि रसूल के विरुद्ध दुर्भावनाएं फैलें, 'वह्य' का मामला सन्देहपूर्ण हो जाये तथा यह सिद्ध हो जाये कि मुहम्मद (सल्ल०) कभी कभी मुश्रिकों की ओर भी झुक जाते हैं। परन्तु मुश्रिकों को मुंह की खानी पड़ी। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने मूर्ति पूजा के विरुद्ध जिस युद्ध की घोषणा की थी उस में तेजी आती चली गयी और मूर्ति पूजा के दासों से शत्रुता में वृद्धि ही होती गयी।

हब्शा के शरणार्थी मक्का वापस आ गये। कुछ मुसलमानों ने अपने परिचित लोगों की शरण ले ली तथा कुछ छिप गये। वापस लौटने वाले मुसलमानों पर क़ुरैश का दमनचक्र फिर शुरू हो गया तथा क़बीले के समस्त लोगों को यातना देने को तैयार किया अतः अब इस के सिवा कोई

उपाय न रहा कि रसूलुल्लाह अपने साथियों को फिर से हब्शा की हिजरत का हुक्म दें। यह दूसरी हिजरत पहले से अधिक कष्टदायक सिद्ध हुई। क़ुरैश को इस की सूचना मिल गयी। अतः इस हिजरत को रोकने का उन्हों ने भरसक प्रयत्न किया। परन्तु मुसलमान अधिक सतर्क निकले। इस यात्री दल (क़ाफ़िले) में ८३ पुरुष तथा १९ स्त्रियां थीं। अल्लाह ने उन की यात्रा आसान कर दी और वे हब्शा के सम्राट 'नजाशी' के यहां पहुंच गये। वहां उन्हें शरण दी गयी तथा आदर सम्मान व अच्छा प्रतिवास मिला।

लगता है कि सम्राट नजाशी सदाचारी, शुद्ध बुद्धिवाला, अल्लाह के ज्ञान से परिचित और हज़रत ईसा के विषय में उचित विश्वास रखता था। उस की सुशीलता तथा उचित विश्वास ही का परिणाम था कि उस ने इन शरणार्थियों के साथ आदर सम्मान का व्यवहार किया जो अपने दीन को सीने से लगाये फ़ित्नों से बचने के लिये उस के देश में गये थे।

क़ुरैश को यह जान कर बड़ा खेद हुआ कि शरणार्थियों को सुरक्षित शरण स्थान मिल गया है अतः इस्लाम से उन की सख्त नफ़रत ने उन्हें विवश किया कि वे कुछ उपहार दे कर एक प्रतिनिधिमण्डल नजाशी के पास भेजें। ताकि वह मुसलमानों से अपनी सहानुभूति हटा ले और उन्हें वापस भेज दे।

इस प्रतिनिधिमण्डल में 'अम्र बिन आस और अब्दुल्लाह बिन अबी रबीआ' थे। उन्हों ने सम्राट के दरबारियों को उपहार दिये और उन्हें इस बात पर तैयार कर लिया कि वे सब मिल कर सम्राट पर दबाव डालेंगे कि वह शरणार्थियों को वापस कर दे। प्रतिनिधिमण्डल के सदस्यों ने कहा कि हमारी जाति के कुछ मूर्ख अपनी जाति का धर्म छोड़ चुके हैं तथा वे सम्राट के धर्म में भी दाखिल नहीं हुए हैं उन्हों ने एक नया धर्म निकाला है जिसे न हम जानते हैं और न आप लोग इस से परिचित हैं।

अतः जब सम्राट नजाशी के सामने यह मामला पेश हुआ तो चारों ओर से इशारा हुआ कि इन्हें वापस लौटा दिया जाये। परन्तु सम्राट ने सोचा कि इस की खोज कर के पूर्ण जानकारी प्राप्त की जाये।

फिर उस ने शरणार्थियों को बुलाया, वे लोग दरबार में आये। उन्हों ने पहले ही निश्चय कर लिया था कि सच्ची बात कही जायेगी चाहे सम्राट प्रसन्न हो या अप्रसन्न।

प्रवक्ता 'जाफ़र बिन अब्दुल मुत्तलिब' थे। सम्राट ने उस से पूछा: यह कौन सा दीन है जिस के लिये तुम ने अपनी जाति का धर्म भी त्याग

दिया और मेरे धर्म (दीन) में भी प्रवेश न किया, न दुनिया के दूसरे धर्मों में से किसी धर्म को ग्रहण किया ?

हज़रत जाफ़र ने कहा :

'हे सम्राट ! हम एक पथ भ्रष्ट क़ौम थे, मूर्ति पूजा करते थे, मृतक जीवों को खाते थे, अश्लील कर्म करते थे, अपने नातेदारों से सम्बन्ध विच्छेद करते तथा उन का हक़ उन्हें न देते थे। प्रतिवास का विचार न करते और प्रतिज्ञा तथा वचन भंग करते थे तथा हम में से शक्तिशाली दुर्बल को खाये जाता था। यह थी हमारी दुर्दशा ! अत: अल्लाह ने हमारी ओर स्वयं हम ही में से एक रसूल भेजा जिस के वंश, सच्चाई, अमानत तथा सतीत्व को हम भली भांति जानते थे। उस ने हमें अल्लाह की ओर बुलाया कि हम केवल एक ही ईश्वर में विश्वास करें तथा उसी की उपासना करें तथा उन मूर्तियों को छोड़ दें जिन की उपासना हम तथा हमारे पूर्वज करते थे। उस ने हमें सत्य लोलने, अमानतदारी, निकटतम नातेदारों से सुव्यवहार करने, प्रतिवासी के साथ सुव्यवहार करने तथा प्रतिज्ञा और वचनबद्ध बनने, अवैध कर्मों तथा रक्तपात से बचने का आदेश दिया। हमें अश्लीलताओं से, झूठ से, अनाथों का माल हड़प करने से, सतीत्ववान स्त्रियों पर आरोप लगाने से रोका तथा हमें एक ईश्वर की इबादत करने और किसी भी चीज़ को (चाहे प्राणी हो या कुछ और) उस का साझीदारी न बनाने का उपदेश दिया। तथा हमें नमाज़ पढ़ने, ज़कात देने और रोज़ा रखने की हिदायत की। (तथा अन्य इस्लामी आदेश उसे बतायें) अत: हम ने उस की तस्दीक़ की और उस पर ईमान लाये तथा जो कुछ वह अल्लाह की ओर से लाया था उस में उस का अनुसरण किया। हम ने केवल अल्लाह की इबादत की और उस में किसी को साझीदार न ठहराया। जिस चीज़ को उस ने हम पर 'हराम' (अवैध) किया उसे हम ने 'हराम' किया और जिस चीज़ को उस ने हमारे लिये 'हलाल' (वैध) किया उसे हम ने 'हलाल' किया। इस कारण हमारी क़ौम हम पर टूट पड़ी। उस ने हम को यातनायें दीं और दीन के मामले में हम पर अत्याचार किये ताकि हमें अल्लाह की उपासना से हटा कर मूर्तियों की ओर लौटा दे और हम उन समस्त अपवित्रताओं को फिर से हलाल कर लें जिन्हें पहले हलाल किए हुए थे। अन्तत: जब उन्हों ने हम पर अत्याचार किये तथा यातनायें दीं, हमारा जीना दूभर कर दिया और हमारे धर्म के मार्ग में बाधक बन गये तो हम आप के देश में चले आये और दूसरों की तुलना में आप के यहां आना पसन्द किया और आप की शरण लेनी चाही, इस आशा पर कि आप

'हज़रत हम्ज़ा' तथा 'उमर' (रज़ि०) इस्लाम के दामन में

प्रायः बदलियों से ढके हुए क्षितिज से ऐसी बिजली कौंधती है जो आस पास के वातावरण को प्रकाशमान कर देती है। मक्का में इतनी कष्टदायक स्थिति उत्पन्न हो गयी कि अधिकांश परिवार पलायन करने पर मजबूर हो गये। जो डटे रहे वे मुश्रिकों के अत्याचारों का निशाना बनते रहे, परन्तु कुछ नये लोगों के इस्लाम में प्रवेश के कारण क़ुरैश अपनी अत्याचारों की नीति बनाए रखने से पहले सोच विचार में पड़ गये।

'हम्ज़ा बिन अब्दुल मुत्तलिब' इस्लाम की शरण में आ गये। आप रसूलुल्लाह (सल्ल०) के चचा और दूध सम्बन्धी भाई भी थे। आप क़ुरैश के शक्तिशाली, साहसी एवं स्वाभिमानी व्यक्ति थे। आप इस्लाम के प्रवेश का क़िस्सा इस प्रकार है :

> 'एक दिन 'अबू जह्ल' ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को बेधड़क गालियां दीं और आप (सल्ल०) तथा आप के लाये हुए दीन (इस्लाम) की प्रतिष्ठा के विरुद्ध अपशब्द कहे परन्तु रसूलुल्लाह ने उस की किसी बात का उत्तर न दिया। इस घटना की सूचना 'अब्दुल्लाह बिन जुदआन' की मुक्त की हुई दासी ने हज़रत हम्ज़ा को दी : 'हे अबू अम्मारा! क्या ही अच्छा होता कि आज आप अपने भतीजे की दयनीय दशा देखते ? जो उसे 'अबू हकम बिन हिशाम' की ओर से भुगतनी पड़ी, उस ने आप (सल्ल०) को गालियां दीं, अपशब्द कहे परन्तु मुहम्मद ने कुछ नहीं कहा।'—इस स्त्री ने समीप से इस घटना को देखा था —इतना सुनते ही हम्ज़ा क्रोधपूर्ण 'हरम' में पहुंचे जहां 'अबू जह्ल' अपने सहपाठियों के बीच बैठा हुआ था, जाते ही इतनी ज़ोर से सिर में कमान मारी कि सर फट गया फिर बोले, तू उन को गालियां देता है ? मैं भी उन के दीन में शामिल हूं।'

हम्ज़ा का इस्लाम एक साहसी व्यक्ति के क्रोध का परिणाम था जिस ने यह सहन न किया कि उस का भतीजा अपमानित किया जाये फिर अल्लाह ने उन के सीने को खोल दिया और उन्हों ने अत्यधिक शक्तिशाली सहारा पकड़ लिया तथा इस घटना से मुसलमानों में बड़ा सन्तोष उत्पन्न हो गया।

हज़रत उमर का क़िस्सा और भी रोचक है। यह इस्लाम की खिल्ली उड़ाने में आगे आगे थे तथा उस के विरुद्ध संघर्ष में अगुआ थे। अहंकार

अभिमान तथा कटुस्वभाव में प्रसिद्ध थे। इन के द्वारा मुसलमानों को नाना प्रकार की यातनायें तथा कष्ट पहुंचे थे।

आमिर बिन रबीआ की पत्नी ने उल्लेख किया है कि मैं हब्शा के लिये हिजरत का सामान बांध रही थी तथा मेरे पति किसी काम से बाहर गये हुए थे। इसी बीच उमर (जो अभी मुश्रिक थे) आये, हम उन के हाथों अति कष्ट सह चुके थे परन्तु उस समय वह खड़े हुए मेरी व्यस्तता देखते रहे, फिर बोले 'अब्दुल्लाह की माता! क्या, अभी प्रस्थान है?' मैं ने कहा 'हां! जब तुम लोगों ने हमें खूब सताया तथा अत्याचार किये तो अब हम अल्लाह की धरती में कहीं निकल जायेंगे आशा है खुदा हमारे लिये इस विपत्ति से बचने का कोई उपाय कर देगा।' इतना सुन कर उमर ने कहा, 'अल्लाह तुम्हारे साथ हो!' इस समय मैं ने उन के ऊपर आर्द्रता, रुदन तथा गम्भीरता देखी। वह कहती हैं कि जब मेरे पति आमिर वापस आये तो मैं ने उन्हें पूर्ण स्थिति से अवगत कराया, उन्हों ने पूछा क्या तुम्हें उमर के मुसलमान होने की आशा है? मैं ने कहा, 'हां'। उन्हों ने कहा, 'जिस व्यक्ति को तुम ने अभी देखा है वह उस समय तक मुसलमान न होगा जब तक 'खत्ताब' का गधा मुसलमान न हो जाये।' क्योंकि मुसलमानों पर उन के कष्टों तथा प्रकोपों का हाल 'आमिर' (रजि०) को मालूम था।

परन्तु स्त्री का अनुमान पुरुष के मत की तुलना में सच्चा निकला। 'उमर' की कठोरता एक छिल्के के समान थी जिस के पीछे रुदन, आर्द्रता, नम्रता तथा उदार हृदयता का स्रोत उबल रहा था।

ऐसा लगता है कि 'उमर' के हृदय में परस्पर विरोधी विचार पल रहे थे। एक ओर उन परम्पराओं, तथा रिवाजों व रीतियों का विचार था जो पूर्वजों से विरासत में मिली थीं तथा आमोद प्रमोद, विलासताओं एवं मादकताओं के अवसर भी दृष्टि में थे और दूसरी ओर उन्हें मुसलमानों की दृढ़ता तथा अक़ीदे के मार्ग में कष्ट सहने की शक्ति पर भी आश्चर्य था। इसी के साथ उन्हें यह सन्देह भी परेशान कर रहा था कि जिन सिद्धान्तों की ओर इस्लाम बुला रहा है क्या वे दूसरों से उच्च एवं श्रेष्ठ भी हो सकते हैं?। इसी कारण वह क्रोध एवं रोष से विक्षिप्त हो गये। तथा इसी मानसिक कशमकश ने उन्हें रसूलुल्लाह् को क़त्ल करने पर आमादा कर दिया ताकि यह झगड़ा ही समाप्त हो जाये। जब रास्ते में उन्हें सूचना मिली कि उन की बहन तथा बहनोई भी इस्लाम में प्रवेश कर चुके हैं तो क्रोधावस्था में सीधे बहन के घर पहुंचे। बहन को इतना मारा कि उन का

सर फट गया। बहन के बहते हुये खून ने उन्हें सत्यमार्ग की ओर मोड़ दिया। खैर (कल्याण) तथा शर (बुराई) के बीच उन के मन में संघर्ष उत्पन्न हो गया। क़ुरआन का लिखित अंश हाथ में लिया और सूरा ता०हा० का पाठ किया तो कहने लगे, 'कितनी अच्छी तथा उच्च कोटि की वाणी (कलाम) है यह ! ?'

'उमर' सत्य के सामने पराजित हो गये तथा रसूलुल्लाह की सेवा में अपने इस्लाम में प्रवेश की घोषणा करने पहुंच गये।

जब 'उमर' का नफ़्स (मन) समस्त गन्दगियों से पवित्र तथा इस्लाम के लिए एकाग्रचित हो गया तो वह ख़ुदाई फ़ौज के लिये सहायक सिद्ध हुए, मुसलमानों की शक्ति बढ़ गयी तथा काफ़िरों के मन की निराशा में वृद्धि हो गयी।

जब क़ुरैश ने देख लिया कि इस्लाम को सफलता तथा उन्नति मिल रही है तथा उन के साधन उस के विस्तार को रोकने में विफल हो गये हैं और इस्लाम के सहयोगियों व हिमायतियों को बदला नहीं जा सका है तो उन्हों ने अपने व्यवहार पर पुनः विचार किया ताकि अधिक कठोर, दृढ़ एवं व्यापक चालें चली जा सकें।

सामाजिक बहिष्कार

अन्ततः मुश्रिकों का रोष इस प्रकार प्रकट हुआ कि उन्हों ने एक ऐसा समझौता किया जिस में मुसलमानों, उन के धर्म को पसन्द करने वालों, या उन पर नर्मी करने वालों या उन में से किसी की सुरक्षा करने वालों को एक गिरोह क़रार दिया गया तथा अन्य समस्त इन्सानों से उन्हें अलग कर दिया गया। फिर आपस में तय किया कि मुसलमानों से ख़रीद-फ़रोख़्त न की जाये तथा उन से विवाह सम्बन्धी व्यवहार न किया जाये और उसे एक 'दस्तावेज़' में लिखकर ख़ाना 'का'बा' में लटका दिया गया।

निःसन्देह क्रोधपूर्ण एवं रोष से भरे हुए हिंसक मुश्रिक अपने बदले की पूर्ति में सफल हो गये अतः रसूलुल्लाह सल्ल० और आप के साथी 'शे'बे अबी तालिब'[1] में बन्द कर दिये गये तथा बनू मुत्तलिब के प्रत्येक व्यक्ति ने चाहे वह काफ़िर था या मोमिन आप का साथ दिया परन्तु अपने क़बीले से

---

१. शे'बे का अर्थ है घाटी। इस घाटी में अबू तालिब रहते थे अतः इस का नाम 'शे'बे अबू-तालिब' था अर्थात वह घाटी जिसमें अबू तालिब रहते थे।

(अनुवादक)

कुरैश का घेराव कितना
विवशता ने उन्हें किस सीमा
को खाने पर विवश कर दिया
भी नहीं की जा सकती थी ।
रिश्तेदारों को दुखी बना दिय
ऊंट पर ग़ल्ला तथा खाद्य पद
छोड़ जाते ताकि वह पीड़ितों
अनाहारग्रस्तता में कुछ कमी

यह घेराव पूरे तीन वर्ष
नाता है! वह साधन था जो
तथा विपत्तियों को सहन कर

प्राकृतिक बात थी कि मुसलमान इन विपत्तियों तथा कष्टों से निकलने की शीघ्रता करते, उन्हें काफ़ी दिनों से सफलता एवं प्रभुत्व की शुभ सूचनाएं सुनाई जा रही थीं परन्तु उन के हिस्से में भय तथा आतंक के अतिरिक्त कुछ न आया ! इन लोगों के लिए उन की अपनी धरती अजनबी बन गयी थी तथा उन का जीना दूभर कर दिया गया था। निस्संदेह उन के हृदय उन मुश्रिकों के विरुद्ध क्रोध तथा रोष से भर गये होंगे जिन्हों ने नैतिक मूल्यों की खिल्ली उड़ाई थी तथा आख़िरत के दिन की तरह इन मूल्यों के प्रभुत्व से भी इन्कार कर दिया था।

यदि उत्पीड़ित मुसलमानों की सफलता की इच्छा इन कठोर परिस्थितियों से मुक्ति पा जाने की होती तो वे विजय तथा प्रभुत्व की मांग अवश्य करते ताकि झुठलाने वालों को अपमानित कर सकें और 'सत्य' के विरोधियों को सज़ा चखा सकें। परन्तु 'वह्य' उतर रही थी लेकिन उसकी मांग यह न थी कि इन सम्भावित परिणामों की प्रतीक्षा की जावे वरन 'वह्य' के द्वारा विश्वास एवं दृढ़ता व स्थिरता उत्पन्न की जा रही थी। उस की मांग तो यह थी कि ईमान की इन वास्तविकताओं के लिए अल्लाह की स्तुति की जाये जिन्हें उन लोगों ने पहचान लिया है। तथा उन की श्रेष्ठता एवं सत्यता से वह साहस और शक्ति प्राप्त की जाये जिस से घटनाओं तथा संकटों को स्मितमुख से सहन किया जा सके।

क़ुरआन कहता है—

> 'जिन की हम इन्हें धमकी दे रहे हैं उस में से कुछ हम तुझे दिखा दें या (इस से पहले) हम तुझे उठा लें, इन्हें तो हमारी ओर लौट कर आना है, फिर जो कुछ यह कर रहे हैं, उस पर अल्लाह गवाह है। और हर समुदाय के लिये एक रसूल है तो जब उन के पास उनका रसूल आ जाता है, तो उनका फ़ैसला न्यायपूर्वक कर दिया जाता है और उन पर जुल्म नहीं किया जाता है।'
>
> —यूनुस ४६, ४७

मुश्रिक अपने और मुसलमानों के मध्य संघर्ष के परिणामों को देखने की जल्दी मचा रहे थे। उन की शीघ्रता इस कारण थी कि वे इस्लामी सिद्धांतों पर फब्ती कसते थे, उन्हें मरने के पश्चात जीवन तथा ईश्वर के सामने उत्तरदायित्व पर ईमान न था। वे कभी न सोच सकते थे कि निकट या सुदूर भविष्य में इस्लाम का सूर्य पूर्ण रूप से चमकेगा। मक्का मूर्तियों से ख़ाली हो जायेगा तथा तौहीद की आवाज़ें उस की गलियों से आ रही होंगी तथा 'शे'बे अबी तालिब' में घिरे हुये उत्पीड़ित मुसलमान

सम्मान रखता था । उस की

उल्लाह की फूफी थीं । हिशा

प्रसन्न हो कि इत्मीनान से

तुम्हारी ननिहाल के लोग

जाय और शादी-विवाह के

मामला 'अबुल हकम बिन हि

ननिहाल के साथ वह मामल

किया है तो वह कदापि न म

ज़ुहैर बोला : 'हिशाम !

कोई और भी मेरा साथ दे

न रहता ।'

शोक के कारण फिर दुख
रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलै
का देहान्त हो गया और
तालिब भी परलोकवासी हो
अर्थात् रसूलुल्लाह को
सद्मा पहुंचा।
हज़रत खदीजा (रज़ि०
इनाम थीं। उन्हों ने अति
दिया था। रिसालत की त
के सख्त एवं कटु चरणों में अ
से रसूल की सहानुभूति की
उस समय लगा सकते हैं

रक्षा करने में कितनी वीरता
घोषणा करने और ख़ानदान वा
में रसूलुल्लाह का कितना सम
कर दांतों तले उंगली दबा
अफ़सोसनाक तरीक़े पर हुई कि
अपने पूर्वजों के धर्म पर क़ायम

अबू तालिब के निधन से रसू
वह नादानों तथा बड़े बड़ों के अ
के लिये क़िले का काम न देते
भतीजे की सुरक्षा तथा समर्थन
स्थान का प्रयोग किया था। अ
पृष्ठपोषक नहीं रहा अतः आप
एवं उद्दण्ड हो गये।

रिवायतों में आता है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया :

'अबू तालिब की मौत तक क़ुरैश मुझे कोई कष्ट न पहुंचा सके।' —इस्हाक़

परन्तु उन की मृत्यु के पश्चात् इतने निर्भीक हो गये कि एक बार आप के शुभ सिर में मिट्टी डाल दी।

'हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद से हदीसोल्लेख है कि एक बार रसूलुल्लाह 'का'बा' के पास नमाज़ पढ़ रहे थे और क़ुरैश के लोग अपनी अपनी बैठकों में बातें कर रहे थे। उन में से अबू जह्ल ने कहा : तुम में से कौन है जो जाकर अमुक व्यक्ति के घर से ज़िब्ह की हुई ऊंटनी का पेटा तथा अन्य ख़ून से लिथड़ी हुई चीज़ें उठा लाये और मुहम्मद के दोनों कन्धों के बीच सज्दे की हालत में रख दे? यह सुन कर उन का सब से दुष्ट व्यक्ति उठा और यह गन्दगी उठा लाया।'

जब रसूलुल्लाह सज्दे में गये तो उस ने उसे आप की पीठ पर रख दिया। क़ुरैश के लोग यह देख कर हंसी के मारे लोट पोट हो रहे थे तथा खिल्ली उड़ा रहे थे। और एक दूसरे पर गिरे पड़ते थे। मैं खड़ा यह दृश्य देख रहा था। यदि मेरे पास शक्ति होती तो मैं उसे आप की पीठ से हटा देता। नबी (सल्ल०) सज्दे में पड़े रहे और सिर न उठा सके। इतने में किसी ने जाकर फ़ातिमा (रज़ि०) को सूचना दी। हज़रत फ़ातिमा जो अभी बच्ची थीं, दौड़ी दौड़ी आयीं और उन्हों ने गन्दगी के ढेर को आप के ऊपर से खींच खींच कर फेंका और क़ुरैश के लोगों को डांटा और उन्हें बद्दुआएँ (श्राप) दीं। जब रसूलुल्लाह नमाज़ पढ़ चुके, आप ने उन ज़ालिमों के लिये बद्दुआ दी। आप का तरीक़ा था कि जब आप दुआ करते या सवाल करते तो तीन बार कहते। अतः आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, 'हे अल्लाह! तू क़ुरैश से निमट ले, हे अल्लाह! तू क़ुरैश से निमट ले, हे अल्लाह! तू क़ुरैश से निमट ले।' जब क़ुरैश के लोगों ने सुना तो उन की हंसी ग़ायब हो गयी और वे भयभीत हो गये। फिर आप (सल्ल०) ने दुआ की, 'हे अल्लाह! तू अबू जह्ल बिन हिशाम, उत्बा बिन रबीआ, शैबा बिन रबीआ, वलीद बिन उत्बा बिन रबीआ, उमैया बिन ख़लफ़, उक़बा बिन अबी मुऐत और उम्मारा बिन वलीद से निमट ले।'

क़सम है उस शक्ति की जिस ने मुहम्मद (सल्ल०) को सत्य के साथ भेजा मैं ने इन नाम निर्दिष्ट व्यक्तियों को बद्र के युद्ध में निहत देखा

आयीं और उन से खून बहने लगा। इन गुंडों तथा बदमाशों ने आबादी से बाहर उतवा और शैबा के बाग तक आप का पीछा किया वहां बाग के स्वामी मौजूद थे उन्हों ने इन बदमाशों को लौटाया। रसूलुल्लाह शान्ति तथा सुकून की तलाश में अंगूर की एक बेल की छाया में बैठ गये। आप इस कष्टदायक परिस्थिति से परेशान हो गये थे। यहां तक कि वे घटनाएं भी याद आने लगीं जो मक्का वालों के साथ गुजर चुकी थीं। शोक एवं कष्टों की एक श्रृंखला थी जो समाप्त होने में न आती थी। उस समय आपने अपने रब से अति करुणामय एवं कोमल स्वर से दुआ की—

'हे अल्लाह! मैं तेरे सामने अपनी विवशता, निस्सहायता तथा लोगों की दृष्टि में अपने अपमानित होने की शिकायत करता हूं। हे महाकृपालु! तू समस्त निर्बलों का रब है तथा मेरा रब भी तू ही है। तू मुझे किस के सुपुर्द कर रहा है? क्या किसी ग़ैर के हवाले? जो मुझ से कठोरता से पेश आये? या किसी दुश्मन के हवाले जिसे तू ने मुझ पर क़ाबू पाने का सामर्थ्य प्रदान कर दिया है। यदि तू मुझसे अप्रसन्न नहीं है तो मुझे किसी भी मुसीबत की परवाह नहीं है परन्तु तेरी ओर से मुझे शान्ति मिल जावे तो इस में मेरे लिये अधिक समायी है। मैं तेरे अस्तित्व के उस 'नूर' की शरण लेता हूं जो अंधेरे में प्रकाश करता है और दुनिया तथा आख़िरत के मामलों को सुधारता है। मुझे अपने प्रकोप से बचा ले तथा मुझे अपने क्रोध से भी सुरक्षित रख! मैं तेरी प्रसन्नता तथा सन्तोष से सन्तुष्ट एवं राज़ी हूं! तू भी मुझ से राज़ी हो जा, तेरे बिना कोई शक्ति तथा सामर्थ्य नहीं है।'

बनी रबीआ के दिलों में नातेदारी की भावना ने जोश मारा तथा उन्हों ने अपने नसरानी गुलाम अद्दास को बुलाया और आज्ञा दी कि अंगूरों का एक गुच्छा थाली में रख कर इस व्यक्ति के पास ले जा और उस से खाने के लिए कह! अतः जब उस ने अंगूरों की थाली रसूल के सामने रखी तो आप ने 'बिस्मिल्लाह' कह कर उस की ओर हाथ बढ़ाया और खा लिया। अद्दास बोला: 'इस देश में यह वाक्य कहने वाला कोई नहीं है।' आप ने पूछा: 'तुम किस देश के निवासी हो?' उस ने कहा, 'मैं ईसाई हूं। नैन्वा का निवासी हूं।' आप ने पूछा: 'यूनुस बिन मत्ता की बस्ती के हो?' उस ने पूछा, 'आप यूनुस को कैसे जानते हैं?' आप ने

उस ने स्वीकार कर लिया। तब
के घर बितायी। प्रातः मुत्तिम अ
'हरम' में गये। मुतिम ने ऊंटनी
'हे क़ुरैश के लोगो! मैं ने मुहम्
इसलिए इन्हें बुरा-भला न कहे।'
दो रकअत नमाज़ पढ़ी और बा
और उस के पुत्र समान्न आप के
से पूछा : 'शरण देने वाले हो या
मुतिम ने कहा : 'नहीं! वरन् पू
तुम ने शरण दी उसे हम ने शरण
अल्लाह के रसूल सल्ल० को

बद्र के युद्ध के बन्दियों के विषय में आप सल्ल० ने फ़रमाया : 'यदि मुतिम बिन अदी जीवित होता और मुझ से इन घृणित व्यक्तियों के विषय में बात करता तो मैं उस का विचार करते हुए इन्हें मुक्त कर देता।'

मुतिम भी अबू तालिब के समान अन्तिम श्वास तक अपने पूर्वजों के दीन पर क़ायम रहा। वह शिष्टता तथा गौरव में अबू तालिब का उत्तम आदर्श था। अबू जह्ल ने रसूलुल्लाह को फब्ती कसते हुए कहा कि यह कैसे नबी हैं जो शरण मांगते हैं, मानो वह यह कहना चाहता था कि 'नबी की रक्षा के लिए फ़रिश्ते क्यों नहीं उतरते ?'

जब आप सल्ल० को अबू जह्ल ने देखा तो उस ने कहा, हे बनू अब्द मनाफ़ ! यह तुम्हारे नबी हैं ? उत्बा बिन रबीआ ने उत्तर दिया, 'यह बात किसी को क्यों बुरी लगती है कि हम में नबी और बादशाह हो ?' जब अल्लाह के रसूल को इस प्रश्नोत्तर की सूचना दी गयी तो आप ने फ़रमाया : 'हे उत्बा ! तुम्हारा गौरव अल्लाह के लिए नहीं वरन् अपने नफ़्स के लिए था। उस ने यह बात ईमान तथा विश्वास की स्थिति में नहीं अपितु द्वेष एवं जातिगत पक्षपात के कारण कही थी। और हे अबू जह्ल ! शीघ्र ही वह समय आने वाला है जब तुम हंसोगे कम और रोओगे अधिक ! तथा हे क़ुरैश के लोगो ! शीघ्र ही वह समय आ रहा है जब तुम इस धर्म में प्रवेश करोगे जिसे तुम घृणित समझते हो।'

—इब्ने जरीर

इस समीक्षा से अनुमान लगाया जा सकता है कि रसूलुल्लाह सल्ल० को भविष्य की परिस्थितियों पर कितना विश्वास था। यद्यपि विपत्तियां आप पर आच्छादित थीं। मक्का वापस आकर इस्लाम के प्रचार के विषय में आप ने अपनी गत नीति पर पुनः विचार किया तथा उसी के अनुसार अमल किया।

आप दीन के प्रचार में प्रयत्नशील थे कि 'मेअ्राज' की घटना घटी और मक्का में एक हलचल मच गयी।

इस्रा तथा मेअ्राज

'इस्रा' से अभिप्राय वह अनोखी यात्रा है जो मस्जिदे-हराम (मक्का) से शुरू होकर मस्जिदे-अक़्सा तक समाप्त हुई। तथा मेअ्राज से अभिप्राय इस यात्रा के पश्चात् रसूलुल्लाह का आकाश की ऊंचाइयों पर चढ़ना तथा उस ऊपरी भाग तक पहुंचना है जिसके विषय में दुनिया के ज्ञान व विज्ञान

आध्यात्मिक एवं मानसिक श्रेष्ठता के द्वारा दीन (धर्म) व दुनिया की समस्त वास्तविकताएं आप पर प्रकट हो गयीं और 'अजाब' (प्रकोप) एवं 'सवाब' (प्रतिदान) का आप ने मुशाहिदा (प्रत्यक्ष दर्शन) कर लिया।

इसा सत्य है तथा यह उन के निकट रूहानी या भौतिक नहीं। तथा यह यात्रा जाग्रतावस्था में हुई निद्रा में नहीं। यह कोई सच्चा स्वप्न नहीं था वरन् यह उसी प्रकार की वास्तविकता थी जिस का आप ने चित्रण किया है। इस के पश्चात डा० साहब कहते हैं कि 'इस बलन्दी तक वही व्यक्ति पहुंच सकता है जो ऐसी बड़ी शक्ति रखता हो जिस से मानव स्वभाव आज तक परिचित नहीं हो सका है।'

वास्तविकता तो यह है कि रूहानी तथा भौतिक शक्तियों के बीच सीमाएं, घन्टे तथा फ़ासले कम होने लगे हैं तथा जिस चीज को आध्यात्मिक लोक में लोग सरलतापूर्वक देखते हैं अब उसे भौतिक संसार में देखना कठिन नहीं है।

मेरे विचार से विज्ञान द्वारा जैसे-जैसे सृष्टि का रहस्योदय होगा, पदार्थ भी रूह के समान हो जायेगा जिस की वास्तविकता अल्लाह के सिवा कोई नहीं जान सकता है।

मनुष्य चकित हो जाता है जब उसे मालूम होता है कि परमाणु अपने अन्दर आकाश में घूमने वाले सूर्य व्यूह का प्रतिनिधित्व करता है तथा अपने अन्दर भयानक आग रखता है। यदि उसे तोड़ा जाये तो प्रत्येक हरी सूखी चीज को भस्म कर दें।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने यह यात्रा की और मेअ्राज से प्रतिष्ठित हुए परन्तु यह यात्रा कैसे सम्पन्न हुई ? क्या कोई ऐसी सवारी मिल गयी थी जो आवाज़ से तेज चल रही थी जैसा कि बाद में लोगों ने आविष्कार किया ?

आप ने 'बुराक़' (एक क़िस्म की घोड़े के समान सवारी) की थी जिस का प्रत्येक पग निगाह की अन्तिम सीमा पर पड़ता था मानो वह प्रकाश की गति से चलता था। शब्द 'बुराक़' बर्क़ से बना है जिस का अर्थ 'बिजली' है, अर्थात् इस यात्रा में बिजली की शक्ति भी वशीभूत हो गयी थी।

परन्तु सामान्य परिस्थितियों में असम्भव है कि मानव शरीर बिजली की गति से दुनिया में यात्रा कर सके। इस के लिए किसी ऐसी विशिष्ट तैयारी की आवश्यकता थी जो उस के अंगों और उन की व्यवस्था को इतनी लम्बी यात्रा के लिए सुरक्षित रखती।

इस का उत्तर जानने के लि

होगा। नुबूव्वतों का क्रम सम

इस्राईल में नुबूव्वत समाप्त ह

स्थान तथा सन्तों पृथ्वी पर रो

प्रिय वतन था।

परन्तु जब यहूदियों ने 'यह

सम्मान को छिन्न-भिन्न कर दि

तो उन पर अल्लाह की लानत

इस क़ौम को नुबूव्वत से वंचि

मुहम्मद सल्ल० को प्रदान की

नेतृत्व एक उम्मत (समुदाय)

में और 'इस्राईल' की सन्तान से इस्माईल अलै० की सन्तान में परिवर्तित कर दिया गया।

यहूदी इस परिवर्तन से रोषग्रस्त हो गये अतः उन्होंने सर्वप्रथम हज़रत मुहम्मद सल्ल० की रिसालत का इन्कार किया—

> 'क्या ही बुरी चीज़ है जिस के बदले उन्होंने अपने प्राणों का सौदा किया कि अल्लाह ने जो चीज़ उतारी है उसे वे ज़िद से इस नियम के कारण नहीं मानते कि अल्लाह अपना 'फ़ज़्ल' (कृपा) अपने बन्दों में से जिस पर चाहे उतारे। वे प्रकोप-पर-प्रकोप अपने सिर ले कर लौटे।' —अल-बक़र: ९०

परन्तु ईश्वरेच्छा कार्यान्वित होकर रही और नई उम्मत ने भार एवं सन्देश ग्रहण कर के सहन कर लिया और अपना कार्य संभाल लिया तथा हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम, हज़रत इब्राहीम, इस्माईल, इस्हाक़ और याक़ूब अलैहिमुस्सलाम की शिक्षाओं के वारिस बन गये। तथा उस के प्रचार एवं फैलाव और उस पर आम जनता को एकत्र करने के लिए उठ खड़े हुए। अतः वर्तमान को भूत से सम्पर्क जोड़ने और भविष्य को एक वास्तविकता में समन्वित करने का यह परिणाम हुआ कि इस्लाम में मस्जिदे अक़्सा मक्का तथा मदीने की पवित्र मस्जिदों के पश्चात तीसरे नम्बर पर आदर योग्य मानी गयी। तथा रसूलुल्लाह सल्ल० 'इस्रा' में इस मस्जिद में गये। यह यात्रा उस ईमान के आदर में थी जो प्राचीन काल से उस के ग्रंथों में था।

फिर इस धरती में अल्लाह तआला समस्त नबियों को एकत्रित करता है ताकि वे सब अन्तिम सन्देष्टा का स्वागत करें। नुबूव्वतें एक दूसरे की तस्दीक़ करती हैं तथा बाद में आने वाले के लिए राह हमवार करती हैं। अल्लाह ने बनी इस्राईल के नबियों से इस का वचन लिया था—

> 'और याद करो जब 'नबियों' (द्वारा उन के अनुयायियों) से वचन लिया कि जो कुछ मैं ने तुम्हें 'किताब' और 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) प्रदान की, तो फिर तुम्हारे पास एक 'रसूल' उस की तस्दीक़ करता हुआ आयेगा जो तुम्हारे पास मौजूद है, तो तुम उस पर ईमान लाना और उस की सहायता करना। पूछा, 'क्या तुम ने इक़रार किया, और इसमें मेरी ओर से डाली हुई जिम्मेदारी तुम ने उठाई?' उन्होंने कहा, 'हम ने इक़रार किया।' कहा, 'तो गवाह रहो और मैं भी तुम्हारे साथ गवाहों में से हूं।' —आले इम्रान ८१

शुद्ध हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने अपने समस्त नबी भाइयों को दो रक्अत नमाज पढ़ायी। यह इमामत इस बात की स्पष्ट घोषणा थी कि सृष्टि की ओर इस्लाम अल्लाह का अन्तिम सन्देश है जिस को मुहम्मद सल्ल० द्वारा पूरा किया गया है और इस से पूर्व समस्त नबियों ने इस के लिए मार्ग समतल किया था।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० और आप के दीन का आदर सम्मान उजागर करना कोई गति नहीं है जिसे किसी आदरणीय सभा में गाया जाये वरन् यह एक वास्तविकता का बयान है जो उसी समय निश्चित कर दिया गया था जब अल्लाह ने धरती पर बसने वालों के मार्गदर्शन का निर्णय किया था परन्तु यह मार्गदर्शन उचित समय पर प्रकट हुआ।

दीन की दावत का भारी बोझ जो अल्लाह ने आप सल्ल० के कन्धों पर डाला था उस को नफ़रत, द्वेष, शत्रुता तथा आरोपों की तीव्र आंधियों का सामना करना पड़ा। उसके अनुयायियों की एकता को तितर-बितर करने का प्रयत्न किया गया। ईमान लाने के बाद उन्हें अपने माल तथा परिवार में शान्तिपूर्वक न रहने दिया गया और इस सन्देश के मार्ग में अन्तिम कष्ट बनू 'सक़ीफ़' की ओर से सहन करना पड़ा जिन्होंने आप को धुतकार दिया था, फिर आप को पवित्र हरम (का'बा) में प्रवेश करने के लिए एक मुश्रिक की शरण लेनी पड़ी। मानवीय दृष्टि से आप का यह अपमान तथा अनादर अल्लाह के सामने हुआ तथा प्रार्थना के रूप में फूट पड़ा था।

अतः आप सल्ल० को सन्तुष्ट करने और अपनी नेमतों की अनुभूति जीवित रखने के लिए अल्लाह ने इस आकाश यात्रा का प्रबन्ध किया ताकि आप का हृदय आराम तथा सुकून प्राप्त कर सके। और आप को हर समय यह आभास रहे कि अल्लाह की सुरक्षा आच्छादित है और वास्तविकता भी यह है कि जब से तौहीद, इबादत, तथा जनसाधारण को इस की ओर आमन्त्रित करना शुरू किया है अल्लाह की रक्षा आप पर आच्छादित रही है।

अल्लाह के रसूल फ़रमाते थे—

> 'यदि तेरा प्रकोप मुझ पर नहीं टूट पड़ा है तो मुझे कोई परवाह नहीं है।'

इस्रा की रात को जानकारी हो सकी कि ईश्वर की पूर्ण प्रसन्नता आप को प्राप्त है तथा आप का स्थान उस के सर्वश्रेष्ठ एवं सम्मानित व्यक्तियों में है।

इस्रा तथा मेअ़राज की घटनाएं २३ वर्षीय रिसालत की लगभग आधी अवधि में घटित हुईं। इस से विगत कष्टों का निवारण तथा भविष्य की सफलताओं का बीजारोपण अभिप्रेत था।

आकाशों तथा धरती के राज्य में अल्लाह की महान निशानियों में से कुछ चीज़ों के प्रदर्शन ने काफ़िरों की चालों को बेकार करने, उन के समूह को तितर-बितर करने और उन के कुपरिणामों से अवगत कराने में प्रभावशाली रोल अदा किये।

इसी यात्रा से आप को विश्वास हुआ कि आप का सन्देश तथा रिसालत प्रभुत्वशाली हो कर रहेंगे तथा नील एवं फ़रात (नदियों के नाम) की हरी-भरी घाटियों पर इस सन्देश का शासन होगा तथा ये क्षेत्र ईरान की 'मजूसियत' (अग्नि पूजावाद) तथा रोम की 'तस्लीस' (त्रीश्वरवाद) से छीन लिये जायेंगे। इतना ही नहीं वरन् इन घाटियों के निवासी एक नस्ल के बाद दूसरी नस्ल में इस्लाम के अनुयायी बनेंगे। जन्नत में 'नील' और फ़रात को दिखाये जाने का उद्देश्य यही था। इस का यह अर्थ नहीं था कि इन नदियों का पानी जन्नत से आता है। यह तो बुद्धिहीन तथा मूर्खों की बातें हैं। उदाहरणस्वरूप तिर्मिज़ी की रिवायत है कि अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया—

'जब तुम में से किसी को रैहान (एक सुगन्धित घास) दी जाये तो उसे वापस न करें क्योंकि वह जन्नत से निकला है।'

इस का यह अर्थ नहीं है कि रैहान जन्नत से आता है। जबकि हम उसे खेतों और बाग़ों में उगते देखते हैं और फूल तोड़ते हैं?

इस्रा की तत्त्वदर्शिता

अल्लाह तआला अपने नबियों तथा रसूलों को अपनी क़ुदरत तथा लीला के बड़े-बड़े द्योतकों से अवगत होने का अवसर प्रदान करता है ताकि उन के हृदय ईमान, विश्वास, यक़ीन एवं इत्मीनान से भर जायें क्योंकि उन्हें काफ़िरों की शत्रुता का सामना करना होता है और उन के जमे-जमाये आधिपत्य के सामने सत्य की घोषणा करनी होती है।

अतः हज़रत मूसा को रिसालत से सम्मानित करने से पूर्व अपनी क़ुदरत की विचित्रताएं तथा करिश्मे दिखाता है और उन्हें आदेश देता है कि अपना डंडा (लाठी) ज़मीन पर डाल दे—

'कहा : फेंक दे उसे, हे मूसा! तो उस ने उसे डाल दिया, तो

करने की ज़िम्मेदारी ले ली है
विकताओं का प्रकटन आप
इस से उस भौतिक दार्शनिक
क़ुरआन वैध करता था।

मुश्रिकों ने मांग की कि
ओर से उत्तर दिया गया —

'कह दो : महिमावान
और भी कुछ हूं कि एक

परन्तु अब बाद में आकाश
मिलता कि यह आकाश यात्रा
रसूल के सम्मान एवं जानकारी

अन्तिम ईंट

इस्रा तथा मेअ्‌राज के क़िस्से के द्वारा समस्त नबियों के बीच रिश्ते तथा नाते का भी पता चलता है। यह चीज़ इस्लाम के बुनियादी सिद्धान्तों में से है—

'रसूल उस चीज़ पर ईमान लाया है जो उस के रब की ओर से उस पर उतारी गयी। और ईमान वाले भी ईमान लाये। ये सब अल्लाह् पर उस के फ़रिश्तों पर और उस की किताबों पर और उस के रसूलों पर ईमान लाये—ये कहते हैं : 'हम अल्लाह् के रसूलों में किसी के बीच अन्तर नहीं करते।'

—अल-बक़र: २८५

रसूलुल्लाह् तथा आप के भाई अन्य नबियों के बीच सलाम का तबादला इस नाते को और दृढ़ बना देता है। प्रत्येक आकाश पर अल्लाह् ने अपने एक-एक रसूल को ठहरा दिया था जब रसूलुल्लाह् वहां पहुंचते तो : 'हे पुनीतात्मा भाई ! आप का आना शुभान्वित हो' के शब्दों से आप सल्ल० का स्वागत किया जाता।

नबियों के बीच भेद तथा अन्तर नितांत काल्पनिक है जिसे संमार्ग से विमुख क़ौमों ने या ज्योतिषियों तथा 'दीन' के व्यापारियों ने गढ़ लिया है।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० के विषय में घोषणा कर दी गयी कि वह उस भवन को पूरा करने के लिए भेजे गये हैं जिस के निर्माण में गत समस्त नबियों ने भाग लिया था तथा इस की दीवारों को क्षतिग्रस्त होने से बचाया था। रसूलुल्लाह् सल्ल० ने फ़रमाया—

'मेरा और अन्य नबियों का उदाहरण ऐसा है जैसे एक व्यक्ति ने एक भवन बनाया और उसे खूब सजाया परन्तु उस में एक ईंट लगना बाक़ी रह गयी, लोग उस भवन की परिक्रमा करने लगे और आश्चर्य के साथ कहते रहे : क्या यह ईंट नहीं रखोगे ? तो वह ईंट मैं हूं और मैं 'ख़ातिमुन्नबीयीन' अर्थात् अन्तिम नबी हूं। (मेरे बाद कोई नबी न आयेगा)।'

— बुख़ारी, मुस्लिम

ईश्वरीय धर्म प्रसिद्ध हैं जिन में कोई ऐसा धर्म नहीं है जिसे लोगों ने स्वत: ही तराशा हो जैसे हिन्दू धर्म तथा बौद्ध धर्म हैं।

इन में कोई ऐसी विचारधारा भी नहीं है जिसे अन्तिम युग में गढ़ लिया गया हो और पाश्चात्य साम्राज्य ने प्रोत्साहन दिया हो और उस के

और आप की उम्मत के

सलामती (शान्ति) तथा

कुप्रकृति व्यक्ति के लिए आका

प्रकार उस व्यक्ति के लिए भी

हृदय में फ़साद रखता हो। दुष्

जो गन्दगी तथा कीचड़ के अति

प्राय: यह दुर्गन्धित कालिम

चीजों के पीछे छिप जाती है।

सके तो क्या ईश्वर भी उस से

जब इबादतें दुष्ट प्रकृति के

इबादतें निकृष्टतम पाप एवं गु

जैसे-जैसे व्यक्ति संस्कृ

नमाज़ पवित्रता का साध
जीवित व्यक्ति के लिए है दु
यह पवित्रता ईश्वर भक्त
गुबार को धो देती है। मानव
हैं जो उस के हृदय को अप
आवश्यकता पड़ती है।
रसूलुल्लाह ने फ़रमाया–

---

१. हदीस में है कि 'यदि किसी
बार नहाये तो क्या उसके
है पांचों नमाज़ों का जिन के

'आदमी के लिए उस की पत्नी, उस का माल, उस का नफ़्स और उस का प्रतिवास (पड़ोस) फ़ित्ना है जिसे रोज़ा, नमाज़, सदक़ा (दान) तथा नेकी का आदेश देना और बुराई से रोकना मिटा देते हैं।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

ईश्वर भक्ति से रिक्त दिल को नमाज़ कोई लाभ नहीं पहुंचाती। यह दशा उस समय तक बनी रहती है जब तक कि उस में जीवन पैदा हो जाये या उस पर ख़ैर (भलाई) आच्छादित हो जाये।

हदीसों की पुस्तकों से ज्ञात होता है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने इस यात्रा में सुप्रतिफल एवं दण्ड दिए जाने के अनेकों दृश्य देखे। तथा सीरत की पुस्तकों में इन के विषय में उल्लेख है कि वे इस्रा तथा मेअराज की रात्रि में घटित हुए। यद्यपि सच्ची बात यह है कि यह सामान्य रातों में से किसी रात को सोते में स्वप्नावस्था में दिखाए गए जैसा कि शुद्ध हदीसों से साबित है। (बुख़ारी की हदीसों की ओर संकेत है)।

क़ुरैश तथा इस्रा

जब इस शुभ रात्रि की प्रातः हुई तो रसूलुल्लाह ने लोगों को पूरा वृत्तांत सुनाया तथा जो अल्लाह की महान निशानियां देखी थीं उन्हें बयान किया। जो लोग 'वह्य' के धरती पर आने के इन्कारी थे क्या यह सम्भव है कि वे आसमानों पर जाने की घटना की तस्दीक़ कर देंगे ?

सब एक दूसरे को एकत्र करने लगे ताकि इस विचित्र घटना को सुनें और मुहम्मद सल्ल० की रिसालत का इन्कार करें तथा शंकाएं फैलाएं। कुछ लोगों ने चुनौती दे दी कि यदि वास्तव में बैतुल मक़्दिस को देखा है तो उस के स्वप्न के विषय में बतायें।

हज़रत जाबिर से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया—

'जब क़ुरैश में मुझे झुठला दिया तो मैं हिज्र के स्थान पर खड़ा हो गया और अल्लाह ने बैतुल मक़्दिस को मेरे सामने प्रकट कर दिया जिसे देख कर मैं एक-एक निशानी बताने लगा।'

—बुख़ारी, मुस्लिम

डा० हैकल कहते हैं : 'जो लोग रूहानी इस्रा मानते हैं यदि आप उन से पूछें तो उन्हें कोई आश्चर्य नहीं होगा। क्योंकि आधुनिक युग में विज्ञान ने सिद्ध कर दिया है कि निद्रावस्था में सुदूर स्थानों तथा उन की घटनाओं को देखा जा सकता है। यह मामला तो साधारण व्यक्तियों का है जबकि

वे लोग जिन की आध्यात्मिक तथा वास्तविक शक्ति विश्व स्तर पर मानी गयी हो तथा ख़ुदा के अनुग्रह एवं कृपा से इस सीमा तक गहरो हो चुकी हो जिस से अनादिकाल तथा अनन्त काल दोनों एक रूप में उन के सामने हों।

हम उस तरीक़े की जानकारी पर वाद विवाद नहीं करना चाहते हैं जिसके द्वारा इस्रा तथा मेअराज पूरी हुई। दोनों ही सत्य हैं। फिर भी इस यात्रा ने रसूलुल्लाह सल्ल० के हृदय पर अति गहरे प्रभाव छोड़े। अत: आप ने सृष्टा की प्रशंसा की तथा सत्य के इन्कारी तथा जाहिलों की भर्त्सना और मिथ्यारोपों का प्रभाव आप के ऊपर से कम हो गया। तथा आप दीन के प्रचार के लिए दोबारा सचेष्ट एवं प्रयत्नशील हो गये। आप को विश्वास हो गया कि जो दिन भी बीत रहा है वह आप को सफलता से निकट कर रहा है।

कुछ लेखक समझते हैं कि मुसलमानों का एक गिरोह इस्रा एवं मेअराज का इन्कार कर के विधर्मी हो गया। इस से भी आगे डा० हैकल कहते हैं कि जब यह बात फैली तो मुसलमान हिल गये—यह बात ग़लत है--क्योंकि न तो ऐतिहासिक चिन्ह इस की गवाही देते हैं और न इस की वैज्ञानिक पुष्टि होती है। हम नहीं जानते कि यह बात किस आधार पर कही जाती है।

रसूलुल्लाह सल्ल० अपने गत तरीक़े पर गतिशील हो गए। प्रत्येक मिलने-जुलने वाले को वह्य सुनाते, बैठकों में अपनी दावत पर वार्ता शुरू कर देते, हज के दिनों में हाजियों के डेरों पर जाते और उन को इस्लाम की दावत देते तथा उकाज़, मजन्ना और जुल्मजाज़ के बाज़ारों में जन-साधारण को दावत देते फिरते कि मूर्तिपूजा से तौबा करो और क़ुरआन की हिदायत को ध्यानपूर्वक सुनो, एक-एक क़बीले का पड़ाव मालूम करते और उन से कहते कि मुझ पर ईमान लाओ, मेरा अनुसरण करो तथा इस दावत की रक्षा करो।

आप सल्ल० का चचा आप के पीछे कहता चलता : 'इस की बात न मानो यह दीन से फिर गया है, यह झूठ कहता है।' लोग उत्तर देते : 'तुम्हारा कुटुम्ब तथा तुम्हारी क़ौम (जाति) तुम्हें ज्यादा जानती है! फिर आप के सन्देश को बुरी तरह ठुकरा देते।'

वे क़बीले जिन्हें आप ने दावत दी थी और उन्होंने स्वीकार करने से इन्कार कर दिया था, बनू फ़ज़ारा, बनू ग़स्सान, बनू मुर्रा, बनू हनीफ़ा,

बनू सुलैम, बनू अबस, बनू नज़्र, बनू कुन्दा, बनू कल्ब, बनू उज़्रा, बनू आमिर बिन सासिआ तथा बनू मुहारिब बिन हफ़सा आदि थे।

इन क़बीलों में से कोई एक व्यक्ति भी ऐसा न निकला जो आप की दावत को स्वीकार करता। इस के विपरीत यात्री तथा स्थानीय सब आप सल्ल० से दूर रहने का उपदेश देते और आप पर उंगली से इशारे करते थे।

बाहर से जब कोई व्यक्ति आप सल्ल० के देश में आता तो उस को जाति के लोग नसीहत करते कि उस क़ुरैशी लड़के से अपने को बचाये रखना और उस के चक्कर में न आ जाना।

इस के बावजूद रसूलुल्लाह सल्ल० उस संकीर्ण वातावरण में निराश न हुए तथा दृढ़पगता के साथ दीन की दावत के प्रयास जारी रखे यहां तक कि अन्त में मक्का छोड़ने की तैयारी का आदेश आ गया।

—०—

अध्याय—३

आम हिजरत

(भूमिका एवं परिणाम)

- मदीना में इस्लाम की लहर
- दोनों नगरों में अन्तर
- यहूदियों के करतूत
- बैअ़ते अक़बा (प्रथम)
- बैअ़ते अक़बा (द्वितीय)
- सब से पहले मुहाजिर
- दारुन्नदवा की कार्यवाही
- रसूल भी हिजरत करते हैं !
- गुप्त व्यवस्था
- ग़ारे सौर में क्या हुआ ?
- मदीना की यात्रा
- दुआ !
- मदीना में प्रवेश
- मदीना में निवास

आई है, जो उस की तस्दीक़ करती है जो उन के पास है। और वे पहले से काफ़िरों के मुक़ाबले में विजय की प्रार्थना कर रहे थे। तो जब वह चीज़ उन के पास आ गई जिसे वे जाने-पहचाने हुए थे तो उन्हों ने उस का इन्कार कर दिया।'

—अल-बक़र: ८९

जिन अरबों को यहूदियों ने नबसन्देष्टा के आने की धमकी दी थी उन्हीं ने आगे बढ़ कर उस के सन्देश तथा शिक्षाओं पर ध्यान दिया।

जब हज का समय आया और मदीना के क़बीले मक्का आये तथा उन्होंने रसूलुल्लाह से उन का सन्देश सुना तो किसी ने कहा—

'ख़ुदा की क़सम ! तुम लोग जानते हो, हे मेरी क़ौम के लोगो! यही वह नबी (सन्देश) है जिस की धमकी तुम को यहूदियों ने दी है। कहीं वे तुम से अग्रसरता न कर जायें।'

मदीना में इस्लाम शनैः-शनैः फैलने लगा। यदि उत्साहपूर्ण इस्लाम का स्वागत नहीं हुआ तो गालियों तथा संघर्षों से उस का मार्ग भी नहीं रोका गया।

घृणा तथा विरोध के जिन तत्वों का इस्लाम ने मक्का में अनुभव किया था वे यहां सम्मान तथा लोकप्रियता में बदल गये तथा इस्लाम के नये साथियों को उस का सन्देश सुनते तीन वर्ष भी न गुज़रे थे कि वे उस के लिए मजबूत क़िला और निकटतम नातेदार बन गये।

दोनों नगरों में अन्तर

मक्का निवासी दीर्घ काल से सम्पन्नता एवं समृद्धि का जीवन व्यतीत कर रहे थे उन्हें पूर्ण शान्ति एवं इत्मीनान प्राप्त था। अन्न के द्वार उन के लिए खुले हुए थे। इस के दो कारण थे—

१. मक्का निवासियों की व्यापारिक दक्षता

२. हरम (का'बा) का धार्मिक महत्व।

उपरोक्त कारक ही इस नगर पर कल्याण तथा बरकतों की वर्षा का कारण थे यहां तक कि इस के लोग इतराने और अपने को अनियन्त्रित समझने लगे फिर उन में वे समस्त विकार एवं बीमारियां उत्पन्न हो गयीं जो प्रत्येक उस जाति तथा समूह में उत्पन्न होती हैं जो माल-दौलत के नशे में चूर रहती हैं और समृद्धिशाली बन जाती हैं। घमण्ड, हठधर्मी, कठोर हृदयता, निर्ममता आदि रोग उनमें उत्पन्न हो गए थे। जब इस्लाम

आयिन-व्यापार पर इ
(उजाड़ पड़े हुए) हैं,
है और हम ही वारिस
परन्तु मदीना का मामल
द्वेष ने खून चूस लिया था
दिया था तथा उन्हें परस्पर
ने उन की जो दुर्दशा बना दी
तथा उस से निकलने की का
का गोत्र एक ही था—मदीन
द्वेष को अपनी सन्तान को वि
पोषण भी इसी द्वेष की भाव
फैलाने वाले यहूदी थे ।

यहूदियों के करतूत

जो यहूदी मदीना में रहते थे वे उन सलीबी अत्याचारों से अपना दामन बचा कर इस द्वीप के ग्रामीण क्षेत्रों में आबाद हो गये थे जो प्राचीन काल ही से उन्हें ईसाई बनाने या फ़ना कर देने पर तुले हुए थे। क्योंकि ईसा तथा उन की माता के प्रति उन के विचार बहुत गलत थे। ईसाई समझते थे कि ईसा अलैहिस्सलाम के क़ातिल यहूदी हैं उन की फांसी के यही उत्तरदायी हैं।

निस्सन्देह यहूदी बहुत चालाक क़ौम है ये जहां भी गये वहां की अर्थव्यवस्था अपने हाथ में लेने की कोशिश की। तथा अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये छलकपट की तमाम चालों का निःसंकोच प्रयोग किया। वे अपने को अल्पसंख्यक समझते थे। उन्हें इस बात की चिन्ता हुई कि यदि अरबों में घुल मिल गये तो विनष्ट हो जायेंगे अतः उन्हों ने विभिन्न रिश्तेदारों के बीच द्वेष एवं घृणा का बीज बोना शुरू किया तथा इसी में व्यस्त रहते थे यहां तक कि उस के दुष्परिणाम सामने आये और अरब एक दूसरे के जानी दुश्मन बन गये। युद्धों का दीर्घकालीन सिलसिला चल पड़ा जिस से छुटकारे का कोई उपाय न था। तथा यहूदी इन युद्धों के कारण शक्तिशाली तथा पूंजीपति बन रहे। उन की जायदाद बढ़ रही थी उन के क़िले मज़बूत हो रहे थे तथा उन के प्रभुत्व से लोग डरने लगे थे।

हिजरत से कुछ ही वर्ष पूर्व 'औस' तथा 'ख़ज़रज' क़बीलों में 'बुआस' नामक भीषण युद्ध हो चुका था। पहले 'खज़रज' क़बीला जीता फिर पासा पलट गया और 'औस' प्रभुत्वशाली बन गये। दोनों पक्ष एक दूसरे के इतने बड़े शत्रु बन गये कि एक दूसरे को जड़ मूल से उखाड़ फेंकने के लिये ऐड़ी चोटी का ज़ोर लगा दिया गया। अतः बुद्धिजीवी वर्ग आगे बढ़ा तथा उन्हों ने उपदेश आदि का सहारा ले कर दोनों को समझाया और युद्ध बन्द कराया कि तुम्हारी और तुम्हारे भाइयों की जानें बड़ी क़ीमती हैं तुम शत्रुता छोड़ दो क्योंकि तुम्हारा अपना प्रतिवास इन लोमड़ियों (यहूदियों) से उत्तम है।

जब मदीना वालों को इस्लाम की सूचनाऐं मिली तो इन निरंतर रक्तपातिक फ़ित्नों से बचने के लिए उन्हें इस्लाम में कल्याण की किरण दिखाई देने लगी। किसे मालूम है? कदाचित् यह नया धर्म उन के जीवन में ताज़गी भर दे तथा उन की सामूहिकता में शान्ति तथा सुरक्षा लौट आये और ऐसा आध्यात्मिक जीवन उन्हें प्राप्त हो जाये जो यहूदियों के मुक़ाबले

बैअ़ते अक़बा (प्रथम)

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने मदीना वालों से 'अक़्बा' (घाटी का नाम है) में मुलाक़ात की और उन से अल्लाह के एक होने पर ईमान तथा सुकर्मों के अनुसरण करने एवं अवैध व अश्लील कामों से बचने की प्रतिज्ञा ली।

'हज़रत उबादा बिन सामित' (रज़ि०) से रिवायत है कि हम ने पहली प्रतिज्ञा (बैअत) अक़्बा की रात को निम्न बातों पर की कि :

'हम अल्लाह के साथ किसी को साझी न बनायेंगे, चोरी न करेंगे, ज़िना (व्यभिचार) न करेंगे, अपनी संतान का वध न करेंगे, अपने आगे या पीछे से कोई मिथ्यारोपण न करेंगे तथा किसी भी सुकर्म में रसूलुल्लाह की अवज्ञा न करेंगे।'

फिर रसूलुल्लाह ने फ़रमाया—

'यदि तुम ने इस प्रतिज्ञा को पूरा किया तो तुम्हारे लिये जन्नत है और यदि अवैध कामों में से किसी काम को किया और उस का दण्ड तुम्हें दुनिया में दिया गया तो वह तुम्हारे लिये प्रायश्चित (कफ़्फ़ारा) है और यदि महाप्रलय तक तुम्हारे उस काम पर पर्दा पड़ा रहा तो तुम्हारा मामला अल्लाह के हवाले है चाहे दण्ड दे चाहे क्षमा करे।' —बुख़ारी, मुस्लिम

यह था वह सन्देश जो अल्लाह के रसूल दे रहे थे और जाहिलियत (कुफ़्र) इस पर क्रुद्ध हो रही थी। इन प्रतिज्ञाओं को वही व्यक्ति अस्वीकार करेगा जो अवाम को शंकाओं एवं भ्रमों में फांस कर धरती में फ़साद चाहता है।

अंसार के लोगों ने यह बैअत पूरी की, फिर मदीना वापस चलने लगे तो रसूलुल्लाह ने निश्चय किया कि किसी विश्वसनीय व्यक्ति को उन के साथ मदीना भेज दें ताकि वहां इस्लाम के प्रचार का कार्य तेज़ हो जाये और मदीना वालों को क़ुरआन की शिक्षा दी जा सके, तथा उन्हें दीन (धर्म) अच्छी तरह समझाया जा सके। इस महत्त्वपूर्ण कार्य के लिये आप की दृष्टि 'मुस्अब बिन उमैर' रज़िअल्लाहु अन्हु पर पड़ी और उन्हें उन के साथ मदीना भेज दिया।

हज़रत मुस्अब को इस्लाम के प्रचार तथा अवाम को एकत्र करने में काफ़ी सफलता मिली तथा उन्हों ने उन समस्त कठिनाईयों पर क़ाबू पाने का प्रयत्न किया जो एक अजनबी व्यक्ति के सामने आती हैं। उन्हों ने

हज़रत मुस्अब (रज़ि०)
समय के प्रचलित क़ानून के
वादियों तथा भौतिकता के लो
हथियार न थे। उन के पास
की थी जिसे उन्हों ने हज़र
परायणता से प्राप्त था। तथा
सम्मान एवं पद ईश्वरीय मा
जब वह क़ुरआन का पाठ क
जाते थे। मन के द्वार खुल जा
विस्तृत हो जाते थे।

हज़रत मुस्अब हज्ज से
वापस आए ताकि आप (सल्ल

को कितनी लोकप्रियता मिली है तथा इस्लाम में बड़ी संख्या में लोग प्रवेश कर चुके हैं। क्योंकि उन्हें संतोष प्राप्त हो चुका है, अन्तःदृष्टि ने उन के चिन्तन को प्रकाशमान कर दिया है। शीघ्र इस हज्ज के अवसर पर आप की उनके प्रतिनिधियों से मुलाक़ात होगी जो आप की आंखें ठंडी कर देंगे।

बैअ़ते अ़क़्बा (द्वितीय)

जिन व्यक्तियों ने इस्लाम ग्रहण किया निस्सन्देह वे उस के निकटतम इतिहास तथा उस के मार्ग में आने वाली भयानक घाटियों से परिचित थे। वे अपने मन में बड़ा दुःख महसूस करते थे कि उन के भाई मक्का में कमज़ोर समझे जाते हैं तथा उन का नबी ईश्वर की ओर बुलाने के लिये घर से निकलता है परन्तु कुफ़्र, अवज्ञा तथा विमुखता के अतिरिक्त कोई उत्तर नहीं मिलता!

हज्ज के संकल्प से मदीना से चलते समय उन्हों ने आपस में एक दूसरे से प्रश्न किया : 'हम कब तक अल्लाह के रसूल को मक्का की पहाड़ियों में इधर उधर फिरने के लिये छोड़ रहेंगे? तथा यह भय और आतंक की स्थिति कब तक हम पर आच्छादित रहेगी। इन युवकों के दिलों में ईमान पूर्ण रूप से उतर चुका था अतः अब समय आ चुका था कि वे अपनी वीरता तथा साहस के कारनामे दिखायें तथा दावत और उस के आवाहकों के चारों ओर पड़े हुए अत्याचारों के घेरे को तोड़ दें।

हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह कहते हैं कि हम में से सत्तर व्यक्ति हज्ज के अवसर पर निकले और रसूलुल्लाह से 'अ़क़्बा' घाटी में भेंट करना निश्चित कर लिया और आप से समय ले लिया। हम लोग एक एक दो दो कर अ़क़्बा घाटी में एकत्र हो गये। हम ने अर्ज़ किया : 'हे अल्लाह के रसूल! हम किस बात की प्रतिज्ञा (बैअ़त) करें?' रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : 'तुम इस बात की प्रतिज्ञा करो कि अच्छी और बुरी प्रत्येक स्थिति में हुक्म सुनोगे तथा आज्ञापालन करोगे, सम्पन्नता हो या दुर्दशा प्रत्येक स्थिति में अपने माल ख़र्च करोगे, नेकी (भलाई) का आदेश दोगे, बुराई से रोकोगे तथा अल्लाह के मामले में सत्य बात कहोगे किसी निन्दा करने वाले की निन्दा से न डरोगे और इस बात पर कि जब मैं तुम्हारे यहां आऊं तो तुम प्रत्येक उस चीज़ से मेरी सहायता व सुरक्षा करोगे जिस से अपने प्राणों और अपने बाल बच्चों की सुरक्षा करते हो, इस के बदले तुम्हारे लिये जन्नत है।'

इस के पश्चात् हम उठ कर आप की ओर बढ़े तथा आप का हाथ हम में से सब से अल्पायु युवक 'असअद बिन ज़ुरारा' ने अपने हाथ में लिया और कहा : 'हे मदीना वालो ठहरो ! हम अपने ऊंट दौड़ाते हुए इन के पास केवल इस लिए आये है कि यह अल्लाह के रसूल हैं और आज इन्हें यहां से निकाल कर अपने साथ ले जाने का अर्थ है समूचे अरब द्वीप की शत्रुता मोल लेना ! इस के परिणामस्वरूप तुम्हारे युवक क़त्ल होंगे तथा तलवारें तुम्हारा खून चाटेंगी। अत: यदि तुम अपने अन्दर इसे सहन करने की शक्ति पाते हो तो इन का हाथ पकड़ लो तथा तुम्हारा मुश्किल अल्लाह के ज़िम्मे है। परन्तु यदि तुम्हें अपने प्राणों का भय है तो फिर अभी से छोड़ दो तथा अपनी विवशता प्रकट कर दो क्योंकि इस समय विवशता का प्रकटन ईश्वर के निकट स्वकणीय होगा।'

> अत: सब ने एक स्वर हो कर कहा : 'हे असअद ! हमारे बीच से हट जाओ खुदा की क़सम हम इस प्रतिज्ञा (बैअत) को कदापि न छोड़ेंगे तथा न इस से हाथ खींचेंगे।' और फिर एक एक कर के सब ने प्रतिज्ञा की। --अहमद, बैहक़ी, हाकिम

कअ़ब बिन मालिक (रज़ि०) उल्लेख करते हैं कि हम अक़्बा की रात अपने पड़ाव पर अपने साथियों के साथ सोये कि एक तिहाई रात्रि बीतने के बाद हम गुप्त रूप से आप (सल्ल०) से मिलने चले क्योंकि हम अपनी जाति के मुश्रिकों से मामला छिपाना चाहते थे, यहां तक कि हम अक़्बा में जमा हो गये, हम कुल ७३ व्यक्ति थे तथा हमारे साथ दो स्त्रियां, 'नुसैबा बिन्त कअ़ब' (रज़ि०) और 'अस्मा बिन्त अम्र बिन अदी' थीं।

हम रसूलल्लाह की प्रतीक्षा कर रहे थे कि आप अपने चचा अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब के साथ पधारे, उस समय तक अब्बास अपने पुराने धर्म के अनुयायी थे। वह इस लिये आये थे कि भतीजे के मदीना जाने से पहले हर विचार से बात पक्की कर लें। अत: सब से पहले अब्बास ने वार्ता शुरू की। उन्हों ने कहा :

> 'हे ख़ज़रज के लोगो ! हमारे यहां मुहम्मद का जो स्थान है वह तुम्हें मालूम है। हम ने सहधर्मियों (ग़ैरमुस्लिमों) के मुक़ाबले में इन की हिमायत तथा सुरक्षा की है अत: यह अपने नगर में सुरक्षित स्थान तथा अपनी जाति में मज़बूत हैसियत रखते हैं। परन्तु यह तुम्हारे यहां जाने के अतिरिक्त किसी बात को पसन्द नहीं करते हैं तो यदि तुम इस प्रतिज्ञा को पूरा कर सकते हो जिस के साथ तुम इन को आमन्त्रित कर रहे हो तथा विरोधियों

के मुक़ाबले में इन की सुरक्षा कर लोगे तो जो उत्तरदायित्व तुम उठाना चाहते हो उठा लो परन्तु यदि यहां से इन के निकलने और तुम्हारे साथ जा मिलने के बाद तुम किसी भी श्रेणी में यह शंका रखते हो कि तुम्हें इन का साथ छोड़ देना और इन्हें शत्रुओं के हवाले कर देना पड़ेगा तो अच्छा यही है कि अभी से इन को छोड़ दो क्योंकि यह अपने नगर तथा अपनी जाति में मज़बूत स्थान तथा हैसियत रखते हैं।'

कअ्ब (रज़ि०) कहते हैं कि हम ने कहा : 'हे अल्लाह के रसूल ! हम ने आप की बातें सुन लीं, अब आप आदेश दें और अपने लिए हम से जो प्रतिज्ञा चाहें ले लें।' अतः रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने क़ुरआन की तिलावत की, अल्लाह की ओर आमन्त्रित किया, इस्लाम की ओर प्रवृत्त किया, फिर फ़रमाया—

'मैं तुम से इस बात की प्रतिज्ञा लेता हूं कि तुम मेरी उसी प्रकार हिमायत तथा सुरक्षा करोगे जिस प्रकार अपने बाल बच्चों की करते हो।'

हज़रत कअ्ब का बयान है कि 'बरा बिन मारूर' (रज़ि०) ने आप का हाथ अपने हाथ में ले कर कहा :

'जी हां ! उस खुदा की क़सम जिस ने आप को सत्य के साथ भेजा है, हम आप की प्रत्येक उस चीज़ से रक्षा करेंगे जिस से हम स्वयं अपने प्राण तथा अपनी संतान की रक्षा करते हैं। अतः हे अल्लाह के रसूल हम से प्रतिज्ञा ले लीजिए, हम युद्ध कुशल लोग हैं हम ने इसे अपने पूर्वजों से विरासत में पाया है।'

बीच में बात काट कर 'अबुल हैसम बिन अतैहान' ने कहा : 'हे अल्लाह के रसूल ? हमारे और दूसरे लोगों—अर्थात् यहूदियों—के बीच मित्रता-पूर्ण एवं सहप्रतिज्ञात्मक सम्बन्ध हैं जिन्हें अब हम समाप्त करने वाले हैं। इस के पश्चात् ऐसा न हो कि जब अल्लाह तआला आप को प्रभुत्वशाली कर दे तो आप हमें छोड़ कर अपनी जाति में पुनः लौट आयें ?'

उल्लेखकर्ता का कहना है कि रसूलुल्लाह हंस पड़े और फ़रमाया—

'नहीं ! बरन् अब ख़ून के साथ ख़ून है तथा क़ब्र के साथ क़ब्र ! मैं तुम्हारा हूं और तुम मेरे हो, जिस से तुम्हारी लड़ाई उस से मेरी लड़ाई, और जिस से तुम्हारी सन्धि उस से मेरी सन्धि !'

जब सब कुछ तय हो गया तो रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया,

अपने में से मुझे १२ प्रधान दो जो अपने अपने क़बीले के ज़िम्मेदार हों। इस आदेश के अनुसार सब ने १२ व्यक्ति चुने, ९ खज़रज क़बीले से तथा ३ औस में से। अल्लाह के रसूल ने उनसे फ़रमाया—

'तुम अपनी जाति के इसी प्रकार उत्तरदायी हो जिस प्रकार ईसा सुत मरयम के सहयोगी उत्तरदायी थे।'

—इब्ने इस्हाक़, अहमद आदि

यह है 'बैअते' अक़्बा,' (अक़्बा की प्रतिज्ञा) तथा उस में होने वाली प्रतिज्ञाएँ और वार्ताएँ!

उस समय लोगों के ऊपर विश्वास, वफ़ादारी एवं बलिदान की रूह आच्छादित थी जो इस सभा में प्रयुक्त प्रत्येक शब्द से टपक रही थी। इस से पता चला कि आवेशपूर्ण भावनाएँ इस वार्ता तथा प्रतिज्ञाओं का प्रेरक न थीं वरन् भविष्य पर उन की दृष्टि थी तथा वे भ्रमपूर्ण लाभों की आशा से पहले सम्भावित खतरों को देख रहे थे।

लाभ तथा हित? इस बैअत में हितों का तो प्रश्न ही न था। सारा मामला केवल शुद्ध हृदयता और विशुद्ध वफ़ादारी के बल पर हुआ।

इन ७० व्यक्तियों ने इस्लाम के प्रचार का कार्य किया तथा स्वतन्त्र चिन्तन तथा निजी विश्वास के द्वारा दीन की दावत का काम अंजाम दिया।

ये लोग मदीना से ईमान की गर्मी लिए त्याग एवं बलिदान के आवाहक की दावत पर उपस्थित हुए थे यद्यपि नबी (सल्ल०) से इन का परिचय अस्थाई था जिसे लम्बी अवधि बीत गयी थी। सम्भव है कि वह पहचान भी समाप्त हो गयी हो?

परन्तु इस बात की उपेक्षा सम्भव नहीं है कि वीरता तथा आत्मविश्वास की इस शक्ति का स्रोत क़ुरआन था यद्यपि अन्तिम बैअत से पहले अंसार ने रसूल की अति थोड़ी संगति पायी थी अतः आकाश से आने वाली वह्य ने उन का मार्ग प्रकाशमान रखा तथा अभीष्ट स्थान को स्पष्ट कर दिया था।

मक्का में क़ुरआन का लगभग आधा हिस्सा उतरा, हाफ़िज़ों (कण्ठस्थ करने वालों) की ज़बानों पर जारी रहा तथा लिखने वालों ने उसे पृष्ठों में सुरक्षित कर लिया। मक्का में नाज़िल होने वाले क़ुरआन के अंशों में आख़िरत का चित्र आंखों के सामने खींच कर रख दिया गया।

मुसलमानों के हाथ जन्नत के फल तोड़ने के लिए आगे बढ़ने लगे। सत्य का मतवाला बद्दू क्षण भर में वफ़ादारी तथा प्राण न्योछावर करने की भावना से इस सीमा तक उन्मत्त हो जाता था कि वह द्वीप की तपती हुई

गर्म रेत से जन्नत की नहरों तथा मुहरबन्द शराब के वातावरण में जाने के लिए व्याकुल हो जाता था।

क़ुरआन ने पिछले मुसलमानों के वृत्तांत बयान किए कि किस प्रकार मोमिनोंने शुद्ध हृदयता से काम लिया तथा अपने समकालीन रसूलों के साथ मुक्ति पा गये। तथा किस प्रकार काफ़िरों ने सरकशी तथा बग़ावत को अपनाया तथा कर्मवकाश ने उन्हें और अधिक उन्मत्त बना दिया तथा वे घमण्ड तथा सरकशी में सीमोल्लंघन कर गये। फिर खुदा का न्यायिक निर्णय उतरा तो अत्याचारी विनष्ट हो गए और अपने पीछे खंडहर तथा विध्वस्त बस्तियां छोड़ गए।

इस के पश्चात् रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने ईमान तथा इस्लाम को बुनियाद बना कर पूर्व तथा पश्चिम के मुसलमानों को प्रेम, भाईचारगी तथा सहयोग के बन्धनों तथा भावनाओं में जोड़ दिया।

यद्यपि मदीना का मुसलमान मक्का के उत्पीड़ित मुसलमानों से परिचित नहीं था, परन्तु उस पर सहानुभूति, स्नेह एवं कृपाओं के फूल बरसाता था तथा उस का पक्ष लेता था, अत्याचारियों पर रोष प्रकट करता तथा उन से युद्ध करता था। जब से अंसार[1] मदीना लौटे थे अपने हृदय में मक्का के उन मुसलमानों के लिए प्रेम, सहानुभूति तथा अनुकम्पा की अपार भावनाएँ रखते थे जिन से उन्हों ने ईश्वर हेतु अनदेखा प्रेम किया था।

अबू मूसा अशअरी (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया—

> 'हे लोगो ! सुनो, और बुद्धि से काम लो, और जान लो कि अल्लाह के कुछ ऐसे बन्दे हैं जो न 'नबी' हैं न 'शहीद,' परन्तु अल्लाह के यहां उन के स्थान, पद तथा निकटता पर नबी और शहीद भी डाह करेंगे।'

यह सुन कर अलग बैठा हुआ एक ऐराबी उठा और अपना हाथ नबी की ओर कर के कहा: 'हे अल्लाह के रसूल ! क्या कुछ लोग ऐसे भी हैं जो नबी और शहीद तो नहीं हैं परन्तु अल्लाह के यहां उन के मान तथा स्थान पर नबी व शहीद गर्व करेंगे, आप बतायें वे कौन लोग होंगे ?' ऐराबी के इस प्रश्न पर रसूलुल्लाह का चेहरा खिल उठा और आप ने फ़रमाया—

---

१. मदीना के वे लोग जिन्हों ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को और उन के साथियों को अपने घरों में ठहराया था या उन की सहायता की थी। —अनुवादक

उस रात सत्य के सैनिकों

पूजा का उन्मूलन कर के रहेंगे

विनष्ट कर देंगे।

उसी समय कोई मुश्रिक हु

अवधा के निकट आया और उस

वालों को चिल्ला कर सचेत किया

ने तुम पर आक्रमण करने की योज

उस की आवाज बड़ी तेज

करने वालों को आभास हुआ

परन्तु उन्हों ने परिणामों की कोई

'सअद बिन उबादा ने

क़सम है उस अस्तित्व की

है, यदि आप आदेश दें तो हम भोर होते ही 'मना' के निवासियों पर अपनी तलवारों से टूट पड़ें।' रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : 'हमें इस का हुक्म नहीं दिया गया है तुम सब अपने निवास स्थानों पर जाओ।'

कअ्ब बिन मालिक रज़ि० का बयान है प्रातःकाल क़ुरैश के नायक हमारे पास आये और उन्हों ने कहा : "हे खज़रज के लोगो ! हमें सूचना मिली है कि तुम ने इस व्यक्ति (मुहम्मद सल्ल०) से भेंट की है और इसे यहां से निकाल ले जाने की योजना बनाई है और तुम इस से हमारे विरुद्ध युद्ध की बैअत कर रहे हो, खुदा की क़सम, अरब में कोई क़ौम ऐसी नहीं है जिससे जंग करना, हमें तुम्हारे बिरुद्ध युद्ध करने से अधिक अप्रिय हो।'

यह सुन कर मदीना के कुछ मुश्रिकों ने सशपथ कहा कि ऐसा नहीं हुआ न हमें इस की जानकारी है। यह बात कहने में वे सच्चे भी थे क्यों कि वास्तव में उन को इस का इल्म न था। कअ्ब रज़ि० कहते हैं कि हम एक दूसरे को आंखों ही आंखों में देखते रहे।

परन्तु लक्षणों से पता चल गया कि शंका सही थी। अतः क़ुरैश अंसार की खोज में निकले परन्तु 'सअ्द बिन उबादा 'रज़ि० के अतिरिक्त किसी को न पा सके।'

क़ुरैश के लोग 'सअ्द' रज़ि० के हाथ उन की गर्दन से बांधकर उनको मारते पीटते और सिर के बाल खींचते हुए मक्का ले गये। वहां जुबैर बिन मुतिम और हारिस बिन हरब ने उन्हें मुश्रिकों से मुक्त कराया क्यों कि सअ्द रज़ि० उन के व्यापारिक क़ाफ़िलों को मदीना में शरण दिया करते थे।

हिजरत के अग्रणी दल

इस्लामी शासन व्यवस्था का निर्माण, एक ऐसे मरुस्थली क्षेत्र में जो कुफ्र और अज्ञानता का केन्द्र हो, अति कठिन, भयानक एवं चिन्ताजनक बात थी। जिसे इस्लामी दावत ने प्राप्त कर लिया था। मुसलमान चारों ओर से 'मदीना चलो' का नारा लगाकर दौड़ पड़े। 'हिजरत' केवल कष्ट, परीक्षा, उपहास तथा खिल्ली से मुक्त होने का एक मार्ग ही न थी वरन् एक शान्तिपूर्ण नगर में एक नये समाज के निर्माण हेतु सामान्य सहयोग का एक चरण भी थी।

इस नव वतन के निर्माण में भाग लेना और उसकी स्थिरता तथा

विस्तार में यथा सामर्थ्य प्रयत्न करना प्रत्येक सामर्थ्यवान व्यक्ति के लिये वाजिब (अनिवार्य) हो गया। तथा हिजरत के पश्चात् मदीना को छोड़ना संमार्ग के कष्टों तथा खुदा और उसके रसूल की सहायता से विमुखता के समान समझा गया क्योंकि वहां निवास करना दीन में शामिल हो गया इसी लिए दीन की स्थापना इस नगर के विस्तार पर आधारित थी।

वर्तमान युग में यहूदी बड़े प्रसन्न हैं तथा वे एक दूसरे को बधाई दे रहे हैं क्योंकि शताब्दियों की बेवतनी और तिरस्कारित जीवन व्यतीत करने के पश्चात् उन्हों ने अपने एक राष्ट्रीय वतन का निर्माण कर लिया है। परन्तु इस वतन निर्माण में हम यहूदियों से न तो घृणा करते हैं और न अन्य क्षेत्रों से पलायन कर के वहां शरण लेने वालों और उस के नवजीवित करने व उसे विस्तृत करने के प्रयत्नों से घृणा करते हैं।

परन्तु कितना बड़ा अन्तर है इस में जो आज यहूदियों ने किया है—वरन् उचित शब्दों में उन के लिए किया गया है—और उसमें जो इस्लाम और उस के अनुयायियों ने उस समय किया था जब वे अपनी 'दावत' को बचाने और अपना राज्य स्थापित करने हिजरत करके 'मदीना' पहुंचे थे ?

यहूदी फ़िलस्तीन उस समय पहुंचे जब अरब छिन्न भिन्न तथा अव्यवस्थित थे, उन पर ग़फ़लत तथा उन्मत्तता आच्छादित थी वे कमज़ोर तथा विवश थे। यहूदियों ने इस्लाम तथा उस के आवाहकों से बदला लेने वाले पाश्चात्य देशों के राजनीतिक क्षेत्र में षड्यन्त्रों के जाल बिछाये। इस के पश्चात् समूचा विश्व, दौलत, हथियारों, कुमारियों और मक्कारियों के द्वारा 'फ़िलस्तीन' पर पिल पड़ा तथा करोड़ों अरब भी उन की घेराबन्दी को न तोड़ सके। उन्हों ने दिन दहाड़े अरब भू-भाग पर आक्रमण किया तथा यह आक्रमण और आधिपत्य अमरीका, रूस, अंग्रेज और फ्रांसीसियों के पारस्परिक समझौते से हुआ। अरब सम्राट हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे और इस प्रकार यहूदियों का राष्ट्रीय वतन स्थापित हो गया। जिसमें बसने को प्रोत्साहित किया जाने लगा तथा विश्व के कोने-कोने में दौलत और राजनीति की चालों से उनकी सहायता होने लगी।

जिन लोगों ने केवल अल्लाह के लिए अपना घर बार छोड़ा था उन का इस प्रकार की चालों तथा षड्यन्त्रों से क्या सम्बन्ध ? जिन के मन दुनिया तथा भौतिकता की अभिलाषाओं से पवित्र थे जो क्षणिक लाभ तथा शान्ति से निःस्पृह थे ! उन्हें तो अन्धे, गूंगे, बहरे संसार में उच्चतम मूल्यों की श्रेष्ठता का ख्याल था तथा उन्हों ने अपना भविष्य उस पवित्र संदेश के

भविष्य से जोड़ लिया था जिसे उन्हों ने स्वीकार किया था और जिसके आवाहक बन कर युद्ध तथा संघर्ष में कूद पड़े थे। उन्हें इस ऐलान में कोई संकोच न था :

> "कह दो : मेरा मार्ग तो यह है कि मैं पूरी सूझ बूझ के साथ अल्लाह की ओर बुलाता हूं और जो मेरे अनुयायी हैं वे भी और अल्लाह महिमावान है—और मैं शिर्क करने वालों में से नहीं हूं।"
>
> —यूसुफ १०८

सदाचारी व सुकर्मी समाज की जो कल्पना दर्शनशास्त्रियों ने बताई है वह उस कारनामे के सामने हीन है जो सबसे पहले मुहाजिरों ने दिखाया था। उन्हों ने सिद्ध कर दिया था कि दृढ़ ईमान मनुष्य के अन्दर सुशीलता तथा पवित्र नैतिकता उत्पन्न कर सकता है जिसके प्रकाश तथा पवित्रता से फ़रिश्ते भी ईर्ष्या करने लगे।

मुसलमान रसूलुल्लाह की आज्ञा से मक्का तथा उस के चारों ओर से निकल कर मदीना की ओर बढ़ने लगे। विश्वास उन की सवारी थी और आत्मविश्वास उनके सिरों को श्रेष्ठ किये हुए था।

यह हिजरत किसी व्यापारी का निकटतम नगर से सुदूर नगर की ओर पलायन करना न था, न ही इस का सम्बन्ध उस यात्रा से है जो एक व्यक्ति आजीविका की खोज में शुष्क तथा बन्जर क्षेत्रों से हरित एवं उपजाऊ क्षेत्रों की ओर करता है।

यह 'हिजरत' तो उन गंभीरों की थी जो अपने अपने परिवार एवं कुटुम्ब में रह रहे थे तथा वहां उन की जड़ें बड़ी गहरी थीं, वे अपने हितों तथा लाभों को ठुकराकर, अपने धन दौलत की कुरबानी देकर, अपने आप को बचाकर दूसरे स्थान को पलायन कर जाने की 'दावत' थी। वे मदीना की ओर जाने का परिणाम जानते थे। उन्हें मार्ग में न केवल लूटा जा सकता था वरन् उन की जान भी ली जा सकती थी। वे नहीं जानते थे कि भविष्य में कितने कष्ट उन्हें सहन करने पड़ें। फिर भी वे जा रहे थे। यदि मामला एक व्यक्ति का होता तो कहा जा सकता था कि युवावस्था के आवेश में बुद्धि दब गई है। परन्तु यहां तो देश के कोने-कोने में यही हलचल थी, हर व्यक्ति अपने परिवार सहित हिजरत कर रहा था। और सब प्रसन्न एवं सन्तुष्ट थे।

यह वह ईमान था जो पहाड़ों को भी तोलने लगता है और तनिक भी नहीं घबराता! तथा ईमान भी किस हस्ती पर? उस हस्ती पर जो

आकाशों और पृथ्वी की स्वामी है, पहले और बाद उसी की प्रशंसाएं तथा स्तुति हैं। वह तत्वदर्शी एवं खबर रखने वाला और जानने वाला है।

इन घाटियों को कोई मोमिन ही पार कर सकता है जो लोग कायर एवं अधीर होते हैं उन का व्यवहार उन लोगों जैसा होता है जिनके विषय में अल्लाह तआला ने फ़रमाया है :

> "और यदि हम ने इन्हें आदेश दिया होता कि अपने आप को क़त्ल करो या अपने घरों को भूल जाओ, तो इनमें से थोड़े ही ऐसा करते।"
> —अन-निसा ६६

परन्तु जिन लोगों ने मक्का में रसूलुल्लाह से अपना नाता जोड़ा, आप से हिदायत का प्रकाश लिया तथा सत्य एवं धैर्य का एक दूसरे को उपदेश दिया, जब उन से कहा गया कि हिजरत करो ताकि इस्लाम को शक्ति प्रदान कर सको और उस के भविष्य को सुरक्षित कर सको, तो वे हल्के-फुल्के ही निकल खड़े हुये।

मक्का देखते-देखते उजड़ गया और भरे-पूरे घर वीरान हो गये।

उमर बिन रबीआ के घर पर ताला लटक गया, घर का स्वामी, उस की पत्नी, उसका भाई सब हिजरत कर चुके थे। उत्बा, अब्बास और अबू जहल उधर से निकले, उत्बा ने निराश तथा दुखित होकर घर को देखा और ठण्डी श्वांस भर कर कहा :

> "प्रत्येक घर चाहे कितनी ही लम्बी अवधि तक सुरक्षित रहा हो एक न एक दिन उसे उजड़ना ही पड़ता है।"

फिर बोला : 'आज घर निर्जन पड़ा रह गया'

> इस पर अबू जहल ने अब्बास से कहा : 'यह सब तुम्हारे भतीजे का किया धरा है। उस ने हमारी एकता को अस्त व्यस्त कर दिया और हमारे बीच पृथकता उत्पन्न कर दी है।'

अबू जहल ने अवज्ञाकारी तथा सरकशों के स्वभाव को प्रत्यक्ष कर दिया कि ये लोग अपराध तो स्वयं करते हैं तथा दोषी दूसरों को ठहराते हैं, और जब उत्पीड़ित उन के विरुद्ध खड़े हो जाते हैं तो यह चीज़ अत्याचारियों और अपराधियों की दृष्टि में कठिनाइयों का स्रोत होती है।

सबसे पहले मुहाजिर

सबसे पहले मुहाजिर अबू सल्मा, उन की पत्नी तथा एक छोटा सा बच्चा थे। जब उन्होंने प्रस्थान का इरादा किया तो ससुराल के लोगों ने कहा :

'तुम स्वयं तो हमारे वश में नहीं हो, जहां जी चाहे जाओ, परन्तु हम अपनी लड़की को तुम्हारे साथ मारे मारे फिरने के लिये नहीं छोड़ सकते ?' तथा उन की पत्नी को रोक लिया।

तत्पश्चात् अबू सल्मा रज़ि० के कुटुम्बजनों ने कहा :

'जब तुम ने अपनी लड़की को छीन लिया तो हम अपने लड़के सल्मा को इस के पास क्यों रहने दें ?'

इस छीना-झपटी में बच्चे का बाज़ू उखड़ गया तथा कुटुम्बजन उसे ले गये। परिणामस्वरूप अबू सल्मा रज़ि० अकेले मदीना की ओर चल पड़े।

उम्मे-सल्मा (अबू सल्मा की पत्नी) लगभग एक वर्ष तक प्रतिदिन 'अब्तह' में जा बैठतीं और रोती रहतीं। एक व्यक्ति को उन की इस दशा पर दया आयी, उस ने उन के घर वालों से कहा : 'इस दुखियारी को क्यों नहीं जाने देते हो ? तुम ने इसे पति से भी छुड़ा दिया और बच्चे से भी !' अन्ततः उन्होंने उम्मे-सल्मा से कहा : 'यदि तू जाना चाहे तो अपने पति के पास चली जा' फिर बनी अब्दुल असद ने उन का बच्चा 'सल्मा' भी लौटा दिया। ये दोनों मां-बेटा एक ऊंट पर सवार होकर अकेले मदीना रवाना हो गये।

जब हज़रत सुहैब रूमी रज़ि० ने हिजरत का संकल्प किया तो क़ुरैश के काफ़िरों ने उन से कहा :

'तुम यहां कंगाल आये थे और हमारे नगर में रहकर धनवान हुये। अब तुम चाहते हो कि अपनी जान के साथ अपना माल भी ले जाओ, खुदा की क़सम ऐसा नहीं हो सकता।'

हज़रत सुहैब ने उत्तर दिया :

'यदि मैं सारा माल तुम्हें दे दूं तो क्या मुझे जाने दोगे ? उन्होंने कहा 'हां' ! अतः हज़रत सुहैब ने सारा माल उन्हें दे दिया और हाथ झाड़ कर ईश्वर के मार्ग में निकल पड़े। जब रसूलुल्लाह को इस की सूचना मिली तो आप सल्ल० ने फ़रमाया : 'सुहैब ने लाभ का सौदा किया।'

—इब्ने हिशाम, हाकिम

इस प्रकार लोग व्यक्तिगत रूप से और सामूहिक रूप से भी मक्का छोड़ने लगे। यहां तक कि मक्का मुसलमानों से खाली हो गया और क़ुरैश को विश्वास हो गया कि इस्लाम को शरण स्थान प्राप्त हो गया है जहां वह शक्ति शाली हो रहा है अतः हज़रत मुहम्मद सल्ल० के सन्देश से उन्हें भयानक परिणामों की शंका होने लगी और वे उस घायल नर के समान

उत्तेजित होने लगे जो अपने जीवन से ही डर गया हो। आपस में कहने लगे अभी तो मुहम्मद मक्का में हैं न जाने कब अपने साथियों से जा मिलें अतः शीघ्र ही कोई उपाय कर लो।

दारुन्नदवा की कार्यवाही

मक्का के 'तागूत' (असुरगण) दारुन्नदवा में एकत्रित हुए ताकि इस मामले पर सर्व सहमति से कोई कार्यवाही तय कर सकें।

किसी ने कहा मुहम्मद सल्ल० के हाथों में हथकड़ी डाल दी जाये तथा उस का जीवन काल कठिन कर दिया जाये, उसे कारागार की अन्धकोठरी में डाल दिया जाये जहां खाने के सिवा कुछ न मिल सके तथा जीवन भर छोड़ा न जाये।

किसी ने कहा कि उसे मक्का से निकाल दो कि फिर वापस न आये तथा क़ुरैश उस से अपना नाता तोड़ लें।

यह दोनों सुझाव कारगर न होने के कारण निरस्त कर दिये गये। अन्ततः अबू जहल के इस सुझाव पर सर्व सहमति हो गयी कि हमारे तमाम क़बीलों में से एक उच्च वंश तथा कुशल युवक चुन लें तथा ये सब मिल कर एक साथ मुहम्मद पर टूट पड़ें और उसे क़त्ल कर दें। इस प्रकार मुहम्मद का ख़ून सब क़बीलों में विभाजित हो जायेगा और सब क़बीलों से लड़ना बनू हाशिम के लिए असम्भव होगा अतः वे विवश होकर नरहत्या-अर्थ-दण्ड लेना स्वीकार कर लेंगे।

यह सुझाव उन की उस समस्या का समाधान कर देता था जिस ने उन्हें परेशान कर रखा था। तथा वे इसी को कार्यरूप देने के लिए उठ गये। क़ुरआन उन के इस अपराध की ओर इस प्रकार इशारा करता है :

> "और (वह समय याद करो) जब काफ़िर लोग तेरे बारे में चालें चल रहे थे कि तुझे क़ैद कर दें, या तुझे क़त्ल कर डालें या तुझे निकाल दें ! और वे अपनी चालें चल रहे थे और अल्लाह अपनी चाल चल रहा था, अल्लाह सब से उत्तम चाल चलने वाला है।' —अल-अन्फ़ाल ३०

यह निर्णय किसी गुप्त सभा में नहीं वरन् आम सभा में हुआ।

यह प्राकृतिक बात थी कि रसूलुल्लाह को इस की सूचना मिल जाये और आप अपनी चिन्ताजनक स्थिति का आभास कर लें।

यह बात असम्भव थी कि रसूलुल्लाह अपने साथियों को तो हिजरत के लिए आदेश दें और स्वयं पीछे रहें ?

मदीना तक पहुंचने की नीति उसी समय तय कर ली थी जब मुसल-मानों को हिजरत का परामर्श दिया था।

जुह्री ने उर्वा के द्वारा हजरत आइशा से हदीसोल्लेख किया है कि अल्लाह के रसूल ने मक्का में फ़रमाया था :

'मुझे तुम्हारा हिजरत स्थान दिखाया गया है, तथा खजूरों वाली कठोर भूमि, जो काली घाटियों के बीच है, का अवलोकन कराया गया है।' —बुखारी, हाकिम

अत: जब अल्लाह के रसूल ने इस का वर्णन किया तो मदीना की ओर हिजरत का आरम्भ हो गया। जिन लोगों ने हब्शा की ओर हिजरत की थी वे भी मदीना की ओर लौटने लगे।

रसूल भी हिजरत करते हैं !

जब रसूलुल्लाह ने हिजरत करने तथा मक्का छोड़ने का निर्णय कर लिया तो आप ने अपने मन में 'वह्य' का संकेत महसूस किया तथा अल्लाह की ओर से क़ुरआन के द्वारा हिदायत की गयी :

'और कहो : रब ! तू मुझे जहां कहीं ले जा सच्चाई के साथ ले जा और जहां कहीं से निकाल सच्चाई के साथ निकाल। और अपनी ओर से मुझे सहायक सत्ता (अधिकार) प्रदान कर।' —बनी इस्राईल ८०

हम नहीं जानते कि अल्लाह की सहायता तथा समर्थन का पात्र उस रसूल से अधिक और कौन हो सकता है ? जिस ने ईश्वरीय मार्ग में अत्य-धिक कष्ट एवं पीड़ायें सहन कीं फिर भी अल्लाह का समर्थन आपके साथ रहा। साधनों की प्राप्ति एवं उपकरणों के जुटाने में कणमात्र की भी कोताही नहीं की।

अत: अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अपनी हिजरत की कार्यविधि तय की, समस्त प्रबन्ध किये तथा किसी प्रकार की कमी या कोताही नहीं छोड़ी।

साधनों तथा सामग्री की इस दुनिया में मोमिन का व्यवहार इस प्रकार का होता है मानो सफलता का मार्ग यही है। फिर अल्लाह पर भरोसा करता है क्यों कि प्रत्येक चीज अल्लाह के द्वारा ही कार्यान्वित होती है।

अपने कर्तव्यों की अदायगी में व्यक्ति समस्त प्रयत्न जुटा दे फिर भी वह असफल हो जाये तो इस असफलता पर अल्लाह उस की निन्दा नहीं करता। ऐसा उसी समय होता है जब ईश्वरेच्छा कुछ और चाहती हो इस स्थिति में व्यक्ति विवश होता है।

प्राय: ऐसा होता है कि मनुष्य सफलता से सम्बन्धित तमाम प्रयत्न बुद्धमानुसार करता है फिर उच्चतम सहायता आती है जो उन प्रयत्नों से कई गुणा अधिक सफलताओं के फल लाती है। जैसे एक नाव समुद्र में आगे बढ़ती चली जाती है, सहसा अनुकूल हवा चलने लगती है जो उसे उस के अभिप्रेत स्थान तक अति कम समय में पहुंचा देती है।

मक्का से मदीना की ओर रसूलुल्लाह की हिजरत इसी प्रकार हुई। आप सल्ल० ने अपने साथ केवल अबू बक्र रज़ि० और अली रज़ि० को रोक लिया, शेष समस्त मुसलमानों को पहले ही मदीना चले जाने की अनुमति दे दी।

जब अबू बक्र रज़ि० ने हिजरत की अनुज्ञा चाही तो रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : 'जल्दी न करो, हो सकता है कि अल्लाह तुम्हें कोई साथी दे दे।' (इब्न् इस्हाक़) हज़रत अबू बक्र को महसूस हो गया कि अल्लाह के रसूल ही साथी होंगे।

हज़रत अबू बक्र ने दो ऊंटनियां ख़रीदीं और उन को घर में बांध लिया तथा चारे का समुचित प्रबन्ध कर दिया।

हज़रत अली को आप सल्ल० ने एक विशेष काम के लिए तैयार किया जिसे उन्हें उस संवेदनशील तथा आतंकित वातावरण में अन्जाम देना था।

> हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० प्रतिदिन प्रातः या सायंकाल हमारे घर आते थे परन्तु जिस दिन आप को हिजरत की अनुज्ञा मिली उस दिन आप ज़ुह्र के समय आये ? जो आप के आने का समय न था। हज़रत अबू बक्र ने तुरन्त कहा, 'मेरे माता-पिता आप पर क़ुरबान, अवश्य कोई बात है जो इस समय आप पधारे हैं।' फिर रसूलुल्लाह ने अन्दर आने की अनुमति ली। जब अन्दर आ गये तो अबू बक्र अपनी चारपाई से हट गये और अल्लाह के रसूल बैठ गये, उस समय रसूलुल्लाह के पास मेरे और मेरी बहन 'अस्मा' के अतिरिक्त कोई न था। आपने फ़रमाया : 'अपने पास से सब को हटा दो' अबू बक्र ने अर्ज़ किया 'हे अल्लाह के रसूल ! ये दोनों मेरी बेटियां हैं। मेरे माता पिता आप पर निछावर, क्या मामला है ?'
>
> आप ने फ़रमाया : 'मुझे अल्लाह ने हिजरत और मक्का से निकल जाने की अनुज्ञा दे दी है।'' अबू बक्र ने पूछा हे अल्लाह के रसूल ! 'क्या मैं भी आपके साथ रहूंगा !' फ़रमाया : 'हां'

हज़रत आइशा का बयान है कि ख़ुदा की क़सम, उस दिन से पहले मैं न जानती थी कि मनुष्य प्रसन्नता के कारण भी रोता है। उस दिन मैं ने देखा कि अबू बक्र (उन के पिता) अत्यधिक प्रसन्नता के कारण रो रहे हैं।

अबू बक्र ने अर्ज़ किया : 'हे अल्लाह के रसूल मेरे पास ये दोनों ऊंटनियां हैं। मैं ने इन्हें इसी दिन के लिये पाला था।'

अतः दोनों ने 'अब्दुल्लाह बिन उरैक़ित' (जो मुशिरक था) को पारिश्रमिक पर मार्गदर्शन के लिए नियुक्त किया। और अपनी सवारियां उस के हवाले कर दीं तथा आदेश दिया कि जिस स्थान पर हम बुलायें इन्हें लेकर तुरन्त वहां पहुंच जाना।

—इब्ने इस्हाक़

मामलों की व्यवस्था

यह बात विचार योग्य है कि अल्लाह के रसूल ने अपने प्रस्थान को गुप्त रखा। केवल उन्हीं लोगों को बताया गया जो आपके अति निकट थे या जिन्हें कोई कार्य अन्जाम देना था।

जंगलों और मरुस्थल में मार्गदर्शन हेतु एक अनुभवी एवं दक्ष व्यक्ति को पारिश्रमिक देकर नियुक्त किया ताकि उस की सहायता से पीछा करने वालों की दृष्टि से बच सकें। इस नियुक्ति में केवल योग्यता का विचार रखा। जब यह योग्यता किसी व्यक्ति में पायी तो चाहे वह मुश्रिक हो प्रयोग कर लिया तथा उस की योग्यता से लाभ उठाया।

नीति एवं कार्यक्रम की निश्चितता के साथ रसूलुल्लाह ने सवारी का मूल्य देने का भी आग्रह किया परन्तु अबू बक्र स्वेच्छा से देना चाहते थे क्योंकि इस हिजरत में दान करना बड़ी इबादत थी जिसकी इच्छा प्रत्येक को रखनी चाहिये थी।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने अबू बक्र रज़ि० के साथ निकलने के विवरण तय किये और शरण लेने के लिए ग़ार का चयन किया। तथा पीछा करने वालों को छलग्रस्त करने के लिए 'यमन' के मार्ग में दक्षिणी दिशा का चयन किया और उन व्यक्तियों को निश्चित किया जिन की शरण के इन दिनों में आप से मिलना था तथा उन का उत्तरदायित्व भी बता दिया।

फिर अल्लाह के रसूल अपने घर आये तो देखा कि क़ुरैश के जवान घेराबन्दी किये हुए हैं और आप के क़त्ल का पूर्ण संकल्प किये नंगी तलवारें सूंते खड़े हैं।

रसूलुल्लाह ने अपने बिस्तर पर इस भयानक रात में अली बिन अबी तालिब को अपनी हरी चादर उढ़ा कर सुला दिया और अंधेरी रात में बच बचा कर निकल कर अबू बक्र के घर पहुंचे फिर दोनों ने रात ही में 'ग़ार-सौर' में जाकर शरण ली—वह ग़ार (गुफा) जिसे अल्लाह ने अपने अन्तिम सन्देष्टा का ठिकाना बनाया था। एक सम्पूर्ण सभ्यता का सूर्य जहां से उदय होने वाला था—तथा उसे प्रकृति ने मौनता तथा एकान्त की सुरक्षा में छोड़ दिया। यही वह ग़ार था जिस में अन्तिम सन्देष्टा अपने वतन से निकल कर शरण लेने को विवश हुआ।

ग़ारे-सौर[1] में क्या हुआ?

समस्त मामले ठीक उसी प्रकार पूरे हुए जिस प्रकार इन दोनों महानु-भावों ने निश्चित कर दिये थे। हज़रत अबू बक्र ने अपने पुत्र अब्दुल्लाह को हिदायत कर दी थी कि वे पूरे दिन मक्का में रहें और दिन भर की सूचनायें रात को उन्हें दे दिया करें। अपने बन्धन मुक्त ग़ुलाम 'आमिर बिन फ़ुहैरा' को आदेश दिया कि वह दिन भर यथापूर्व बकरियां चराते रहें और रात गये हमारे पास आकर दूध दे जाया करें। अतः अब्दुल्लाह बिन अबी बक्र मक्का वालों की बातों की खोज लेते रहते तथा रात को समस्त सूचनायें दे देते तथा आमिर मक्का वालों के साथ बकरियां चराते और रात को अबू बक्र के पास बकरियां ले जाकर दूध निकाल कर देते, अतः ये लोग बकरी ज़िब्ह करके गोश्त भी खा लिया करते थे। जब अब्दुल्ला मक्का की ओर वापस आते तो आमिर उन के पीछे बकरियां लाते जिस के कारण उन के पग चिन्ह समाप्त हो जाते थे।

ये सब उपाय सावधानी के लिए थे जिन की प्रत्येक व्यक्ति को प्रति-दिन के जीवन में आवश्यकता पड़ती है। मक्का के मुश्रिकों ने रसूलुल्लाह की खोज में समस्त मार्गों पर आदमी दौड़ा दिये। मक्का तथा उस के आस पास का सारा क्षेत्र छान मारा यहां तक कि वे 'सौर' के ग़ार पर भी आ गये। रसूलुल्लाह और आप के साथी पीछा कर ने वालों की आहट पाकर खामोश हो गये। आवाज़ बिलकुल समीप से आ रही थी। अबू बक्र रजि० को चिन्ता हुई तथा रसूलुल्लाह से चुपके से कहा: 'हे अल्लाह के रसूल! यदि इन में से किसी ने भी अपने पांव के नीचे देखा तो हमें देख लेगा।'

---

१. मक्का से २-३ मील दक्षिण की ओर एक सौर नामक पहाड़ है उसी में गुफ़ा थी जिस को ग़ारे सौर कहते हैं। (अनुवादक)

रसूलुल्लाह् ने बड़े सन्तोष के साथ उत्तर दिया : "हे अबू बक्र ! उन दो व्यक्तियों के विषय में तुम्हारा क्या विचार है ? जिन में तीसरा अल्लाह है !" (बुखारी)

लगता है कि पीछा करने वाले इस गुफ़ा के विषय में निराश हो गये तथा वे उल्टे पांव वापस हो गये। 'मुस्नद अहमद' की रिवायत है कि : "मुशिरकों ने आपका पीछा 'सौर' पर्वत तक किया, जब वहां पहुंचे तो मामला भ्रमपूर्ण हो गया, वे पहाड़ पर चढ़े, ग़ार के पास से निकले गुफ़ा द्वार पर मकड़ी का जाला तना देखा तो उन्हों ने कहा : 'यदि इस में कोई प्रवेश करता तो द्वार पर मकड़ी का जाला कैसे तना रहता ?' अतः आप वहां तीन दिन तक ठहरे रहे।"

मुस्नद अहमद की रिवायत शुद्ध है यद्यपि हदीस की प्रमुख किताबों में इस का ज़िक्र नहीं है। इसी प्रकार उन कबूतरों का भी उल्लेख नहीं है जिन्हों ने ग़ार के द्वार पर अण्डे दिये थे, इत्यादि।

हिजरत के विषय में अल्लाह ने फ़रमाया :

> "यदि तुम उस की (रसूल की) सहायता न भी करो तो (क्या हो जायगा) अल्लाह उस की सहायता उस समय कर चुका है जबकि कुफ्र करने वालों ने उसे (मक्का से) निकाल दिया था, वह दो में का दूसरा था, जब वे दोनों गुफ़ा में थे, जब वह अपने साथी से कह रहा था, "ग़म न करो अल्लाह हमारे साथ है" तो अल्लाह ने उस पर अपनी ओर से शान्ति उतारी और उसकी सहायता ऐसी सेनाओं से की जिन्हें तुमने नहीं देखा, और कुफ्र करने वालों का बोल नीचा कर दिया और अल्लाह ही का बोल ऊंचा रहने वाला है। और अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।"
>
> —अत-तौबा ४०

असत्य को अपमानित तथा सत्य को प्रभुत्वशाली करने वाली सेनाओं का कोई निश्चित रूप नहीं है वे हथियार भी हो सकते हैं तथा मोजज़े और करामतें (दैवी चमत्कार) भी। उन के भौतिक एवं वास्तविक रूप से अनुमानित होना आवश्यक नहीं। यदि ये सेनाएं भौतिक होंगी तो उन का आतंकित होना उन के रूप एवं अधिकता पर आधारित नहीं होगा, अपितु, अधिकतर आंख से दिखाई न देने वाला कीटाणु असंख्य सेना को नष्ट कर सकता है।

> "और अल्लाह की सेनाओं को उस के अतिरिक्त कोई नहीं जानता।"
>
> —अल-मुद्दस्सिर ३१

एक सौ या दो सौ ऊंट मरुस्थल

पुरस्कार के लोभ में चारों ओर फैल

रसूलुल्लाह को आशा थी कि मु

इस यात्रा में आप ने अति सावधान

उन्हें ऐसे मार्गों पर लगा दिया जिन

सवारियों की नकेल छोड़ दी गयी

जब यह यात्री दल बनी 'मुदलि

था तो एक व्यक्ति ने उसे देख लिय

मैं ने अभी-अभी समुद्र तट पर कुछ

मुहम्मद और उसके साथी हैं। '

पुरस्कार के लालच में उस ने बा

लोगों को देखा होगा जो अभी यहां से गए हैं'। फिर थोड़ी देर वहां ठहर कर घर आया और अपने नौकर को घोड़ा तैयार करने और वादी (घाटी) के पीछे आकर मिलने को कहा।

'सुराक़ा' का बयान है कि मैं ने अपना भाला लिया और घर के पीछे से निकला। मैं उसे घसीटता हुआ अपने घोड़े के पास पहुंचा, उस पर सवार हुआ और चुपके से उड़ गया यहां तक कि मैं उस यात्री दल के निकट पहुंच गया। सहसा मेरे घोड़े ने ठोकर खायी और मैं गिर पड़ा।

सुराक़ा ने पुनः घोड़े पर सवारी की और उसे एड़ लगायी। वह दौड़ा यहां तक कि रसूलुल्लाह और उन के साथियों के अति निकट हो गया। अबू बक्र रजि० इस दुःसाहसी शत्रु की आहट पाकर बार-बार मुड़ कर देख लेते थे। जब वह बिल्कुल निकट आ गया तो आप ने पहचान लिया। अल्लाह के रसूल पूर्ण रूप से संतुष्ट अवस्था में चल रहे थे। अबू बक्र रजि० ने कहा : 'हे अल्लाह के रसूल ! यह सुराक़ा बिन मालिक हम तक पहुंच गया है।' अभी पूरी बात भी न कह सके थे कि उस का घोड़ा दोबारा पेट तक जमीन में धंस गया तब वह रुका और शरण मांगने लगा।

सुराक़ा को विश्वास हो गया कि सच्चे रसूल हैं अतः उस ने क्षमा-याचना की तथा दुआ के लिए कहा, एवं खाद्य सामग्री एवं यात्रा के अन्य सामान के लिए कहा तो दोनों ने कहा 'हमें इस की आवश्यकता नहीं है, परन्तु हमारी सूचना किसी को न देना' (बुखारी)। उस ने कहा आप सुरक्षित हैं। फिर लौट आया। इसके पश्चात् जो भी हुज़ूर का पीछा करता हुआ आता उस से सुराक़ा कहता कि वापस जाओ, मैं ने इत्मीनान कर लिया है कि वे इधर नहीं हैं।

दिन समाप्त हो गया अब रात उन की सुरक्षा के लिए आच्छादित हो गयी।

दुआ

मरुस्थल तथा जंगलों की यात्रा बड़े-बड़े वीरों का साहस तोड़ देती है। परन्तु उस क़ाफ़िले की विवशता की क्या दशा हुई होगी जिस के खून के लोग प्यासे थे तथा चहुंदिशी आतंक घेरे हुए था।

इन कष्टों एवं दुखद परिस्थितियों से वही व्यक्ति परिचित हो सकता है जिस ने मरुस्थलीय क्षेत्र में झुलसा देने वाली गर्म हवाओं के झोंके सहे हों।

यात्रियों का तरीक़ा है कि वे मरुस्थल तथा रेगिस्तान में आराम हेतु

किसी छाया में शरण ले लेते हैं। और जब सूर्य अस्त होने को होता है तो सवारियां चल पड़ती हैं। पाथेय एवं पानी की कमी के बावजूद अरब इन कष्टों को सहन करने के अभ्यस्त होते हैं।

गत पृष्ठों में आप पढ़ चुके हैं कि अल्लाह के रसूल ने अपने बचपन में मदीना की यात्रा की थी। अपने पिता की समाधि के दर्शन करने अपनी माता के साथ गये थे परन्तु अकेले लौटे थे।

आज जब कि ५३ वर्ष की आयु हो चुकी है फिर इसी मार्ग की यात्रा कर रहे हैं परन्तु यह यात्रा माता-पिता की समाधियों के दर्शन हेतु न थी जो मदीना में थीं, अपितु उस सन्देश की सुरक्षा हेतु थी जो मक्का में प्रसारित एवं प्रचारित होने के पश्चात् अब मदीना में अपनी जड़ें गहरी कर रहा था।

आप सल्ल० ने लोगों को बता दिया था कि अल्लाह तआला आप सल्ल० का हामी, समर्थक तथा सहायक एवं इस्लाम को प्रभुत्वशाली करने वाला है। परन्तु प्रारम्भ में आप को कटु एवं कठोर व कष्टदायक परिस्थितियों का सामना करना पड़ा, इन्कार तथा विरोध का अभियान चलाया गया तथा आप को हिजरत के लिए विवश होना पड़ा। अब आप मक्का से जा रहे थे और मक्का वालों ने आप के क़ातिलों के लिए प्रलोभित एवं प्रेरित करने वाले पुरस्कारों का ऐलान कर दिया था।

अबू नईम की रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० जब मक्का से हिजरत के संकल्प से चले तो यह दुआ की :

> 'प्रशंसा है उस अल्लाह की जिस ने मुझे पैदा किया जब मैं कुछ भी नहीं था। हे अल्लाह! दुनिया की भयंकरता, ज़माने के कष्टों तथा दिन रात के संतापों के मुक़ाबले में मेरी सहायता कर। हे अल्लाह! मेरी यात्रा में तू मेरा साथी बन जा। मेरे पीछे मेरे परिवारजनों की रक्षा कर तथा जो कुछ तूने मुझे दिया है उस में बरकत दे और तेरे ही लिये मेरा यह अपमान है मेरा व्यवहार मेरे सामने है। तू मुझे सत्य पर चला, हे मेरे रब! मुझे अपना प्रिय बन्दा बना ले, मुझे लोगों के हवाले न कर। हे दुर्बलों के रब! तू मेरा पालनहार है, मैं तेरे तेज के द्वारा तेरी शरण चाहता हूं जिस से धरती एवं आकाश प्रकाशमान हैं और जिस से अन्धकार मिटते हैं।' —इब्ने कसीर

विचारणीय है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मक्का छोड़ने की सूचना समस्त क्षेत्रों में फैल गयी तथा मदीना तक पूरे रास्ते में

सबको जानकारी हो गयी। परन्तु जिन मार्गों से आप गुज़रे उन के विषय में मक्का वालों को उस समय जानकारी हुई जब आप वहां से आगे निकल गये।

लोग सूरमाओं (वीरों) के क़िस्सों में बड़ा आनन्द लेते हैं तथा विभिन्न प्रकार की चेतावनियां उन्हें प्रेरित करती रहती हैं। एक बात को लोग मौखिक रूप से दूसरों से कहते रहते हैं जिसका परिणाम होता है कि उस पर गल्प की चादर चढ़ जाती है। हज़रत मुहम्मद के प्रेम से समस्त मुसल-मान उन्मत्त थे। इन भावनाओं ने कविताओं का भी रूप धारण कर लिया। यद्यपि उन के रचयिता का कुछ पता नहीं है।

इस जिचित्रवाद में से वह रिवायत भी है जो अस्मा बिन्त अबी बक्र रज़ि० से उद्धृत है। वह कहती हैं :

> 'हमें सूचना न थी कि रसूलुल्लाह किधर गये हैं तथा इसी बेख़बरी में तीन दिन बीत गये। इसी बीच एक व्यक्ति मक्का में ये कविताएं गाता हुआ निकला : 'अल्लाह उन दोनों साथियों को सुप्रतिफल दे जिन्हों ने कहा कि उम्मे मअबद के खेमों की ओर चलो। वे दोनों मार्ग दर्शन लेकर वहां उतर गये और चल पड़े। जिस व्यक्ति ने मुहम्मद की सहचरता ग्रहण की वह सफल हो गया।'
>
> 'बनी कअब' को मुबारक हो कि उनके युवक मोमिनों की सुरक्षा के लिए घात में बैठे।'

हज़रत अस्मा रज़ि० कहती हैं कि जब हम ने ये कविताएं सुनीं तो हमें विश्वास हो गया कि आप सल्ल० मदीना की ओर प्रस्थान कर गए।

इन कविताओं का रचयिता कौन है? रिवायतों में है कि वह कोई जिन्न था तथा अरबों का यह विश्वास होता था कि प्रत्येक कवि के पास जिन्न रहता है।

प्रधानता योग्य बात यह है कि उक्त लिखित कविताएं किसी मोमिन व्यक्ति की रचना होंगी जिस ने मक्का में अपना ईमान छिपाये रखा होगा तथा मुहाजिरों के विषय में जानकारी रखी होगी अत: जब मुहाजिर सुरक्षित निकल गए तो उस ने अपनी प्रसन्नता का प्रकटन किया होगा तथा उस की गुप्त भावनाएं इस गीत के रूप में उबल पड़ी होंगी।

इस कविता में उस घटना की ओर संकेत है, जब रसूलुल्लाह इस यात्रा के बीच 'बनी ख़ुज़ाआ' के क्षेत्र तथा उन की बस्ती से गुज़रे तो आप

ने 'उम्म्-मअबद' के खेमों में आराम किया तथा उन की बकरी का दूध निकाला था।

मदीना में प्रवेश

इस महान मुहाजिर तथा उस के साथी की सूचनाएं मदीना पहुंचने लगीं। मदीना के लोग प्रतिदिन प्रातः मक्का के मार्ग पर बैठ जाते तथा उस समय तक बैठे रहते जब तक कि धूप की तपिश असहनीय न हो जाती, फिर अपने घरों को लौट जाते थे। तथा अगले दिन फिर बेचैनी, व्याकुलता तथा प्रतीक्षा के दृश्य देखने में आते।

नबी होने के तेरहवें वर्ष १२ 'रबी उल अव्वल' को अन्सार नियमानुसार रसूलुल्लाह की प्रतीक्षा में निकले क्योंकि वे आप सल्ल० के इन्तिज़ार में आंखें बिछाये दर्शन के लिए व्याकुल थे। जब धूप की तेज़ी के कारण लौटने को हुए तो एक यहूदी ने, जो अपनी गढ़ी की छत पर किसी काम से चढ़ा था, रसूलुल्लाह की झलक देख ली और वहीं से उस ने उच्च स्वर में पुकारा : 'हे नबी क़ैला ! तुम्हारे सरदार आ पहुंचे, वह देखो अपने साहब को जिन के लिए तुम लोग परेशान हो।'

यह सुनते ही अन्सार हथियारों से सुसज्जित हो कर रसूलुल्लाह के स्वागत को दौड़ पड़े तथा मदीना की गलियों में तक्बीर (अल्लाहु अक्बर) के नारे गूंजने लगे। आज मदीना में ईद तथा शुभ समारोह का दृश्य हो गया था।

> 'हज़रत बरा की रिवायत है कि हमारे पास रसूलुल्लाह के साथियों में सर्वप्रथम मुसअब बिन उमैर रज़ि० तथा इब्नु उम्म मक्तूम पहुंचे। ये लोग मुसलमानों को क़ुरआन पढ़ाते थे। फिर अम्मार, बिलाल और सअद रज़ियल्लाहु अन्हुम आये फिर उमर बिन खत्ताब रज़ि० २० सवारियों के साथ पहुंचे इस के बाद अल्लाह के रसूल पधारे। मैं ने देखा कि अल्लाह के रसूल को पाकर लोग जितने प्रसन्न थे इतने पहले कभी नहीं थे। यहां तक कि मैं ने स्त्रियों, बच्चों और दासियों को प्रसन्नतापूर्वक कहते सुना कि 'यह अल्लाह के रसूल हैं हमारे बीच आ चुके हैं।'
>
> —बुख़ारी

जीवन का यह विरोध तथा मानव स्वभाव की यह प्रतिकूलता देखिये ! मक्का जिस व्यक्ति को क़त्ल करने की योजना बना रहा था जिसके कारण उसे वहां से विवश हो कर हिजरत करनी पड़ी थी वही आज मदीना की

आंखों का तारा था। लोग उस का हार्दिक स्वागत कर रहे थे तथा अंसार उस के समर्थन, सुरक्षा एवं सहायता में एक दूसरे से आगे बढ़ जाने का प्रयत्न कर रहे थे।

आश्चर्यजनक बात यह है कि मदीना की अधिकांश आबादी ने रसूलुल्लाह सल्ल० को देखा तक न था अत: जब यह क़ाफ़िला मदीना पहुंचा तो पहले चरण में वे रसूलुल्लाह तथा अबू बक्र रज़ि० में अन्तर न कर सके। स्त्रियां छतों पर चढ़ी थीं और लोगों से पूछ रही थीं कि रसूलुल्लाह कौन से हैं।

रसूलुल्लाह सल्ल० बनी अम्र बिन औफ़ की बस्ती में उतरे और वहां १४ दिन निवास किया। इस बीच आप ने 'मस्जिद क़ुबा' की नींव रखी। यह मस्जिद इस्लाम में सर्वप्रथम मस्जिद थी जिस का निर्माण हुआ था। इस के विषय में क़ुरआन की यह आयत उतरी—

> 'हां वह मस्जिद जिस की बुनियाद पहले दिन से ईश भय पर रखी गयी है वही इस का ज़्यादा हक़ रखती है कि तुम उस में खड़े हो, उस में ऐसे पुरुष हैं जो पाक रहना पसन्द करते हैं। और अल्लाह पाक रहने वालों ही को पसन्द करता है।'
>
> —अत-तौबा १०८

मदीना में निवास

एक विचारधारा तथा अक़ीदे के मार्ग में उस का अनुयायी स्वेच्छित यात्रा करता है तथा जहां उस का अक़ीदा सुरक्षित होता है उसी स्थान पर उसे शान्ति एवं सन्तोष प्राप्त होता है।

लोग अपने साहसों एवं संकल्पों की पूर्ति को सौभाग्य समझते हैं तथा मन में कलोल करने वाली भावनाओं और विचारों के प्रकाश में दुनिया और उस की साज-सज्जा पर दृष्टि डालते हैं।

पद एवं सम्मान तथा नेतागिरी एवं नायकता का इच्छुक अपने लक्ष्य के पास या दूर होने के विचार से प्रसन्न या क्रुद्ध होकर गतिशील होता है या गतिहीन होकर बैठ रहता है।

मुतनब्बी कवि को देखिये उस ने कितनी प्रशंसनीय कविताएं रचीं, व्यंग्यात्मक काव्य लिखे! किस प्रकार सीरिया से मिस्र और मिस्र से अन्य देशों में भ्रमण करता रहा? वह स्वयं अपने विषय में लोगों के उद्‌गार का किस प्रकार उल्लेख करता है—

भर नींद नहीं आती। उन का आराम समाप्त हो जाता है तथा वे उस की तक्मील की धुन में लग जाते हैं जब तक उन्हें नैतिकता तथा व्यवहार की प्राप्ति नहीं हो जाती।

किसी भी विचारधारा तथा चिन्तन के अनुयायी उन भारी अमानतों के भारग्रस्त होते हैं जो उस के कारण उन के कन्धों पर होता है। उन की लाभ-हानि, मित्रता एवं शत्रुता, ठहरना या यात्रा करना सब कुछ उन्हीं मूल्यों तथा अर्थों के अनुसार होता है जिस के वे आवाहक होते हैं तथा जिन की श्रेष्ठता हेतु वे जीवित रहते हैं।

अन्तिम सन्देष्टा हजरत मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने जीवन में साहसी एवं शूरवीरों के लिए अद्भुत आदर्श प्रस्तुत किया है।

जब से आप ने उन स्थूल चादरों को टुकड़े-टुकड़े कर देने का उत्तरदायित्व स्वीकार किया था जो शिर्क (अनेकेश्वरवाद) एवं खुराफ़ात की अंधेरी रात के रूप में मानवता पर आच्छादित थीं—उस समय से आप को इस संकल्प से फेरने में न तो कोई सफल हो सका - न इस मार्ग का कोई अवरोध—प्रलोभन, धमकी तथा हिंसा व दमन का कोई हथियार आप का मार्ग खोटा कर सका। आप के सामने स्थान एवं काल की समस्त रुकावटें निराधार व काल्पनिक सिद्ध हुईं। सत्य से परिचित होने के बाद अजनबी व्यक्ति निकटतम नातेदार बन गये। स्वदेश ने हिदायत स्वीकार करने से इन्कार किया तो उससे अप्रसन्नता तथा विरक्ति की घोषणा कर दी। तथा महाप्रलय तक के समस्त मुसलमान आप के भाई ठहरे चाहे उन्होंने आप को देखा न हो!

मक्का में आप ५३ वर्ष तक रहे और स्वदेश से प्रेम भी हो गया परन्तु अब वहां से निकल कर एक नये वतन में प्रवेश कर रहे थे जहां आप को अपने पौधे पर फल आते दिखाई दे रहे थे। जो लोग हार्दिक रूप से सौभाग्यशाली होते हैं और उन की अन्तरात्मा उन के सिद्धान्तों से सम्बद्ध होती है वे स्वयं किसी वातावरण को अच्छा नहीं समझते परन्तु यदि वह उन के चिन्तन एवं विचारों की प्रतिध्वनि हो जिन्हें वे सही समझते हैं।

अतः आश्चर्य नहीं कि हजरत मुहम्मद सल्ल० मदीना में सहर्ष एवं प्रसन्नतापूर्वक दाखिल हुए हों तथा अल्लाह ने इस हिजरत के पीछे खैर और सफलता की जो शुभ सूचनाएं गुप्त रखी थीं उन से आप को सूचित कर दिया हो?

हिजरत के समय में मदीन
के भीतर हज़रत अबू बक्र अ
हिजरत स्थान सहाबा को अनु
के अतिरिक्त पुराने वतन की
लगीं।

रसूलुल्लाह सल्ल० सहाव
इस्लाम के लिए त्याग, बलिद
फ़रमाया—

'मेरी उम्मत का जो व
सहन करेगा, मैं क़िया
बनूंगा तथा जो कोई
क़ियामत के दिन उस

वास्तव में यह नवीन हिजरत पर दिलों को सन्तुष्ट करने का एक उपाय था ताकि मदीना का वातावरण उन के अनुकूल हो जाये तथा विक्षिप्तता एवं अजनबीपन शनैः-शनैः समाप्त हो जाये।

हज़रत आइशा रज़ि० से हदीसोल्लेख है कि जब अल्लाह के रसूल मदीना आये तो अबू बक्र व बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हुमा रोगग्रस्त हो गये। मैं उन के पास गयी और पूछा : 'हे पिता जी ! तबीयत कैसी है ? हे बिलाल ! क्या हाल है ?' जब (मेरे पिता) अबू बक्र को बुख़ार आता तो निम्न कविता पढ़ने लगते—

— प्रत्येक व्यक्ति अपने परिवार जनों में रहता है यद्यपि मृत्यु उस के जूते के फ़ीते से भी अधिक उस के निकट है।

तथा बिलाल रज़ि० जब सचेत होते तो यह कविता पढ़ते : काश ! मैं जानता

— कि कोई रात घाटी में गुज़ार सकूंगा तथा मेरे चारों ओर इज़्ख़र और जलील होंगे।

— काश ! किसी दिन मजन्ना के घाट पर पहुंच सकता तथा क्या किसी दिन मुझे शामा तथा तुफ़ैल[1] भी दिखाई देंगी। हज़रत आइशा का बयान है कि मैं ने इस की सूचना रसूलुल्लाह को दी तो आप ने दुआ की : 'हे अल्लाह ! जिस प्रकार तू ने मक्का को प्रिय बना दिया था उस से अधिक मदीना को प्रिय बना दे। इस की जलवायु को हमारे लिए अनुकूल कर दे तथा इस में सम्पन्नता दे और इस के रोगों को अन्य स्थानों की ओर ले जा !'
—बुख़ारी

हज़रत अनस रज़ि० से हदीसोल्लेख है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया—

'हे अल्लाह ! जिस प्रकार तू ने मक्का में सम्पन्नता प्रदान की थी उस को दुगनी सम्पन्नता मदीना में प्रदान कर दे।'
—बुख़ारी, मुस्लिम

हज़रत अबू हुरैरा से हदीसोल्लेख है कि आप के आने के पश्चात फलों की पहली फ़सल आप के सामने लायी गयी तो आप ने दुआ की—

'हे अल्लाह ! हमारे नगर में, हमारे फलों में, हमारी जलवायु में अधिकता एवं सम्पन्नता दे। हे ईश्वर ! इब्राहीम तेरे नबी, तेरे बन्दे और मित्र थे और मैं तेरा बन्दा और तेरा नबी (सन्देष्टा) हूं, उन्होंने तुझ से मक्का के लिए दुआ की थी और

---

१. मक्का की पहाड़ियों के नाम हैं।

'मैं तुम से. मदीना के लिए उसी भांति दुआ करता हूं जिस भांति उन्होंने मक्का के लिए दुआ की थी।' फिर फलों को छोटे बच्चों में जो वहां थे, बांट दिया। —मुस्लिम

इस प्रेरणा तथा उत्साह के द्वारा मुसलमानों में वास्तविक रूह उत्पन्न हुई। तथा लोग भूत और उस की कटु स्मृतियां भूलकर निर्माण कार्य में लग गये। विशुद्ध हिजरत किसी लाभ की आकांक्षा नहीं करती, न बलिदान से मुंह मोड़ती है तथा न किसी चीज के नष्ट हो जाने पर शोक करती है; वरन् उस का स्थान कवि की इस कविता के अनुसार होता है—

'जब मेरा मन किसी चीज से ऊब जाता है तो क़ियामत तक वह उस की ओर आकर्षित नहीं होता।'

—०—

अध्याय—४

नवीन समाज का निर्माण

- निर्माण की ओर
- मस्जिदे नबवी का निर्माण
- बन्धुत्व
- ग़ैर मुस्लिमों से आप का व्यवहार
- प्रतिष्ठित साथी
- इबादत का अर्थ
- नेतृत्व—जिस पर प्राण निछावर हो रहे थे।

उम्मते मुस्लिमः का उद्देश्य आम इन्सानों की भांति केवल जीवन व्यतीत करना नहीं है न स्वेच्छा से जीवन यात्रा को योजनाबद्ध कर के आजीविका व धन प्राप्त कर के निश्चिन्त तथा आराम के साथ जीवन बिताना है।

मुसलमान एक ऐसे अक़ीदे के आवाहक हैं जो ख़ुदा से उन के सम्बन्धों की स्थिति को निश्चित करता है। जीवन के विषय में उन का दृष्टिकोण स्पष्ट करता है, घरेलू मामलों को भी सुव्यवस्थित करता है और बाह्य में भी निश्चित उद्देश्यों से उन का नाता जुड़ा रहता है।

एक व्यक्ति कहता है कि मेरा जीवन लक्ष्य केवल जीना है—तथा दूसरा कहता है कि यदि मैं श्रेष्ठता एवं अधिकारों की रक्षा न कर सकूं, ईश्वरीय प्रसन्नता से वंचित हो कर उस के प्रकोप का निशाना बनूं तो मेरा कोई क़दम आगे न बढ़े, न कोई आंख मुझे देखे! —इन दोनों व्यक्तियों में बड़ा अन्तर है।

मदीना की ओर हिजरत करने वाले मुसलमानों ने धन-दौलत तथा पद एवं स्थान प्राप्ति के लिए अपना वतन न छोड़ा था।

इसी प्रकार जिन अन्सार ने उनका स्वागत किया था और अपनी जाति की शत्रुता मोल ले कर अपना सिर ओखली में दिया था, उन्होंने यह क़ुर्बानी एवं त्याग इस लिए नहीं किया था कि वे मनमाना जीवन व्यतीत करेंगे।

वे सब 'वह्य' के प्रकाश से लाभान्वित होना चाहते थे, उन का उद्देश्य अल्लाह की प्रसन्नता एवं सन्तुष्टि प्राप्त करना था तथा उस उच्च तत्व-दर्शिता को प्राप्त करना था जिस के लिए इन्सानों को पैदा किया गया है।

क्या मनुष्य अपने रब का इन्कारी हो कर मनोकामना का अनुसरण कर के दुष्ट प्राणी अथवा तिरस्कृत शैतान बन जाये!

यही कारण है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अपने प्रथम ठिकाने मदीना को ऐसे स्तम्भों पर स्थिर करना प्रारम्भ किया जो रिसालत की स्थिरता के लिए अनिवार्य थे। उन की व्याख्या आगे आयेगी—

१. उम्मते मुस्लिमः का ईश्वर से सम्बन्ध,

२. उम्मते मुस्लिमः का एक-दूसरे से सम्बन्ध,

३. उम्मते मुस्लिमः का ग़ैरों से सम्बन्ध।

मस्जिदे नबवी का निर्माण

रसूलुल्लाह सल्ल० ने प्रथम चरण में मस्जिद के निर्माण का निर्णय किया ताकि इस्लाम के धार्मिक चिन्हों का प्रकटन हो सके जिन का लम्बे समय से विरोध किया गया है तथा उस में नमाज़ें पढ़ी जा सकें जो बन्दे को अपने 'रब' से जोड़ देती हैं और उस के हृदय को भौतिक प्रेम तथा वस्वसों (भ्रमों) से पवित्र कर देती हैं।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने मस्जिद का निर्माण उस स्थान पर किया जहां आप की ऊंटनी बैठ गयी थी। यह दो अनाथ बच्चों की ज़मीन थी जो अस्अद बिन ज़ुरारः की अभिभावकता में थे। दोनों बच्चे प्रतिदान हेतु इस ज़मीन से अधिकारमुक्त होना चाहते थे परन्तु आप सल्ल० ने मूल्य की अदायगी के पश्चात् लेना स्वीकार किया। इस से पूर्व इस भूमि का कुछ भाग खंडहर तथा वीरान था कुछ में खजूर के पेड़ थे और कुछ भाग में पुरानी क़ब्रें थीं जो मुश्रिकों की थीं।

रसूलुल्लाह ने खजूरों के काटने का आदेश दिया। क़ब्रें भी विध्वस्त कर दी गयीं[1]। नीची-ऊंची ज़मीन को समतल कर दिया गया। खजूर के तनों से मस्जिद के स्तम्भ बनाये गये, कच्ची ईंटों तथा गारे से दीवारें बनाई गयीं, खजूर के पत्तों की छत डाली गयी तथा खाली ज़मीन का फ़र्श रहने दिया गया। अन्त में जब वर्षा के कारण कीचड़ होने लगी तो कच्चे फ़र्श पर कंकड़ डाल दिये गये और जब खजूर की छत के नीचे गर्मी की प्रचण्डता महसूस की गयी तो ऊपर गारे की लिपाई करा दी गयी। स्वयं रसूलुल्लाह और आप के सहाबियों ने ईंटें और गारा ढोने का काम किया। सहाबा किराम कविताएं पढ़ते जाते थे ताकि थकन और श्रम के कष्ट को दूर कर सकें! कविता का अर्थ यह है—

'हे ईश्वर! आख़िरत के अतिरिक्त कोई जीवन नहीं, तू अन्सार
और मुहाजिरों की दशा पर रहम कर!'

रसूलुल्लाह को काम करते तथा परिश्रम में व्यस्त देख कर सहाबा की कार्यशक्ति, कार्यकुशलता एवं साहस बढ़ गया। अतः इसी अवसर पर किसी ने यह कविता पढ़ी—

---

१. ये अति प्राचीन क़ब्रें थीं जिन के कोई वारिस भी नहीं रहे थे और अब वहां कोई दफ़न नहीं किया जाता था। —अनुवादक

जिस मस्जिद के निर्माण क

वह कोई ऐसा स्थान न था ज

और जन्म स्थान पर न हो सकत

का स्थान है तथा मुसलमान अ

का पाबन्द नहीं है।

यह मस्जिद उस महान उद्दे

अधिक बल देता है। अर्थात्

स्थापित करता है जिस को नबी

दिन-रात के बार-बार आने के

सभ्यता का क्या मूल्य है जो

उपलक्षित कर दे तथा मारू

खलत-मलत कर दे।

इस्लाम जिस सभ्यता तथा शिष्टता को लाया है वह सदा खुदा तथा उस की भेंट की याददिहानी कराती है। सुकर्मों को अपनाने, अवैध व अश्लील कार्यों से बचने और ईश्वरीय सीमा के भीतर रहने का उपदेश देती रहती है।

मदीना के यहूदियों और मुश्रिकों ने देखा कि यह नया रसूल अपने सहाबा (साथियों) के साथ मस्जिद की स्थापना में लगा हुआ है उसे नमाज़ के योग्य बना रहा है तो क्या उन्हें कोई भ्रमपूर्ण सीरत (जीवनी) या कोई आपत्तिजनक तरीक़ा दिखाई दिया ?

अब्दुर्रहमान बिन औफ़ रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल ने मदीना में जो प्रथम खुत्बा दिया वह यह था : आप सल्ल० खड़े हुए, अल्लाह की प्रशंसा की जिस का वह पात्र है, फिर फ़रमाया—

> 'हे लोगो ! सुकर्मों को संचय कर लो, खुदा की क़सम ! तुम को मालूम होना चाहिये कि तुम में से एक व्यक्ति ऐसा होगा कि उस पर निस्तब्धता[1] आच्छादित होगी फिर वह बकरियों को छोड़ जायेगा जिस का एक चरवाहा होगा फिर उस से उस का रब पूछेगा—उस समय कोई अनुवादक न होगा जो बीच में रोक बन सके—क्या तुम्हारे पास मेरा रसूल नहीं आया था ? और तुम को मेरी बातें नहीं बतायीं थीं ? क्या मैं ने तुम को धनवान नहीं बनाया था और तुम पर अहसान नहीं किये थे ? तुम ने अपने लिए क्या संचय किया है ? वह इधर-उधर देखेगा तो उसे कुछ न दीखेगा। फिर वह अपने सामने देखेगा तो उसे नर्क भड़कती हुई दिखाई देगी। जो व्यक्ति अपने आप को 'जहन्नम' से बचा सकता हो चाहे खजूर की गुठली (दान दे कर) ही सही, तो वह अपनी सुरक्षा का प्रबन्ध कर ले तथा जो व्यक्ति खजूर की गुठली भी दान करने का सामर्थ्य न रखता हो तो अच्छी बातों के द्वारा ही अपनी सुरक्षा कर ले क्योंकि वहां नेकी का प्रतिफल दस गुना से सौ गुना तक मिलता है और सलामती हो तुम सब पर और अल्लाह के रसूल पर !'
>
> —बैहक़ी

---

१. अर्थात मृत्यु।

बन्धुत्व

रसूलुल्लाह सल्ल० ने नये भवन रूपी समाज की स्थापना 'बन्धुत्व' के आधार पर की, जिसका दूसरा स्तम्भ 'उम्मते मुस्लिमः का परस्पर सम्बन्ध' था। इस बन्धुत्व में प्रत्येक व्यक्ति का अहंकार समाप्त हो गया था तथा वह 'जमाअत' की रूह, उस के हितों एवं आशाओं के अनुसार गतिशील होता था। उस में न तो कोई अपने निजी हित के लिए सोचता था और न किसी का अलग से कोई अस्तित्व था।

इस बन्धुत्व का अर्थ था कि पुराने द्वेष एवं पक्षपात समाप्त हो जायें तथा अब इस्लाम के गर्व तथा सम्मान के अतिरिक्त कोई सम्मान नहीं है। वर्ण, रंग, वतन तथा सम्बन्धों के समस्त भेद मिट गये थे, प्रत्येक व्यक्ति का महत्व एवं मूल्य उस की अपनी शिष्टता, सुशीलता तथा ईश्वर भय के विचार से था।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने इस 'बन्धुत्व' को समाज में व्यावहारिक रूप से कार्यान्वित कर दिया था तथा प्रत्येक व्यक्ति इस पर कार्यशील भी था। रक्त एवं माल के साथ इस क्रिया को सम्बद्ध कर दिया गया केवल मौखिक रूप से इस की चर्चा न थी कि समाज पर इस का कोई प्रभाव न हो!

त्याग, कुर्बानी, सहायता तथा सहानुभूति की भावनाएं इस बन्धुत्व में विलीन हो गयी थीं जिस के कारण यह समाज अनूठे एवं अद्भुत उदाहरणों से भर गया था।

अन्सार ने मुहाजिरों के आदर-सम्मान में इतनी अग्रसरता दिखाई कि पांसा (पाशाक) फेंकने की नौबत आ गयी, दूसरी ओर मुहाजिरों ने इस शुद्ध भावना का बड़ा आदर किया तथा इतनी ही सहायता ली जिस से स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य कर सकें।

बुखारी की रिवायत के अनुसार जब मुहाजिर मदीना आये तो रसूलुल्लाह सल्ल० ने अब्दुर्रहमान बिन औफ़ तथा सअद बिन रबीअ के बीच बन्धुत्व स्थापित किया। सअद रज़ि० ने अब्दुर्रहमान रज़ि० से कहा: मैं अन्सारियों में सब से अधिक धनवान हूं। आप मेरा आधा माल ले लीजिए, मेरी दो पत्नियां हैं जिसे आप पसन्द करें मैं उसे तलाक़ दे दूं 'इद्दत' पूरी होने पर आप शादी कर लें। अब्दुर्रहमान ने उत्तर दिया: 'अल्लाह आप के माल तथा परिवारजनों में वृद्धि करे, मुझे तो आप किसी बाजार का मार्ग बता दें।'

लोगों ने बनू क़ैनक़ाअ के बाजार का मार्गदर्शन कर दिया, वह वापस

आये तो साथ में कुछ घी तथा पनीर बचा हुआ लाये। अगले दिन बाज़ार गये तो आप के ऊपर शृंगार का प्रभाव देखा गया। रसूलुल्लाह ने पूछा : 'क्या हाल है?' कहा : 'मैं ने विवाह कर लिया है।' पूछा 'क्या मिला?' कहा : 'सोने की एक डली।'

सअ्द रज़ि० की उदार हृदयता पर ही लोगों को आश्चर्य नहीं होता वरन् अब्दुर्रहमान की शिष्टता एवं सम्पन्नता पर भी हैरानी तथा अचम्भा होता है। यही वह व्यक्ति है जिस ने यहूदियों का मुक़ाबला उन के बाज़ारों में किया तथा इस क्षेत्र में उन्हें पराजित किया। थोड़े ही समय में अपने सम्मान की रक्षा एवं जीविकोपार्जन योग्य हो गये। यह उच्च साहस इस्लाम की श्रेष्ठ नैतिकताओं में से है। ईश्वर उन के मुखों को दूषित करे जो इस्लाम से सम्बद्ध हो कर इस के द्वारा खाते रहे और सत्य की महिमा, चमत्कार तथा उस के सम्मान को कलंकित करते रहे।

रसूलुल्लाह सल्ल० इस मोमिन जमाअत के सब से बड़े भाई थे। आप ने कोई सम्मान तथा विशिष्ट उपाधि न ली न दी, न किसी को किसी पर प्रधानता दी। हदीस में है कि 'यदि मैं अपनी उम्मत में किसी को अपना 'रफ़ीक़' (सहचर्य) बनाता तो अबू बक्र रज़ि० को बनाता परन्तु इस्लाम में 'बन्धुत्व' सब से श्रेष्ठ है।' —बुख़ारी

सच्ची भाईचारगी दूषित तथा अश्लील वातावरण में नहीं पनप सकती। जहालत (अज्ञानता) कायरता, कृपणता तथा संकीर्ण हृदयता के वातावरण में बन्धुत्व एवं प्रेम का होना असम्भव है। यदि सहाबा कराम सुव्यवहारिकता के स्वामी न होते, श्रेष्ठ सिद्धान्तों से उन का जीवन सुसज्जित न होता तो संसार उन के शुद्ध हृदयतापूर्ण बन्धुत्व का दृश्य न देख पाता तथा ये घटनाएं इतिहास के पृष्ठों में सुरक्षित न होतीं।

उद्देश्य की श्रेष्ठता, जिस से वे सहमत थे, तथा आदर्श की महानता ने उन में यह गुण उत्पन्न किया। इन्हीं दोनों चीज़ों ने उन के गुणों में वृद्धि की, उन की श्रेष्ठता बढ़ायी तथा कुस्वभाव का उन्मूलन कर दिया।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० वह महान व्यक्ति थे जिन के व्यक्तित्व में समस्त गुण, योग्यताएं तथा सुशीलताएं जमा थीं जो समूचे मानव जगत में सम्भव न थीं। मनुष्य श्रेष्ठता की जिस चरम सीमा तक पहुंच सकता है, आप सल्ल० वहां तक पहुंचे अतः निःआश्चर्य जो लोग आप से लाभान्वित हुए और जिन्होंने आप से दीक्षा ली वे ऐसे व्यक्ति हों जो शराफ़त (शिष्टता), वफ़ादारी तथा दानशीलता के साथ जीवित रहते हों।

प्रेम एक स्वछन्द स्रोत है जो स्वत: ही उबल पड़ता है। उसे कलपुर्जों तथा मशीनों की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसी प्रकार 'बन्धुत्व' कानूनों तथा परम्पराओं के द्वारा स्थापित नहीं किया जा सकता। यह तो इस बात का स्वीकारात्मक परिणाम है कि पूरा समाज स्वार्थ, संकीर्णहृदयता तथा लालच से पवित्र हो चुका है।

प्रथम काल के मुसलमानों में 'बन्धुत्व' इसलिए सम्भव हुआ कि उन्होंने अपने जीवन में इस्लाम के द्वारा ही उन्नति की। वे अल्लाह के बन्दे थे, आपस में भाई-भाई थे। यदि वे अपने मन के दास होते तो उन में से कोई दूसरे पर विश्वास न करता।

परन्तु बन्धुत्व की स्थापना में मन की श्रेष्ठता पर वार्ता करने का यह अर्थ नहीं है कि कोई आदेष्टा लोगों पर कोई ऐसी व्यवस्था बलपूर्वक लागू न करे जिस में लोगों के अधिकारों की जमानत मिल सके, यदि लोग अदा करने को तैयार न हों तो उन से वे अधिकार बलपूर्वक लिये जायें, जिस प्रकार ज्ञान प्राप्ति, सेना भर्ती तथा टैक्सों की अदायगी पर विवश किया जाता है।

बद्र के युद्ध के अवसर पर मृतक सम्पत्ति के उत्तराधिकारी क़ानून में भ्रातृत्व का नाता समीपता के अधिकारों की भूमिका बन गया तथा अल्लाह का यह कथन उतरा—

> 'और नातेदार अल्लाह की किताब में एक दूसरे के ज्यादा हक़-दार हैं निश्चय ही अल्लाह हर चीज को जानता है।'
>
> —अल-अन्फ़ाल ७५

अत: विरासत के क़ानून ने बन्धुत्व के सम्बन्धों को निरस्त कर दिया और मामला खून की समीपता के नातों की ओर पलट आया—

> 'और हम ने हर ऐसे माल के, जिसे माता-पिता और नातेदार छोड़ जायें वारिस ठहरा दिये हैं। और जिन लोगों को तुम वचन दे चुके हो, उन्हें भी उन का हिस्सा दो।'
>
> —अन-निसा ३३

> 'उपरोक्त आयत की व्याख्या में इब्न अब्बास रज़ि० बुख़ारी से ने रिवायत की है कि जब मुहाजिर (शरणार्थीगण) मदीना आये तो रसूलुल्लाह द्वारा 'बन्धुत्व' का नाता स्थापित कर देने के कारण मुहाजिर तथा अन्सार एक-दूसरे को विरासत में हिस्सेदार बनाने लगे। परन्तु जब यह आदेश आ गया तो बन्धुत्व का रिश्ता समाप्त हो गया। परन्तु यह कह दिया गया कि उन को

सहायता, सहयोग तथा शुभ चिन्ता करो। बन्धुत्व के लिए मीरास समाप्त हो गयी लेकिन उन के लिए वसीयत (उत्तर-दान) को जारी रखा गया।' —बुखारी

इस बन्धुत्व का विवरण इस प्रकार है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने अली (रज़ि०) के साथ, हज़रत हम्ज़ा ने ज़ैद (रज़ि०) के साथ, 'अबू बक्र' (रज़ि०) ने खारजा (रज़ि०) के साथ, तथा हज़रत उमर (रज़ि०) ने उत्बान बिन मालिक (रज़ि०) के साथ बन्धुत्व के नाते स्थापित किये।

कुछ आलिमों ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) तथा अली (रज़ि०) के बीच बन्धुत्व पर शंका की है। परन्तु शुद्ध रिवायत है कि रसूलुल्लाह ने अली (रज़ि०) को उसी स्थान पर रखा जिस पर मूसा ने हारून को रखा था। इस से इस बात की पुष्टि होती है तथा अबू बक्र के आदर तथा 'खिलाफ़त' के अधिकार पर इस से कोई आंच नहीं आती।

—०—

ग़ैर-मुस्लिमों से व्यवहार

तीसरे स्तंभ—ग़ैर मुस्लिमों में मुसलमानों का व्यवहार—के विषय में रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने क्षमा, शान्ति तथा अधिकारोल्लंघन एवं हस्तक्षेप न करने के ऐसे क़ानून बनाये जो द्वेष एवं पक्षपात के इस संसार में कभी देखे नहीं गए थे। जो व्यक्ति यह सोचता है कि इस्लाम किसी अन्य धर्म का प्रतिवासी बनना स्वीकार नहीं करता अथवा मुसलमान समस्त विश्व पर आच्छादित तथा प्रभुत्वशाली हुए बिना नहीं रहना चाहते, तो वह न केवल ग़लती पर हैं वरन् अन्यायी एवं दुस्साहसी है।

जब रसूलुल्लाह मदीना आये तो वहां यहूदी भी थे तथा मुश्रिक भी! परन्तु आप ने ऐसी कोई योजना अथवा नीति नहीं अपनायी जिस से उनके विरुद्ध शत्रुता फैले या उन्हें दूर रखा जाए और देश निकाला कर दिया जाये। इस के विपरीत आप ने उन के अस्तित्व को सहर्ष स्वीकार किया तथा दोनों पक्षों के सामने यह बात रखी कि अपने अपने धर्मों पर स्वेच्छापूर्वक चलने की स्वतन्त्रता का समझौता कर लें।

यहूदियों से आप ने जो समझौता किया उस के शब्दों से इस्लाम की प्रवृत्ति का पता चलता है। समझौते की कुछ बातें इस प्रकार थीं:

— 'क़ुरैश या मदीना के जो लोग मुसलमानों के बीच हैं अथवा जो मुसलमानों से मिले हुए हैं तथा व्यवसाय में एक दूसरे के साथ सम्मिलित हैं

वे सब एक राष्ट्र समझे जायेंगे ।

— समझौते में सम्मिलित जो पक्ष भी विद्रोह करेगा, या अत्याचार करेगा या अन्याय या स्वत्वहरण करेगा तथा अवज्ञा करेगा या मुसलमानों में फ़साद उत्पन्न करेगा, उस के विरुद्ध संयमी मुसलमान खड़े होंगे तथा समस्त पक्ष उन की हिमायत करेंगे चाहे वह अवज्ञाकारी उन का अपना बेटा ही हो !

— कोई मुश्रिक कुरैश के माल तथा जान को शरण न देगा न किसी मुसलमान के विरुद्ध उन के मार्ग में बाधक होगा ।

— प्रत्येक वह मुसलमान जिस ने इस लेख पत्र को स्वीकार किया है तथा खुदा तथा आखिरत पर ईमान रखता है, उस के लिए वैध न होगा कि किसी अपराधी की सहायता करे, न उसे शरण दे तथा जिस ने उस की सहायता की या उसे शरण दी तो उस पर महाप्रलय में ईश्वर की 'लानत' (धिक्कार) तथा उस का प्रकोप होगा और वहां उस से कोई मुक्ति प्रतिदान न लिया जायेगा ।

— युद्ध काल में यहूदी मुसलमानों के साथ व्यय में सम्मिलित रहेंगे ।

— बनी औफ़ के यहूदी मुसलमानों के साथ एक राष्ट्र (क़ौम) हैं।

— मुसलमानों तथा यहूदियों को अपने अपने धर्म पर चलने की स्वतन्त्रता होगी।

— बनी नज्जार, बनी हारिस, बनी साइदा, बनी जुश्म तथा बनी औस इत्यादि समस्त यहूदियों के साथ बनी औफ़ के यहूदियों जैसा व्यवहार होगा।

— यहूदियों के खर्चे उन के जिम्मे हैं तथा मुसलमानों के उन के अपने जिम्मे। जो इस लेख्य-पत्र का उल्लंघन करेगा उस के विरुद्ध उन में आपसी सहयोग तथा सहायता का मामला होगा।

— आपस में शुभ चिन्ता, शुभेच्छा तथा लाभ पहुंचाने के सम्बन्ध होंगे, बदी एवं पाप पूर्ण न होंगे।

— कोई व्यक्ति अपने शपथधारी के विरुद्ध प्रतिद्वन्द्वितापूर्ण कार्यवाही न करेगा तथा उत्पीड़ित की सहायता की जायेगी। प्रतिवासी न हानि पहुंचायेगा न किसी का स्वत्व छीनेगा।

— जो कुछ इस लेख्य-पत्र में है उस का ईश्वर संरक्षक है।

— मदीना में रक्तपात करना समस्त शपथधारी पक्षों पर हराम होगा।

— जो व्यक्ति मदीना में टिका रहे अथवा युद्ध हेतु निकले वह सुरक्षित

होगा, परन्तु यदि उस ने अत्याचार किया हो या स्वत्व छीना हो।

'जो व्यक्ति संयमी तथा आज्ञाकारी होगा अल्लाह उसे शरण देगा।'
—इब्ने इस्हाक़

यह लेख्य-पत्र बताता है कि आस पास के क्षेत्रों में शान्ति एवं व्यवस्था बनाए रखने और मदीना के यहूदियों के साथ विशुद्ध सहयोग रखने से मुसलमानों को कितनी रुचि थी। तथा फ़ित्ना उठाने वालों, विद्रोहियों तथा सरकशों के विरुद्ध उन की भावनाएँ कितनी तीव्र थीं चाहे वे किसी भी धर्म के अनुयायी हों।

इस लेख्य-पत्र ने स्पष्ट कर दिया कि धर्म पर चलने की पूर्ण स्वतन्त्रता एवं जमानत है। यहां किसी गिरोह के विरुद्ध युद्ध या किसी कमजोर पर अत्याचार की चिन्ता न थी वरन् यह लेख्य-पत्र बताता है कि उत्पीड़ितों की सहायता की जाएगी, प्रतिवासी की सुरक्षा होगी तथा विशेष एवं सामान्य अधिकारों की समायी भी होगी तथा इस समझौते को ईश्वर का समर्थन मिलेगा। अतः इस की अवज्ञा तथा ग़द्दारी करने वालों के विरुद्ध ईश्वरीय प्रकोप की घोषणा कर दी गयी।

यहूदी तथा मुसलमानों ने परस्पर समझौता किया कि यदि मदीना पर कोई शत्रु आक्रमण करेगा तो दोनों उस का बचाव करेंगे। तथा जो व्यक्ति मदीना छोड़ना चाहे उसे स्वतन्त्रता होगी और जो उस का आदर करेगा उसे वहां रहने का अधिकार होगा।

विचार योग्य बात यह है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने इस लेख्य-पत्र तथा समझौते में मुसलमानों एवं मक्का के मुश्रिकों के मध्य जारी शत्रुता की ओर भी इशारा कर दिया। और उन से किसी भी प्रकार की मित्रता एवं सहयोग का हाथ बढ़ाने के निरोध की घोषणा कर दी। उस क़ौम के विषय में और कौन सी स्थिति ग्रहण की जा सकती थी जिस की शत्रुता, बेवफ़ाई तथा विश्वासघात के कारण मुसलमानों के घावों से अभी खून की बूंदे टपक रही थीं?

क्या यहूदी इस समझौते के विषय में यथार्थवादी थे?

विश्वसनीय बात यह है कि जब उन्हों ने इस समझौते के कार्यान्वियन को स्वीकार किया तो वे सत्यप्रिय न थे।

इस प्रकार के समझौतों के साथ दुःखद स्थिति यह रही है कि लोग सदा प्रत्याशित लाभों तथा हितों के साथ सम्बद्ध रहते हैं। अतः जब पता चलता है कि अभिष्ट हितों की प्राप्ति नहीं हो रही है तो वे उन के पाबन्द

नहीं हो। कह दो : मेरे और तुम्हारे बीच गवाह की हैसियत से अल्लाह काफ़ी है और वह जिस के पास किताब का ज्ञान है।'
—अर-रअ्द ४३

यदि मूर्तिपूजक इस अनुस्मारक को झुठला दें तो किताबधारी इस के पात्र थे कि याददिहानी तथा अनुस्मारक आने के पश्चात् उन के हृदय पिघल जाएं :

'और हम उन तक लगातार बात पहुंचाते रहे हैं, कदाचित् वे ध्यान दें। जिन लोगों को इस से पहले हम ने किताब दी थी, वे इस पर ईमान लाते हैं।'
—अल-क़सस ५१-५२

परन्तु आप को आश्चर्य होगा कि मुशिरकों की भांति यहूदियों के यहां ईश्वर के विरुद्ध दुस्साहस उस के आदेशों से घृणा तथा उसे अनुचित बातों से दोषारोपित करने का प्रयत्न सामान्य रूप से पाया जाता है।

जब इस्लाम उन लोगों के विरुद्ध अप्रसन्नता प्रकट करता है जो अल्लाह से सन्तान का सम्बन्ध जोड़ते हैं तो आकाश तथा धरती के रब को कृपण तथा मुहताज कहते हैं :

'और यहूदी लोग कहते हैं : अल्लाह का हाथ बंधा हुआ है। इन्हीं के हाथ बांधे जायें, और फटकार है इन पर, उस के कारण जो बकवास ये करते हैं।'
—अल-माइदा ६४

'अल्लाह ने उन लोगों की बात सुन रखी है जिन्हों ने कहा कि अल्लाह निर्धन है और हम धनवान हैं ! जो कुछ उन्हों ने कहा हम उसे लिख रखेंगे और नबियों को जो उन्हों ने क़त्ल किया है वह भी, और हम कहेंगे : जलने की यातना का मज़ा चखो!'
—आले इम्रान १८१

फिर भी पथ भ्रष्टता के आग्रही इन वर्गों को इस्लाम उन की दशा के हवाले कर देता है तथा उन का उन्मूलन तलवार के द्वारा नहीं करता वरन् सन्देश देता है, उस की वास्तविकता खोल-खोल कर वर्णन कर देता है तथा वातावरण को उस की निशानियों तथा चिन्हों से भर देता है।

जो व्यक्ति सन्तुष्ट हो जाये तथा इस्लाम में प्रवेश करे तो अच्छा है अपितु वह स्वयं अपना फल भोगेगा। इस्लाम उस से केवल यह मांग करता है कि वह समझौता कर ले, शान्ति पूर्वक रहे तथा सत्य के मार्ग में बाधक न बने।

जब रसूलुल्लाह सल्ल० मदीना आये तो यहूदियों की ओर मित्रता का हाथ बढ़ाया तथा उदारतापूर्ण कष्ट सहते रहे। परन्तु जब आप ने देखा

कि वे आपको अपमानित करने तथा आपके दीन को मिटा देने पर तुले हुए हैं तो उन की ओर ध्यान दिया।

ईश्वर भय, निस्वार्थता तथा शुद्ध हृदयता के आधार पर इस नवीन समाज में रूहानियत की इमारत खड़ी हुई।

सच्चे बन्धुत्व के द्वारा इस की बुनियाद स्थिर हुई तथा दीवारों में दृढ़ता उत्पन्न हुई। और न्याय, समानता तथा परस्पर सहयोग के साथ विदेश-नीति की बुनियाद पड़ी तथा अन्य धर्मों के अनुयायियों के साथ व्यवहार किया गया।

इसी कारण इस्लामी शासन प्रणाली सुदृढ़ हुई और मुसलमानों को अपनी शक्ति के पुनर्गठन और अपने मामलों के प्रबन्ध का विस्तृत क्षेत्र मिल गया।

प्रतिष्ठित साथी

जिन मोमिनों ने नबियों की सुसंगत पायी उन के जीवन को समीप से देखा तथा लाभान्वित हुए, उन को पवित्रता के जो स्रोत और प्रगति के जो साधन प्राप्त हुए, दूसरे लोग उन के पैरों की धूल को भी नहीं पा सकते थे।

आप जब कोई मधुर गीत सुनते हैं तो भावुकता में डूब जाते हैं इसी प्रकार जब वीरों के कारनामे सुनते हैं तो आप की भावनाएं उत्तेजित हो जाती है यहां तक कि नाटकों तथा फ़िल्मों में दर्शकों पर कहानी का पूरा वातावरण आच्छादित हो जाता है तथा कहानी के दृश्यों के अनुसार उन्हें हंसी भी आती है और रोते भी हैं, मौन धारण भी कर लेते हैं तथा संवेदनशील दृश्य पर उन की चीख़ भी निकल जाती है। तो उन व्यक्तियों के विषय में आप का क्या विचार है जो ऐसे व्यक्ति का अनुवर्तन करते हैं जिस से आकाश बातें करता है, जिस के द्वारा विद्वत्ता एवं विशेषताओं के स्रोत फूटते हैं तथा उस के वातावरण पर पवित्रता एवं शुद्धता के बादल छाया किये रहते हैं? जब लोगों के मन में ख़ैर से ऊब होने लगती हो तो वह उन्हें आगे बढ़ाता हो और जब उन के मार्ग में काम वासनाएँ अवरोधक बनती हों तो वह उन्हें मार्ग से साफ़ करके उन की पवित्रता एवं स्वच्छता को वापस लौटा देता हो। महान व्यक्तियों के साथ एक प्रकाश होता है जो उस के अपने वातावरण पर आच्छादित होता है तथा जिस प्रकार बुझा हुआ दीपक प्रकाशित दीपक के क़रीब करने से प्रकाशमान हो जाता है इसी प्रकार साधारण व्यक्ति जब किसी महान व्यक्ति के निकट आते हैं तो उस के प्रभाव स्वीकार कर लेते हैं और उस के चिन्हों का अनुसरण करने

लगते हैं।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के निकट संयमी तथा ईश्वर भक्तों का गिरोह जमा हो गया था। वे आप के निष्ठावान एवं विश्वासपात्र शिष्य थे। अतः आप की सुसंगति से यह गिरोह पवित्र हो गया। उन के स्वभाव निखर गये और 'इल्हाम्' (ईश्वरीय प्रेरणा) के प्रकाश से वे इस प्रकार नहा गये कि तत्वदर्शिता, ज्ञान एवं सम्बोधन शैली उन के मुखों से फलों के समान झड़ने लगीं।

इस स्थान पर उस विचित्रितम एवं तीव्र बुद्धि की कल्पना न कीजिए जो अपनी विशेष शक्ति से उच्चतम विवेक की योग्यता रखती है। परन्तु जब महान् शक्ति उन का मार्गदर्शन नहीं करती तो अभीष्ट उद्देश्य को दृष्टि में रखे बिना या मार्ग प्राप्ति के बिना वह प्रत्येक क्षितिज का भ्रमण करने लगती है। जिस प्रकार कोई वायुयान अन्तरिक्ष में भटकने लगता है, वह कुहरे में घिर जाता है, चालक सतर्क हो जाता है मशीन नियन्त्रित की जाती है और उस के प्रकाश कुहरे को चीरने का प्रयत्न करते हैं परन्तु जब उसे कोई मार्गदर्शन नहीं मिल पाता तो वह अन्तरिक्ष में व्यर्थ ही मंडलाने लगता है तथा अन्ततः वह तबाही और बरबादी के खड्ड में जा गिरता है।

अनेकों दार्शनिकों ने 'ब्रह्माण्ड तथा जीवन' के मसलों पर तर्क वितर्क किये हैं। कुछ लम्बे-लम्बे विवादों के पश्चात् सत्य से विमुख हो गये कुछ जीवन भर सत्य की खोज में लगे रहे। यदि ये लोग ईश्वर सन्देष्टाओं तथा नबियों के अनुयायी बन जाते तो अति अल्प समय में यह दूरी तय कर सकते थे तथा विमुखता एवं त्रुटियों से भी सुरक्षित रहते।

एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि मनुष्य केवल 'बुद्धि' ही नहीं रखता वरन् एक 'हृदय' भी रखता है ताकि वह अभिरुचियों तथा विमुखताओं से सुरक्षित रहे, दुर्भाग्यता एवं अन्धकार से बचा रहे तथा मनुष्य के भीतर वह एक ऐसी शक्ति के रूप में गतिशील हो जो उसे कल्याण एवं प्रेम की ओर बढ़ा सके तथा सौन्दर्य एवं सहानुभूति की प्रेरणा दे सके। सन्देष्टागण मानव अन्तरात्मा की दीक्षा शिक्षा एवं शुद्धीकरण द्वारा करते हैं।

नबियों से सब से अधिक समीप तथा अनुरूप वे व्यक्ति होते हैं जो उनके पगचिन्हों पर चलते हैं। उन में अग्रगामी वे लोग होते हैं जिन्हें उनकी सुसंगत प्राप्त हुई हो। तथा उन के सन्देश एवं उन के कष्टों तथा जिहाद की तकलीफ़ों में भागीदार बने हों।

अब्दुल्लाह इब्न् मसऊद रजि० कहते हैं कि 'जिस व्यक्ति को अनुगमन करना हो वह उन लोगों का अनुगमन करे जो मर चुके हैं क्योंकि

का प्रबन्ध कर लें परन्तु यह

का सुझाव आया कि उस के द्वा

प्रकार के और भी सुझाव आये

साहब: रज़ि० ने स्वप्न में अज़ा

में उपस्थित होकर अर्ज़ किया

स्वप्न देखा है, मेरे पास से एक

था उस के हाथ में एक शंख था

शंख बेचोगे ?'

उस ने पूछा : 'तुम क्या क

लोगों को एकत्र करूंगा ।' उस

न बता दूं ?' मैं ने पूछा : 'वह

करो ।' तथा उस ने निम्नलिखि

'अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर।
अश्हदु अल्लाइला-ह-इल्लल्लाह, अश्हदु अल्लाइला-ह-इल्लल्लाह।
अश्हदु अन्-न-मुहम्मदर-रसूलुल्लाह, अश्हदु अन्-न-मुहम्मदर-रसूलुल्लाह
हय-य-अलस्सला:, हय-य-अलस्सला:।
हय-य-अलल्फ़लाह, हय-य-अलल्फ़लाह।
अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर।
ला इला-ह-इल्लल्लाह।'

जब उन्हों ने रसूलुल्लाह सल्ल० को सूचना दी तो आप ने फ़रमाया: 'अल्लाह ने चाहा तो यह सत्य स्वप्न है।' तुम बिलाल रज़ि० के पास जाओ और उन्हें ये शब्द बताओ ताकि वे उच्च स्वर में पुकारें, तुम से वह उच्च स्वर के हैं, जब हज़रत बिलाल ने 'अज़ान' दी तो हज़रत उमर ने अपने घर में सुना, वह चादर घसीटते हुए (दौड़ते हुए) रसूलुल्लाह की सेवा में उपस्थित हुए और अर्ज़ किया: 'हे अल्लाह के रसूल! क़सम है उस अस्तित्व की जिस ने आप को सत्य के साथ भेजा है मैं ने भी वही स्वप्न देखा है जो इस व्यक्ति ने देखा है।' अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया: 'प्रशंसा अल्लाह ही की है।'

एक अन्य रिवायत में है कि 'रसूलुल्लाह ने हज़रत बिलाल को आदेश दिया तथा उन्होंने अज़ान दी।' इमाम जुह्री कहते हैं कि बिलाल रज़ि० ने फ़ज्र की अज़ान में ये शब्द दो बार बढ़ा दिये:

'अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नौम' (नमाज़ नींद से बेहतर है) तो अल्लाह के रसूल ने इसे स्वीकार कर लिया।' —इब्न् माजा

'एक रिवायत में है कि हज़रत उमर रज़ि० ने स्वप्न में देखा कि कोई कह रहा था कि 'शंख न बजाओ, वरन् नमाज़ की पुकार लगाओ।' अत: हज़रत उमर रसूलुल्लाह के पास स्वप्न की सूचना देने गये, उस समय रसूलुल्लाह सल्ल० पर इस विषय में 'वह्य' आ चुकी थी।' हज़रत उमर अभी आश्चर्यावस्था में थे कि बिलाल अज़ान पुकारने लगे, जब उन्हों ने आप सल्ल० को इसकी सूचना दी तो आप सल्ल० ने फ़रमाया: 'इस विषय में तुम से पहले 'वह्य' आ चुकी थी।' —इब्ने माजा

इस से प्रतीत होता है कि 'वह्य' अब्दुल्लाह बिन ज़ैद रज़ि० के स्वप्न के साथ ही आ चुकी थी।

ये पवित्र शब्द जो पांच समय की नमाज़ से पूर्व पुकारे जाते हैं हमें सचेत करते, हमारे हृदय को जाग्रत करते और इन्सानों को सावधान करते

क्या स्थान है और उस की आयतों में उन्हें कितनी पहुंच प्राप्त है।

> 'हज़रत अनस बिन मालिक से हदीसोल्लेख है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उबई बिन कअब रज़ि० से फ़रमाया : मुझे अल्लाह ने आदेश दिया है कि तुम्हें यह आयत सुनाऊं :
> 'जिन लोगों ने कुफ़्र किया है किताब वालों और मुश्रिकों में से वे तो बाज़ आने नहीं।' — अल-बय्यिना १
> 'हज़रत उबई रज़ि० ने पूछा : क्या मेरा नाम लेकर अल्लाह ने यह हुक्म दिया है ? फ़रमाया 'हां'! उन्हों ने पूछा : क्या सृष्टा के यहां मेरा ज़िक्र आ गया ! फ़रमाया : 'हां !' रावी कहते हैं कि यह सुनकर उन की आंखों से आंसू निकल पड़े।'
> —बुख़ारी, मुस्लिम, अहमद

इबादत का अर्थ

सहाबा कराम द्वारा प्राप्त आध्यात्मिक एवं सामूहिक प्रगति का रहस्य यह था कि वे सुरीति तथा उचित आधार पर अल्लाह से सम्बद्ध थे। अतः उन्हें ईश्वर के लिए प्रयत्न करने में किसी कष्ट एवं दुःख का आभास न होता था न वे आश्चर्य एवं विस्मयता में पड़ते थे।

मनुष्य के दो प्रकार के स्वभाव पाये जाते हैं : महानता का आभास तथा कृतज्ञता, अतः जब आप कोई सूक्ष्म मशीन, कोई सुन्दर चित्र, अथवा कोई अलंकारित लेख देखते या सुनते हैं तो आप उस की श्रेष्ठता तथा विशेषता का अनुभव ही नहीं करते वरन् उसके रचयिता या आविष्कार-कर्त्ता की महानता का अहसास भी हृदयांकित हो जाता है और गहन बुद्धि-मत्ता तथा योग्यता आप को उस बुद्धिमान तथा योग्य व्यक्ति के आदर सम्मान को विवश कर देती है।

इसी प्रकार जब कोई आप का उपकार करता है या आप को कोई बहुमूल्य वस्तु देता है तो आप उपकारी के कारनामे को याद रखते हैं और जितना आप को लाभ प्राप्त हुआ है उसी अनुपात से आप उस की प्रशंसा करते हैं। तथा आप का हृदय उस के शुक्रिया से परिपूर्ण हो जाता है जैसा कि कवि कहता है :

> 'तुम्हारे उपकारों ने मेरी तीन चीज़ें छीन ली हैं, मेरे हाथ, मेरी ज़बान, मेरी गुप्त अन्तरात्मा —।'

अल्लाह के रसूल उक्त वर्णित दोनों स्वभावों को उच्चतम उद्देश्यों की ओर प्रेरित करने आये थे। क्या आप महानता से प्रसन्न नहीं होते या

है तथा आप उस के मुख पर
उदार हृदय पाते हैं तो आप आ
व्यवहार का सुप्रतिफल देने की
उस की प्रशंसा करेंगे। तो फि
आप की क्या राय है, जिस
कृपाओं और प्रसादों में रखा? अ
के दिये हुए वस्त्र पहनते हैं, उसी
से कष्टों से छुटकारा पाते हैं!

हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने
तथा कृतज्ञता की भावनाओं के
के आज्ञापालन पर सन्तुष्ट हो
हार्दिक रूप से एवं पूर्ण अंगी

(अस्तित्व) के हवाले कर दिया।

इबादत दमन एवं विवशता के आज्ञापालन का परिणाम नहीं होती, वरन् वह प्रेम एवं अंगीकार का आज्ञापालन होता है। वह इबादत अज्ञानता तथा ग़फ़लत की इबादत नहीं होती वरन् ज्ञान, अध्यात्म एवं चेतनापूर्ण आज्ञापालन होता है।

प्रायः शासन की ओर से मूल्य वृद्धि की घोषणा होती है तथा व्यापारियों को विवशतापूर्ण उसे स्वीकार करना होता है अथवा राज्य की दर में कमी करती है परन्तु कर्मचारीगण उसे अप्रसन्नतापूर्ण स्वीकार करते हैं।

बहुदा आप पशुओं को इशारे से बुलाते हैं और वे आपके पीछे जाते हैं यद्यपि वे नहीं जानते कि आप उन्हें चरागाह की ओर ले जायें अथवा वधशाला की ओर।

उपरोक्त विभिन्न प्रकार के आज्ञापालन उस इबादत के भाव से दूर हैं जिसे अल्लाह ने फ़र्ज़ किया है। जैसा कि इस आयत से प्रतीत होता है :

> '(प्रभुवर!) हम तेरी ही बन्दगी करते हैं और तुझ से ही सहायता चाहते हैं।' —अल-फ़ातिहा ४

तथा जिस इबादत को अस्तित्व की तत्वदर्शिता एवं जीवन लक्ष्य निश्चित किया है :

> 'और मैं ने 'जिन्न' और 'मनुष्य' को केवल इस लिए पैदा किया है कि वे मेरी इबादत करें।' —अज-जारियात ५६

इस से अभिप्राय उस हीनता तथा झुकाव से है जो ज्ञान, परिचय एवं प्रेम के साथ हो अर्थात् ईश्वर की महिमा पर आश्चर्य एवं कृतज्ञता की भावना से उत्पन्न होने वाला आज्ञापालन हो।

क़ुरआन की अनेकों आयतें इस विषय में मुसलमानों का मार्गदर्शन करती हैं। धरती में फैली हुई ईश्वर की निशानियां एक ओर मनुष्य को ईश्वरीय ज्ञान प्रदान करती हैं तो दूसरी ओर उस की अनूठी प्रकृति उस के असंख्य उपकरणों की स्मृति कराती हैं तथा नेत्रों से अज्ञानता तथा अवज्ञा के पर्दों को हटाती हैं :

> 'वह अल्लाह ही है जिस ने आकाशों और धरती को पैदा किया और आकाश से पानी बरसाया, फिर उस के द्वारा तुम्हारी रोज़ी के रूप में फल निकाले, और नौका (या जहाज़) को तुम्हारे सेवा कार्य में लगाया कि दरिया में उस के हुक्म से चले, और नदियों को तुम्हारे सेवा कार्य में लगाया, और सूरज और चांद को तुम्हारे सेवा-कार्य में लगाया कि निरन्तर चक्कर लगा-

रहे हैं, और रात और दिन को तुम्हारे सेवा कार्य में लगाया।'
और तुम्हें वह कुछ दिया जो तुम ने उस से मांगा, यदि तुम
अल्लाह की नेमतों को गिनना चाहो तो उन्हें पूरा गिन नहीं
सकते। वास्तव में मनुष्य बड़ा अन्यायी और अकृतज्ञ है।'

—इब्राहीम ३२-३४

मनुष्य बल एवं घृणा के द्वारा कार्य नहीं कर सकता। वही कार्य सुरीति से होता है जब आन्तरिक प्रसन्नता तथा हार्दिक प्रेरणा से हो।

जब व्यक्ति किसी अक़ीदे की ओर चिन्तापूर्वक एवं हार्दिक रूप से आकर्षित होता है तो अपना पूरा अस्तित्व उस को प्रस्तुत कर देता है, हर समय उसी के लिए गतिशील रहता है तथा सोते में उसी के स्वप्न देखता है। यह भावना सिद्धांतों को समझने तथा उस की उत्तम सेवा करने में काफी सहयोगी सिद्ध होती है इसी कारण इस्लाम केवल सैद्धांतिक ईमान को पर्याप्त नहीं समझता तथा उसे उसी समय स्वीकार करता है जब वह बाद के चरण के लिए सीढ़ी का काम करे। अर्थात् मनुष्य बुद्धि तथा भावुकता के साथ ईमान लाये।

ईमान के विषय में अन्तःप्रवृति की सुन्दरता आवश्यक है। वह व्यक्ति मुसलमान नहीं है जो अल्लाह को तो पहचानता हो परन्तु उससे घृणा करता हो, इसी प्रकार उस मुसलमान का भी कोई महत्व नहीं है जिसे अल्लाह का ज्ञान तो प्राप्त हो परन्तु उस की अन्तः प्रवृति खाली तथा मौन हो और उस में इन्कार एवं अवज्ञा तो न हो तथा कृतज्ञता एवं शुक्र की भावना का भी अभाव हो।

वास्तविक अर्थ में मुसलमान वह है जो विश्वास की सीमा तक ईश्वर से परिचित हो जिसका उसे आभास भी हो जो उस महिमावान ईश्वर की महानता तथा नेमतों का स्वीकरण करे।

इस प्रकार का ईमान ही फलदायक ईमान होता है, इसी के द्वारा चमत्कार प्रत्यक्ष होते हैं, इसी से राज्यों का निर्माण होता है तथा यही सभ्यताओं को जन्म देता है। यही ईमान कष्टों को मधुर बना देता है अतः व्यक्ति दीन के वक्तव्यों तथा मांगों को प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण कर लेता है।

क्या आप समझते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० को घन्टों नमाज़ की दशा में खड़े रहने के कारण शरीर की थकन, पीड़ा एवं कष्ट परेशान करता था? जिस प्रकार एक दोषी शिष्य को थकन और पीड़ा का अनुभव होने लगता है जब उसे घन्टों दण्ड के रूप में खड़ा कर दिया जाता है?

रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ यह मामला न था वरन् ईश्वर की स्तुति

तथा प्रशंसा की मिठास और विनम्रता एवं ईश्वर भय में लीनता ने इन समस्त चीज़ों को भुला दिया था तथा देर तक खड़े रहने के कष्ट पर आप ने क़ाबू पा लिया था।

साहसी, शक्तिशाली एवं आवेशपूर्ण व्यक्ति कभी-कभी काम करता है और निरन्तर करता है यहां तक कि उस का यह कार्य एवं परिश्रम उस सीमा तक पहुंच जाता जहां आलसी एवं मन्द बुद्धि व्यक्तियों का पहुंचना असम्भव हो जाता है।

ईमान वाले तथा दृढ़ संकल्प व्यक्तियों का व्यवहार एवं कर्मों का मापदण्ड बिल्कुल दूसरा होता है तथा भ्रम व शंकाग्रस्त और विवश व्यक्तियों का दूसरा। हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान को देखिये 'खन्दक़-युद्ध' के अवसर पर मुश्रिकों के विरुद्ध गुप्तचर का काम कर रहे थे। रात में कड़ाके की सर्दी थी, अन्तरिक्ष कोहरों तथा ओलों से धुंधला हो चुका था, अति तीव्र हवा के झक्कड़ चल रहे थे। एक कवि के अनुसार—

'ठण्ड इतनी कड़ाके की थी कि कोई बाहर निकलने का साहस न कर सकता था सिवाये कुत्तों के जो दुम दबा कर भाग रहे थे।'

परन्तु इस शान्तिपूर्ण रात में हुज़ैफ़ा बिन यमान अपना कर्त्तव्य पूरा करने के लिये गये उन के अपने कथनानुसार मानो 'मैं स्नानागार में तैर रहा था।'

यह ईमान की गर्मी थी जो इस मोमिन पुरुष से यह सेवा करा रही थी तथा उन्हें इस योग्य बना दिया था कि रात के अन्धकार को चीरते हुए अपने कर्त्तव्यों को पूरा कर रहे थे जैसे तीर कमान से निकला हो!

अग्निवर्षक भावनाओं पर केन्द्रित यह ईमान ही था जिस ने भीषण युद्धों को जारी रखा तथा स्पष्ट विजय को प्राप्त किया। इसी ईमान की सम्पन्नता थी कि शताब्दियों की जमी-जमाई हिंसा तथा अत्याचार की सरदारी एवं चौधराहट को उखाड़ फेंका गया।

इस का मूल आधार बुद्धि एवं भावनाओं में एक साथ ईमान का प्रताप श्रेष्ठ होना था जिसे ईश्वर परिचय, महिमा, एवं नेमतों के आभास की भावना तृप्त करती थी।

ईश्वर का परिचय कराने में क़ुरआन की शैली भी यही है यह ऐसी शैली है जो मानवता को हीनता तथा अपमान की बन्दगी पर नहीं वरन् प्रेम तथा ईश्वरलीनता की बन्दगी में स्थिर रखती है। कृतज्ञता के स्वीकरण तथा ईश्वरीय महिमा के अचम्भे की बुनियाद पर उन्हें ख़ुदा का

और क़ौन अपनी दयालुता
शुभ सूचना के रूप में भेजत
और इलाह (पूज्य) है ? अ
लोग करते हैं ।
कौन है जो पहली बार पै
पैदा करे । और कौन तु
(जीविका) देता है । क्या
(पूज्य) है ? कहो : लाओ
'सच्चे हो !'

इस प्रकार के निरन्तर प्रश्न म
सुदृढ़ कर देते हैं और उसे 'शिर्क'
को विशुद्ध इबादत की ओर दौड़ प

अधिकतर चिन्तन एवं सोच-विचार की आयतें इसी ठोस वास्तविकता के चारों ओर घूमती हैं।

जब 'नफ़्स' (मन) भ्रमग्रस्त हो जाता है तो प्राय: उसे एक प्रकार का चेतावनात्मक दण्ड तथा अवज्ञा के विरुद्ध धमकी की आवश्यकता होती है तथा यह चीज़ अनिवार्यत: उस मूल के विरुद्ध भी नहीं है जिस का ऊपर उल्लेख हुआ है क्योंकि यदि पिता अपने बेटे पर सख़्ती करता है तो यह सख़्ती उस की दयालुता तथा विनम्र स्वभाव को नहीं बदलती।

क़ुरआन जब ईश्वरीय शक्ति के चिन्हों को उजागर करते हुए मनुष्य की योग्यताओं को गतिशील करता है तो साथ-साथ झटके भी लगाता है ताकि चेतना व अनुभूति जाग्रत हो सके और सुप्त बुद्धि आकृष्ट हो सके। इस लिए नहीं कि वह ठिठुर जाए या कायर हो जाए। अल्लाह तआला कहता है—

> 'क्या तुम ने नहीं देखा कि अल्लाह ने आकाश से पानी बरसाया फिर धरती में उस की धारायें चलाईं, फिर उस (पानी) के द्वारा विभिन्न रंग की खेती निकालता है, फिर वह (खेती पक कर) सूख जाती है फिर तू उसे देखता है कि पीली पड़ गई, फिर उसे भुस बना देता है निश्चय ही इस में अनुस्मारक है बुद्धि वालों के लिए।' —अज़-ज़ुमर २१

फिर इस के पश्चात् फ़रमाया—

> 'तो क्या (कहना उस व्यक्ति का) जिस का सीना अल्लाह ने 'इस्लाम' के लिए खोल दिया, तो उसे अपने रब की ओर से प्रकाश प्राप्त है! तो तबाही है उन लोगों के लिए जिन के दिल अल्लाह के ज़िक्र से ख़ाली रह कर सख़्त हो गये हैं। यह लोग खुली गुमराही में पड़े हुए हैं।' —अज़-ज़ुमर २२

स्वयं अल्लाह के रसूल ने ईमान के बीजारोपण तथा उस के फलों की देख-रेख में इसी विधि को अपनाया। ईश्वर की ओर आकर्षण तथा प्रत्यावर्तन के विषय में आप का व्यवहार एक जीवित उपदेश है जो हृदयों को ईश्वर की महिमा एवं प्रताप की अनुभूति से भर देता है, उन्हें ईश्वर की अवज्ञा से घृणित कर देता तथा उन्हें उस के आज्ञापालन पर स्थिर कर देता है। इस प्रकार हृदय ईश्वर के मार्गदर्शन के लिए, सन्तुष्ट हो जाते थे और उन में किसी प्रकार की अवज्ञा शेष न रहती थी।

ज़ुबैर बिन मुत्इम रज़ि० से हदीसोल्लेख है कि मैं ने अल्लाह के रसूल

का सम्मान इतना अधिक हो कि
वह भय तथा कष्ट के कारण
रिसालत और रसूल पर अपना

'अब्दुल्लाह बिन हिशाम
अल्लाह के रसूल के साथ
पकड़े हुए थे, हज़रत उमर
आप मुझे मेरी जान के अ
अल्लाह के रसूल ने फ़रम
जिस के अधिकार में मेरी
होगा जब तक कि मैं तुम्हें
जाऊं ?' हज़रत उमर ने
भी अधिक मुझे प्रिय है

उमर ! अब तुम्हारा ईमान पूरा हो गया।' —बुखारी, अहमद

इस हदीस की व्याख्या की आवश्यकता है—लोगों ने 'समूईल' को निष्ठावादिता के व्यवहार का बड़ा सम्मान किया जब उस ने अपने बेटे को बलि के लिए छोड़ दिया ताकि यह उद्‌गार हो सके कि उस की शरण सुरक्षित है तथा जिस ने अमानतदार बनाया था उसे उस का सामान वापस कर सके।

जब व्यक्ति अपने गौरव की सुरक्षा हेतु, अपनी जान की बाजी भी लगा दे तो समझो कि उस ने अपना उत्तरदायित्व पूरा कर दिया।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने लोगों से यह मांग नहीं की कि वे उन के शरीर तथा उस के अंगों की पुनीतता को मानें तथा न इस की मांग की कि वे आप पर अपनी जान क़ुर्बान करें ताकि आप सल्ल० जीवित रह सकें, वे लोग अपने को हीन समझे ताकि आप सल्ल० महान हो सकें या अपनी जानों तथा मालों की आप सल्ल० के निजी सम्मान व प्रतिष्ठा की सुरक्षा हेतु भेंट चढ़ायें या ये लोग इस लिये आज्ञापालन करें ताकि उन पर आप ख़ुदाई का सिक्का जमा सकें जिस प्रकार 'फ़िरऔन' तथा अन्य अत्याचारियों ने अपनी खुदाई चलाई थी।

कदापि नहीं ! आप की इन में से कोई मांग न थी आप तो केवल यह चाहते थे कि मुसलमान आप की रिसालत के कार्य का आदर करें और आप के श्रेष्ठ मूल्यों की पैरवी करें तथा सत्य के चिन्ह एवं प्रतीक और आम अनुकम्पा के भण्डार जो आप के अस्तित्व में निहित थे उन की रक्षा करें।

सन्देष्टागण अपने लिए नहीं जीते, तथा उन पर जो कष्ट एवं कठिनाई आती है वह उन के या उन के परिवारजनों के कारण नहीं आती। वे तो पूरी सृष्टि के लिए जीवित रहते हैं। क्या वे पूर्ण हिदायत तथा आम उपकार एवं कल्याण का केन्द्र नहीं होते ?

अतः कोई आश्चर्य की बात नहीं यदि उन का प्राणोत्सर्जन एवं बलिदान भावना ईमान की जड़ों तथा पूर्णता के बन्धनों के कारण वजूद में आती है।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० इस के पात्र थे कि आप से प्रेम किया जाये। दुनिया किसी ऐसे व्यक्ति से परिचित नहीं है जिस की इतनी महानता तथा वैभव हृदयांकित हो, और जिस के सम्मान तथा प्रेम भाव में लोग फ़िदा होते हों, जितना प्रेम तथा सम्मान अन्तिम सन्देष्टा हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हिस्से में आया।

नेतृत्व—जिस पर प्राण निछावर हो रहे थे

हज़रत अब्दुल्लाह बिन सलाम रजि० से हदीसोल्लेख है कि जब रसूलुल्लाह मदीना आये तो आप के पास आने वालों का तांता बंध गया। उन में से मैं भी एक था। जब मैं ने आप के मुख को देखा तथा गम्भीरता-पूर्वक अवलोकन किया तो मुझे अनुमान हो गया कि यह मुखमण्डल किसी झूठे व्यक्ति का नहीं हो सकता। मैं ने सब से पहले जो बात आप सल्ल० से सुनी वह यह थी—

> 'हे लोगो! सलाम को फैलाओ, खाना खिलाओ, रात में जब लोग सो रहे होते हैं नमाज़ पढ़ो तो शान्ति एवं सन्तोष के साथ स्वर्ग में प्रवेश कर जाओगे।'
>
> —तिर्मिज़ी, इब्ने माजा, हाकिम, अहमद

आन्तरिक प्रकाश मुखमण्डल पर प्रत्यक्ष होता है ताकि परतों में छिपी हुई पवित्रता के चिन्ह पढ़ लिये जायें। हज़रत अब्दुल्लाह इस महान मुहाजिर के समाचारों की तस्दीक़ करने गये थे। अतः देखते ही प्रथम चरण में जानकारी तथा सन्तोष मिल गया कि यह व्यक्ति झूठा नहीं हो सकता। किसी व्यक्ति की नैतिक तथा बौद्धिक झलकियां ऊपरी दृष्टि से नहीं दिखाई देतीं बल्कि वह नैतिक छाप जो इस महान रूह पर प्रत्यक्ष थी आन्तरिक सत्यता का विषय बन गयी।

फिर भी जिन लोगों को आप सल्ल० की सुसंगति मिली उन्हों ने उन्माद की सीमा तक प्रेम किया। उन्होंने इस प्रेम के मार्ग में गर्दन कटने या नाखून उखड़ने की परवाह न की। यह प्रेम केवल इस कारण था कि जो श्रेष्ठता आपको प्राप्त थी किसी अन्य व्यक्ति के लिए वहां तक पहुंचना असम्भव था। यही श्रेष्ठता लोगों को प्रभावित करती थी।

रसूलुल्लाह सल्ल० के मुक्त किए हुए दास हज़रत सौबान आप से अति प्रेम करते थे आप सल्ल० के बिना उन्हें सब्र न आता। एक दिन रसूलुल्लाह आये, देखा कि वे परेशान बैठे हैं मुखमण्डल से शोक एवं दुख प्रत्यक्ष था तो अल्लाह के रसूल ने पूछा : 'क्या बात है? तुम्हारा रंग क्यों बदला हुआ है?' उन्होंने उत्तर दिया : 'हे अल्लाह के रसूल! न मैं रोगी हूं न मुझे कोई कष्ट है परन्तु जब आप से दूर रहता हूं तो विक्षिप्तता तथा एकान्त का अनुभव करता रहता हूं फिर जब आखिरत का स्मरण करता हूं तो यह शंका होती है कि वहां आप की संगति नहीं मिलेगी क्योंकि आप 'इल्लीयीन' (एक शुभ स्थान) में नबियों के साथ होंगे। और यदि मुझे जन्नत

में स्थान मिल भी गया तो वह सब से नीचा होगा और यदि स्वर्ग से वंचित हो गया तो कभी आप के दर्शन न कर सकूंगा।"—इसी अवसर पर यह आयत उतरी—

> 'जो अल्लाह और उस के रसूल का आदेश मानेगा वह उन लोगों के साथ होगा जिन पर अल्लाह ने कृपा की है, 'नबी', 'सिद्दीक़', 'शहीद' और नेक लोग हैं। और ये कैसे अच्छे साथी हैं।' —अन-निसा ६९
>
> 'हदीस में है कि व्यक्ति महाप्रलय में उसी के साथ होगा जिस से उस ने प्रेम किया है।' —बुखारी, मुस्लिम

अभिप्रेत कामवासना का प्रेम नहीं वरन् आदर्श का प्रेम है। क्योंकि जब व्यक्ति अपने जैसे या अपने से उच्च व्यक्ति से प्रेम करता है तो उस का प्रेम हृदय को उन गुणों के लिए उदार बना देता है जो उन महान व्यक्तियों में होते हैं तथा उनकी योग्यता की महानता उन के हृदयांकित हो जाती है।

कायर एवं कृपण व्यक्ति साहस तथा दानशीलता के गुणों का स्वागत नहीं करता। इन का महत्व तो वही जान सकता है जो स्वयं भी इन गुणों से परिचित हो। अल्लाह का फ़ज़्ल है कि महान व्यक्तियों को ऐसे अनुयायी मिल जाते हैं जो महानता के सौंदर्य के प्रेमी होते हैं। इसी लिये उक्त आयत के पश्चात् अल्लाह फ़रमाता है—

> 'यह अल्लाह का फ़ज़्ल (देन और कृपा) है और जानने वाले की हैसियत से अल्लाह काफ़ी है।' —अन-निसा ७०

सत्य बात यह है कि प्रेम करने वाला अनुयायी आचरणवान एवं सुशील होता है। विश्व में ऐसे कृपण तथा तुच्छ व्यक्तियों की कमी नहीं है जिन्हें यदि श्रेष्ठता मिल जाये तो दूसरों को हीन समझने लगते हैं और यदि वे स्वयं हीन हों तो श्रेष्ठ व्यक्तियों से घृणा करते हैं। न जाने उन के हृदय द्वेष, घृणा तथा हीनता से कब रिक्त होंगे ? परन्तु जो लोग सिद्धान्तों में कठोर तथा शुद्ध प्रेमी होते हैं वे उन सिद्धान्तों के अंगीकार व्यक्ति को जहां पा लेंगे, घेर लेंगे। उस के प्रेम से उन के नेत्र प्रकाशमान हो जायेंगे। अर्थात् उन सिद्धान्तों से विमुग्धता का प्रकटन होगा जो उस के अन्दर विद्यमान हैं तथा जिन्हें उस के द्वारा शक्ति मिल रही है।

आप का रब इस विश्वास को समाप्त नहीं करता न इस के मानने वाले व्यक्तियों को विनष्ट करता है।

> 'हज़रत अनस से रिवायत है कि : 'जब वह दिन आया जब नबी मदीना में दाखिल हुए तो वहां की प्रत्येक चीज़ को प्रकाश-

मान कर दिया तथा जब आप की मृत्यु का दिन आया तो प्रत्येक चीज अन्धकारमय हो गई और हम अंत्येष्टि व्यवस्था से निवृत्त न हुए थे कि हमारे दिल हमें अजनबी लगने लगे।'

—तिर्मिजी, हाकिम, अहमद

भावना की उत्फुल्लता देखिये, किस प्रकार अपने प्रफुल्ल रंग में सृष्टि को रंग लेती है तथा अभाव की निराशा का भी अवलोकन कीजिये कि किस प्रकार प्रत्येक चीज पर अपनी अशुभ छाया डाल देती है।

यह था हिजरत के गन्तव्य स्थान का वृत्तांत! जहां अल्लाह और उस के सन्देष्टा से प्रेम किया जाता था।

यह सुदृढ़ एवं शक्तिशाली प्रेम ही इस्लाम की वैभवपूर्ण सफलता का रहस्य है। तथा इसी के कारण प्रत्येक व्यक्ति प्रसन्नतापूर्वक बलिदान एवं त्याग के लिए तत्पर दिखाई देता है।

यही महत्त्वपूर्ण सम्मान क़ौम को शान्ति के विश्वास से सम्बद्ध रखता है तथा उन के साहस एवं वीरता के सामने लम्बे-लम्बे व्यवधान भी सिमट जाते हैं।

हजरत हसन बिन अली रजि० ने हिन्द बिन अबी हाला रजि० से रसूलुल्लाह सल्ल० के गुण पूछे तो उन्होंने आप सल्ल० के शारीरिक रूप एवं मुखाकृति का वर्णन किया और यह भी फ़रमाया—

'शान्तिपूर्ण एवं प्रतिष्ठित गति से चलते, लम्बे पग रखते तथा तेज चलते-चलते में ऐसा लगता कि पूर्ण शक्ति के साथ ऊपर से नीचे की ओर उतर रहे हैं, जब किसी ओर ध्यान देते तो साकार आकर्षित होते, दृष्टि नीची रहती, आकाश की तुलना में पृथ्वी की ओर निगाह लम्बी होती, देखने का ढंग लज्जापूर्ण था, अपने साथियों से आगे चलते और जिस से भेंट होती तो सलाम में प्राथमिकता करते।'

मैं ने कहा: भाषण शैली पर प्रकाश डालें, उन्हों ने बताया—

'रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम निरन्तर चिन्तित रहते, हर समय व्याकुल, आराम का अवसर ही नहीं, अनावश्यक वार्ता न करते, अधिकतर मौन रहते, मुंह खोल कर बात शुरू तथा समाप्त करते कि दांत दिखाई देते, अर्थ-पूर्ण व रहस्यमय बातें करते, वार्ता प्रत्यक्ष एवं निःसंकोच करते जिसमें व्यर्थ बातें न होतीं, न कोई कमी होती, सुशील, न शुष्क स्वभाव, न अश्लील भाषा, एहसान की क़द्र करते चाहे साधारण

हो, किसी चीज की निन्दा न करते, खाना खाते समय खाने को न बुराई करते न तारीफ़, जब 'हक़' (स्वत्व) का मामला होता तो आप अत्यधिक क्रुद्ध होते यहां तक कि उसे वापस कराते, अपने निजी मामले में न क्रुद्ध होते न बदला लेते, जब इशारा करते तो पूरे हाथ के साथ इशारा करते, जब आश्चर्य करते तो हाथ की हथेली पलट देते, जब क्रोध में होते तो टालते तथा मुंह फेर लेते, जब प्रसन्न होते तो नजर नीची कर लेते, आप की हंसी बहुधा मुस्कान तक सीमित रहती।'

इब्ने अबी हाला ने आप के उठने बैठने के विषय में बताया—

'अल्लाह के रसूल अनावश्यक जबान न खोलते, अपने साथियों की हृदयग्राह्यता करते उन्हें छिन्न-भिन्न न होने देते, प्रत्येक जाति के बड़ों तथा क़बीलों के सरदारों का सम्मान करते तथा उन्हें उन की जाति या क़बीले का जिम्मेदार बनाते, आम लोगों से सचेत एवं सावधान रहते परन्तु किसी के विषय में कुविचार न रखते।

अपने साथियों की खोज करते रहते, एक से दूसरे का कुशल-मंगल पूछते, अच्छे को अच्छा कहते और उस को बढ़ावा देते, बुरे को बुरा कहते और उसे प्रभावहीन बनाते, सन्तुलित गुणों के मालिक थे, कभी ग़ाफ़िल न होते कि कहीं लोग भी ग़ाफ़िल हो जायें या साहसहीन हो जायें।

प्रत्येक दशा के लिए आप सामग्री रखते, हक़ (अधिकार) के विषय में सचेत रहते, न दूसरों के अधिकार छीनते।

जो लोग विनम्रतापूर्ण मिलते, आप उन्हें उत्तम समझते जो सब से अधिक शुभ चिन्तक होते, सब से अधिक महत्वपूर्ण एवं सम्मानित वे लोग होते जो दूसरों से सहानुभूति एवं सहयोग का व्यवहार करते।'

फिर आप की बैठक का हाल बयान किया—

'रसूलुल्लाह उठते-बैठते हर समय ईश्वर के स्मरण में लीन रहते, अपने लिये कोई स्थान न निश्चित करते न विशेष! जहां सभा समाप्त होती वहीं बैठ जाते और सब से ऐसा ही कहते, प्रत्येक साथी को पूर्ण अवसर देते ताकि कोई यह न समझे कि अमुक व्यक्ति का सम्मान आप अधिक करते हैं, जो आप के साथ बैठता या खड़ा होता तो आप खामोश रहते

यहां तक कि वह स्वयं आकर्षित होता, जो व्यक्ति अपनी आवश्यकता बताता उसे या तो पूरा करते या विनम्रतापूर्ण उत्तर देते, आप की सुशीलता से सब लोग प्रभावित थे, आप सल्ल० उन के मानो पिता थे तथा वे सब सत्य के मामले में आप के निकट आपसी नातेदार थे। वे आप के पास ईश्वर भय के आधार पर ही एकत्र रहते, आप की मज्लिस (सभा) शान्तिमय, लज्जापूर्ण धैर्यवान तथा अमानतदारी की सभा होती, उस में चिल्लाकर बातचीत न होती, कोलाहल न होता, परोक्ष निन्दा न होती, लोग ईश्वरभय तथा संयम के कारण एक दूसरे से सहानुभूति रखते, बड़ों का आदर करते छोटों पर दया करते, जरूरतमन्द की आवश्यकता पूरी करते तथा अजनबी से प्रेम करते।'

आप की जीवनी के विषय में बताया—

'आप रूपवान, सुशील एवं विनम्र हृदय थे। कठोर हृदय तथा निष्ठुर न थे, कोलाहल तथा अश्लील भाषण से कोई सम्बन्ध न था, निन्दा तथा भर्त्सना न करते, न किसी की अधिक प्रशंसा करते, जिस चीज की रुचि न होती उस की उपेक्षा करते, निराशा जैसी चीज आप से कोसों दूर रहती, तीन चीजों से सदा बचते: किसी की निन्दा करना, किसी में दोष निकालना, किसी की बुराई खोजना। उन्हीं बातों के विषय में बोलते जिन में सुप्रतिफल की आशा होती, जब आप वार्ता करते तो साथी इस प्रकार मौन हो जाते जैसे उन के सिरों पर पक्षी बैठे हों, तथा जब आप मौन होते तो लोग बातें करते, आप के पास कभी तर्क-वितर्क न करते, जो व्यक्ति भी आप से बातचीत करता लोग ध्यानपूर्वक सुनते यहां तक कि उस की बात पूरी हो जाती, आप उस बात पर हंसते जिस पर आप के साथी हंसते, और जिस बात पर साथी आश्चर्य करते आप भी करते, आप अजनबी व्यक्ति के कटु लहजे को सहन करते, और फ़रमाते कि जब तुम लोग किसी आवश्यकताधारी को देखो तो उस की आवश्यकता पूरी कर दो तथा प्रशंसा की आशा तो उसी हस्ती से चाही जाती है जो प्रतिफल देने वाली है।'

—तिर्मिज़ी

ये वे संक्षिप्त चिन्ह थे जो आप सल्ल० की जीवनी में सहाबा कराम

देखते थे।

परन्तु रसूलुल्लाह सल्ल० सुआचरण तथा सुव्यवहारों व सुशीलताओं से गुण युक्त थे मनुष्य उन के मर्म तथा रहस्यों को नहीं पा सकता ! जब बड़े लोगों के विषय में पूर्ण परिचय प्राप्त नहीं हो पाता है तो भला उस महान व्यक्ति का रहस्य परिचय कैसे प्राप्त हो सकता है ? जिस का आचरण एवं नैतिकता क़ुरआन थी। जो उम्मत (समुदाय) मदीना में निर्मित हुई वह अब श्रेष्ठता की चरम सीमा को पहुंच गयी थी। वह केवल अल्लाह के लिए कार्य करती, तथा जिहाद में व्यस्त रहती थी। और पूरे साहस तथा विश्वास के साथ अभीष्ट गन्तव्य की ओर गतिशील थी। अपने नबी के आस-पास इस प्रकार रहते जैसे शिष्य गुरु के पास घेरा बना कर बैठते हैं या सेना अपने सेनाध्यक्ष के पीछे दौड़ती है या बच्चे अपने पिता से लिपटते हैं।

इस उम्मत ने भ्रातृत्व के द्वारा अपने को एकात्मता में बदल लिया था जो विभिन्न शरीरों में गतिशील थी। उन की स्थिति मजबूत ईंटों की थी जो एक ठोस भवन में लगा दी जाती हैं।

इस उम्मत ने न्याय की बुनियाद पर दूसरों से सम्बन्ध स्थापित किये उस के पड़ोस में किसी पर ज़ुल्म न होता न कोई असहाय उन की कृपाओं से वंचित रहता।

हालांकि ये वे लोग थे जो पहले से अत्याचारों के अभ्यस्त थे परन्तु इस्लाम ने उन के भूत का इतिहास भुला दिया। जिस व्यक्ति ने अपनी अज्ञानता तथा कुफ़्र से छुटकारा पा लिया तथा अल्लाह की ओर पलट आया तो उसे भूत की ओर देखने की आवश्यकता ही नहीं थी वरन् वह तो उम्मते मुस्लिमः का एक सम्मानित अंग बन गया था। उस की गत बुराइयां समाप्त कर दी गयीं ताकि अनुकूल कर्मों के द्वारा अपने नवजीवन का प्रारम्भ कर सकें परन्तु जो अपने कुफ़्र पर अड़े रहे तथा सत्य मार्ग से दूसरों को रोकते रहे उन का मुक़ाबला अनिवार्य था ताकि यह भू-भाग उन के कुफ़्र तथा अपराधों से पवित्र हो जाये—

> 'निस्सन्देह जिन लोगों ने 'कुफ़्र' किया और ज़ुल्म पर उतर आये, अल्लाह उन्हें क्षमा नहीं करेगा, और न उन्हें कोई मार्ग दिखायेगा। सिवाय 'जहन्नम' के मार्ग के जिस में वे सदा पड़े रहेंगे। और यह अल्लाह के लिए बहुत ही सरल है।'
>
> —अन-निसा १६८, १६९

यह उम्मत अल्लाह के लिए प्रेम करती तथा दिन-रात उसी की

इबादत में लीन रहती थी। उस ने दो मार्गों में से एक का चयन किया था, या तो उसे ईश्वरेच्छा के लिए जीवित रहना है या इसी मार्ग में अपना जीवन त्याग देगी।

यदि आप उस समय के मुसलमानों की तुलना समूचे विश्व से करें तो आप देखेंगे कि प्रभुत्व तथा श्रेष्ठता के तत्व उन के यहां पाये जाते थे फिर भी अन्य धर्मों की बुनियादें हिल रही थीं अत: आश्चर्य नहीं होना चाहिये कि कुछ ही वर्षों में उन्होंने एक ऐसा नवीन राज्य स्थापित कर लिया जो अपने 'रब' के आदेशों का पाबन्द था।

फिर विस्तृत क़ानून मदीना में उतरने लगे ताकि मुसलमान सामूहिक एवं व्यक्तिगत मामले व्यवस्थित कर सकें। अत: धीरे-धीरे 'हलाल' तथा 'हराम' के नियम स्पष्ट हो गये यहां तक कि वे पूरे हो गये जैसा कि उन्हें शरीअत के इतिहास ने सुरक्षित कर लिया है।

इस्लामी दण्ड विधान स्थापित हुआ, 'ज़कात' फ़र्ज़ हुई, 'रमज़ान' के 'रोज़े' फ़र्ज़ हुए तथा मदीना के प्रथम काल में नमाज़ की रक्अतों में वृद्धि हुई।

हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं—

> 'प्रारम्भ में नमाज केवल दो रक्अत फ़र्ज़ हुई फिर यात्रा की नमाज का आदेश आया तथा घर पर रहते हुए की (नियमानुसार) नमाज में वृद्धि हुई।' —बुख़ारी

एक अन्य हदीस में हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं—

> 'पहले नमाज दो रक्अत फ़र्ज़ हुई फिर नबी ने हिजरत की तो चार रक्अत फ़र्ज़ हो गयी और पहली नमाज को यात्रा की नमाज़ बना दिया गया।' —बुख़ारी

उल्लेखनीय है कि हिजरत के पहले ही वर्ष रसूलुल्लाह आइशा रज़ि० को विदा करा के घर लाये, निकाह 'हिजरत' से पहले ही हो चुका था[1]।

हम अन्य स्थान पर रसूलुल्लाह की पत्नियों तथा बहुपत्नी विवाह पर वार्ता करेंगे।

---

१. हज़रत आइशा कहती हैं कि रसूलुल्लाह ने हिजरत से दो या तीन वर्ष पूर्व हज़रत ख़दीजा रज़ि० के देहान्त के बाद मुझ से शादी की, उस समय मेरी आयु सात वर्ष की थी। फिर आप मदीना आये तो मेरे पास कुछ स्त्रियां आयीं थे मुझे विदा करा के रसूलुल्लाह के घर ले गयीं। उस समय मैं नौ वर्ष की थी। —बुख़ारी

अध्याय—५

भीषण संघर्ष काल

- शक्तिशाली एवं प्रतापवान दीन
- सराया ?
- सरीया—अब्दुल्लाह् बिन जह्श (रज़ि०)
- बद्र का युद्ध
- पूछ-ताछ एवं ताड़ना ?
- युद्ध के पश्चात् ?
- यहूदी तथा मुसलमानों के बीच संघर्ष
- क़ुरैश से झड़पें
- ओहुद का युद्ध
- परीक्षाएँ शिक्षा देती हैं ?
- ओहुद के शहीद
- ओहुद के प्रभाव
- बनू नज़ीर का देश निकाला !
- बद्र की अन्तिम झड़प
- दूमतुलजन्दल की झड़प
- इफ़्क की घटना
- अह्ज़ाब का युद्ध
- बनू क़ुरैज़ा का अंजाम

भगाया था। इस नए वतन में भ
युद्ध स्थिति बनी हुई थी। यह ब
संघर्ष, द्वेष और संवेदनात्मक स्थि
जाये ?

इस पर आधिक्य यह कि रसू
क़ुरैश से निकल कर समूचे अरब
के मूर्तिपूजक खुले आम विरोध कर
से मिल गया जो इस दीन (धर्म)
इस्लाम के सामने अरब की मूर्ति
रही थी।

अत: इस के अतिरिक्त कोई
उन्मूलन किया जाये, प्रत्येक आक्र

तथा वह युद्ध शक्ति एकत्र की जाये जो सिर उठाने वाले अपराधियों को कठोर दण्ड दे सके।

इस्लाम ने जिस युद्ध की अनुमति दी तथा रसूलुल्लाह और आप के सहाबा (साथीगण) को उस में भाग लेना पड़ा वह 'पवित्र जिहाद' है। हम ने अपनी अन्य पुस्तकों में बौद्धिक एवं ऐतिहासिक प्रमाणों से सिद्ध किया है कि रसूलुल्लाह तथा खुल्फ़-ए-राशिदीन के समय में जो युद्ध हुए वे सत्य की रक्षा, अत्याचारों के उन्मूलन तथा अवज्ञाकारियों एवं दमनकारियों को दण्डित करने के लिए आवश्यक थे।

मुस्तशिरक़ों (वे ग़ैर एशियाई लोग जिन्हों ने एशियाई विज्ञानों तथा धर्मों का गहन अध्ययन किया एवं उन के विरुद्ध पक्षपात फैलाया) तथा अन्य धर्मों के अनुयायियों का यह अधिप्रचार कि मुसलमानों ने अनावश्यक शक्ति का प्रयोग किया, एक निराधार एवं झूठा आरोप है तथा उन अपवित्र प्रयत्नों एवं षडयन्त्रों की एक कड़ी है जो मुसलमानों तथा इस्लाम का अस्तित्व समाप्त करने, और सलीब तथा यहूदियत का दास बनाने के लिए रचाये जा रहे हैं।

इस्लाम ने जितने युध्द लड़े हैं उन सब में इस्लाम तथा उस के अनुयायियों को मिटा डालने की धमकियां दी गयी थीं। विभिन्न शक्तियां उस पर टूट पड़ी थीं बलिक उस के विरुध्द समस्त दुश्मन वर्ग एक हो गये थे। यह सब इस्लाम के प्रारम्भिक काल में हिजरत से पहले तथा उस के पश्चात् घटित हुआ तथा आज भी यही हो रहा है। इस्लामी क्षेत्र चोरों और डकैतों के अधिकार में हैं तथा उन्हें हड़प करने के लिये राजनैतिक चालें भी चलते हैं और चलते रहे हैं। फिर यह बात क्यों कही जाती है कि इस्लाम के प्रचार में हथियारों ने सहयोग दिया है तथा मुसलमानों ने क़ुर्बानी व त्याग और जिहाद व शहादत के द्वारा अपने वतन की रक्षा की?

फिर वह क़ौम मृत्यु की रुचि से अपरिचित क्यों रह सकती है जिस पर प्रत्येक दिशा से डाकू तथा अत्याचारी आक्रमण कर रहे हों? कदापि नहीं, ये अत्याचारी कब तक दनदनाते फिरेंगे?

'जिन लोगों ने कुफ़्र किया वे यह न समझें कि वे बाज़ी ले गए वे कभी हरा नहीं सकते।

• जहां तक हो सके तुम लोग (सेना) शक्ति और तैयार बंधे हुए घोड़े उन के लिए तैयार रखो, ताकि इस के द्वारा अल्लाह के शत्रुओं और अपने शत्रुओं और इन के सिवा औरों को भयभीत कर दो जिन्हें तुम नहीं जानते। अल्लाह उन्हें जानता है। और

वह क्या बात है ? कहा : मैं ने रसूलुल्लाह को कहते हुए सुना : 'जिस ने धनुर्विद्या सीखने के पश्चात् उसे छोड़ दिया वह हम में से नहीं है ।' —मुस्लिम

विचारणीय है कि वृध्द एवं दीर्घायु थे फिर भी उचित निशाना लगाने, हाथों को साफ़ रखने तथा गतिशील रहने के लिए सुन्नत का कितना अनुकरण करते थे। जब इस्लाम युध्द की योग्यता उत्पन्न करने पर जोर देता है तो युवक एवं वृध्द सब पर उस को फ़र्ज़ करता है ।

अबू नजीह सुलमी कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल को कहते सुना : 'जिस ने एक तीर चलाया उसे जन्नत में एक स्थान मिल गया ।' अतः मैं ने उस दिन दस तीर चलाये । और मैं ने आप को कहते सुना : 'जिस ने ईश्वरीय मार्ग में एक तीर चलाया उसे एक गुलाम स्वतन्त्र करने का प्रतिफल मिल गया ।' —अबू दाऊद, अहमद, हाकिम, नसाई

'उक़्बा बिन आमिर (रज़ि०) से हदीसोल्लेख है कि मैं ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को कहते हुए सुना : अल्लाह तआला एक तीर के बदले तीन व्यक्तियों को जन्नत में प्रवेश करेगा। उस के बनाने वाले को, (यदि वह बनाने में खैर का संकल्प रखता हो), उसे फेंकने वाले को तथा तीर उठाकर देने वाले को, तो तुम लोग धनुर्विद्या सीखो और घोड़ों की सवारी करो तथा सवारी से अधिक प्रिय यह है कि तीर चलाओ । प्रत्येक क्रीड़ा व्यर्थ है, केवल तीन प्रकार के खेल वांछनीय हैं : घुड़सवारी का उत्तम अभ्यास, बाल बच्चों से दिल बहलाना तथा कमान से तीर चलाना । ये समस्त खेल सत्य हैं तथा जिस ने धनुर्विद्या सीखने के बाद उस से घृणित होकर उसे छोड़ दिया तो उस ने एक नेमत त्याग दी अथवा उस का इन्कारी हो गया ।' —अबू दाऊद, नसाई, अहमद

'अब्दुल्लाह बिन उमर से रिवायत है कि घोड़े के मस्तक में महाप्रलय तक ख़ैर, (कल्याण) प्रतिफल एवं माले ग़नीमत रख दिया गया है ।' —बुख़ारी, मुस्लिम

इस प्रकार रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने उत्तम घुड़सवारी की ओर प्रेरित किया है तथा युद्ध के एक प्रकार को प्रत्यक्ष करने से अन्य प्रकारों का महत्व घटता नहीं है वरन् बढ़ता है ।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने समुद्री युद्ध की प्रेरणा दी है :

'एक समुद्री युद्ध दस थल युद्धों से उत्तम है जिस ने समुद्र पार कर लिया मानो उस ने समस्त यात्रियां पार कर लीं तथा समुद्री यात्रा में कै (वमन) तथा चक्करों में ग्रस्त व्यक्ति खून में लिथड़े व्यक्ति के समान है।' —हाकिम

हुकूमतों को जल, थल तथा वायु सेना की आवश्यकता होती है तथा प्रत्येक प्रकार का हथियार सफलता में सहयोगी सिद्ध होता है। ईश्वर की प्रसन्नता उस सैनिक को मिलती है जिस ने शत्रु के सब से अधिक आघात पाये हों। ऐसा व्यक्ति अपनी उम्मत तथा अक़ीदे की प्रतिष्ठा सुरक्षित रखने में सब से आगे होता है चाहे वह पैदल हो या तीर चलाने वाला अथवा जल सेना से सम्बन्धित हो या वायु सेना से।

सराया[1]

जब मुसलमानों की स्थिति सुदृढ़ हो गयी तो वे सशस्त्र टुकड़ियों को इधर उधर भेजने लगे ताकि मरुस्थल में चक्कर लगा कर मक्का और शाम के क़ाफ़िलों तथा इधर उधर लूट पाट करने वाले क़बीलों पर नज़र रखें तथा उन से परिचित रहें।

१. रमज़ान एक हिज्री में हम्ज़ा बिन अब्दुल मुत्तलिब (रज़ि०) की तीस मुसलमानों सहित अबू जह्ल से मुठभेड़ हो गयी जो क़ुरैश के एक क़ाफ़िले का नेतृत्व कर रहा था। उस के साथ ३०० सवार थे। दोनों पक्षों के बीच मजदी बिन उमर जुहनी ने बीच बचाव करा दिया और जंग टल गयी।

२. इसी वर्ष शव्वाल के महीने में उबैदा बिन हारिस ६० सवारों सहित राबिग़ घाटी की ओर गये जहां २०० मुश्रिकों से मुठभेड़ हो गयी। जिन का नायक अबू सुफ़्यान था। दोनों पक्षों की ओर से बाणवर्षा की गयी परन्तु नियमानुसार युद्ध न हुआ।

३. इसी वर्ष एक माह बाद 'ज़ीक़ादा' में सअ्द बिन अबी वक़्क़ास २० सवारों सहित क़ुरैश के एक क़ाफ़िले की छेड़ छाड़ के लिए निकले परन्तु क़ाफ़िला बच बचा कर निकल गया।

४. सफ़र २ हि० रसूलुल्लाह सअ्द बिन उबादा अंसारी को मदीना

---

१. रसूलुल्लाह के समय के उन युद्धों को सराया कहते हैं जिनमें रसूलुल्लाह शरीक न हुए हों। जिसमें रसूलुल्लाह शरीक हुए उसे ग़ज़्वा कहते हैं। —अनुवादक

में अपना क़ाईम मुक़ाम नियुक्त कर स्वयं निकले तथा 'वुद्दान' के स्थान तक पहुंचा गये, क़ुरैश तथा बनी हम्ज़ा से सहप्रतिज्ञापूर्ण समझौता हो गया।

५. रबी-उल-अव्वल २ . हि० में रसूलुल्लाह (सल्ल०) २०० अंसार और मुहाजिरों को लेकर क़ुरैश के क़ाफ़िले को जिस का नेतृत्व उमैया बिन खलफ़ कर रहा था—भयभीत करने के लिए 'बुआत' के स्थान तक आये। उमैया के साथ १०० मुश्रिक थे परन्तु इस बार भी क़ाफ़िला बच कर निकल गया।

६. जमादी में 'यम्बाअ्' की घाटी के निकट 'अशीरा' की ओर निकले वहां एक मास तक ठहरे तथा बनी मुद्लिज से शान्ति समझौता किया।

७. फिर 'कुर्ज़ बिन जाबिर फ़हरी' ने मदीना पर हमला कर दिया तथा वहां के पशुओं को हांक ले गया। रसूलुल्लाह उस का पीछा करने निकले यहां तक कि 'बद्र' के निकट 'सफ़वान' घाटी तक पहुंच गये परन्तु जाबिर दूर जा चुका था। इतिहासकारों ने इसे 'बद्र का प्रथम युद्ध' का नाम दिया है।

इन टुकड़ियों को इधर उधर भेजने की तत्वदर्शिताऐं निम्नलिखित थीं—

प्रथम यह कि मदीना के मुश्रिकों, यहूदियों तथा लुटेरे बद्दुओं को पता चल जाये कि मुसलमान अब शक्तिशाली हो चुके हैं अब वे दुर्बलता, शक्ति-हीनता एवं विवशता की दशा से मुक्त हो चुके हैं तथा मक्का वालों का अत्याचारकाल अब समाप्त हो चुका है। यह मुसलमानों का हक़ भी था कि वे अपनी सैनिक शक्ति का प्रदर्शन करें क्योंकि मदीना में इस्लाम के अनेकों शत्रु थे। अतः अल्लाह ने आदेश दिया था :

> 'ताकि इस के (शक्ति के) द्वारा अल्लाह के शत्रुओं और अपने शत्रुओं और इन के सिवा औरों को भयभीत कर दो जिन्हें तुम नहीं जानते। अल्लाह जानता है।' —अल-अन्फ़ाल ६०

दूसरी प्रकार के वे शत्रु थे जो अपनी शत्रुता तथा दुश्मनी को छिपाये हुए थे। इस्लाम के विरुद्ध घृणा तथा शत्रुता का प्रकटन केवल कायरता एवं कुपरिणाम के कारण न करते थे। यदि इन टुकड़ियों को न भेजा जाता तो शत्रु मदीना पर चढ़ाई करने तथा तथा मुसलमानों को आतंकित करने से न चूकते।

दूसरी तत्वदर्शिता क़ुरैश को धमकी देना थी !

क्योंकि क़ुरैश ने प्रथम दिन से मुसलमानों से संघर्ष शुरू कर रखा था,

सरीया—अब्दुल्लाह् बिन

रजब २ हि० में रसूलुल्लाह्

कुछ मुहाजिरों सहित 'नख़्ला'

और आदेश दिया कि इस मदीन

हज़रत अब्दुल्लाह् आदेशा

चलते रहे तथा इस के पश्चात्

रहो यहां तक कि 'मक्का' और

पहुंचो, और वहां क़ुरैश की गति

करते रहो।'

हज़रत अब्दुल्लाह् ने इस ले

और कहा मैं ने तुम पर किसी

रसूलुल्लाह ने रोक दिया है। अतः जो व्यक्ति स्वेच्छित मेरे साथ चले और शहादत का इच्छुक हो तो ठीक है वरना जिसे अपने प्राण प्यारे हों वह यहीं से लौट जाये। परन्तु किसी ने लौटना स्वीकार न किया। इसी बीच वह ऊंट जिस पर सअ्द बिन अबी वक़्क़ास और उत्बा बिन ग़ज़वान सवार थे कहीं निकल गया और गुम हो गया। दोनों उस की खोज में निकले तथा अब्दुल्लाह अन्य साथियों सहित आगे निकल गये तथा नख़्ला के स्थान पर पहुंच गये। उधर से क़ुरैश का एक क़ाफ़िला निकला जिस ने अब्दुल्लाह के क़ाफ़िले पर हमला कर दिया। इस मुठभेड़ में अम्र बिन हज़्रमी मारा गया तथा दो मुशिरक बन्दी बना लिये गये तथा अब्दुल्लाह अपने साथियों सहित बन्दियों को लेकर मदीना चले आये।

लगता है यह झड़प रजब के अन्त में अर्थात् आदर के महीने में हुई।

जब यह क़ाफ़िला रसूलुल्लाह की सेवा में पहुंचा तो आप ने अप्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा कि मैं ने आदर के महीने में युद्ध के लिए नहीं भेजा था तथा क़ाफ़िला और बन्दियों के विषय में कुछ नहीं कहा।

इस घटना के पश्चात् मुशिरकों को मुसलमानों के विरुद्ध यह आरोप लगाने का अवसर मिल गया कि उन्हों ने अल्लाह की हराम की हुई चीज़ों को भी हलाल (वैध) कर लिया है। तथा इस पर भांति-भांति की बातें बनाई जाने लगीं। अन्ततः 'वह्य' आयी और अब्दुल्लाह बिन हजश का समर्थन किया गया :

> 'वे तुम से आदर के महीने में युद्ध के बारे में पूछते हैं? कह दो, उस में युद्ध बहुत बुरा है, परन्तु अल्लाह के मार्ग से रोकना, उस का कुफ़ करना, 'मस्जिदे हराम' (काबा) से रोकना, और उस के लोगों को उस से निकालना, अल्लाह की दृष्टि में इस से भी बढ़ कर है, और फ़ित्ना रक्तपात से भी बढ़ कर है।'
>
> —अल-बक़रा १२७

(इब्ने हिशाम, इब्ने इस्हाक़)

मुशिरकों ने मुसलमान वीरों के चरित्र को भ्रमात्मक करने के लिये जो उपद्रव मचाया उस की कोई समाई न थी क्योंकि समस्त पवित्र 'हुरमतें (आदर) इस्लाम के विरुद्ध जंग करने तथा मुसलमानों पर अत्याचार करने में टूट चुकी थीं। फिर सहसा इन आदरों को वापस करने का विचार कैसे आ गया? और उनका सीमोल्लंघन अपराध कैसे बन गया?

क्या मुसलमान उस समय आदर वाले नगर में न रहते थे? जब उन के नबी के क़त्ल का निर्णय किया जा रहा था और उन की सम्पत्ति छीनी

पेश की क्योंकि उन्हों ने पूरी अम
आदेशों को लागू किया तथा स्वेच्
की भावना में शत्रु के क्षेत्र में इतनी
फिर भला ये धमकी और दण्ड
तआला ने फ़रमाया—

'रहे वे लोग जो ईमान लाये
में अपना) घर-बार छोड़ा
दयालुता की आशा करते
और दयावान है।'

इन झड़पों और सैनिक टु
हिंसक मुशिरकों के साथ किसी
क्योंकि मुसलमानों और उन के

पड़ रहे थे।

इन सरियों (झड़पों) में पहले मुहाजिर अधिक भाग लेते थे परन्तु बाद में अंसार (मदीना निवासी) तथा मुहाजिर दोनों सम्मिलित होने लगे।

यह विचार होने लगा कि यह युद्ध बढ़ सकता है और इस की तबाहियां फैल सकती हैं परन्तु यह पुनीत कृत्य सम्बन्धी युद्ध है जिस में दीनी तथा सांसारिक कल्याण सम्मिलित है। मक्का वालों को इस बात की चेतावनी मिल गयी कि उन्हों ने जो अत्याचार किये हैं या भविष्य में करेंगे उस का मजा चखना होगा तथा सीरिया से उन का व्यापार मुसलमानों की दया दृष्टि पर होगा।

इस प्रकार दोनों पक्षों के बीच खाई और बढ़ गयी तथा शत्रुता एवं द्वेष में वृद्धि हो गयी। लगता है ये घटनाएँ उस महान घटना की भूमिका बन गयीं जो एक महीने के पश्चात् मक्का के सरदारों तथा मुसलमानों के बीच 'बद्र' के स्थान पर घटित हुई।

बद्र का युद्ध

मदीना में यह सूचना फैल गयी कि क़ुरैश का एक बड़ा व्यापारिक क़ाफ़िला सीरिया से लदा पटा मक्का की ओर लौट रहा है। एक हजार ऊंट व्यापारिक सामान से लदे हुए थे जिन का नेतृत्व अबू सुफ़्यान बिन हरब के हाथ में था। तथा उस के साथी ३० या ४० से अधिक नहीं थे।

यदि मुसलमान यह सामग्री छीन लेते तो मक्का पर यह आर्थिक मार बड़ी भीषण होती तथा इस से मुसलमानों की उन समस्त हानियों की क्षति-पूर्ति हो जाती जो हिजरत के समय में उन्हें उठानी पड़ी थीं। अतः अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया :

> 'यह क़ुरैश का क़ाफ़िला है इस में तुम्हारे माल हैं तुम इसे रोक लो, कदाचित् अल्लाह इस के द्वारा तुम्हारी क्षति पूर्ति कर दे।'
>
> —इब्ने हिशाम

परन्तु अल्लाह के रसूल ने किसी को विवश नहीं किया न उन लोगों को प्रोत्साहित किया जो जाना नहीं चाहते थे वरन् आप ने लोगों को उन की स्वेच्छा पर छोड़ दिया। अतः जो लोग जा सके उन्हें ले कर आगे बढ़ गये।

आप के साथ जाने वाले यही समझते थे कि पिछली झड़पों के समान

> 'बद्र के दिन प्रत्येक ऊंट पर तीन सवार थे जो बारी बारी से यात्रा करते थे, अबू लुबाबा (रज़ि०) और अली बिन अबी तालिब (रज़ि०) रसूलुल्लाह (सल्ल०) के साथ थे, जब रसूलुल्लाह की बारी आयी तो इन दोनों ने प्रार्थना की : 'हम पैदल चलते हैं आप सवार रहें' आप ने फ़रमाया : तुम दोनों पैदल चलने में मुझ से अधिक सामर्थ्यवान नहीं हो, और न मैं तुम से अधिक प्रतिफल से निःस्पृह हूं।' —अहमद

मुसलमानों ने अपने गुप्तचर छोड़ दिये कि पता लगायें कि क़ाफ़िला कहां है? तथा सहायता को आये हुए लोग कहां छिपे हैं?

उधर अबू सुफ़यान ने क़ाफ़िले के विषय में जब ख़तरे को भांप लिया तो उस ने ज़म्ज़म बिन अम्र ग़िफ़ारी को मक्का भेज दिया ताकि मक्का से सहायता लाकर क़ाफ़िले को बचा सके। ज़म्ज़म ने पूरे नगर को अपने सिर पर उठा लिया तथा अपनी ऊंटनी के कान काट दिये, उस की काठी उलट दी और अपना कुर्ता फाड़ कर चिल्लाने लगा :

> 'हे क़ुरैश के गिरोह! हानि! महा हानि! तुम्हारी जो सम्पत्ति अबू सुफ़यान के साथ है, मुहम्मद और उस के साथियों ने उसे रोक लिया है, दौड़ो! सहायता करो!'

लोग झटपट तैयार हो गये या तो स्वयं गये या अपनी ओर से किसी को लड़ने के लिए भेजा, पूरा मक्का उग्रपूर्ण हो उठा तथा उत्तेजित होकर घाटियों तथा पहाड़ियों को रौंदता हुआ आगे बढ़ा। कुल ९५० योद्धा थे जिन के साथ ६०० घोड़े थे, महिलायें भी थीं जो दफ़ बजा-बजा कर उन्हें उत्तेजित कर रही थीं। ये लोग उत्तर की ओर चले ताकि मदीना से आने वाले क़ाफ़िले को बचा सकें।

अबू सुफ़यान सहायता की प्रतीक्षा में रुका नहीं वरन् बड़ी चतुरता से बच निकलने में सफल हो गया। क़ुरैश के नायकगण तथा अन्य मुश्रिक बड़ी तेज़ी से बद्र की ओर बढ़े।

कहा जाता है कि अबू सुफ़यान ने मजदी बिन अम्र नामक एक बद्दू (देहाती) से भेंट की और पूछा कि क्या तुम ने किसी को देखा है? उस ने बताया कि कोई आश्चर्यजनक बात तो महसूस नहीं की परन्तु इस टीले की ओर दो व्यक्तियों को अपनी सवारियां बिठाते अवश्य देखा है। उन्हों ने उतर कर पानी पिया फिर चले गये। अबू सुफ़यान उस स्थान तक गया और दोनों ऊंटों की मेंगनियां उठा कर देखीं जिस में खजूर की गुठली भी निकली तो उस ने कहा : 'ख़ुदा की क़सम! यह मदीना का चारा था।'

उस ने अनुमान लगा लिया कि ये दोनों मुहम्मद के साथी थे तथा उन का सेना दल कहीं पास ही है। अतः वह बड़ी तेजी से अपने क़ाफ़िले की ओर आया और समुद्र के किनारे की ओर होता हुआ अपने साथियों को सुरक्षित निकाल ले गया।

जब अबू सुफ़्यान ने देखा कि क़ाफ़िला सुरक्षित निकल आया तो उसने कहला भेजा कि तुम लोग अपने आदमियों, क़ाफ़िले तथा माल की सहायता के लिए आये थे उन्हें अल्लाह् ने बचा लिया अतः तुम वापस हो जाओ। तो अबू जह्ल ने कहा ख़ुदा की क़सम! हम बद्र तक जाये बिना वापस नहीं होंगे। वहां तीन दिन ठहरेंगे, ऊंट ज़ब्ह करेंगे, खायेंगे, मदिरा पान करेंगे स्त्रियां बन ठन कर हमारे पास आयेंगी तथा हमारी सेना को अरब के वृत्तांत एवं कथाएँ सुनायेंगी फिर वे हम से सदा के लिए भयभीत हो जायेंगे।

अबू जह्ल ने इस की घोषणा कर दी, रसूलुल्लाह् को इसी बात का भय था। इन क्षेत्रों में क़ुरैश का प्रभाव, सम्मान तथा वैभव इस्लाम के लिए खतरनाक सिद्ध होता क्यों कि क़ुरैश मुसलमानों पर अत्याचार तथा आतंकों का इतिहास दुहरा चुके थे। मदीना से सैनिक टुकड़ियों के भेजने का उद्देश्य इस के अतिरिक्त और क्या था कि अल्लाह् का कलिमा श्रेष्ठ हो तथा शिर्क (अनेकेश्वरवाद) का कलिमा नतमस्तक हो तथा मूर्तियों के दास किसी लाभ तथा हानि पर सामर्थ्यवान न रह सकें।

इसी कारण अल्लाह् के रसूल ने क़ाफ़िले के बच निकलने के बावजूद वापसी की ओर ध्यान नहीं दिया ताकि इन क्षेत्रों में सशस्त्र टुकड़ियों के घूमने से उक्त उद्देश्य प्राप्त हो सकें तथा दिलों को प्रभावित किया जा सके।

अबू जह्ल के आगे किसी की न चली और क़ुरैश की यात्रा जारी रही यहां तक कि बद्र की घाटी के 'उद्वतुल्क़ुस्वा' नामक स्थान पर पहुंच गये। तथा मुसलमानों ने 'उद्वतुद्दुन्या' नामक स्थान पर पड़ाव किया।

इस प्रकार दोनों सेनाएं एक दूसरे के समक्ष आ गयीं परन्तु दोनों ही मुठभेड़ के खतरनाक परिणामों से अन्जान थे।

रात के अन्धकार ने अपना आधिपत्य जमाना शुरू किया। रसूलुल्लाह् ने हज़रत अली, हज़रत ज़ुबैर और सअद बिन अबी वक़्क़ास रज़िअल्लाहु अन्हुम को विरोधी सेना के विषय में जानकारी लेने भेजा उन्होंने एक जल-स्रोत पर दो आदमियों को पानी भरते देखा तथा उन्हें पकड़ लिया और पूछताछ शुरू कर दी। रसूलुल्लाह् उस समय नमाज़ पढ़ रहे थे। उन्होंने

बताया कि हम दोनों क़ुरैश की सेना के लिए पानी एकत्र करने की सेवा पर लगाये गये हैं।

लोगों को यह बात बुरी लगी। उन्हें आशा थी कि ये अबू सुफ़यान के क़ाफ़िले से सम्बन्धित हैं। क्योंकि मुसलमानों की व्यापारिक क़ाफ़िले पर अधिकार करने की आशा लगी हुई थी। अतः इन कहारों को मुसलमानों ने इतना मारा कि उन्होंने स्वीकार कर लिया कि वे अबू सुफ़यान के क़ाफ़िले के आदमी हैं। तो लोगों ने उन्हें छोड़ दिया। उधर रसूलुल्लाह नमाज समाप्त कर चुके, आप सल्ल० ने फ़रमाया 'जब इन दोनों ने सच बात कही थी तो तुम ने इन्हें मारा परन्तु अब झूठ बोल कर ये बच गये हैं। खुदा की क़सम ये सच्चे हैं इनका सम्बन्ध क़ुरैश की सेना ही से है।' फिर आपने इनसे क़ुरैश की सेना के विषय में पूछताछ की तो उन्होंने बताया कि क़ुरैश की सेना टीले के पीछे 'उद्वतुलकुस्वा' में ठहरी हुई है। जब उन की संख्या के विषय में पूछा तो उन्हों ने कहा कि 'बहुत हैं' पूछा संख्या कितनी है कहा हमें नहीं मालूम ! फिर पूछा कि प्रतिदिन कितने ऊंट जबह करते हैं कहा एक दिन ६ एक दिन १० तो आपने फ़रमाया कि क़ुरैश की संख्या ६०० और १००० के बीच है। फिर पूछा 'सरदारों में से कौन-कौन हैं ? उन्होंने बताया, उत्बा बिन रबीआ, शैबा बिन रबीआ, अबुल बख़्तरी बिन हिशाम, हकीम बिन हिज़ाम, नौफ़ल बिन ख़ुवैलिद, हारिस बिन आमिर, तईमा बिन अदी, नज्र बिन हारिस, जम्आ बिन अस्वद, अम्र बिन हिशाम और उमैया बिन खलफ़ आदि हैं। तब रसूलुल्लाह सल्ल० लोगों की ओर आकर्षित हुए और फ़रमाया :

'आज मक्का ने अपने सपूतों को तुम्हारी ओर फेंक दिया है।'

इब्ने हिशाम, इब्ने इस्हाक़

अब मामला साफ़ हो गया कि टक्कर निस्सन्देह बड़ी सख्त होगी। क़ुरैश अभिमान तथा उन्माद में मस्त थे वे शीघ्र ही कोई प्रयास कर डालना चाहते थे ताकि इस्लाम के साथ जारी रहने वाले पन्द्रह वर्षीय संघर्ष को समाप्त कर सकें और मूर्तिपूजा अकेली शासन शक्ति बन कर रह जाये।

रसूलुल्लाह ने अपने चारों ओर देखा तो एक ओर उन मुहाजिरों को पाया जो अल्लाह के मार्ग में अपना सब कुछ लगा चुके थे और अब जान की बाजी लगा देने को तत्पर हैं। तो दूसरी ओर वे अन्सारी भी थे जिन्हों ने अपना वर्तमान तथा भविष्य इस्लाम से जोड़ दिया था जिस के लिये उन्होंने बलिदान किये थे और उसके अनुयायियों को अपने यहां शरण दी थी। अतः रसूलुल्लाह ने सब लोगों को वास्तविक स्थिति से अवगत कराने

अस्तित्व की जिसने आप को स

'ग़माद' की ओर ले चलें तो भी
वहां पहुंच जायें।'

रसूलुल्लाह ने उन की बा

लिए ईश्वर से प्रार्थना की। फि
क्योंकि ये लोग संख्या में सब

समय प्रतिज्ञा की थी कि जब

हमारी शरण में होंगे और हम

बच्चों तथा स्त्रियों की करते हैं

रसूलुल्लाह को शंका थी कि

ही सहायता करेंगे जब मदीना

जब अल्लाह के रसूल ने यह

खड़े होकर कहा : 'हे अल्लाह के रसूल ! कदाचित् आपका संकेत हमारी ओर है ? आप ने फ़रमाया, 'हां !' तब उन्हों ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! हम आप पर ईमान लाये हैं और आप की तस्दीक़ की है, हम साक्षी हैं कि जो कुछ आप लाये हैं वही सत्य है, सुनने और आज्ञापालन करने की प्रतिज्ञा की है अतः आप ने जो संकल्प किया है उसे कर डालिए, हम आप के साथ हैं, क़सम है उस शक्ति की जिस ने आप को सत्य के साथ भेजा है, यदि आप हमें साथ लेकर समुद्र में भी उतरें तो हम भी आप के साथ उतर पड़ेंगे। तथा हमारा एक व्यक्ति भी पीछे नहीं रहेगा। यदि आप शत्रु से लड़ना चाहते हैं तो हम आप से सहमत हैं, हम दृढ़पग रहेंगे तथा मुक़ाबले में निष्ठा दिखायेंगे, सम्भव है कि अल्लाह हमारे द्वारा वह चीज़ आप को दिखा दे जिस से आप की आंखें ठण्डी हो जायें। आप अल्लाह के सामर्थ्य पर आगे बढ़ें।'

एक रिवायत के शब्द ये हैं : 'कदाचित आप किसी अन्य कार्य से निकले थे तथा अल्लाह ने कोई और स्थिति उत्पन्न कर दी, तो अल्लाह ने आप को जो बात सुझाई है उस पर अमल करें, चाहें जिस से सम्बन्ध स्थापित करें, चाहें जिससे सम्बन्ध विच्छेद करें, जिस से चाहें शत्रुता करें जिस से चाहें मित्रता करें, हमारे माल प्रस्तुत हैं जितना चाहें ले लें जितना चाहें छोड़ दें तथा आप के द्वारा लिया हुआ माल उस माल से उत्तम होगा जो हमारे पास बचेगा।'

हज़रत सअ्द का वक्तव्य सुन कर रसूलुल्लाह प्रसन्न हो गये, और फ़रमाया : 'आगे बढ़ो ! तथा प्रसन्न हो जाओ क्योंकि अल्लाह ने इन दोनों गिरोहों में से एक का मुझ से वादा कर लिया है। ख़ुदा की क़सम ! मुझे लगता है कि उन लोगों का (अर्थात् शत्रुओं का) वधास्थल मुझे दिखाई दे रहा है।'

हुबाब बिन मुंज़िर ने रसूलुल्लाह से पूछा : 'क्या अल्लाह ने यहां ठहरने का संकेत दिया है ? अथवा आप ने इस स्थान को युद्ध नीति के रूप में चुना है ?' आप ने फ़रमाया : नहीं ! यह केवल मेरी राय तथा युद्ध नीति है। तब हज़रत हुबाब ने अर्ज़ किया : हे अल्लाह के रसूल ! यह स्थान ठीक नहीं है वरन् हम शत्रु के निकटवर्ती जल स्रोत पर अधिकार कर लें तथा अपने लिये पानी संचित कर के समस्त कुंओं को पाट दें, अतः युद्ध के समय हमारे पास पानी होगा तथा शत्रु के पास नहीं होगा।'

रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : 'तुम ने ठीक परामर्श दिया है' अतः आप ने

आदेश दे दिया और आधी रात के पूर्व ही हुबाब बिन मुंजिर के मतानुसार पड़ाव का स्थान बदल दिया गया तथा अन्य समस्त स्रोतों पर अधिकार कर लिया गया।'

मुसलमानों ने रात बड़ी शान्तिपूर्वक बितायी, उन के हृदय बड़े सन्तुष्ट थे अतः रात के आराम से उन की थकावट दूर हो गयी। रात में हल्की-हल्की वर्षा होती रही थी तथा प्रातः की मृदुल एवं सुगन्धित हवा ने उन के मन तथा हृदय को ताजा एवं प्रफुल्लित कर दिया तथा उन की आकांक्षाएं जवान हो गयीं। वर्षा के कारण रेत जम गयी अतः चलने-फिरने में सरलता हो गयी। अल्लाह तआला इस एहसान को इस प्रकार याद दिलाता है—

> '(याद करो) जब वह तुम्हें ऊंघ से ढांक रहा था कि यह उस की ओर से निश्चिन्तता और इत्मीनान का सामान था और आकाश से तुम्हारे ऊपर पानी बरसा रहा था, ताकि तुम्हें उस के द्वारा पाक करे, और शैतान की नापाकी को तुम से दूर करे, और तुम्हारे दिलों को मजबूत कर दे और क़दम जमा दे।'
>
> —अल-अन्फ़ाल

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अपनी छोटी सी सेना को पंक्तिबद्ध किया, उसका निरीक्षण किया, आदेश दिये, खुदा तथा आखिरत का स्मरण कराया, फिर आप अपने उस कैम्प में चले आये। जहां आप दुआ तथा ईश्वर से सहायता की प्रार्थना में लीन हो गये।

हज़रत अबू बक्र रज़ि० आप सल्ल० के साथ थे। क्रन्दन तथा विनय से आप का बुरा हाल था, आप रो-रो कर कह रहे थे—

> 'हे ईश्वर! यदि आज यह मुट्ठीभर जमाअत हलाक हो गयी तो फिर पृथ्वी पर तेरी इबादत न होगी।'

रसूलुल्लाह सल्ल० अपने प्रतापवान रब से फ़रियाद कर रहे थे—

> 'हे ईश्वर! उस प्रतिज्ञा के द्वारा तुझ से विनय कर रहा हूं जो तूने मुझ से की है, हे ईश्वर! तू हमारी सहायता कर!'

आप ने अपने हाथ आकाश की ओर उठाये यहां तक कि आप की चादर आप के कंधों से सरक गयी। अबू बक्र आप के पीछे खड़े हुए थे और बार-बार चादर को ठीक कर रहे थे तथा अत्यन्त भावुक हो कर कहते—

> 'हे अल्लाह के रसूल! बहुत हो चुका बस कीजिये, आप ने बहुत विनय तथा क्रन्दन कर लिया अल्लाह आप से अपना वादा पूरा करेगा।'
>
> —मुस्लिम, अहमद

दोनों सेनाओं ने हरकत की तथा युद्ध का आरम्भ मुश्रिकों की ओर

से हुआ। सहसा अस्वद बिन अब्दुल असद मुसलमानों द्वारा निर्मित जल-कुण्ड की ओर यह कहते हुए बढ़ा कि : 'ख़ुदा की क़सम ! मैं शत्रु के जलकुण्ड से पानी पी कर दम लूंगा या उसे ढा दूंगा अथवा मर जाऊंगा।' हज़रत हम्ज़ा ने उसे जा दबाया तथा जलकुण्ड (हौज़) पर पहुंचने से पूर्व ही उस की पिंडली पर एक करारी चोट लगायी वह क़सम पूरी करने के लिए घिसटता हुआ आगे बढ़ा, हज़रत हम्ज़ा ने दोबारा वार किया और उस को मौत के घाट उतार दिया।

तत्पश्चात् मुश्रिकों की सेना से उत्बा बिन रबीआ, शैबा बिन रबीआ और वलीद बिन उत्बा तीन वीर निकले अतः उन का मुक़ाबला करने के लिए तीन अन्सारी रणक्षेत्र में आये तो मुश्रिकों ने कहा : 'हे मुहम्मद ! हमारी जाति के लोगों को भेजो।' एक रिवायत में है कि रसूलुल्लाह ने स्वयं ही उन अन्सारियों को वापस बुला लिया ताकि इस युद्ध में उन का खानदान सब से पहले आक्रमण करे। आप ने फ़रमाया—

> 'उबैदा बिन हारिस ! खड़े हो जाओ, हम्ज़ा ! तुम आगे बढ़ो तथा अली ! तुम भी निकलो।'
>
> अतः उबैदा रज़ि० ने उत्बा से, हम्ज़ा रज़ि० ने शैबा से और अली रज़ि० ने वलीद से मुक़ाबला किया। हम्ज़ा रज़ि० ने शीघ्र ही शैबा को क़त्ल कर दिया तथा हज़रत अली ने भी अपने प्रतिद्वन्द्वी को पछाड़ कर मौत के घाट उतार दिया, परन्तु उत्बा और उबैदा रज़ि० ने एक दूसरे को घायल कर दिया, इसी बीच हज़रत अली और हम्ज़ा रज़ि० ने बढ़ कर तलवारों से उत्बा पर आक्रमण किया और उस का काम तमाम कर दिया तथा अपने साथी को उठा कर वापस आ गये। उन्हें रसूलुल्लाह के चरणों में लिटा दिया, उबैदा ने अपना सिर रसूलुल्लाह के चरणों के पास रख दिया।
>
> —इब्ने हिशाम, अबू दाऊद, अहमद
>
> और कहा : 'हे अल्लाह के रसूल ! यदि अबू तालिब मुझे देखते तो उन्हें ज्ञात होता कि उन की कविता का पात्र मैं हूं।'
>
> 'हम आप की रक्षा करेंगे यहां तक कि इस रक्षा में हम मौत के मुंह में चले जायें और अपने बच्चों का तथा पर्दे में रहने वाली स्त्रियों से निःस्पृह हो जायें।'

इस के पश्चात् उन का स्वर्गवास हो गया।

इस अप्रत्याशित परिणाम से काफ़िरों का रोष भड़क उठा अतः

बढ़ा दिया हो।

अल्लाह के रसूल मुसलमानों
देते हुए फ़रमाया—

'उस अस्तित्व (ईश्वर)
की जान है, आज जो
मुप्रतिफल की आशा से
तो अल्लाह उसे जन्नत

परलोक की आशा दिलाना
पर कुर्बान होने वालों के लिए
मिल सकता है ?

इसी प्रेरणा तथा प्रलोभन
अहमद की रिवायत है कि

ने अपने सिपाहियों से कहा : 'बढ़ो उस जन्नत की ओर जिस की लम्बाई-चौड़ाई धरती तथा आकाशों के बराबर है।' हज़रत उमैर अन्सारी ने पूछा : 'हे अल्लाह के रसूल ! क्या ऐसी जन्नत मिलेगी जिस की व्यापकता आकाशों और धरती के समान है ?' आप ने फ़रमाया : 'हां' कहा, 'बख़ !, बख़ !' (धन्य, धन्य) आप ने पूछा, 'बख़-बख़ क्यों कह रहे हो ?' कहा : 'हे अल्लाह के रसूल ! जन्नत वालों में शामिल होने की कामना है।' आप ने फ़रमाया : 'तो तुम जन्नत में प्रवेश कर गये।'

उन्हों ने सुनते ही थैले से खजूरें निकालीं और खाने लगे, फिर बोले, यदि इन खजूरों को समाप्त करने तक जीवित रहा तो यह अवधि लम्बी हो जायेगी अतः खजूरें फेंक दीं और यह कविता पढ़ते हुए रण क्षेत्र में घुस गये—

> 'हम बिना यात्रा सामग्री के ईश्वर तथा उसके 'तक़्वा' (संयम) और आख़िरत के कर्म की ओर दौड़ पड़े, ईश्वरीय मार्ग में पगदृढ़ रहे तथा प्रत्येक सामग्री समाप्त होने वाली है केवल 'तक़्वा' (संयम) एवं नेकी का पाथेय शेष रहेगा।'

तथा वीरतापूर्वक लड़ते रहे, अन्ततः शहीद हो गये।

इस संयमी ईमान के हथौड़ों से मुश्रिकों की सेना का मनोबल टूट गया तथा अब रसूलुल्लाह भी रणसंग्राम में कूद पड़े। अतः आप के साथ आप के साथी आंधी तथा तूफ़ान के समान आगे बढ़े तो क़ुरैश का मनोबल समाप्त हो गया तथा भय एवं आतंक से उन की बुरी दशा हो गयी।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कुफ़्र के ठेकेदारों को मिट्टी में लथपथ देखकर कहा :

> 'इन के चेहरे बिगड़ें।'

क़ुरैश पराजित हो गये। क़ुरआन ने इस समस्त स्थिति पर समीक्षा करते हुए कहा —

> 'जब तुम्हारा रब फ़रिश्तों की ओर 'वह्य' कर रहा था कि मैं तुम्हारे साथ हूं। तो तुम उन लोगों को जो ईमान ला चुके हैं जमाये रखो। मैं अभी काफ़िरों के दिलों में रोब डाले देता हूं। तो तुम उन की गर्दनों पर मारो और उन के हर जोड़ पर चोट लगाओ।
>
> यह इस लिए कि इन लोगों ने अल्लाह और उस के रसूल का विरोध किया। और जो कोई अल्लाह और उस के रसूल का विरोध करे, तो निस्सन्देह अल्लाह भी कड़ी सज़ा देने वाला है।

> यह है (तुम्हारी सज़ा), इस का मज़ा चखो, और यह भी (जान लो) कि काफ़िरों के लिए आग (जहन्नम) की यातना है।'
>
> —अल-अनफ़ाल १२, १३, १४

अबू जह्ल ने पराजय के सैलाब को रोकने का भरसक प्रयत्न किया चिल्ला चिल्ला कर कहा : 'लात व उज्ज़ा (देवताओं) की क़सम ! हम मुहम्मद और उस के साथियों को पहाड़ियों में अस्त-व्यस्त कर के लौटेंगे।'

परन्तु ठोस वास्तविकता के आगे अबू जह्ल के घमण्ड की यह पुकार क्या कर सकती थी ? फिर भी अबू जह्ल जो इस्लाम दुश्मनी का आदर्श था, क्रोध तथा द्वेष से भर कर पूरी शक्ति से आक्रमण करने लगा। साथ ही यह कविता भी पढ़ता जाता था :

> 'यह भीषण एवं प्रचण्ड युद्ध मेरा क्या बिगाड़ सकता है ? मैं तो बचपन ही से इस का खिलाड़ी हूं, इसी के लिए मेरी मां ने मुझे जन्म दिया है।

कुछ मुश्रिक उसे घेरे में लिए हुए थे और वह कह रहे थे कि अब्दुल हकम (अबू जह्ल) के समीप कोई नहीं आ सकता है। उन के बीच एक घनी झाड़ी थी जो शीघ्र ही तितर बितर हो गयी। परन्तु मुसलमानों के साहस तथा वीरता का मामला ही कुछ और था, उन्हें विजय तथा सफलता की शुभ सूचना मिल चुकी थी और वे 'अहद-अहद' के नारे लगा रहे थे।

अब्दुर्रहमान बिन औफ़ (रज़ि०) का बयान है कि मैं बद्र के दिन सेना पंक्ति में खड़ा था सहसा मेरी नज़र दो अंसारी युवकों पर पड़ी जो मेरे दायें और बायें खड़े थे अतः मुझे शंका हुई कि मुझे दो लड़कों के बीच खड़ा देख कर लोग घेर न लें, अभी मैं इसी सोच में था कि एक युवक ने कहा : 'हे चाचा ! मुझे अबू जह्ल दिखाओ, 'कौन सा है ?' मैं ने पूछा : 'हे भतीजे ! अबू जह्ल का क्या करोगे ?' उस ने कहा : 'मैं ने अल्लाह से प्रतिज्ञा की है कि यदि अबू जह्ल मुझे मिल जाये तो उस को क़त्ल कर दूं या स्वयं मारा जाऊं क्योंकि मुझे ज्ञात हुआ है कि वह दुष्ट रसूलुल्लाह को गालियां देता है।' दूसरे युवक ने भी यही बात कही।

उन की वार्ता सुन कर मेरी शंका दूर हो गई और मैंने इशारे से बताया कि अबू जह्ल वो है। यह सुनते ही दोनों युवक शिक्रा और बाज़ (शिकारी पक्षी) के समान अबू जह्ल पर झपटे और उस दुष्ट का काम तमाम कर दिया। ये दोनों 'अफ़्रा' के पुत्र थे। ऐसा लगता है कि उसे गम्भीर रूप से घायल कर दिया था और वह उस समय मरा नहीं था वरन् तड़पता छोड़ दिया था। इस के बाद मुश्रिक भागने लगे, जिसका जिधर मुंह उठा उधर

भाग छूटा और शव इधर उधर पड़े थे।

अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रजि०) अबू जह्ल के पास से निकले, देखा कि अभी वह मरा नहीं है उन्हों ने उस की गर्दन पर पांव रख कर उस को ठण्डा करना चाहा तो अबू जह्ल में हरकत उत्पन्न हुई और उस ने पूछा युद्ध में कौन विजयी रहा ? अब्दुल्लाह ने उत्तर दिया : 'अल्लाह और उस के रसूल विजयी रहे' और उस से पूछा : 'हे ख़ुदा के शत्रु ! क्या अल्लाह ने तुझे अपमानित कर दिया ?' अबू जह्ल ने कहा : मुझे किस प्रकार अपमानित किया है ? इस में गर्व की क्या बात है तुम ने अपनी जाति के एक व्यक्ति को क़त्ल कर दिया ? फिर अब्दुल्लाह (रजि०) को ध्यानपूर्वक देखा और कहा, 'क्या तू मक्का में ही न तथा तुच्छ नहीं था ?'

> अब्दुल्लाह बिन मसूद उस के सीने पर चढ़े रहे यहां तक कि वह ठण्डा हो गया। —बुखारी, मुस्लिम

मक्का के चुने हुए ७० सरदारों की वह दुर्गत बनी कि बुरी तरह क़त्ल किये गए तथा ७० बन्दी बनाये गये शेष भागने में सफल हो गये। ये जानते थे कि आज ज़ुल्म का परिणाम बड़ा भयानक था जो घमण्ड और गर्व को अपमानित एवं तिरस्कारित कर रहा था।

मुसलमानों को शानदार सफलता मिली तथा उन के नेत्र सफलता एवं विजय प्राप्ति से ठण्डे हो गये। इस विजय ने उन के सुख शान्ति, उन के जीवन तथा उन की कामनाओं एवं आशाओं को वापस लौटा दिया था तथा उन्हें बेड़ियों से विमुक्त कर दिया था।

> 'और बद्र (की लड़ाई) में अल्लाह तुम्हारी मदद कर भी चुका था, जब कि तुम बहुत कमज़ोर थे। तो अल्लाह का डर रखो ताकि तुम कृतज्ञता दिखा सको।' —आले इम्रान १२३

१४ मुसलमान शहीद हुए जिन पर ईश्वरीय अनुकम्पा आच्छादित हुई और वे 'इल्लीयीन' (स्वर्ग का उच्च स्थान) में प्रवेश कर गये।

अनस बिन मालिक (रजि०) से प्रमाणित है कि हारिस बिन सुराक़ा (रजि०) जंग में शहीद हुए थे, वे दर्शकों में थे सहसा एक तीर आया जो उनकी मृत्यु का कारण बन गया। उनकी माता आयीं और पूछने लगीं : 'हे अल्लाह के रसूल ! मुझे 'हारिसा' के विषय में बताइये, यदि वह जन्नत में है तो मुझे सन्तोष है अपितु आप बतायें कि मैं क्या करूं ?'—उन का आशय 'नौहा' तथा 'मातम' से था। —इस समय तक 'नौहा' (मृत्युगाथा एवं शोकालाप) हराम नहीं हुआ था। रसूलुल्लाह ने फ़रमाया ! बड़ी अबोध हो ! उस के लिए एक नहीं बहुत सी जन्नतें हैं। वह तो सब से

का अध्याय खोला था आपने इस दुष्टों की हिदायत एवं मार्ग दर्शन के लिए अत्यन्त प्रयत्न किये, अत्यधिक समझाया, अवज्ञाओं के कुपरिणामों से डराया, क़ुरआन की आयतें पढ़-पढ़ कर सुनायीं परन्तु सब बेकार!

बार बार स्मरण कराने के बावजूद वे गर्व एव घमण्ड में पड़े रहे। और अल्लाह और उस के रसूल की खिल्ली बनाते रहे अत: रसूलुल्लाह रात के अन्धकार में गढ़े के पास पहुंचे और सहाबा ने आप को यह कहते सुना—

> 'हे गढ़े वालो! हे शीबा बिन रबीआ! हे उमैया बिन खलफ़! हे अबू जह्ल बिन हिशाम! तुम से तुम्हारे रब ने जो वादा किया था क्या तुम ने उसे सत्य पाया? मुझ से मेरे रब ने जो प्रतिज्ञा की थी वह पूर्ण हुई।'

मुसलमानों ने पूछा: हे अल्लाह के रसूल! आप मृतकों से बातें कर रहे हैं? आप ने फ़रमाया: 'मैंने उनसे जो कुछ कहा तुम ने उस से अधिक नहीं सुना परन्तु वे लोग उत्तर नहीं दे सकते हैं।'

बद्र का युद्ध १७ रमज़ान २ हिज्री में हुआ। रसूलुल्लाह बद्र के स्थान पर तीन दिन ठहरे फिर मदीना चले आये और बन्दियों तथा ग़नीमत के माल को पहले ही भेज दिया था। आप ने स्वयं मदीना पहुंचने से पूर्व ही विजय की शुभ सूचना भेज दी थी अब्दुल्लाह बिन रवाहा और ज़ैद बिन हारिसा (रज़ि०) को विजय का सन्देश देने भेजा था।

> उसामा बिन ज़ैद का बयान है कि हम ने विजय की सूचना उस समय सुनी जब रसूलुल्लाह की पुत्री रुक़ैया को दफ़ना कर उन की क़ब्र पर मिट्टी डाल कर समतल कर चुके थे। रुक़ैया के पति हज़रत उस्मान बिन अफ़्फ़ान उन के रोगग्रस्त होने के कारण मदीना में ही रह गये थे। रसूलुल्लाह ने बद्र के ग़नीमत के माल में उन का हिस्सा भी लगाया था। —बैहक़ी

पूछ ताछ एवं ताड़ना

इतिहास ने अंसारी और मुहाजिरों के बीच सहानुभूति तथा हमदर्दी की भावना को सुरक्षित कर लिया है। इस नवीन समाज में दरिद्रता एवं निराहार की स्थिति के दिन भी देखने पड़ जाते थे परन्तु इस दशा पर कभी कभी सन्तोष एवं संयम पर्दा डाल देते थे।

अन्य अवसरों पर आवश्यकता तथा दरिद्रता स्पष्ट हो जाती थी। वे समस्याएं भी आशान्वित थीं जो एक नव राज्य के गठन एवं निर्माण

में बाधक होती हैं एवं इन परिस्थितियों से उस राज्य के विरोध में षड्यन्त्रों तथा चालों का होना भी अनिवार्य था। उधर निर्माणकर्ताओं के दिलों में भी इन विचारों के उत्पन्न होने की संभावना थी परन्तु जो चीज हानिकारक थी वह यह थी कि कहीं इन समस्याओं तथा परिस्थितियों के आभास की तीव्रता, चरित्र की कमज़ोरी, साहस एवं मनोबल की हीनता का कारण न बन जाये।

अल्लाह तआला ने जंग-बद्र से पूर्व एवं उस के पश्चात् मुसलमानों के व्यवहार पर उन की पकड़ की। इन बातों की वैधता चाहे कितनी तर्कसंगत हो फिर भी मुसलमानों को उन से शुद्ध होना अनिवार्य था।

जिस दिन वे मदीना से मक्का के मुश्रिकों से लड़ने निकले थे तो उन का लक्ष्य केवल यात्री दल तथा उस का माल था।

यह ठीक है कि उन्हें उन के घरों से निकाला गया था, उन की सम्पत्ति से उन्हें वंचित कर दिया गया था तथा उन्हों ने ईश्वरीय मार्ग में अपने प्राण और अपने बेटों को क़ुरबान किया था परन्तु बलिदान एवं क़ुरबानी के मार्ग में अन्तिम चरण तक इसी भावना से चलते रहना था, अभाव तथा दरिद्रता कितनी ही कष्ट पहुंचाये उन्हें ग़नीमत के माल पर अधिकार की तुलना में काफ़िरों के उन्मूलन को प्राथमिकता देनी चाहिए थी।

> 'और (याद करो) जब अल्लाह तुम से वादा कर रहा था कि दो गिरोहों में से एक तुम्हारे हाथ आ जायेगा, तुम चाहते थे कि वैभवहीन (निरस्त्र) गिरोह तुम्हारे हाथ आ जाये। और अल्लाह चाहता था कि अपने वचनों द्वारा हक़ को हक़ कर दिखाये, और काफ़िरों की जड़ काट कर रख दे।'
>
> —अल-अनफ़ाल ७

इसी प्रकार विजय प्राप्ति के पश्चात् ग़नीमत का माल एकत्र करने और उस पर अधिकार जमाने के विषय में कमजोरी का प्रदर्शन किया गया 'हज़रत उबादा बिन सामित' रज़ि० से रिवायत है कि हम लोग रसूलुल्लाह के साथ निकले, मैं बद्र के युद्ध में आप के साथ था, मुश्रिकों से युद्ध हुआ तथा अल्लाह ने शत्रुओं को पराजित किया, एक गिरोह मुश्रिकों का पीछा करने चला गया। दूसरा गिरोह ग़नीमत का माल (अर्थात् काफ़िरों का छोड़ा हुआ माल) एकत्र करने में लग गया, तीसरा गिरोह रसूलुल्लाह की रक्षा करने लगा। यहां तक कि रात हो गयी और फिर सब लोग जमा हो गये तो माल जमा करने वालों ने कहा कि इसे हम ने एकत्र किया है इस में किसी दूसरे का हिस्सा नहीं है। शत्रुओं का पीछा करने वालों ने कहा

कि तुम हम से अधिक इस के अधिकारी नहीं हो क्योंकि हम ने इसे छोड़ कर शत्रु का पीछा किया और उन्हें पराजित किया। रसूलुल्लाह सल्ल० के अंगरक्षकों ने कहा कि हम ने इस आशंका से कि रसूलुल्लाह को शत्रु हानि न पहुंचा दे अतः हम ने माल की ओर ध्यान भी नहीं दिया, अतः अल्लाह तआला ने यह आयत उतारी :

'(हे नबी !) लोग तुम से अन्फ़ाल के बारे में पूछते हैं। कहो : अन्फ़ाल अल्लाह और उस के रसूल के हैं, तो तुम अल्लाह का डर रखो और आपस के सम्बन्धों को ठीक रखो और अल्लाह और उस के रसूल का हुक्म मानो, यदि तुम ईमान वाले हो।'

—अल-अनफ़ाल १

अतः रसूलुल्लाह सल्ल० ने इस आदेशानुसार ग़नीमत के माल का वितरण कर दिया।' —अहमद, हाकिम

यह खेदजनक स्थिति उस व्यापक दरिद्रता एवं बदहाली का परिणाम थी जिस ने अन्सार तथा मुहाजिरों को समान रूप से घेर रखा था। जिस समय मुसलमान बद्र के लिए निकल रहे थे उसी समय रसूलुल्लाह के सामने उस दरिद्रता के दृश्य आये थे अतः आप ने उनकी दयनीय दशा पर खेद व्यक्त किया था। हृदय में संवेदना उत्पन्न हुई और अल्लाह से प्रार्थना की कि उन्हें इस दुखद एवं ईमान को नष्ट करने वाली स्थिति से मुक्त कर दे।' अब्दुल्लाह बिन अम्र से रिवायत है कि रसूलुल्लाह बद्र के दिन ३१५ सहाबियों सहित निकले, जब वहां पहुंचे तो यह प्रार्थना की :

'हे अल्लाह ! ये भूखे हैं इन्हें भोजन से तृप्त कर, ये पैदल हैं इन्हें सवारी प्रदान कर, ये नग्न हैं इन्हें वस्त्रों से सुसज्जित कर।'

अतः अल्लाह ने बद्र के युद्ध में विजय प्रदान की और वापसी में प्रत्येक व्यक्ति के पास एक या दो सवारियां थीं तथा वस्त्र भी प्राप्त हो गये और वे सब भोजन से तृप्त थे।'

—अबू दाउद, हाकिम, बैहक़ी

भूख तथा वस्त्रों की आवश्यकता जब तीव्र तथा दीर्घ हो जाती है तो दिलों पर उस के प्रभाव बुरे पड़ते हैं। तथा विचार एवं चिन्तन की परिधि सीमित हो जाती है। परन्तु ये समस्याएं तथा कठिनाइयां यदि जनसाधारण के सामने हों तथा उन्हें अपने जीविकोपार्जन तथा अपने परिवार की खुराक और वस्त्रों की उपलब्धता हेतु उन्हें प्रलोभन एवं लोलुपता के लिये विवश करें तो एक सीमा तक सहनीय है परन्तु प्रथम श्रेणी के मुसलमानों को अपने ऊपर नियन्त्रण रखना चाहिये, दरिद्रता एवं अभाव की भावना

देगा। सम्भव है कि ईश्वर उन्

का कारण बन जाये।'

हज़रत उमर ने फ़रमाया :

'ख़ुदा की क़सम' मैं अबू

मेरी राय में मुझे अनुमि

को क़त्ल करूं और अल्

इसी प्रकार हफ़्ज़ा अपने

अल्लाह देख ले कि हम

सहानुभूति नहीं है। ये

नेता हैं।'

हज़रत उमर रज़ि० का ब

को स्वीकार कर लिया और 'फ़ि

प्रातः मैं रसूलुल्लाह् और अबू बक्र के पास गया तो देखा कि दोनों रो रहे हैं, मैं ने घबरा कर पूछा : 'हे अल्लाह् के रसूल ! किस बात पर शोकालाप कर रहे हैं ? यदि रोने की बात होगी तो मैं भी रोऊंगा।' आप ने फ़रमाया : 'तुम्हारे साथियों ने फ़िद्या का जो मत दिया था उस के कारण रो रहा हूं। अल्लाह् का प्रकोप तुम्हारे निकट इस वृक्ष (इशारा करके) से भी क़रीब आ गया था।' फिर अल्लाह् ने यह आयत उतारी :

> 'किसी नबी के लिए यह सम्भव नहीं कि उसके पास क़ैदी हों जब तक कि वह धरती में (विरोधी दल को) कुचल कर न रख दे। तुम लोग दुनिया की सुख सामग्री चाहते हो और अल्लाह् आख़िरत चाहता है, और अल्लाह् प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।
>
> यदि (इसके बारे में) अल्लाह् पहले से न लिख चुका होता, तो जो कुछ तुम ने किया है उस पर तुम्हें कोई बड़ी यातना पहुंचाता।' —अल-अन्फ़ाल ६७-६८

क़ैदी होने का यह अर्थ नहीं है कि आज़ादी के दिनों में उन के द्वारा किए गए अपराधों की उपेक्षा कर दी जाए। ये मक्का के अत्यन्त घमण्डी सरदार थे तथा ख़ुदा और रसूल की शत्रुता में बड़े निपुण थे। उन के पद एवं स्थान ने उन्हें घमण्डी बना दिया था और उन्होंने समूचे मक्का नगर को युद्ध की आग में झोंक दिया था फिर ऐसे अपराधियों को अधिकार में आने के पश्चात् मुक्त कर देना कैसे वैध था ?

क्या इस कारण इन को मुक्त करना उचित था कि वे फ़िद्या में ढेरों माल दे सकते थे ? मुसलमानों के लिए यह बात अशोभनीय थी कि वे काफ़िरों के अत्याचारों तथा हिंसक व्यवहार एवं ईश्वर के प्रति उन की शत्रुता को भुला कर माल तथा दौलत की ओर देखें ? आधुनिक परिभाषा में वे युद्ध बन्दी नहीं थे वरन् युद्ध के अपराधी थे अल्लाह् ने उन को अकृतज्ञता तथा जाति से खियानत और ग़द्दारी का जुर्म खोल कर रख दिया है :

> 'क्या तुम ने उन लोगों को नहीं देखा जिन्हों ने अल्लाह् की नेमत को 'कुफ़्' से बदल डाला और अपनी जाति को तबाही के घर में झोंक दिया, जो 'जहन्नम' है उसमें वे प्रवेश करेंगे और वह कितना बुरा ठिकाना है !' —इब्राहीम २८, २९

क़ुरआन और सुन्नत (रसूल का तरीक़ा) में ऐसे स्पष्टादेश हैं जो क़ैदियों की देखभाल तथा उन की सहायता करने पर प्रेरित करते हैं तथा

उन के साथ दयालुतापूर्ण क़ानून बनाये गये हैं। परन्तु यह चीज़ आम क़ैदियों और अपराधियों के अनुवर्तकों पर लागू होती है। परन्तु जो लोग अपने निजी हितों की पूर्ति हेतु युद्ध द्वारा व्यापार शुरू कर दें ऐसे क़ैदियों का उन्मूलन अनिवार्य है इसी के लिए क़ुरआन ने 'इस्ख़ान' का शब्द प्रयोग किया है (अर्थात् रक्तपात एवं दमन)।

जिस प्रकार जीवन सदाचारी वर्ग के द्वारा प्रगतिशील होता है उसी प्रकार दुष्ट लोग उसकी अवनति का कारण होते हैं। यदि वृक्ष के प्रफुल्लित एवं विकसित होने के लिए आवश्यक है कि उसे प्रति वर्ष छांटा जाये तो जीवन को सशक्त एवं निरोग रखने के लिए भी अनिवार्य है कि मूर्खों, सरकशों तथा विद्रोहियों का शुद्धीकरण कर के उसे परवान चढ़ाया जाये। इस 'हक़' का बदला सोना चांदी या दौलत का ढेर नहीं हो सकता। अल्लाह ने जब अपने नबी और आप के सहाबा (साथियों) को यह शिक्षा दी तो उन्हों ने सोच विचार और पश्चाताप किया तो उन्हें क्षमा कर दिया गया और अपनी कृपा से जो फ़िद्या का माल दिया था उसे प्रयोग करने की अनुज्ञा दे दी :

> 'तो जो कुछ ग़नीमत तुम ने हासिल की है उसे हलाल और पाक समझ कर खाओ, और अल्लाह से डरते रहो। निस्संदेह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है।'
>
> —अल-अन्फ़ाल ६९

बद्र युद्ध के पश्चात्

बद्र में मुसलमानों की वैभवपूर्ण विजय पर समूचा अरब चकित रह गया। मक्का वालों को सूचना मिली तो उन्हें विश्वास न हुआ तथा इस समाचार को किसी उन्मादी की बकवास समझा परन्तु जब तस्दीक़ हो गयी और पूरी स्थिति की जानकारी हुई तो बहुत से लोग बेहोश तथा मृत्युग्रस्त हो गये। कुछ लोगों पर इस घटना का इतना प्रभाव पड़ा कि वे अपने होश हवास खो बैठे।

मक्का वालों की भांति मदीना के मुश्रिकों और यहूदियों को भी इस समाचार पर विश्वास न आया। कुछ लोग तो यह कहते फिरे कि मुसलमानों की विजय की सूचना मनगढ़न्त तथा झूठ है परन्तु जब बन्दियों को देखा तो उन के हाथों के तोते उड़ गये।

इस्लाम और उस के अनुयायियों के इस प्रभुत्व, सफलता और विजय

के कारण विरोधी शक्तियों का व्यवहार परिवर्तित हो गया तथा मदीना और उस के चारों ओर उन की बुनियादें हिल गयीं। द्वीप के उत्तरी भाग के मार्गों से गुजरने वाले क़ाफ़िले इतने भयभीत हो गये थे कि बिना आज्ञा इधर से जाने का साहस न कर सके।

मक्का वाले शोकालाप तथा क्रन्दन से निवृत्त हुए तो उन्हों ने अपने आघातों का इलाज शुरू किया तथा अपनी शक्तियों को एकत्र करके पराजय का बदला लेने की तैयारी करने लगे। इस विफलता के उपरान्त उनकी इस्लाम से घृणा और हज़रत मुहम्मद सल्ल० तथा आप के सहाबा से शत्रुता में वृद्धि हो गयी। उधर इस्लाम में प्रवेश करने वालों पर अत्याचार और अधिक होने लगे। अतः जो लोग इस्लाम की सत्यता से प्रभावित हो जाते तो वे उसे छिपाये रखते अथवा अपमानित होकर निस्सहायता का जीवन बिताने पर विवश होते।

यह सब मक्का में हो रहा था जहां कुफ्र का राज्य था।

परन्तु मदीना में मुसलमानों को शक्ति एवं बहुमत प्राप्त था अतः वहां इस्लाम की शत्रुता ने द्वेष, कपटनीति, प्रवंचना तथा धूर्तता के रूप धारण कर लिए। अतः मुश्रिकों तथा यहूदियों में से कुछ लोग देखने में मुसलमान हो गये परन्तु उनके दिलों में घृणा तथा द्वेष भरा हुआ था। इन लोगों में से अब्दुल्लाह बिन उबई प्रथम श्रेणी का व्यक्ति था।

उसामा बिन ज़ैद की रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आप के साथी (सहाबा) मुश्रिकों तथा ग्रन्थधारियों को क्षमा करते रहे—जैसा कि अल्लाह ने उन्हें आदेश दिया था। तथा कष्टों में दृढ़पग रहे। क़ुरआन कहता है :

> 'किताब वालों में से बहुतेरे अपने दिलों की ईर्ष्या से यह चाहते हैं कि किसी तरह तुम्हारे ईमान के बाद फिर तुम्हें काफ़िर बना दें जबकि सच्चाई स्पष्ट रूप से उनके सामने आ गयी है। तुम क्षमा से काम लो और जाने दो, यहां तक कि अल्लाह निर्णय कर दे।'
>
> —अल-बक़रा १०९

जब बद्र का युद्ध समाप्त हो गया तथा क़ुरैश के बड़े-बड़े सरदार इस में मारे गये। तथा रसूलुल्लाह और आप के सहाबी बन्दियों को लिए हुए विजेता के रूप में मदीना आ गये तो अब्दुल्लाह बिन उबई और उस के मुश्रिक साथियों ने सोचा कि मामला अब बहुत आगे बढ़ चुका है और उनके अधिकार से बाहर है अतः उसके साथियों ने रसूलुल्लाह सल्ल० से 'बैअत' कर ली और ऊपरी तथा ज़ाहिरी तौर से इस्लाम के समर्थन को

तथा बेचैनी हुई और भीतर
करने लगे। परन्तु रसूलुल्लाह
भिन्न कर दिया और आप क
पड़ा।

यहूदी मुसलमानों से संघर्ष

मुसलमानों ने न तो यहूदि
निर्णय किया न उन के सामने
कोई योजना ही थी वरन् इस
मूर्तिपूजा के विरुद्ध संघर्ष और
उन की सहायता करेंगे। वे उ

नुबूव्वत की तस्दीक़ करेंगे तथा प्राचीन ग्रन्थों और गत नबियों की शिक्षाओं से उन का प्रेम तथा श्रद्धा अशिक्षित अरबों को इस बात पर सन्तुष्टि के लिए पर्याप्त होगी कि ईश्वरीय सन्देष्टा सच्चे थे और उन पर ईमान लाना अनिवार्य है।

ये पवित्र आशायें तथा अनुभूतियां उस क़ुरआन से एकरूप थीं जो उनकी बुनियाद डाल रहा था और उन पर ज़ोर दे रहा था :

> 'और ये 'कुफ़्' करने वाले कहते हैं : तुम भेजे हुए (रसूल) नहीं हो। कह दो : मेरे और तुम्हारे बीच गवाह की हैसियत से अल्लाह काफ़ी है और वह जिसके पास किताब का ज्ञान है।'
>
> —अर-रअ्द ४३

> 'और जिन लोगों को हमने 'किताब' दी है वे उस (किताब) से प्रसन्न हैं जो हम ने तुम पर उतारी है। और कुछ गिरोह ऐसे भी हैं जो उस की कुछ बातों का इन्कार करते हैं। कह दो : मुझे तो बस यह हुक्म दिया गया है कि मैं अल्लाह की इबादत करूं और उस के साथ किसी को साक्षी न ठहराऊं। मैं उसी की ओर बुलाता हूं, और उसी की ओर मुझे लौटना है।'
>
> —अर-रअ्द ३६

परन्तु यहूदी इस आशा के विपरीत निकले। मदीना में अभी मुसलमानों के साथ कुछ ही दिन हुए थे कि उन के हृदय द्वेष तथा घृणा की आग में जलने लगे। यदि वे मुहम्मद सल्ल० को झुठलाते, जिस प्रकार ईसा को झुठला चुके थे, तथा 'तौरेत' के अतिरिक्त सब को मिथ्या समझते और अपने पूजा स्थलों में अपनी उपासना में व्यस्त रहते और ईश सन्देष्टाओं के विरुद्ध अभियोगों, आरोपों तथा दोषारोपण को अपने सीनों में छिपाये रखते तो मुसलमान उन का विरोध न करते और उन्हें क़यामत तक उन की काफ़िराना दशा में बिना किसी टकराव और युद्ध के छोड़ देते।

परन्तु यदि मुसलमान राज्य निर्माण में लगे हों और यहूदी उस के विरुद्ध षड्यन्त्र करें, इस्लाम जब शिर्क से संघर्षित हो और ये अपनी भावनाओं तथा भाषाओं के द्वारा मुहम्मद सल्ल० और आप के सहाबियों के विरुद्ध अधिप्रचार करते फिरें, तो इस की अनुमति कभी नहीं दी जा सकती है।

मुसलमान अभी बद्र की विजय का हर्षोल्लास ही मना रहे थे कि यहूदियों ने रसूलुल्लाह सल्ल० को धमकी दी कि आप इस भूल में न रहें कि एक अनुभवहीन तथा अज्ञान जाति के मुक़ाबले में प्रभुत्वशाली हो गये हैं,

और एक सुनार की दुकान पर बैठ
और उस स्त्री से छेड़छाड़ करने
सिरा पीछे से उस की पीठ पर इस
तो उसका 'सतर' (गुप्तांग) खुल
बजायीं और खिल्ली उड़ाई। जब व
एक मुसलमान वहाँ पहुँच गया औ
दण्डस्वरूप क़त्ल कर दिया। फिर
कर दिया। इस प्रकार बनू क़ैनुक़ा
तनावपूर्ण हो गये और युद्ध की नौ

यह घटना मध्य शव्वाल २ हिज

यहूदियों ने क़िलाबन्द होकर ल
दिन तक उन का घेरा डाले रखा

बाध्य हो गये। आप सल्ल० ने उन सब की मशकें कसवा दीं और उन्हें क़त्ल करने का संकल्प किया परन्तु बनू क़ैनुक़ाअ् के खज़्रज से मित्रतापूर्ण संबन्ध थे अतः अब्दुल्लाह बिन उबई ने सिफ़ारिश की कि इन के साथ सुव्यवहार किया जाये। रसूलुल्लाह चुप रहे, उस ने फिर कहा, आप सल्ल० ने अपना रुख फेर लिया, उसने अपना हाथ अपनी कवच की जेब में डाल लिया तो रसूलुल्लाह के चेहरे का रंग (गुस्से से) बदल गया। और फ़रमाया: 'मुझे अकेला छोड़ दो'। और आप अप्रसन्न हो गये, यहां तक कि लोगों ने आप के मुख की छाया को देखा। फिर आप ने क्रोधित हो कर फ़रमाया: 'तेरा बुरा हो मुझे छोड़ दे।' इब्न् उबई ने कहा: 'खुदा की क़सम मैं आप का पीछा न छोड़ूंगा जब तक आप इन के साथ सुव्यवहार की घोषणा न कर दें, चार सौ बिना कवच के और तीन सौ कवचधारी वीर हैं, जिन्होंने समस्त शत्रुओं से हमें सुरक्षित रखा है, क्या आप उन का एक ही दिन में सफ़ाया कर देंगे? खुदा की क़सम मुझे काल-चक्र तथा विपत्तियों की आशंका है।' तब अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया: 'जाओ उन्हें इस शर्त के साथ क्षमा दी जाती है कि वे मदीना से निकल जायें और हमारे आस-पास में न रहें।' अतः वे सब मदीना से पलायन कर 'अज़रियात' (सीरिया) चले गये और वहीं बस गये। तथा दीर्घकाल तक वहीं रहे और मरे।

क्या उन के लिए यह अच्छा नहीं था कि वे प्रतिवास के हुक़ूक़ अदा करते? तथा समझौतों का आदर करते और मदीना में सुरक्षा व शान्ति से रहते? परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया! और शीघ्र ही शरारत तथा अशान्ति की शुरुआत कर दी। रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ अब्दुल्लाह बिन उबई के व्यवहार पर कुरआन ने इस प्रकार समीक्षा की है:

> 'सो तुम देखते हो कि जिन लोगों के दिलों में रोग है वे दौड़ कर उन में मिल जाते हैं, कहते हैं: हमें भय है कि कहीं हम पर कोई गर्दिश (विपत्ति) न आ पड़े। तो हो सकता है कि जल्द ही अल्लाह जीत कर दे, या उस की ओर से कोई और बात ज़ाहिर हो। और ये लोग जो कुछ अपने जी में छिपाये हुये हैं उस पर लज्जित हों।'
> —अल-माइदा ५२

उचित होगा कि हम कुछ ठहर कर यहूदियों के व्यवहार पर ग़ौर करें और देखें कि इस्लाम तथा उस के नबी से इस शत्रुता, घृणा और द्वेष का क्या कारण था? और इस्लाम के विरुद्ध संघर्ष में मूर्तिपूजकों के साथ किस प्रकार एकता स्थापित कर रखी थी?

क्या यह उचित नहीं है कि इस्लाम और यहूदियत का संघर्ष धार्मिक न हो कर राजनैतिक था ? और अरब द्वीप में केवल इस्लाम के प्रभुत्वशाली तथा शासक होने की भावना इस भावुक शत्रुता तथा द्वेष का असली कारण न थी ?

मानव भावनाओं तथा स्वभावों को समझने का प्रयत्न किया जाये तो अनेकों रहस्य सामने आने लगते हैं। हम ने मक्का के ज़माने में देखा कि मजूसियों और ईसाइयों के संघर्ष में मुसलमान ईसाइयों के समर्थक थे। और ईरान के मुक़ाबले रोम की पराजय से दुखी थे हालांकि इस के बाद इस्लाम का ईसाइयों से कोई सम्बन्ध न हुआ जो इस समर्थन की वैधता सिद्ध कर सके। परन्तु यह केवल एक स्वाभाविक अहसास था जो प्रत्येक मुस्लिम धर्मानुयायी से आशान्वित था। मुसलमानों के पास वह पुस्तक थी जो 'तौहीद' की आवाहक थी। तथा ईसाइयों के यहां 'तौहीद' के विषय में बड़ा उलझाव एवं अस्तव्यस्तता थी और उन्हों ने 'हक़' (सत्य) को ख़ुराफ़ातों से दूषित कर दिया था, फिर भी वे 'किताबधारी' थे और अग्निपूजकों से उच्च तथा सम्मानित व श्रेष्ठ समझे जाते थे अतः स्पष्टतः मूर्तिपूजक व्यवस्था के विरुद्ध उन का समर्थन तथा हमदर्दी वास्तव में स्वयं इस्लाम का समर्थन तथा सहानुभूति थी और उन वास्तविकताओं का आदर था जिस से ईसाइयत भी इसी प्रकार क़रीब थी जिस प्रकार इस्लाम क़रीब था इसी प्रकार जिन बातों से इस्लाम दूर था उन से ईसाइयत का भी कोई सम्बन्ध न था।

मक्का के मुश्रिक जब ईरानियों के प्रभुत्व तथा विजय से प्रसन्न होते थे तो वे इस के पात्र थे कि उन से सहानुभूति हो अतः वे इस प्रभुत्व को समस्त आसमानी धर्मों पर मूर्तिपूजा की विजय मानते थे।

फिर क्या कारण था कि 'तौहीद' के आवाहक यहूदी जैसा कि उन का दावा था—'शिर्क' के विरुद्ध इस्लाम की सफलता से जल रहे थे ? और मूर्तिपूजकों से उन का प्रेम व सहानुभूति किस बात को स्पष्ट कर रहा था ? एवं इस 'नए दीन' पर अरब मूर्तिपूजा को प्रभुत्वशाली रखने का उन का हर सम्भावित प्रयत्न किस चीज़ का द्योतक था ?

यहूदियों के इस व्यवहार का स्पष्टीकरण इस के सिवा कुछ और नहीं किया जा सकता है कि धर्म से उन का सम्बन्ध समाप्त हो चुका था तथा उन का सामान्य व्यवहार किसी भी अर्थ में आसमानी पुस्तकों से कोई मेल न रखता था। वे ऐकेश्वरवाद की धारणा तथा 'तौरात' के आदेशों का कुछ भी आदर न करते थे क्योंकि ये समस्त चीज़ें उन को शासक काम भावनाओं

और स्वार्थों के विरुद्ध थीं। अतः क़ुरआन ने उन के ईमान के विषय में भ्रम प्रकट किया :

> और जब उन से कहा जाता है कि जो कुछ अल्लाह ने उतारा है उस पर ईमान लाओ, तो कहते हैं, 'हम तो उस चीज़ पर ईमान रखते हैं जो हम पर उतारी है।' इस के सिवा जो कुछ है उस का वे इन्कार करते हैं, जब कि वही सत्य है और उस की पुष्टि करता है जो उन के पास है। उन से कहो कि यदि तुम ईमान वाले हो तो इस से पहले अल्लाह के नबियों की क्यों हत्या करते थे? और मूसा तुम्हारे पास खुली खुली निशानियां ले कर आया फिर तुम उस के बाद ज़ालिम बन कर बछड़े को देवता बना बैठे। —अल-बक़रा ९१-९२

लगता है कि यहूदियों के जो क़बीले अरब में निवास करते थे वे पेट और रोज़ी के बन्दों का ऐसा गिरोह था जिस के धर्म को अधिक आकांक्षाओं तथा आवश्यकताओं का विषय बना रखा था। अतः अब उन की इन आकांक्षाओं और आवश्यकताओं पर चोट पड़ती तो अपने निहित कुफ़्र का प्रकटन कर देते और खुदा तथा उस के समस्त सन्देष्टाओं का इन्कार कर देते थे।

इस्लाम तथा मूर्तिपूजा के इस संघर्ष में उन्हें कोई प्रतिष्ठा मिलती न दिखाई दी अतः इस्लाम के विरुध्द कोई सन्धि व समझौता, उन्हें चालें चलने और षड्यन्त्र करने से न रोक सका, इसी कारण उन का देश परित्याग अनिवार्य था। तथा मदीना के भू-भाग को इन के अपवित्र वजूद से शुध्द करना ज़रूरी था।

मुसलमानों ने प्रत्येक उस पक्ष का पीछा किया जिस ने सन्धि एवं समझौतों को तोड़ा, खुदा और रसूल से जंग करने की उद्घोषणा की, क़ुरैश और उस के समर्थकों का साथ दिया और उन्हें जो हानियां उठानी पड़ीं उन पर शोक व्यक्त किया। मुसलमानों ने इस प्रकार के समस्त यहूदी नेताओं का पीछा किया और उन्हें या तो सदा के लिए मिटा दिया या धमकी दे कर मौन कर दिया।

इन दुष्ट यहूदियों में एक 'कअ़ब बिन अशरफ़' भी था। इस ने बद्र युध्द के पश्चात् मक्का के मुश्रिकों की सहानुभूति व संवेदना तथा हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और आप के साथियों के विरुध्द बदले का वातावरण तैयार करने हेतु मदीना से मक्का की यात्रा की। इसी से अबू सुफ़यान ने पूछा था : मैं तुम्हें अल्लाह की क़सम दे कर पूछता हूं कि अल्लाह के निकट

हमारा दीन (धर्म) प्रिय है या मुहम्मद का ? हम में से कौन हिदायत और सत्य के निकट है ? हम आतिथ्य में अच्छे ऊंट जिब्ह करते हैं और अतिथियों को पानी के स्थान पर दूध पिलाते हैं अतः इस से अच्छी बात और क्या हो सकती है ?'

तो कअ्ब ने उत्तर दिया : 'तुम लोग उन सब से अधिक हिदायत पाये हुए हो।' अतः 'अल्लाह तआला' ने यह आयत उतारी :

> 'क्या तुम ने उन लोगों को नहीं देखा जिन्हें किताब का एक हिस्सा दिया गया ? ये 'जिब्त' और 'तागूत' पर ईमान लाते हैं, और काफ़िरों को कहते हैं कि ये ईमान लाने वालों से बढ़ कर सीधे मार्ग पर हैं।'
> —अन्-निसा ५१

कअ्ब बिन अशरफ़ घृणा एवं द्वेष लिए हुए मदीना वापस आया। और उस ने मुसलमान औरतों के विषय में प्रेमपूर्ण कविताएँ प्रारम्भ कर दीं। अतः अब सब्र की समाई न थी और उस का ख़ून मुसलमानों के लिए हलाल हो गया।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने 'सहाबा' से पूछा : तुम में से कौन इस के अपराधों का दण्ड देने को तथा इस का काम तमाम करने को तैयार है ?

मुहम्मद बिन मुस्लिम और अबू नाइल (रज़ि०) इस काम के लिए तैयार हो गये। और रसूलुल्लाह से उस यहूदी से पहले चिकनी चुपड़ी बातें करने की आज्ञा ली ताकि वह प्रसन्न हो जाये। अतः दोनों कअ्ब के पास पहुँचे और रसूलुल्लाह की शिकायत करते हुए कहा कि यह व्यक्ति हम से सदक़ा (दान) मांगता है इस ने हमें बड़ी परेशानी में डाल दिया है। मैं आप के पास ऋण लेने आया हूं। कअ्ब ने कहा : 'अभी क्या है भविष्य में तुम इस से उकता जाओगे।' मुहम्मद बिन मुस्लिम ने कहा : 'हम तो अब उन के अनुवर्तक हो चुके, उन का छोड़ना हमें पसन्द नहीं है। परिणाम के प्रतीक्षक हैं। इस समय हम चाहते हैं कि आप कुछ गल्ला ऋण स्वरूप दे दें।' कअ्ब बोला : ठीक है, कोई चीज हमारे पास रहन रख दो। उन्हों ने कहा : आप क्या चीज रहन रखना चाहते हैं ? कअ्ब ने कहा, अपनी औरतों को 'रहन' रख दो। उन्हों ने कहा यह कैसे सम्भव है ? क्या आप अरब में सब से अधिक सुन्दर युवक हैं ? उस ने कहा, 'अपने लड़कों को रहन रख दो।' उन्हों ने कहा : यह तो आजीवन की लज्जा है। लोग हमारी सन्तान को ताना देंगे कि तुम वही हो जो दो या तीन किलो गल्ले के बदले में 'रहन' रखे गये थे। हम अपने हथियार तुम्हारे पास रहन रख सकते हैं।'

अबू नाइला ने भी कअ्ब से यही बात कही। अबू नाइला (रजि०) बोले 'इस व्यक्ति (रसूलुल्लाह) के आगमन से हम आजमाइश में पड़ गये हैं। हमें सब को एक ही कमान से हांका, हमारा जीना दूभर कर दिया है। हमारे बच्चे बरबाद हो गये। प्राण विपत्तिग्रस्त हो गये और और आज हमारी तथा हमारे बच्चों की दयनीय दशा है।' कअ्ब ने जो वार्ता मुहम्मद बिन मुस्लिमा से की वही इनसे भी की अन्ततः कअ्ब हथियारों को रहन रख कर ग़ल्ला ऋण पर देने को राज़ी हो गया।

ये दोनों यही चाहते थे ताकि कअ्ब उन के पास हथियार देखकर चौंक न पड़े। एक चांदनी रात में ये लोग वायदे के अनुसार उस की गढ़ी पर पहुंचे। जब कअ्ब को आवाज़ दी तो उस की पत्नी ने कहा: 'मुझे इस आवाज में ख़ून टपकता दीख रहा है।' कअ्ब ने कहा: शरीफ़ आदमी यदि वल्लभ मारने के लिए भी बुलाया जाये तो उसे अवश्य जाना चाहिए।' कअ्ब नीचे उतर कर आया। उस के बाद में बड़ी तेज़ सुगन्ध आ रही थी। लोगों ने उसे बातों में लगा लिया। अबू नाइला ने उस के सिर के बालों को सूंघते हुए कहा: 'आज जैसी सुगंध हम ने कभी नहीं सूंघी!' यह सुन कर कअ्ब ख़ुशी से फूल गया। अबू नाइला ने पुनः उस के बालों को सूंघना चाहा और लपक कर उस के बाल पकड़ लिए और अपने साथियों से कहा: 'ख़ुदा के शत्रु की गर्दन उड़ा दो।' अतः तत्क्षण उन की तलवारें उस दुष्ट पर बरस पड़ीं। और उस के शरीर में वे शस्त्र घुस गये जिन को उस ने औरतों और बच्चों के स्थान पर रहन रखने का वायदा किया था। —इब्ने हिशाम

कअ्ब ने ऐसी चीख़ मारी कि लोग वस्तुस्थिति से जानकारी हेतु जाग गये और उन्हों ने आग जला कर प्रकाश किया। प्रातः जब यहूदियों को अपने सरदार के क़त्ल की सूचना मिली तो वे सब भयभीत हो गये। इस प्रकार सांपों ने अपने सिरों को बिलों में छिपा लिया।

जब नसीहत अकारथ हो गयी तथा वार्ता प्रभावहीन सिद्ध हुई तो 'असाए-कलीमी' (मूसा का डन्डा) ने काम किया। यहूदियों को शिक्षा मिल गयी अतः फिर उन्हों ने प्रतिज्ञा भंग की न मुसलमानों के विरुद्ध साहस ही रहा तथा ऐसा प्रतीत होने लगा कि अब ख़ुदा तथा रसूल के विरुद्ध मुश्रिकों का समर्थन कतई नहीं करेंगे?

इस प्रकार कुछ समय के लिये रसूलुल्लाह अरब के मुश्रिकों से निपटाने के लिए फ़ारिग़ हो गये।

दिन रात मदीना हो कर निकलते थे।

'सफ़वान बिन उमय्या' ने क़ुरैश से कहा : मुहम्मद और उस के साथियों ने हमारे क़ाफ़िलों का रास्ता रोक दिया है, अब सूझता नहीं कि क्या करें ? क्योंकि समुद्र तट से वे हटने को तैयार नहीं हैं तथा तटीय लोगों से उन्हों ने सन्धि कर ली है और वे सब मुहम्मद (सल्ल०) के साथ हो गये हैं, अत: समझ में नहीं आता कि किधर से यात्रा की जाये ? यदि घर बैठे बैठे खाते रहें तो वह सदा के लिए पर्याप्त नहीं है। मक्का में हमारा जीवन ग्रीष्म काल में सीरिया और शीत काल में हब्शा से व्यापार पर निर्भर करता है।

अस्वद बिन अब्दुल मुत्तलिब ने उसे परामर्श दिया कि तटीय मार्ग छोड़ कर इराक़ का मार्ग ग्रहण करो और मार्ग दर्शन के लिये बनू बक्र बिन वाइल के क़ुरात बिन हय्यान को ले लो ताकि इधर उधर भटकना न पड़े।

अत: इस नये मार्ग से एक व्यापारिक क़ाफ़िला सफ़वान बिन उमय्या के नेतृत्व में चला परन्तु 'नईम बिन अस्वद' इस यात्री दल तथा इस की यात्रा के प्रोग्राम की सूचना ले कर मदीना पहुंच गये। अभी शराब हराम नहीं हुई थी अत: एक बैठक में शराब पीने के लिए शरीक हुए और नशे में व्यापारिक क़ाफ़िले का रहस्योघाटन कर दिया। अत: हज़रत सुलैत तुरन्त रसूलुल्लाह के पास पहुंचे और स्थिति से अवगत कराया। रसूलुल्लाह ने तत्क्षण सौ सवारों का एक दल ज़ैद बिन हारिसा के नेतृत्व में क़ाफ़िले को रोकने के लिये भेज दिया। उन्हों ने 'क़िरदा' नामक जल स्रोत पर उस क़ाफ़िले को जा लिया और समस्त माल पर अधिकार कर लिया जिस में अत्यधिक मात्रा में चांदी थी समस्त मुश्रिक बच निकलने और फरार होने में सफल हो गये केवल फ़ुरात बिन हय्यान बन्दी बना लिया गया। उसे मदीना लाया गया और उस ने मदीना आकर इस्लाम ग्रहण कर लिया।

इस नए आघात से मक्का वाले बहुत दु:खी हुए अत: बद्र के युद्ध के बदले की मांग तीव्र हो गयी तथा पूर्ण तैयारी की जाने लगी। ये घटनाएं ३ हिज्री में होने वाले ओहुद के युद्ध की भूमिका सिद्ध हुईं।

—o—

हिजरत के पश्चात् दो वर्षों के भीतर इस्लामी सैनिक कार्यवाहियों का उल्लेख करते समय हम चाहेंगे कि अन्य छुट पुट घटनाओं का भी ज़िक्र करें।

इसी बीच हज़रत उमर (रज़ि०) की पुत्री हज़रत हफ़्सा (रज़ि०) के

पति हज़रत खुनैस बिन हुज़ाफ़ा सह्मी की मृत्यु हो गयी। यह बड़े संयमी, सदाचारी और बद्र युध्द में सम्मिलित होने वालों में से थे। जब 'इद्दत' के दिन पूरे हो गये तो उन के पिता ने दूसरा वर तलाश किया। हज़रत उमर का बयान है कि मैं ने उस्मान बिन अफ़्फ़ान[1] से अपनी पुत्री की शादी की बात की, तो उन्हों ने गौर करने को कहा। कुछ दिन बाद फिर भेंट हुई, तो मैं ने फिर शादी की बात की, बोले 'मैं ने सोचा है कि यह विवाह मेरे लिए ठीक नहीं है।'

हज़रत उमर कहते हैं कि मैं फिर अबू बक्र (रज़ि०) से मिला और उन से निवेदन किया कि यदि आप चाहें तो मैं अपनी पुत्री का विवाह आप से कर दूं। अबू बक्र रज़ि० चुप रहे और उन्हों ने कोई उत्तर न दिया अतः मुझे उस्मान की तुलना में अबू बक्र के व्यवहार से बड़ा कष्ट हुआ।

मैं कुछ दिन ठहरा रहा कि एक दिन रसूलुल्लाह का पैग़ाम हफ़्सा से विवाह के लिये आया अतः मैं ने आप से निकाह कर दिया। बाद में हज़रत अबू बक्र मुझ से मिले और पूछा कि कदाचित मेरी खामोशी से आप को दुख हुआ है? मैं ने उत्तर दिया कि हां! उन्हों ने कहा:

> आप के निवेदन का उत्तर इस कारण नहीं दिया कि मुझे जानकारी थी कि रसूलुल्लाह ने उन का ज़िक्र किया था अतः मैं रसूलुल्लाह की गोपनीयता को कैसे स्पष्ट कर सकता था यदि आप सल्ल० छोड़ देते तो मैं स्वीकार कर लेता।'
>
> —बुखारी, नसाई, अहमद

हज़रत अबू बक्र से ससुराली नाता स्थापित करने के पश्चात् हज़रत उमर से भी यही नाता जोड़ना, अपनी सुपुत्री का विवाह हज़रत अली से करना और हज़रत रुक़य्या की मृत्यु के पश्चात् दूसरी सुपुत्री हज़रत उम्मे कुलसूम का विवाह हज़रत उस्मान (रज़ि०) से करना, इस बात की ओर संकेत करता है कि आप (सल्ल०) इन चारों महानुभावों से नाते सुदृढ़ करना चाहते थे जिन की वफ़ादारी और वीरता प्रसिद्ध थी तथा आप (सल्ल०) के साथ संघर्षों में जान तथा माल की बाज़ी लगा दी थी।

हिजरत के दूसरे वर्ष रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ किये गये और 'ईदुल फ़ित्र' का 'सद्क़ा' अनिवार्य किया गया तथा 'ज़कात' के अन्य 'निसाबों' ('ज़कात'

---

१. इन्हीं दिनों हज़रत उस्मान की पत्नी और रसूलुल्लाह की पुत्री रुक़य्या (रज़ि०) की मृत्यु हो गयी थी। अतः हज़रत उस्मान को विवाह की आवश्यकता थी।

—अनुवादक

फ़र्ज होने की धन राशि) की व्याख्या की गयी। इसी वर्ष मुसलमानों का 'क़िब्ला' 'बैतुल मक़्दिस' से बदल कर 'काबा' निश्चित किया गया। इस परिवर्तन से यहूदियों का रोष बढ़ गया और इस्लाम से उन की शत्रुता में वृद्धि हो गयी।

इस से पूर्व उन्हें आशा थी कि रसूलुल्लाह उन का अनुकरण करते रहेंगे यहूदियों की इस खामोश और ताल मेल की नीति का उद्देश्य शायद रसूलुल्लाह से लाभ उठाना तथा आप के अंसार और साथियों को प्रयोग करना था परन्तु जब इस्लाम का नवीन 'क़िब्ला' निश्चित हो गया तो वे निराश हो गये तथा इसी निराशा ने उन्हें फिर इस्लाम के उन्मूलन के लिए तैयार कर दिया।

क़ुरआन ने इस वाद विवाद की जंग का एक चित्र खींचा है जो क़िब्ला के परिवर्तन के पश्चात् यहूदियों की ओर से शुरू की गयी थी—

> 'अब मूर्ख लोग कहेंगे : इन (मुसलमानों) को इन के उस 'क़िब्ले' से जिस पर ये थे, किस चीज़ ने फेर दिया? कहो : पूर्व एवं पश्चिम अल्लाह ही के हैं वह जिसे चाहता है सीधा मार्ग दिखाता है।' —अल-बक़रा १४२
>
> 'नेकी और वफ़ादारी यह नहीं है कि बस तुम अपने चेहरे पूर्व या पश्चिम की ओर कर लो, बल्कि वफ़ादारी उन की वफ़ादारी है जो अल्लाह पर और अन्तिम दीन पर...ईमान लायें।' —अल-बक़रा १७७
>
> 'और पूर्व और पश्चिम अल्लाह ही के हैं, तो जिस ओर भी रुख़ करो, उसी ओर अल्लाह का रुख़ है।' —अल-बक़रा ११५

अल्लाह तआला स्थान तथा काल का स्वामी है। किसी गिरोह को एक क़िब्ले की ओर मोड़ने का यह अर्थ नहीं है कि अल्लाह उस परिधि में स्वयं भी सीमित है तथा उस का स्वामित्व भी सीमित है। मुसलमानों को क़िब्ला परिवर्तन का आदेश वास्तव में उस तथ्य की ओर लौटने का सन्देश था जिस का निर्माण हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम द्वारा हुआ था तथा उस तथ्य की अवज्ञा से बचा जा सकता था जो बाद में पथ भ्रष्ट नस्लों विशेष कर बनी इसराईल की ओर से प्रकट हुई।

ओहुद का युद्ध

बद्र के रणक्षेत्र में पराजय के पश्चात् क़ुरैश को क्षण भर के लिए भी शान्ति न मिली थी। इस के बाद की घटनाओं ने उन के बदले की भाव-

बीच फ़ैसला न कर दे।' —इब्ने हिशाम

और फिर फ़रमाया—

'मैं ने तुम्हें परामर्श के लिए आमन्त्रित किया था, तुम ने बाहर निकलने का आग्रह किया तो ख़ुदा से डरते हुए, युद्ध में दृढ़ता का प्रदर्शन करो और अल्लाह ने जिन बातों का आदेश दिया है उन का विचार रखो, चलो! आगे बढ़ो।' —हाकिम, बैहक़ी

रसूलुल्लाह सल्ल० एक हज़ार सैनिकों सहित निकले और 'ओहुद' में जा कर डेरे डाल दिये, परन्तु 'अब्दुल्लाह बिन उबई' मार्ग ही में लगभग ३०० सैनिकों को ले कर अलग हो गया और कहने लगा: 'हम व्यर्थ में अपनी जानों को क्यों हलाकत में डालें?' और बहाना यह किया कि रसूलुल्लाह ने मेरी बात ठुकरा कर दूसरों की राय मान ली है।

जाबिर रज़ि० के पिता अब्दुल्लाह बिन हराम ने उन्हें समझाया और वापस लौटने की सलाह दी तथा उन्हें याद दिलाया कि यदि उन के दिल में ख़ुदा और रसूल पर ईमान है तथा इस्लाम एवं रसूलुल्लाह पर विश्वास है तो उन पर आक्रमणकारियों के विरुद्ध मदीना की सुरक्षा अनिवार्य है।

परन्तु अब्दुल्लाह बिन उबई ने सुनी-अन-सुनी कर दी अतः उस के तथा अन्य लौटने वालों के विषय में यह आयत उतरी—

'और ताकि उन 'मुनाफ़िक़ों' को भी विभाजित करे जिन से कहा गया कि आओ, अल्लाह के मार्ग में युद्ध करो, या दुश्मनों को हटाओ, उन्होंने कहा: यदि हम जानते कि लड़ाई होगी तो अवश्य तुम्हारे साथ हो लेते। उस दिन वे ईमान की अपेक्षा कुफ़्र से अधिक निकट थे।' —आले इम्रान १६७

मुसलमान उहुद की पहाड़ी में इस प्रकार ठहरे कि उन की पीठ पहाड़ की ओर थी। रसूलुल्लाह ने रणनीति तैयार की तथा सेना को पंक्तिबद्ध एवं व्यवस्थित किया। ५० तीरंदाज़ों को पहाड़ के पीछे नियुक्त किया जिन का अमीर अब्दुल्लाह बिन जुबैर को बनाया और नसीहत की कि: 'अपने तीरों से दुश्मन को दूर रखो, वे हम पर पीछे से आक्रमण न कर सकें, युद्ध हमारे अनुकूल हो या प्रतिकूल अपने नियत स्थान से न हटना चाहे मुश्रिक हम पर प्रभुत्व प्राप्त कर लें।'

एक रिवायत में इस प्रकार है: 'पीछे की ओर से हमारी सुरक्षा करो यदि हमें क़त्ल होते हुए भी देखो तो भी हमारी सहायता को न आना और यदि ग़नीमत का माल प्राप्त करते हुए भी देखो तो उस में शरीक न

होना ।' इस प्रकार आप सन्तुष्ट हो गये कि तीरंदाजों का दल इन आदेशों की अवज्ञा न करेगा। अतः आप आगे की पंक्तियों को आदेश देने बढ़ गये और कहा कि 'जब तक आज्ञा न मिले जंग शुरू न करना ।'

आप सल्ल० स्वयं दो कवच पहन कर सामने आये (हाकिम, बैहक़ी) तथा वीरों एवं सरफ़रोशों का चयन करने लगे जो अगली पंक्ति में तलवारें चलायें जब दोनों सेनायें गुत्थम-गुत्था हो जायें ।

मुसलमानों की संख्या मुश्रिकों की अपेक्षा एक चौथाई थी, और इस का बदला वे व्यक्ति ही हो सकते थे जो अकेले हज़ारों पर भारी हों।

हज़रत 'साबित' रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने उहुद के युद्ध में एक तलवार हाथ में ले कर फ़रमाया : 'कौन है जो इस तलवार का हक़ अदा करेगा ?' यह सुन कर इसे प्राप्त करने के लिए लोगों ने भीड़ लगा दी। अबू दुजाना ने कहा : 'मैं इस का हक़ अदा करूंगा ।' उन्हों ने तलवार ले ली और उससे मुश्रिकों की नाक में दम कर दिया। अबू दुजाना बड़े वीर एवं साहसी थे। जंग के दौरान वे मस्त हो जाते थे, सिर पर लाल पगड़ी बांध लेते और धीरे-धीरे चलते। रसूलुल्लाह जानते थे कि यह वीर पुरुष अपनी शहादत के समय तक लड़ता रहेगा। जब अबू दुजाना ने तलवार ली तो सिर पर पगड़ी बांधी और ये कविताएं गाते हुए रणक्षेत्र में कूद पड़े—

> 'मैं वही हूं जिस से मेरे मित्र ने प्रतिज्ञा कर ली है, इस दशा में कि हम पहाड़ के नीचे नख्लिस्तान के समीप थे—
> वह प्रतिज्ञा यह है कि कभी पीछे की पंक्ति में खड़ा न हूंगा और अल्लाह तथा उस के रसूल की तलवार से दुश्मनों को मारता रहूंगा ।'

फिर दोनों सेनाएं आमने-सामने बढ़ीं और रसूलुल्लाह ने अपनी सेना को शत्रु पर आक्रमण करने की आज्ञा दे दी तथा जंग के प्राथमिक चरण आश्चर्यजनक दृश्य दिखाने लगे। ऐसा लगता था कि तीन हज़ार मुश्रिक-गण तीस हज़ार मुसलमानों से मुक़ाबला कर रहे हैं। उधर मुसलमान वीरता और विश्वास के श्रेष्ठ आदर्श पेश करने लगे।

हज़रत 'हंज़ला अबी बिन आमिर' ने जब युद्ध के नारे सुने तो वे अपने घर से निकल पड़े। उन की नई-नई शादी हुई थी, वह पत्नी के पहलू से अलग हो गये और युद्ध के क्षेत्र में आये कि कहीं 'जिहाद' का सौभाग्य समाप्त न हो जाये।

कामवासनाओं के प्रेरकों पर क़ुर्बानी और शहादत की भावना हावी हो

गयी और यह सूरमा 'जनावत' की दशा में शहादत का जाम पी गया।

मुजाहिदों की सफ़ों में ईमान की रूह दौड़ गयी अतः वे मुश्रिकों की सेना में निडर हो कर तलवार चलाने लगे।

क़ुरैश का नेता तल्हा बिन अबी तल्हा ललकारता हुआ मैदान में आगे बढ़ा, हज़रत ज़ुबैर बिन अव्वाम रज़ि० झपट कर उस के ऊंट पर सवार हो गये फिर उसे ज़मीन पर दे मारा और तलवार से उसकी गर्दन उड़ा दी।

हज़रत 'अबू दुजाना' रज़ि० लाल पगड़ी बांधे युद्ध में व्यस्त थे। कोई मुश्रिक घायल मुसलमानों को मारता फिर रहा था। कअ्ब बिन मालिक रज़ि० कहते हैं कि मैं ने देखा कि एक मुसलमान पगड़ी बांधे हुए उस व्यक्ति की ताक में है। मैं उस के पीछे-पीछे चला यद्यपि मैं मुसलमान और काफ़िर दोनों से शक्तिशाली था। मैं ने महसूस किया कि मुसलमान की तुलना में काफ़िर डील-डौल और हथियार में आगे है। मैं उन के परिणाम की प्रतीक्षा करने लगा यहां तक कि दोनों की मुठ-भेड़ हो गयी। मुसलमान ने काफ़िर के कन्धे पर इतनी शक्तिपूर्वक तलवार मारी कि वह कूल्हे तक पहुंच गयी और वह दुष्ट दो टुकड़े हो कर गिर पड़ा। मुसलमान ने अपना चेहरा खोल कर कहा : 'कअ्ब ! क्या विचार है ! मैं अबू-दुजाना हूं।'

हम्ज़ा बिन अब्दुल मुत्तलिब ने भूखे शेर के समान आक्रमण किया और बनी अब्दुद्दार के नेताओं को सदा के लिए सुला दिया।

ज़ुबैर बिन मुतिम के हब्शी दास वहशी बिन हरब का बयान है कि मुझ से ज़ुबैर ने कहा कि यदि तू मुहम्मद के चचा को क़त्ल कर दे तो तू स्वतंत्र है। अतः जब क़ुरैश 'ओहुद' के लिए रवाना हुए तो मैं भी उन के साथ हो लिया मैं हब्शियों के समान नेज़ाबाज़ी में निपुण था मेरा निशाना अचूक था। जब युद्ध शुरू हुआ तो मैं हम्ज़ा की खोज में लग गया यहां तक कि मैं ने उन्हें तेज़ गति ऊंट के समान आक्रमण करते देखा। वह अपनी तलवार से लाशों के ढेर लगाते चले जा रहे थे, कोई उन के सामने ठहर न पाता था। मैं उन की ताक में एक वृक्ष या पत्थर की आड़ में छिप गया देखा, कि सबाअ् बिन अब्दुल उज्ज़ा युद्ध क्षेत्र में उतरा। जब हज़रत हम्ज़ा ने उसे देखा तो डांट कर कहा : हे औरतों का ख़तना करने वाली स्त्री के बच्चे ! तू अल्लाह और रसूल का मुक़ाबला करता है ? यह कह कर तलवार का भरपूर आक्रमण किया और उसका सिर उतार लिया। वहशी का बयान है कि जब मैं पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हो गया तो मैं ने ताक कर उन की नाभि में नेज़ा मारा जो आर पार हो गया, वह मेरी ओर आगे बढ़े

परन्तु बेहोशी ने आगे न बढ़ने दिया तथा गिर पड़े मैं ने उन्हें इसी दशा में छोड़ दिया और उनकी मृत्यु हो गयी। मैं अपना नेज़ा लेकर ख़ेमे में चला आया। क्योंकि अब मुझे कोई काम न था। मैं ने अपनी स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए उन्हें क़त्ल किया था।

मुसलमानों को हम्ज़ा की शहादत से बड़ा धक्का लगा परन्तु फिर भी उन की मुट्ठी भर सेना अपने मोर्चों पर जमी रही। इस युद्ध में मुसलमानों के ध्वजावाहक इस्लाम के महान् आमन्त्रणकर्ता हज़रत मुस्अब बिन उमैर थे। जब शहीद हो गये तो अली बिन अबी तालिब ने ध्वजा उठा लिया तथा मुहाजिर और अंसार इस सम्मान को प्राप्त करने के लिए आगे बढ़ने लगे। इस प्रकार इस्लामी झण्डा धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। इस युद्ध में मुसलमानों का नारा 'अल्लाहु अकबर' था।

क़ुरैश की स्त्रियां दफ़ बजा बजा कर पुरुषों को उत्तेजित कर रही थीं। उन का नेतृत्व 'हिन्द बिन्त उत्बा' कर रही थीं। वह बनी अब्दुद्दार को झण्डा उठाये रखने को कविता पढ़ कर लज्जा दिला रही थी तथा उन के स्वाभिमान को बढ़ा रही थी :

'हे बनू अब्दुद्दार ! इसी दिन के लिये तुम्हें पाला पोसा गया था,
आज ही के लिए वीरों और सूरमाओं की परवरिश हुई थी,
प्रत्येक दुश्मन पर पूर्ण तन्मयता के साथ टूट पड़ो—!'

अपनी जाति को इस प्रकार कविता गा कर उत्तेजित कर रही थी :

'हम आकाश के तारों की बेटियां हैं, हम क़ालीनों पर चलने
वालियां हैं। अगर तुम बढ़ कर लड़ोगे तो हम तुम से गले
मिलेंगी और पीछे पग लौटे तो हम तुम से अलग हो जायेंगी।'

क़ुरैश ने मुसलमानों के पैर उखाड़ने की पूर्ण कोशिश की परन्तु वे विफल हो गये तथा उन के साहस, संकल्प और दृढ़ता के सामने काफ़िरों की एक न चली।

इब्ने इस्हाक़ की रिवायत है कि इसके पश्चात् अल्लाह ने अपनी सहायता उतारी और अपना वायदा सच्चा कर दिखाया अतः मुसलमानों ने काफ़िरों को तलवारों पर ले लिया जिसके कारण उन के पांव उखड़ गये और काफ़िरों की पराजय में कोई शंका न रही।

अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० अपने पिता से रिवायत करते हैं कि मैं ने हिन्द बिन्त उत्बा और उसकी सहेलियों को बदहवासी के साथ भागते देखा, उन्हें अपना सामान तक उठाने का होश न रहा।

—०—

एक व्यक्ति ऐसे वातावरण में हर्षोल्लास मना रहा होता है जो बिजली के बल्बों से प्रकाशमान हो, चारों ओर प्रकाश फूटा पड़ता हो, परन्तु एक छोटी सी गड़बड़ उस सम्पूर्ण वातावरण को भीषण अन्धकार में बदल देती है।

इसी प्रकार की एक साधारण सी गड़बड़ से युद्ध का पांसा पलट दिया।

मानव कमज़ोरी क्षण भर के लिए सेना के एक भाग पर आच्छादित हो गयी। जिसके कारण पूरी सेना को उस का कुपरिणाम भुगतना पड़ा तथा पल भर में वे समस्त कारनामे मिट्टी में मिल गये जो अद्भुत साहस और अपार क़ुरबानी के पश्चात् मिले थे।

गत पृष्ठों में हम पढ़ चुके हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने तीरंदाज़ों को कितनी ताकीद कर दी थी कि वे सेना के पिछले दल की सुरक्षा में अपने स्थानों से कदापि न हटें चाहे पक्षी उन्हें उचक रहे हों ? परन्तु भौतिक मोह के एक झटके ने उन समस्त निर्देशों तथा सावधानियों को दबा दिया। तीरंदाज़ों ने देखा कि क़ुरैश पराजित होकर भाग रहे हैं उन की स्त्रियां पहाड़ों पर उद्विग्नतापूर्ण इधर उधर भाग रही हैं, मुसलमान भगोड़ों का पीछा कर रहे हैं तथा जो माले-ग़नीमत इन तीन हज़ार मुश्रिकों ने छोड़ा था उस से पूरी घाटी भर गयी थी, तो उन्हों ने अपने स्थान छोड़ दिये और ग़नीमत का माल लूटने के लिए मैदान में उतर आये।

'ख़ालिद बिन वलीद' के नेतृत्व में मुश्रिक लज्जापूर्ण घिरे हुए थे। वह मुसलमानों की मध्य वाली सेना तक पहुंचने का कोई मार्ग न पा सके थे कि पराजय उठानी पड़ गयी। जब खालिद ने देखा कि मुसलमानों की पिछली सेना अपना स्थान छोड़ चुकी है और दर्रे का मार्ग साफ़ है तो सहसा अपने साथियों को साथ लेकर पीछे से आक्रमण कर दिया। जब क़ुरैश के भगोड़ों ने यह तात्कालिक परिवर्तन देखा तो वे भी पलट आये तथा एक स्त्री उम्रा बिन्त अल्क़मा ने मिट्टी में पड़े हुए झण्डे को ऊंचा उठा लिया और उनके उखड़े हुए पैर फिर जम गये। सहाबा आगे और पीछे से इस प्रकार घिर गये जैसे चक्की के दो पाटों के बीच आ गए हों।

यद्यपि साहसी लोग परिस्थितियों से निराश नहीं होते। फिर भी उन्हों ने परिस्थितियों का निडर एवं साहसपूर्ण मुक़ाबला किया परन्तु उन की सेना तथा पंक्तियां अस्त व्यस्त हो चुकी थीं अतः वे स्वच्छन्द तलवारें चला रहे थे। उस समय उनका उद्देश्य केवल जान बचाना तथा घेराव से किसी प्रकार बाहर निकलना था।

बहुत से मुसलमान इस घेरे को तोड़ने में शहीद हो गये। मुश्रिकों ने

रसूलुल्लाह् तक पहुंचने का प्रयत्न किया और किसी ने एक पत्थर मारा जो नीचे के दांत तोड़ता हुआ निचले होंठ को घायल करता चला गया। आप सल्ल० का चेहरा शोकपूर्ण हो गया और घाव से खून की धारें बह निकलीं (अल-बिदाया)। उधर यह अफ़वाह् फैल गयी कि रसूलुल्लाह् शहीद कर दिये गए। अतः मुसलमान तितर-बितर हो गये। कुछ मुसल-मान भाग कर मदीना चले गये तथा कुछ लोग पहाड़ के ऊपरी भाग की ओर चलने लगे। इस दशा में आप के साथी परेशान हो गये कि क्या करें?

रसूलुल्लाह् सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मुसलमानों को बुलाने लगे: 'अल्लाह् के बन्दो! मेरी ओर आओ, अल्लाह् के बन्दो! मेरी ओर बढ़ो।' यह सुन कर लगभग ३० वफ़ादार आप के पास इकट्ठा हो गये परन्तु मुश्रिकों ने उन्हें देख लिया और उन पर टूट पड़े। तल्हा बिन उबैदुल्लाह् रज़ि० और सुहैल बिन हुनीफ़ रसूलुल्लाह् की रक्षा करने लगे। इसी क्षण तल्हा रज़ि० के हाथ में तीर लगा और वह शिथिल हो गया।

उबई बिन खल्फ़ जम्ही ने रसूलुल्लाह् को क़त्ल करने का प्रण किया था अतः अवसर पाकर आप की ओर बढ़ा और यह कहते हुए: 'हे झूठे किधर भागे जा रहे हो?' तलवार से आक्रमण किया।

रसूलुल्लाह् ने फ़रमाया: 'मैं ही इन्शा अल्लाह् इसे क़त्ल करूंगा,' और आपने नेज़े (भाला) से उस की गर्दन में ऐसा चुभका दिया कि वह बैल के समान डकराने लगा तथा थोड़ी देर बाद अथवा एक दिन बाद मर गया।

रसूलुल्लाह् कुछ साथियों के साथ दूसरों को बुलाते हुए पहाड़ी पर चढ़ गये अतः पहाड़ी की ओर भागने वाले मुसलमान आप के पास जमा हो गये। इधर रसूलुल्लाह् रक्षा करने में व्यस्त लोगों को देख कर प्रसन्न हो गये तथा उधर आप सल्ल० को देखकर उनकी जान में जान आ गयी क्योंकि वे समझ रहे थे कि रसूलुल्लाह् शहीद हो गये हैं।

लगता है कि नबी की शहादत का मिथ्या समाचार बड़ी तेजी से फैला। कुछ मुसलमान साहस छोड़ बैठे और कहने लगे कि रसूलुल्लाह् शहीद हो गये तो लड़कर ही क्या करेंगे। हज़रत अनस बिन नज़्र रज़ि० ने कहा: 'यदि रसूलुल्लाह् शहीद हो गये तो तुम जीवित रहकर क्या करोगे? उठो और तुम भी इसी पर जान दे दो जिस पर आप सल्ल० ने दी है।' यह कह कर दुश्मनों की सेना में घुस गये और साहसपूर्ण लड़ते हुए शहीद हो गये।

क़ुरैश ने रसूलुल्लाह् तथा आप के साथियों की घेरा बन्दी करने और उन्हें क़त्ल करने का भरसक प्रयत्न किया। विश्व इतिहास में इस से अधिक

कठिन एवं सख़्त दिन कभी न आया था। मुश्रिक अपने उद्देश्य प्राप्ति में जी जान से लीन थे अतः नबी की रक्षा में बहुत से मुसलमान शहीद हो गये। हज़रत तल्हा आप के लिए ढाल बन गए और भालों एवं तलवारों के वार सहते रहे यहां तक कि बेदम होकर गिर पड़े। अबू दुजाना रज़ि० ने अपनी पीठ से आप की रक्षा की। तीर आकर सीने को छलनी करते रहे परन्तु अपने स्थान से ज़रा न हटे।

मुस्लिम की रिवायत है कि रसूलुल्लाह ओहुद के युद्ध में अकेले रह गये, आप के पास केवल सात अन्सारी और दो मुहाजिर थे। जब मुश्रिकों की भीड़ बढ़ गयी तो आप ने आवाज़ लगाई : 'कौन है जो इनको मुझ से हटाये ? उस के लिए 'जन्नत' है।' यह सुनते ही अन्सार का एक व्यक्ति आगे बढ़ा और लड़ते हुए शहीद हो गया। मुश्रिकों की भीड़ फिर होने लगी तो आप ने फिर ज़ोर से पुकारा : 'कौन है जो इन को मुझसे हटाये, उस के लिए जन्नत है।' इस प्रकार अन्सार आगे बढ़ते रहे और शहीद होते रहे यहां तक कि सातों शहीद हो गये। तब अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया : 'हमारे साथियों ने हमारे साथ न्याय नहीं किया।' अर्थात् वे लोग जो छोड़ कर भाग गये थे।

इस त्याग और क़ुरबानी ने जान न्यौछावर करने की एक लहर सी दौड़ा दी तथा क़ुरैश की बदले की भावना ठण्डी पड़ने लगी। चारों ओर से मुसलमान आप के पास एकत्र होने लगे तथा दोबारा सफ़बन्दी होने लगी।

रसूलुल्लाह ने आदेश दिया कि इन क़ुरैशी शत्रुओं को इस पहाड़ से नीचे उतारो जिस पर ये अधिकार जमाए हुए हैं, और फ़रमाया :

'इन को हम पर श्रेष्ठ होने का अधिकार नहीं है।'

इस पर सहाबा ने मुश्रिकों पर पत्थरों की वर्षा कर दी और उन्हें नीचे उतार दिया।

—०—

इस भयंकर पराजय के अन्जाम से बचना, इस से पूर्व प्राप्त सफलता से कम महत्व का न था। रसूलुल्लाह सल्ल० ने क़ुरैश का डट कर मुक़ाबला करने का हर सम्भव प्रयत्न किया ताकि 'ग़नीमत' का माल उन के हिस्से में न आ सके तथा उन्हें भारी क्षति भी उठानी पड़ी ताकि मुसलमानों को भविष्य में परेशान करने के विषय में सोच भी न सकें। आप अपने 'तरकश' (निषंग) से तीर निकाल निकाल कर 'सअद बिन वक़्क़ास' को देते जाते

और फ़रमाते : 'तीर चलाओ, तुम पर मेरे मां बाप क़ुरबान हों।''

हज़रत अबू तल्हा अंसारी रज़ि० बड़े निपुण तीरंदाज़ थे। उन्हों ने ढाल बन कर रसूलुल्लाह की सुरक्षा की। जब वह तीर चलाते तो आप सिर उठा कर देखते कि तीर कहां लगा है परन्तु हज़रत तल्हा निवेदन करते : 'मेरे माता पिता आप पर क़ुरबान हों, इस प्रकार सिर न उठायें, ऐसा न हो कि कोई तीर आप के लग जाये। मेरा सीना आप के सीने के लिये ढाल है।'[1] और वह कहते : 'मेरे पिता बड़े शक्तिशाली थे। हे अल्लाह के रसूल ! मुझे अपनी आवश्यकता सम्बन्धी कार्य बतायें तथा आप जो चाहें मुझे आज्ञा दें।'

तीरंदाज़ उन मुश्रिकों को आप के आस पास से हटाने में सफल हो गये जिन्हों ने पहाड़ी पर चढ़ने का प्रयत्न किया था। अतः इस प्रकार बिखरे हुए मुसलमानों को रसूलुल्लाह के साथ हो जाने का अवसर मिल गया।

मुसलमानों की अव्यवस्था तथा बौखलाहट की यह दशा हो गयी कि वे रोष तथा क्रोध से अपने होश हवास खो बैठे। दोस्त तथा दुश्मन का अन्तर न रहा तथा आपस में ही एक दूसरे पर तलवारें चलाने लगे। प्रसिद्ध सहाबी हज़रत हुज़ैफ़ा के पिता 'यमान' रज़ि० भी इसी चपेट में शहीद हो गये। हुज़ैफ़ा रज़ि० चिल्लाते रहे कि 'ये मेरे पिता हैं, 'ये मेरे पिता हैं' परन्तु अफ़रातफ़री में किसी ने उनकी ओर ध्यान न दिया।

मुसलमानों को उस समय होश आया जब उन्हें बड़ा भयंकर धक्का लग चुका था। इस धक्के के पश्चात् अल्लाह ने उन के हृदय में धीरज तथा सन्तोष डाल दिया, उनका विश्वास तथा ईमान पुनः स्थापित कर दिया तथा वे सब रसूलुल्लाह के पास जमा हो गये। थकावट से कुछ लोगों की पलकें भारी हो गयीं। जब उन पर बदहवासी आच्छादित हुई और तलवारें उन के हाथों से छूट गयीं तो जाग्रति ने उन्हें झंझोड़ दिया तथा वे पुनः जंग करने को तैयार हो गये। उन पर यह अल्लाह का बड़ा अनुग्रह था :

> 'फिर, इस ग़म के बाद, उस ने तुम पर शान्ति उतारी। तुम में से कुछ लोगों को ऊंघ घेर रही थी।' ---आले इम्रान १५४

क़ुरैश को इस कष्टदायक एवं कठोर दिन की विपत्तियां मुसलमानों से कम सहन नहीं करनी पड़ीं।

पहले आक्रमण में क़ुरैश बुरी तरह हानि उठाकर भागे थे परन्तु जब

---

1. बुख़ारी, २. बुख़ारी।

युद्ध का पांसा पलट गया और उन्होंने इस युद्ध को अंतिम तथा निर्णायक युद्ध में परिवर्तित करने का संकल्प किया तो मुसलमान लकड़ी के समान कठोर सिद्ध हुए जिन्हें फ़ना करना सम्भव न था। अतः जो कुछ विजय मिली थी उसे पर्याप्त जान कर पराजित होने लगे।

इस पराजित होने का मुसलमान समझें कि क़ुरैश मदीना पर आक्रमण का इरादा रखते हैं। अतः रसूलुल्लाह ने अली बिन अबी तालिब से कहा : 'इन लोगों का पीछा करो और देखो ये क्या करते हैं ? यदि घोड़ों से दूर रहें और ऊंटों की सवारी करें तो समझो कि मक्का की ओर जाने का संकल्प है, और यदि घोड़ों पर सवार हैं और ऊंटों को हांक रहे हों तो समझो कि मदीना पर आक्रमण करना चाहते हैं। क़सम है उस ज़ात की जिस के अधिकार में मेरी जान है यदि उन्होंने मदीना का रुख़ किया तो वहां पहुंच कर उन से अवश्य जंग करूंगा।'

हज़रत अली रजि० का बयान है कि 'मैं ने उन का पीछा किया तो देखा कि वे बजाए घोड़ों के ऊंटों पर सवार मक्का की ओर जा रहे हैं।'[1]

इब्न् इस्हाक़ का बयान है कि जब अबू सुफ़्यान ने वापसी का संकल्प किया तो पहाड़ पर चढ़ गया और ज़ोर से चिल्लाया : 'बहुत अच्छा ! लड़ाई डोल के समान है कभी ऊपर कभी नीचे, यह दिन बद्र के दिन का उत्तर है। हुबल की जय हो।'

रसूलुल्लाह सल्ल० ने हज़रत उमर को आदेश दिया कि 'इस के उत्तर में कहें, अल्लाह महिमावान है। तुम हमारे बराबर नहीं हो सकते, हमारे मृतक 'जन्नत' में होंगे और तुम्हारे मृतक जहन्नम (आग) में।

इस के पश्चात् अबू सुफ़्यान ने आवाज़ दी 'उमर ! इधर आओ।'

रसूलुल्लाह ने कहा, 'जाओ : देखो क्या कह रहा है ?' हज़रत उमर उस के पास गये।

अबू सुफ़्यान : 'मैं तुम्हें अल्लाह की क़सम देता हूं, सच बताना, क्या हमने मुहम्मद (सल्ल०) को क़त्ल कर दिया है ?'

हज़रत उमर : 'ख़ुदा की क़सम : हरगिज़ नहीं, वह इस समय तेरी बात सुन रहे हैं।'

अबू सुफ़्यान : 'तुम मेरे निकट क़ुमैया के पुत्र'[2] से अधिक सच्चे हो।'

---

१. इब्ने हिशाम

२. यह वह व्यक्ति था जिसने अफ़वाह फैलायी थी कि मैंने मुहम्मद को क़त्ल कर दिया है।

> फिर उन से जोर से कहा : हमारे आदमियों के द्वारा तुम्हारे साथियों का जो 'मुम्ला' (मरणोपरान्त नाक कान काट लेना) हुआ, ख़ुदा की क़सम मैं न उस से प्रसन्न था न अप्रसन्न, मैंने न इसका आदेश दिया था न रोका था।'
>
> —अहमद, हाकिम

जब अबू सुफ़यान मक्का को जाने लगा तो उस ने पुकारा : 'आगामी वर्ष बद्र के स्थान पर युद्ध का वायदा है।'

रसूलुल्लाह सल्ल० ने किसी को आदेश दिया कि कह दो : 'हां, इन्शा अल्लाह ! हमारा तुम्हारा वायदा है।'

परीक्षायें शिक्षा देती हैं

ओहुद का युद्ध अपने साथ बहुत से रहस्य, तत्वदर्शिताएं, तथा बहुमूल्य शिक्षाएं लाया। इसके विभिन्न चरणों, वृत्तांतों तथा परिणामों के विषय में लम्बी-लम्बी आयतें उतरीं जिन का रसूलुल्लाह के दिल पर बड़ा प्रभाव पड़ा तथा आप अपने अन्तिम दिनों तक उनकी चर्चा करते रहे।

यह युद्ध एक परीक्षा था जिसके द्वारा दिलों की निहित बातें स्पष्ट हो गयीं, वास्तविक चेहरे सामने आ गये, तथा तथ्यों से पर्दा उठ गया। ईमान और निफ़ाक़ में अन्तर प्रत्यक्ष हो गया बल्कि ईमान की विभिन्न श्रेणियां स्पष्ट हो गयीं। जिन्हों ने दुनिया तथा भौतिकता से निःस्पृहता तथा विमुखता बरती उन्हें दुनिया तथा उस की सामग्री अपनी ओर आकृष्ट न कर सकी परन्तु जिन के मन में दुनिया तथा उस की सामग्री एवं भौतिकता की ओर कुछ भी झुकाव था उन के स्वार्थ तथा वासनाओं व आकांक्षाओं ने मुसलमानों को हानि पहुंचाई।

युद्ध के आरम्भ होने से पहले ही अब्दुल्लाह बिन उबई धोखा दे गया और तीन सौ व्यक्तियों को लेकर अलग हो गया। यह व्यवहार इस्लाम के अपमान, उस से बेवफ़ाई तथा कठोर परिस्थितियों में उससे ग़द्दारी के समान था जो निफ़ाक़ का खुला लक्षण है।

दावतों तथा आन्दोलनों के प्रचार एवं व्यवस्थाकाल में उन के झण्डे तले लोगों की भीड़ें जमा होने लगती हैं जिन में निस्वार्थ, मुख्लिस, मुनाफ़िक़ खोट रहित स्वार्थी तथा लोभी आदि सभी होते हैं। यह समन्वय आन्दोलनों की गति और उन के परिणामों के लिए अत्यन्त हानिकारक होते हैं।

उन का सर्वप्रथम हित यह होता है कि उन्हें कठोर तथा भयंकर झटके

लगें ताकि शुद्ध व अशुद्ध छट कर अलग हो जाये। ईश्वरीय तत्वदर्शिता की मांग हुई कि ओहुद के युद्ध में यह चयन तथा अन्तर पूरा हो जाये:

> 'यह नहीं होने का कि अल्लाह ईमान वालों को उस तरह रहने दे जैसे कि तुम थे, जब तक कि वह नापाक को पाक से अलग न कर दे। और अल्लाह वह नहीं कि तुम्हें परोक्ष की खबर दे।
>
> —आले इम्रान १७९

कायरता तथा कमजोरी मुनाफ़िकों के दिलों में भरी हुई थीं और इन्हीं चीज़ों ने उन्हें स्वयं अपनी एवं जनसाधारण की दृष्टि में अपमानित कर दिया, पहले इस के कि ईश्वर उन के निफ़ाक़ को प्रकट करता।

जब इन मुनाफ़िकों का निफ़ाक़ खुल गया तथा ईमान की ऊंची चोटियां भी प्रत्यक्ष हो गयीं तो युद्ध के शुरू में ही सफलता तथा विजय के साथ विशुद्ध तत्व आगे बढ़ा, फिर मुश्रिकों के दोबारा आक्रमण करने और लड़ाई का पांसा पलट जाने के पश्चात सुरक्षा हेतु यही तत्व आगे-आगे रहा तथा अपने ईमान और इख्लास (विशुद्धता) की गवाही देता रहा।

जो लोग अपने खून की लाली से इतिहास का निर्माण करते हैं तथा अपने साहस और संकल्प के बल पर उसका रुख मोड़ते हैं, उन्हीं वीरों ने इस युध में वीरता दिखायी तथा इस क्षेत्र में इस्लाम की सुरक्षा का कर्त्तव्य पूरा किया।

हज़रत खैसमा से रिवायत है कि उन्होंने रसूलुल्लाह से अर्ज किया: 'हे अल्लाह के रसूल! मुझे बड़ा शोक है कि मुझ से बद्र का युद्ध छूट गया जिस में शिर्कत की बड़ी आकांक्षा थी तथा मैं ने अपने बेटे और अपने नाम का पांसा' डाल कर देखा परन्तु उसी का नाम निकला और उसे शहादत प्राप्त हो गयी। आज रात को मैं ने अपने बेटे को स्वप्न में देखा है, अति सुन्दर, स्वरूपवान है, जन्नत के बागों और नहरों में मनोरंजन एवं तफ़रीह कर रहा है और मुझ से कह रहा था 'पिताजी आप भी यहीं आ जायें दोनों मिलकर जन्नत में रहेंगे। मेरे रब ने मुझ से वायदा किया था वह पूरा कर दिया।'

हे अल्लाह के रसूल! इस समय मुझे अपने पुत्र से मिलने की आकांक्षा है। वृद्ध हो गया हूं हड्डियों में दम नहीं रहा है अब केवल यह कामना है कि अपने रब से जा मिलूं। हे अल्लाह के रसूल! ईश्वर से प्रार्थना कीजिए कि अल्लाह मुझे शहादत तथा अपने पुत्र 'सअद' का साथ प्रदान करे।' आप सल्ल० ने खैसमा के लिए दुआ की तथा आप की दुआ अल्लाह ने स्वीकार की और ओहुद के युद्ध में खैसमा रजि० शहीद हो गये।'

वीरता तथा बलिदान का यह रंग आधुनिक युग तक के इस्लामी इतिहास की दीवारों के नीचे दफ़न है। जब भी इस्लाम की उन्नति होती है तथा दमन एवं हिंसा व अत्याचार का काल समाप्त होता है तो वह 'सिद्दीकों', तथा 'शहीदों' के दिलों में दबी हुई उन्हीं शक्तियों का चमत्कार होता है।

यह उसी 'इल्हाम' का कारनामा है, उसी रोशनी की चमक है तथा उसी इक्तिदार की शक्ति है !

यह मुहम्मद (सल्ल०) ही हैं जिन्हों ने उसी अद्वितीय एवं अजनबी संतान की देख भाल की थी। आप के शुभ हृदय ने उन के दिलों पर अपना प्रभाव डाला और उन के अन्दर त्याग एवं बलिदान की रूह भर दी थी।

यह महान सन्देष्टा ओहुद के युद्ध में घायल भी हुआ, शरीर पर घाव आये शुभ मुख पर कवच की कड़ियां घुस गयीं, अबू उबैदा (रज़ि०) ने उन्हें अपने दांतों से पकड़ कर खींचा यहां तक कि उन के दो दांत बाहर निकल आये।[1] रसूलुल्लाह के घावों से खून बहने लगा, जितना पानी डाला जाता उतनी ही धार तेज़ हो जाती। अन्ततः चटाई का एक टुकड़ा जला कर उस की राख भरी गयी तब खून बन्द हुआ।[2]

इस प्रकार आप के दांत शहीद हो गये, सिर में घाव हो गया, फिर भी आप निरन्तर चेतनशील तथा जागरूक रहे और अपने साथियों का मार्गदर्शन करते रहे यहां तक कि युद्ध समाप्त हो गया।

आप के परिवार के लोग भी शहीद हुए। हज़रत हम्ज़ा (रज़ि०) की नाभि में ऐसा भाला लगा कि पार हो गया। अबू सुफ्यान की पत्नी 'हिन्द' ने उन का पेट चाक कर के 'जिगर' (यकृत) निकाल कर निगलना चाहा परन्तु कड़वाहट के कारण थूक दिया।

रसूलुल्लाह को हज़रत हम्ज़ा अति प्रिय थे, जब आप ने उन का 'मुस्ला' किया हुआ शरीर देखा तो शोकाधिक्य से कांपने लगे और फ़रमाया : आज से अधिक मुझे कभी कष्ट न पहुंचा था, इस से अधिक सब्र की परीक्षा का लम्बा चरण कभी न आया था।[3]

परन्तु ईश्वरीय प्रसन्नता तथा सुपुर्दगी की दशा ने तुरन्त ही इन सन्तापों को दबा दिया और आप अपने सहाबा (साथियों) की देख रेख में लग गये। तथा अल्लाह की प्रसन्नता एवं ईश्वरीय निर्णय के सामने झुक जाने को अपनी नीति बना लिया।

---

१. इब्ने हिशाम, २. बुखारी, मुस्लिम, ३. बुखारी, मुस्लिम,

झुठलाते हैं, तेरे मार्ग से रोकते हैं, और उन पर अपना प्रकोप तथा लानत फ़रमा।
हे अल्लाह तू उन काफ़िरों से जंग कर जिन्हें किताब दी गयी थी परन्तु फिर भी उन्हों ने कुफ़ किया। हे सच्चे पूज्य।'

क़ुरआन पर ग़ौर कीजिए, उस ने ओहुद के युद्ध में मुसलमानों की पराजय पर जो समीक्षा की है वह उस पूछ ताछ से भिन्न है जो जंग बद्र के पश्चात् की गयी थी। इस में आश्चर्य की बात नहीं क्योंकि विजेता की ग़लतियों की पकड़ पराजित के मुक़ाबले में अधिक होती है। बद्र के युद्ध पर इस प्रकार आलोचना की गयी थी :

'तुम लोग दुनिया की सुख सामग्री चाहते हो और अल्लाह आख़िरत चाहता है, और अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है। यदि (इस के बारे में) अल्लाह पहले न लिख चुका होता, तो जो कुछ तुम ने किया है उस पर तुम्हें कोई बड़ी यातना पहुंचाता।' —अल-अन्फ़ाल ६७,६८

परन्तु ओहुद के युद्ध के पश्चात् मुसलमानों की ग़लतियों पर इस प्रकार ताड़ना की जाती है—

'तुम में कुछ लोग दुनिया चाहते थे, और कुछ आख़िरत के इच्छुक थे, फिर अल्लाह ने तुम्हें उन से फेर दिया ताकि तुम्हारी परीक्षा ले। और उस ने तुम्हें क्षमा कर दिया। और अल्लाह ईमान वालों के लिये बड़ा अनुग्रह वाला है।'

—आले इम्रान १५२

मुसलमानों की ग़लती पर इतना प्रायश्चित काफ़ी था कि वे पराजित हुए। तुरन्त बदला तथा दण्ड में अपराधी तथा दुष्कर्मी के लिये शिक्षा एवं उपदेश करने और अपनी ग़लती का आभास करने का अधिक अवसर रहता है।

क़ुरआन ने बहुत ही हल्की तथा सूक्ष्म ताड़ना की और मुसलमानों का शुद्धीकरण इन परीक्षाओं का उद्देश्य निश्चित किया ताकि उन की पराजय निराशा में परिवर्तित हो जाये जो उनकी योग्यताओं के घुन की समान चाट जाये और उन पर ऐसी निराशा न आच्छादित हो जाये जो उन की योग्यताओं को शिथिल कर दे :

'तुम से पहले कितनी मिसालें बीत चुकी हैं। धरती में चल फिर कर देखो झुठलाने वालों का क्या परिणाम हुआ है। यह लोगों के लिये बयान (और चेतावनी) है और डर रखने वालों

मनुष्य प्रायः अपनी काहिली तथा शान्तिप्रियता के कारण कुछ चीजों को आसान और सुगम समझने लगता है तथा इस कारण उसे धोखा खाना तथा दुःख उठाना पड़ता है।

मुसलमान को इस स्थिति में सचेत रहना चाहिए। जो लोग मृत्यु की कामना करते थे परन्तु समय आने पर वे पीछे रह गये, अल्लाह ने इन लोगों की ताड़ना किस प्रकार की है ? :

> 'और तुम मृत्यु की, उस के तुम्हारे अपने सामने आ जाने से पहले कामना कर रहे थे, तो अब वह तुम्हारे सामने आ गयी और तुम ने उसे देख लिया।' —आले इम्रान १४३

अल्लाह तआला ने उन लोगों पर रोष व्यक्त किया जिन्हों ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की मृत्यु की खबर सुन कर लड़ना छोड़ दिया, उनका साहस टूट गया तथा उन के हौसले ठण्डे पड़ गये। चिन्तन एवं विचारधाराओं के आवाहकों का यह तरीक़ा नहीं होता, वे तो सिद्धान्तों के आवाहक होते हैं व्यक्तियों के नहीं !

कल्पना कीजिए कि 'रसूले करीम' 'दीने हक़' की सुरक्षा करते हुए शहीद हो जाते तो यह उन 'महात्मा' का दायित्व था कि वे मौत के मुंह में दृढ़पग रहते तथा अपने क़ायदे के साथ स्वयं भी शहीद हो जाते। न यह कि मलीन एवं साहसहीन हो जायें और रणक्षेत्र से भाग जायें।

मुहम्मद (सल्ल०) का उत्तरदायित्व था कि मनुष्य के चिन्तन और अन्तरात्मा के समस्त पहलुओं को प्रकाशमान कर दें। जब आप ने अपनी जिम्मेदारी पूरी कर दी और इस दुनिया से चले गये तो क्या दिव्यात्मा लोगों को यह जायज होगा कि वे पुनः अन्धेरों की ओर लौट जायें जहां से उन का निकलना असम्भव हो ?

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने अपने पास लोगों को खुदा के सन्देष्टा और उस के बन्दे की हैसियत से एकत्र किया था तथा जो लोग आप से सम्बन्धित थे 'हक़' (सत्य) के मामले में अपना नायक तथा इमाम मानते थे।

यदि यह अल्लाह का बन्दा मृत्युग्रस्त हो गया होता तो उस सदा जीवित रहने वाले अस्तित्व (अल्लाह) से महान सम्बन्ध तो बाक़ी रहता जिसे कभी मृत्यु नहीं आती। यह सम्बन्ध तो कभी समाप्त होने वाला नहीं है :

> और मुहम्मद तो बस एक रसूल हैं, उन से पहले भी रसूल

गुज़र चुके हैं। तो क्या यदि वे मर जायें या क़त्ल कर दिये जायें, तो तुम पीठ पीछे फिर जाओगे ? और जो पीठ पीछे फिरेगा वह अल्लाह का कुछ नहीं बिगाड़ेगा, और अल्लाह कृतज्ञता दिखाने वालों को जल्द बदला देगा।

—आले इम्रान १४४

इस युद्ध में मुसलमानों को मिलने वाली पराजय अपने साथ शिक्षा तथा उपदेश रखती थी जिनकी ओर उक्त आयत ने संकेत कर दिया है। और यह बता दिया है कि भविष्य में वे किस प्रकार इन समस्याओं का समाधान करेंगे, यह अस्थायी आघात मुसलमानों को उन लोगों से पृथक कर देता है जो अपने हितों के अधीन दाख़िल हुए थे। तथा निफ़ाक़ की बीमारी में ग्रस्त थे।

यदि बद्र के युद्ध ने काफ़िरों और मुश्रिकों को अपमानित किया तो ओहुद के युद्ध ने मुनाफ़िक़ों का भंडा फोड़ दिया। प्रायः बहुत सी हानिकारक चीज़ें लाभकारी सिद्ध हो जाती हैं और रोगों के द्वारा शरीर स्वस्थ हो जाते हैं।

इस युद्ध से आदेशों की अवज्ञा के विषय में सब से महत्वपूर्ण यह शिक्षा मिलती है कि आज्ञापालन का महत्व बहुत अधिक है जिस से मुसलमानों को सावधान रहना चाहिए। जिस जमाअत का एक नेतृत्व न हो या जिस के आवाहनों पर व्यक्तिगत इजितहादों तथा अपनी रायों का प्रभुत्व हो वह किसी टकराव में सफल नहीं हो सकता बल्कि किसी युद्ध या शान्ति काल में स्वयं अपनी रक्षा भी नहीं कर सकता है।

काफ़िर और मुस्लिम सभी इस वास्तविकता से परिचित हैं अतः सेनाओं की व्यवस्था पूर्ण आज्ञापालन पर स्थापित है। जब कोई राष्ट्र जंग में फंस जाता है तो समस्त दल अपना एक मोर्चा बना लेते हैं और उस की समस्त आकांक्षाएँ एक ही आकांक्षा में विलीन हो जाती हैं तथा उसके बीच का मतभेद तथा सरकशी समाप्त हो जाती है।

सेना की दृढ़ता नेतृत्व की दृढ़ता पर आधारित है।

जिस प्रकार आदेशों का 'इस्तिम्बात' (आदेशों का निष्कर्षण) तत्वदर्शिता चाहता है इसी प्रकार उन का कार्यान्वयन शक्ति, ताड़ना तथा दण्ड चाहता है। परन्तु तमाम मामलों में आज्ञापालन का अंजाम जमाअत के प्रति बेहतर होता है।

बग़ावत तथा उद्दण्डता एवं अवज्ञा में वे लोग आगे रहते हैं जो नेतृत्व की आशा रखते हों परन्तु वह उन्हें मिल न सकी हो अब्दुल्लाह बिन उबई

इसी स्वार्थपरायणता एवं आत्महित का ज्वलन्त उदाहरण था जिस ने अपने हितों के मार्ग में उम्मत के भविष्य को दांव पर लगा दिया था।

जिन तीरंदाज़ों ने अवज्ञा की थी उन पर सामायिक ग़फ़लत एवं कमज़ोरी आच्छादित हो गयी थी। जंग के बीच दुनिया का दबा हुआ मोह तथा उस के नाशवान आनन्दों से रुचि उभर आयी थी तथा उस का जो परिणाम हुआ वह हमारे सामने है।

अतः जब वह घटना घटित हुई जिस ने युद्ध का पांसा पलट दिया तो अल्लाह ने इस का स्पष्टीकरण कर दिया कि इस दुखित घटना के उत्तरदायी वे स्वयं हैं अल्लाह ने न किसी का हक़ मारा है और न प्रतिज्ञा भंग की है :

> 'और क्या जब तुम्हें एक मुसीबत पहुंची जिस की दोगुनी मुसीबत तुम ने पहुंचाई तो तुम ने कहा : यह कहां से आ गई ? तुम (हे नबी !) कह दो : यह तुम्हारे अपने ही पास से है, निस्सन्देह अल्लाह को हर चीज़ का सामर्थ्य प्राप्त है।'
>
> —आले इम्रान १६५

अल्लाह तआला किसी भी काम के लिए पूर्णता की शर्त ठहराता है तथा उस के स्वीकरण का आधार ईमान, अनुदर्शन तथा इख़्लास को मानता है।

ओहुद के शहीद

क़ुरैश के सरदारों को जो कुछ भी विजय मिली उस से लाभ उठाकर उन्हों ने तुरन्त मक्का का रुख किया। युद्ध के शुरू में ही पराजित होने के पश्चात् उन्हें अपनी विजय का पूर्ण विश्वास नहीं था।

मुसलमान शहीदों के शव खोजने में लग गये तथा उन के कफ़न, दफ़न का प्रबन्ध करने लगे।

इब्ने इस्हाक़ की रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया : 'कौन है जो सअ्द बिन रबी' की खबर ले कर आये कि वह जीवित हैं या शहीद हो गये ? एक अंसारी ने आगे बढ़ कर कहा कि 'मैं देखता हूं !' वह खोजते हुए हज़रत सअ्द के पास पहुंचे तो देखा कि वह अभी जीवित हैं। उन्हों ने रसूलुल्लाह का हुक्म सुनाया कि मैं भेजा गया हूं ताकि देखूं कि आप जीवित हैं या शहीद हो गये ? सअ्द ने कहा :

'मैं अब मरने वाला हूं। रसूलुल्लाह को मेरा सलाम पहुंचाना और कहना कि 'सअ्द' कहता था अल्लाह आप को हमारी ओर से और तमाम

के मार्ग में जो व्यक्ति भी घा

दिन इस दशा में उठाया जा

होगा। रंग तो ख़ून ही का है उ

इस युद्ध का रसूलुल्लाह के

उसे अन्तिम समय तक याद क

नीचे आप ने अपने अत्यधिक

था। जिन पवित्र रूहों ने दावत

मार्ग में रिश्ते नातों को क़ुरब

---

१. अबू दाऊद, नसाई, इब्ने मा

२. अहमद, इब्ने हिशाम,।

में भी अपने अक़ीदों तथा विचारधाराओं से जुड़ी रहीं। माल ख़र्च किया तलवारें चलायीं, दृढ़ता का प्रदर्शन किया तथा दूसरों के सब्र का उपदेश दिया, भाग्य ने उन के अन्तिम ठिकाने के रूप में इस पर्वत का चयन किया। तथा वे अब ईश्वरेच्छा पर सन्तुष्ट आराम की नींद सो रही थीं। रसूलुल्लाह इन मुख़लिस वीरों की कीर्तियों और उनके परिणाम को याद करते तथा तड़प कर कहते : 'ओहुद पहाड़ हम से प्रेम करता है और हम इस से प्रेम करते हैं।'[1]

जब मृत्यु का समय क़रीब आया तो आप ने ओहुद के शहीदों की क़ब्र पर जाने, उन के लिए प्रार्थना करने और अन्य लोगों के लिए शिक्षा का अवसर प्रदान करने का संकल्प किया।

उक़बा बिन आमिर (रज़ि०) से हदीसोल्लेख है कि रसूलुल्लाह ने आठ वर्ष के बाद ओहुद के शहीदों के विषय में इस प्रकार संवेदना व्यक्त की जैसे कोई विदा हो रहा हो, फिर आप ने मिंबर (मंच) पर चढ़ कर ख़ुत्बा (भाषण) दिया :

> 'मैं तुम्हारा मार्ग दर्शन करने वाला हूं, मैं तुम पर गवाह हूं, हौज़ कौसर पर मुलाक़ात का तुम से वचन है, मैं यहीं से बैठे हुए उसे देख रहा हूं मैं तुम्हारे विषय में यह शंका नहीं रखता कि फिर मुश्रिक हो जाओगे परन्तु यह डर है कि तुम दुनिया (भौतिक-वाद) में न फंस जाओ।'

उक़बा (रज़ि०) कहते हैं कि यह मेरी आन्तरिक दृष्टि थी जो मैं ने रसूलुल्लाह पर डाली।[2]

मुसलमानों ने अपना शोक एवं रोष अपने दिलों में दबा लिया और जो ग़म का पहाड़ उन पर टूटा था उस के सामने साहस हीन न हुए वरन् आस पास शत्रुओं तथा विरोधियों की गतिविधियां देख कर पराजय के कारणों का मुक़ाबला करने उठ खड़े हुए तथा अपनी शेष शक्ति को घात में बैठे हुए शत्रुओं की चालों को विफल करने में लगा दिया।

ओहुद के युद्ध की पराजय का मुनाफ़िक़ों और यहूदियों ने लाभ उठाना चाहा तथा रसूलुल्लाह और आप के अनुयायियों के शत्रुओं ने इस स्थिति को उत्तम समझा अतः मदीना को अपना लक्ष्य स्थान बनाया। जो लोग अपने द्वेष को छिपाये हुए थे वे भी सामने आ गये और काफ़िरों ने काना-

---

१. बुख़ारी, मुस्लिम, २. बुख़ारी, मुस्लिम, अहमद तथा बेहक़ी।

भागों के मध्य में उपस्थित हो

कुछ कम हो गया।

उधर अबू सुफ़यान ने से

उन्हें साहसहीन बनाने के लि

बताये कि क़ुरैश को अपनी ग

रहे हैं ताकि मुसलमानों का उन

मुसलमानों ने हम्र-उल-अस

हुआ आदमी आया और उस

ताकि मुश्रिकों से पुनः मुठभे

न थी।

परन्तु मुसलमानों ने इस

रातों तक क़ुरैश की प्रतीक्षा

जाने ही में अपनी भलाई सम

मुसलमान पूरे सम्मान, श्रेष्ठता तथा रोब के साथ मदीना में दाखिल हुए।

इस सफल प्रदर्शन के विषय में, आघातों तथा सन्तापों के बावजूद, युद्ध में शरीक होने वाले वीरों के विषय में क़ुरआन की आयतें उतरीं जिन में मुसलमानों की वीरता और साहस को सराहा गया तथा उन की दृढ़ता और सरफ़रोशी की प्रशंसा की गयी।

> 'जिन लोगों ने अल्लाह और रसूल की पुकार सुनी, इस के पश्चात् कि उन्हें आघात पहुंच चुका था, इन लोगों के लिए जो उत्तमकार रहे और (अल्लाह का) डर रखा बड़ा प्रतिदान है। ये वे हैं जिन से लोगों ने कहा कि तुम्हारे लिए लोगों ने दल सोज रखा है, तो उन से डरो, तो इस चीज ने उन के ईमान को और बढ़ा दिया। और उन्हों ने कहा: हमारे लिए अल्लाह बस है! और वह क्या ही अच्छा कार्य-साधक है।
> तो वे अल्लाह की नेमत और उस के फ़ज़्ल के साथ लौटे, उन्हें तनिक तकलीफ़ भी नहीं पहुंची और वे अल्लाह की खुशी पर चले और अल्लाह बड़ा अनुग्रह वाला है।'
>
> —आले इम्रान १७२-१७४

ओहुद के प्रभाव

इस्लाम के विषय में उदारता तथा सन्धिप्रिय लोग अब इस्लाम पर आक्रमण कर चुके थे। यद्यपि मुसलमानों ने हम्र-उल-असद तक मुश्रिकों का पीछा कर के सैन्य शक्ति का प्रदर्शन कर दिया था परन्तु ओहुद की पराजय के कुछ बुरे ही प्रभाव पड़े।

बद्दुओं का साहस बढ़ गया तथा मदीना पर आक्रमण और लूट मार करने का द्वार उन के लिए खुल गया।

यहूदियों ने मुसलमानों की खिल्ली उड़ानी शुरू की, उन्हें धोखा देने तथा विश्वासघात करने और उन के चरित्र को कलंकित करने लगे!

पराजय के पश्चात् क़ौमों का नेतृत्व करना तथा आघात् पहुंचने के बाद क़ौमों को आगे बढ़ाना अति कठिन कार्य है चाहे लोग इन घाटियों को आसानी से पार कर जायें या सब्र और दृढ़ता का प्रदर्शन कर के इन संकटों पर क़ाबू पा लें।

हिजरत का चौथा वर्ष शुरू हो गया परन्तु मुसलमान ओहुद की पराजय के घाव को अब तक न भर सके परन्तु समय किसी की प्रतीक्षा नहीं

विवश होकर मुसलमानों ने हथियार उठाये और इन धोखा देने वालों तथा इन के सहयोगी हुज़ैल क़बीला से लड़े। परन्तु चन्द व्यक्तियों का लगभग १०० तीरंदाज़ों से युद्ध करना क्या लाभकारी हो सकता था। जब कि दुश्मन के पृष्ठपोषक उन के क़बीले के लोग थे। अतः हज़रत आसिम और उन के साथी क़त्ल कर दिये गये। और तीन सहाबी हज़रत ख़ुबैब, हज़रत अब्दुल्लाह बिन तारिक़ तथा ज़ैद बिन दसिन्ना रज़िअल्लाहु अन्हुम बन्दी बना लिये गये। हुज़ैल के लोगों ने उन्हें बांधा और मक्का ले गये ताकि मक्का वालों को बेच दें। मक्का में बेचने का अर्थ शत्रुता की अग्नि में जलने वालों के हवाले करना था न कि मक्का वाले अपनी दुश्मनी की प्यास बुझा सकें। क्योंकि तीनों वे महानुभाव थे जिन्हों ने बद्र तथा ओहुद के युद्धों में भाग लिया था तथा ये लोग रसूलुल्लाह का सीधा हाथ थे। हज़रत अब्दुल्लाह ने बच कर भागना चाहा परन्तु सफल न हो सके और क़त्ल कर दिये गये। परन्तु हज़रत ख़ुबैब और हज़रत ज़ैद को क़त्ल करने के लिए क़ुरैश ने खरीद लिया ताकि बदले की पुरानी आग ठण्डी कर सकें।

सफ़वान बिन् उमय्या ने अपने पिता उमय्या बिन ख़लफ़ का बदला लेने के लिए हज़रत ज़ैद को खरीदा, जब उन्हें हरम से बाहर लाया गया तो क़ुरैश के बहुत से आदमी जमा हो गये जिन में अबू सुफ़्यान बिन हरब भी मौजूद था। जब हज़रत ज़ैद को क़त्ल करने के लिए लाया गया तो अबू सुफ़्यान ने पूछा :

> 'हे ज़ैद ! मैं तुम्हें खुदा की क़सम दे कर पूछता हूं कि क्या तुम यह पसन्द करोगे कि तुम्हें छोड़ दें और तुम्हारे बदले मुहम्मद को क़त्ल कर दें और तुम अपने घर में आराम से रहो।'
>
> ज़ैद : (झल्लाकर बोले) खुदा की क़सम ! मुझे यह भी सहन नहीं है कि मुहम्मद (सल्ल०) के पांव में कोई कांटा भी चुभे और मैं अपने घर बैठा रहूं।'
>
> अबू सुफ़्यान : खुदा की क़सम ! मैं ने किसी को किसी से इतना प्रेम करते नहीं देखा जितना मुहम्मद के साथी मुहम्मद (सल्ल०) से करते हैं।'

इस के बाद हज़रत ज़ैद (रज़ि०) क़त्ल कर दिये गये।

हज़रत ख़ुबैब (रज़ि०) को उक़्बा बिन हारिस ने अपने पिता के बदले क़त्ल करने को खरीदा। जब उन्हें फांसी देने के लिए हरम से बाहर लाये तो उन्हों ने दरख्वास्त की कि मुझे इतना अवसर दिया जाए कि मैं दो

नरसंहार अति सनसनीखेज कि
ऐसे समय क़त्ल किया जब कि
से मुसलमानों का क़त्ल उन के
कर गया क्योंकि इस का अ
दुश्मन है तथा किसी भय एवं
पात करने पर तुले हुए हैं।

यद्यपि इस घटना के प
सुदूर क़बीलों तथा संदिग्ध
से पूर्व खूब सोच विचार कर

---

१. इब्ने हिशाम, बुखारी।

चिन्ताजनक परिस्थितियों में भी रसूलुल्लाह का प्रचार एवं प्रसार करने पर ही विवश किया जिस प्रकार एक व्यापार में बाजार की गिरावट के कारण भारी हानि उठाता है परन्तु वह अनुकूल परिस्थितियां आने तक इसे सहन करता है अन्ततःउस की हानि की क्षति पूर्ति हो जाती है। यही कारण है कि आप ने अबू बरा आमिर बिन मालिक का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया कि 'नज्द' के इलाक़े में वहां के क़बीलों में इस्लाम के प्रचार हेतु एक प्रतिनिधिमण्डल भेज दिया जाये।

रसूलुल्लाह ने शंका व्यक्त की कि इन लूटमार करने वाले क़बीलों से मुझे खतरा है। अबू बरा ने कहा, 'मैं जिम्मेवार हूं।'

इस्लाम के आवाहक मदीना से चल पड़े और 'बीरे मऊना' तक पहुंच गये। ये ७० चुने हुए मुसलमान थे जो 'क़ुर्रा' (क़ुरआन का ज्ञान रखने वाले) कहलाते थे। दिन में लकड़ियां चुराते और रात को अल्लाह की इबादत में लीन रहते। इस प्रकार जीवन के संघर्ष और आख़िरत के प्रेम के बीच सुव्यवस्थित जीवन बिता रहे थे।

जब रसूलुल्लाह ने उन्हें इस्लाम के प्रचार हेतु भेजा तो वे चले गये, वे न जानते थे कि वे उस क्षेत्र में अपने वध स्थलों की ओर जा रहे हैं जहां चारों ओर षडयन्त्रों और धोखेबाजी के जाल फैले हुए हैं।

जब ये क़ुर्रा 'बीरे मऊना' पर पहुंचे तो उन्हों ने 'हराम बिन मल्हान' रजि० को रसूलुल्लाह का पत्र देकर उस क्षेत्र में कुफ़्र के सरदार आमिर बिन तुफ़ैल के पास भेजा। हराम रजि० ने उस दुष्ट को रसूलुल्लाह का वह पत्र दिया जिस में इस्लाम की दावत दी गयी थी। आमिर ने उस पत्र को देखना भी पसन्द न किया वरन् एक व्यक्ति को इशारा किया। हज़रत हराम अभी संभले भी न थे कि उस ने पीछे से भाला मारा जो पीठ को तोड़ता हुआ सीने के पार हो गया। सामयिक शहादत उस व्यक्ति को मिली जो दीर्घकाल से इस की कामना कर रहा था अतः तत्क्षण उन की ज़बान से ये शब्द सुने गए :

'काबा के रब की क़सम! मैं सफल हो गया।'

आमिर ने अपने आदमियों को भेजा जिनके साथ 'रिअ्ल', 'ज़कवान' तथा 'क़ारा' क़बीले भी मिल गये और उन सब ने 'क़ुर्रा' पर आक्रमण कर दिया।

'क़ुर्रा' ने जब अपने को मौत के सामने देखा तो तलवारें निकाल लीं और अपनी सुरक्षा करने लगे परन्तु सब व्यर्थ सिद्ध हुआ, अन्ततः इन निर्दयी बद्दुओं ने उन सब को शहीद कर दिया।

से राज़ी है।''

फिर रसूलुल्लाह ने अम्र रज़ि० से फ़रमाया :

'तुम ने दो व्यक्ति क़त्ल किए हैं जिन की 'दियत' (नरहत्या-अर्थदण्ड) देना अनिवार्य है।'

अतः आप मुसलमानों और यहूदी प्रतिज्ञाधारी सहयोगियों से इन दोनों व्यक्तियों की दियत एकत्र करने में लग गए।

निस्सन्देह अरब द्वीप में इस्लाम को पांव जमाने में सफलता मिली तो अनेकों व्यक्ति गुमराही से सुरक्षित हो गए परन्तु दूसरी ओर मुसलमानों को मिलने वाली विजय एवं सफलता और प्रभुत्व ने द्वेष रखने वालों के द्वेष एवं शत्रुता में वृद्धि कर दी। मुनाफ़िक़ और भ्रमी लोग मुसलमानों के विषय में कहा करते थे कि ये सब धोखे में पड़ हुए हैं :

'याद करो जब मुनाफ़िक़ और वे लोग जिन के दिलों में रोग था कह रहे थे : इन लोगों को तो इन के दीन ने भुलावे में डाल रखा है। हालांकि जो कोई अल्लाह पर भरोसा करता है तो निश्चय ही अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।'

—अल-अन्फ़ाल ४९

परन्तु यह द्वेष एवं घृणा बद्र युद्ध के पश्चात् काफ़ी दिनों तक दबी रही शायद इसी विजय ने कमजोर ईमान वाले तथा भ्रमग्रस्त लोगों के गिरोह को नये दीन के झण्डे तले खड़ा होने पर बाध्य कर दिया परन्तु जब मुसलमानों की परिस्थितियां बदलीं और उन्हें पराजय का मुंह देखना पड़ा तो घृणा एवं द्वेष का निहित ज्वालामुखी फट पड़ा और चारों ओर से इस्लाम की शत्रुता के लावे उबलने लगे।

हम विगत पृष्ठों में बता चुके हैं कि ओहुद के युद्ध के पश्चात् रसूलुल्लाह ने इन परिस्थितयों को भांप लिया, अतः मुसलमानों का रौब और दबदबा पुनः स्थापित करने तथा प्रतिकूल परिस्थितियों को सुधारने का प्रयत्न किया। इसी कारण दोनों पक्षों के बीच संघर्ष तेज़ हो गया। मुश्रिक ओहुद युद्ध के प्रभावों से फ़ायदा उठाना चाहते थे तथा मुसलमानों को आघात पहुंचाने पर तुले हुए थे तथा मुसलमान इस युद्ध के प्रभावों को सदा के लिए मिटाने में व्यस्त थे।

यद्यपि 'रजीअ्' तथा 'बीरे मऊना' की घटनाओं से मुसलमानों को बड़े आघात पहुंचे तथा एक परीक्षा से दूसरी परीक्षा में ईमान को दाखिल होना

---

१. इब्ने हिशाम।

पड़ा परन्तु इन कठिन परिस्थितियों के बावजूद इन वीरों ने अपने 'रब' से सम्बन्ध न तोड़ा। भविष्य के विषय में उन के ईमान तथा विश्वास में किसी प्रकार की कमी न आयी तथा वे दोबारा जंग के लिए तैयार हो गये अतः इन चिन्ताजनक परिस्थितियों में जब यहूदियों ने रसूलुल्लाह के क़त्ल का षड्यन्त्र रचाया तो उन्हें सबक़ देने के मामले में मुसलमान क्षणमात्र के लिए भी पीछे न हटे।

बनू नज़ीर का देश निकाला

यहूदियों की मक्कारी का विवरण इस प्रकार है कि जब रसूलुल्लाह सल्ल० अम्र बिन उमय्या द्वारा वधित दोनों व्यक्तियों की 'दियत' अदा करने के लिए कुछ धनराशि वसूल करने 'बनू नज़ीर' के पास गये तो बनू नज़ीर ने बड़ी चिकनी चुपड़ी बातें कीं और सहयोग करने को कहा। आप सल्ल० के इन्तज़ार में एक दीवार की छाया में बैठ गए। परन्तु यहूदियों ने अन्दर ही अन्दर उसी क्षण षड्यन्त्र रचा कि कोई व्यक्ति छत पर चढ़ कर एक भारी पत्थर इस व्यक्ति पर गिरा दे ताकि हम सब को इस से नजात मिल जाये।

यहूदी एक साज़िश करने लगे। उधर अल्लाह ने 'वह्य' के द्वारा रसूलुल्लाह को सूचित कर दिया, अतः आप तत्क्षण वहां से मदीना चले आये।

जो 'सहाबा' आपके साथ थे उन्हें वहां आपकी अनुपस्थिति में बड़ी चिंता हुई अतः वे आप की खोज में निकल पड़े। मदीना से आने वाले एक व्यक्ति ने बताया कि उस ने आप सल्ल० को मदीना में प्रवेश करते देखा था। अतः ये लोग तुरन्त मदीना पहुंचे तो वहां जाकर मालूम हुआ कि यहूदी क्या करने वाले थे। बाद में पता चला कि अम्र बिन हज्जाश ही वह दुष्ट था जिस ने छत पर से पत्थर गिराने की योजना बनाई थी। अन्ततः इस जुर्म के कुपरिणाम से न वह खुद बच सका न उस की जाति!

रसूलुल्लाह सल्ल० ने तुरन्त मुहम्मद बिन मुस्लिमा के द्वारा बनू नज़ीर के पास दस दिन के भीतर मदीना छोड़ देने का अल्टीमेटम भेज दिया तथा इस के पश्चात् जो व्यक्ति भी वहां पाया जाएगा उस की गर्दन मार दी जाएगी।

यहूदियों को निकल जाने के सिवा कोई चारा न था अतः उन्होंने तैयारी शुरू कर दी। अब्दुल्लाह बिन उबई तथा अन्य मुनाफ़िक़ों ने अपनी हिमायत का विश्वास दिलाया और कहला भेजा कि तुम लोग अपने स्थान

पर जमे रहें हम मुहम्मद और उनके साथियों के विरुद्ध तुम्हारी सहायता करेंगे। इतना इशारा पाते ही यहूदियों का साहस बढ़ गया उन्हों ने युद्ध करने का निश्चय कर लिया और हज़रत मुहम्मद सल्ल० को सूचना दे दी कि जो चाहो सो कर लो हम निकलने वाले नहीं हैं! अत: वे अपनी गढ़ियों में जंग की तैयारियों में व्यस्त हो गए। अब्दुल्लाह बिन उबई के इस सन्देश से, कि हम तुम्हारी सहायता के लिए दो हजार सैनिक भेज रहे हैं, यहूदियों का साहस बहुत बढ़ गया था। रसूलुल्लाह सल्ल० मुक़ाबले के लिए उठ खड़े हुए और उन के पक्षधारी अन्य क़बीलों को भी चेतावनी दे दी तथा बनू नजीर का घेराव कर लिया और उन के बागों तथा खेतों को काटने का आदेश दे दिया, अत: यहूदियों के होश ठिकाने आ गए। और वे भयभीत हो गये। उन के सहयोगी और हिमायती दूर से देखते रहे, न कोई सहायता को आया न हिमायत के दो शब्द ही कह सका जबकि मुसल-मान अपने इतिहास के अति चिन्ताजनक दौर से गुजर रहे थे और अंजाम के विषय में कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती थी। समूचा अरब मुसलमानों पर टूट पड़ा था, उन के प्रतिनिधियों का रक्तपात कर चुका था। उधर यहूदी भी शक्तिशाली थे तथा उन का झुकना असम्भव लग रहा था तथा उनसे जंग करने में हानि की शंका थी परन्तु बीरे मऊना की दुर्घटना तथा इस से पहले की घटनाओं ने मुसलमानों को अति भावुक बना दिया था तथा उन के साथ निरन्तर धोखेबाज़ी ने उन्हें सचेत कर दिया था और अपराधियों के विरुद्ध उन की बदले की भावना बहुत तेज हो गयी थी अत: उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब इन से जंग करना अनिवार्य है चाहे परिणाम कुछ भी हो, क्योंकि ये दुष्ट रसूलुल्लाह को क़त्ल करने की भी योजना बना चुके थे।

मुसलमान सोच भी न सकते थे कि इतना शीघ्र अनुकूल परिणाम निकलेगा? यहूदी भयभीत हो गये तथा उस विजेता के आदेश को मानने के लिए विवश हो गए जिस ने उन्हें निकल जाने का हुक्म दिया था तथा सैनिक सामग्री के अतिरिक्त जो कुछ सामान अपने ऊंटों पर ले जा सकते थे, ले जाने की अनुमति मिल गयी।

इसी घटना के विषय में पूरी 'सूरा हश्र' नाज़िल हुई और इस के प्रारम्भ में ही यहूदियों के देश निकाले का उल्लेख किया है:

> 'वही है जिस ने, उन लोगों को जो किताब वालों में से काफ़िर हुए, उन के घरों से पहले ही जमावड़े पर निकाल दिया। तुम्हें गुमान न था कि वे निकलेंगे, और उन्हें भी यह गुमान था कि

रसूलुल्लाह के लिए अब उन
गया जिन्हों ने ओहुद के युद्ध
था तथा दीन के आवाहकों
था।
इन आतंकवादी बद्दुओं
खाक छानने निकले ताकि र
किए गए अपने साथियों का
के लिए कुचल दें ताकि वे फि
इस उद्देश्य के लिए आ
वादी बद्दुओं के दिलों में
विक्षुब्ध एवं भयभीत हो
की सूचना पाते तो डर

लिह्यान', बनू 'मुहारिब' और बनू साल्बा बिन ग़त्फ़ान आगे आगे थे।

जब मुसलमानों ने इन आतंकवादियों को कुचल दिया तथा उन का बल समाप्त कर अशान्ति के इस स्रोत पर बन्द बांध दिया तो फिर बड़े शत्रु के मुक़ाबले की तैयारियों में लग गए। वर्ष पूरा हो चुका था तथा क़ुरैश से हुए वायदे की पूर्ति का समय आ गया था।

मुहम्मद (सल्ल०) और आप के साथियों का यह दायित्व था कि मुक़ाबले के लिए निकलें और सुफ़्यान तथा उस की जाति को सबक़ दें और युद्ध का एक और चक्र चलायें ताकि किसी एक के पक्ष में फ़ैसला हो सके और उस की रक्षा की जमानत मिल सके।

बद्र की अन्तिम झड़प

अबू सुफ़्यान ओहुद के युद्ध के पश्चात् लौटते समय बद्र के स्थान पर पुनः युद्ध का वायदा करके गया था उस ने उसे पूरा न किया। यह मक्का से चल तो दिया परन्तु युद्ध के परिणामों पर भी ग़ौर कर रहा था। अभी वह इस युद्ध की पूरी तैयारी भी नहीं कर सका था। संख्या एवं शस्त्राधिक्य के बावजूद उस की क़ौम बद्र से पराजित हो चुकी थी तथा ओहुद में जान तोड़ कोशिश के पश्चात् ही वे विजय पा सके थे। यदि मुसलमानों से ग़लती न हुई होती। तो यह नाम मात्र की विजय भी प्राप्त न हुई होती। इसी कारण अबू सुफ़्यान 'मर्रुज्जुह्रान' तक आकर लौट गया।

अबू सुफ़्यान ने अपनी क़ौम से कहा कि वर्षा ऋतु के अतिरिक्त कोई भी मौसम जंग के लिए अनुकूल नहीं है जिस में ऊंटों को चारा भी मिलता है और हमें दूध! परन्तु यह मौसम तो शुष्क है मैं वापस जा रहा हूं तुम लोग भी लौट चलो।

इस प्रकार आशान्वित झड़प से क़ुरैश ने अपने को बचा लिया।

मुसलमान पूरी तैयारी से निकले थे अतः वे बद्र के चश्मे पर पहुंचे और वहां अपने खेमे लगा दिये तथा एलान कर दिया कि हम वायदे को पूरा करने आये हैं अतः हम युद्ध को तैयार हैं परन्तु आठ दिन तक क़ुरैश का इन्तिज़ार करते रहे तथा ओहुद में मिली पराजय का ग़ुबार अपने दामन से धोते रहे।

यह घटना शाबान ४ हिज्री की है।

दूमतुल जन्दल की झड़प

जब क़ुरैश मुक़ाबले से कतरा गए तो विजय मुसलमानों ही की रही।

दूमतुल जन्दल के लोग

आदमी न मिला। रसूलुल्लाह

दल एवं टुकड़ियां भेजते रहे

अन्ततः अपना काम पूर

ने रबी उल अव्वल ५ हिज्री

जिस समय इस्लाम दाव

धाराओं से संघर्ष कर रहा

एवं बग़ावत पर उतारू थे

के आवाहकों को शक्ति प्रा

रास्ता ग्रहण कर लिया

के विरुद्ध साजिशें, चालें, म

अन्धकार का सहारा ले क

शाली तथा खुल्लम खुल्ला जंग से कम नहीं होतीं बल्कि प्राय: व्यक्ति अपने सामने की मार धाड़ के मुक़ाबले झूठ आरोपों तथा मनगढ़त दोषारोषण से कष्ट महसूस करता है।

बुरे उद्देश्यों के लिए जंग में शत्रु की ओर से वे समस्त तरीक़े अपनाए जाते हैं जिन्हें शरीफ़ आदमी अपनाते हुए लज्जित होते हैं।

जब मदीना में मुनाफ़िक़ों ने अपने द्वेष, ईर्ष्या तथा घृणा को गुप्त कर लिया तथा उन पर कमज़ोरी आच्छादित हो गयी तो उन्हों ने आप सल्ल० की दावत को नीचा दिखाने के लिए यह ढंग अपनाया जिस में इंसानी नफ़्स की पस्ती हीनता, ऊपरीपन तथा तुच्छता के गुण साफ़ विदित थे छिद्रान्वेषण तथा चुग़लखोरी का तरीक़ा अपनाया गया, तथा कभी आरोप और मिथ्या-रोपण का हथियार प्रयोग किया गया।

जैसे जैसे मुसलमान प्रभुत्वशाली तथा सुदृढ़ होते गये मुनाफ़िक़ों के द्वेष, रोष एवं क्रोध में वृद्धि होती गयी। जब रसूलुल्लाह ने यहूदियों को जिला-वतनी का हुक्म दिया तो इस दुष्ट वर्ग ने उन की हिमायत का एलान कर दिया। परन्तु जब वे इस्लाम का कुछ भी न बिगाड़ सकें न उसे पराजित कर सके और सरकश क़बीले भूमिगत हो गये तो ये मुनाफ़िक़ वर्ग मुसल-मानों में घुल मिल गया तथा उन के कुसंकल्पों का प्रकटन उन की वाचा-लिता तथा चाटुकारिता से होने लगा। इन दुष्टों ने इस तरीक़े से अनेकों फ़ित्ने उठाये और मुसलमानों तथा रसूलुल्लाह को बहुत कष्ट पहुंचाये।

यह चीज़ ग़ज़्वा बनी मुस्तलक़ में खुल कर सामने आ गयी। रसूलुल्लाह को सूचना मिली कि यह क़बीला जंग करने की तैयारियां कर रहा है तथा इस का नेतृत्व 'हारिस बिन ज़िरार' कह रहा है जिस ने अपनी तैयारी गुप्त रूप से की है। इस सूचना के मिलते ही रसूलुल्लाह स्वयं सेना ले कर चल दिये ताकि इस फ़ित्ने को सिर उठाने से पहले ही कुचल दिया जाये।

इस बार असाधारण रूप से समस्त मुनाफ़िक़ आप के साथ निकले, सम्भव है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की विजय की आशा ने उन्हें साथ चलने पर बाध्य किया हो क्योंकि उन्हें दीन (इस्लाम) की नहीं वरन् सांसारिक सामग्री की अधिक चिन्ता तथा तमन्ना थी।

मुसलमान 'मुरैसी' नामक जलस्रोत पर पहुंचे जहां 'बनू मुस्तलक़' आबाद थे। रसूलुल्लाह ने हज़रत उमर (रज़ि०) को आदेश दिया कि इन लोगों के सामने इस्लाम की दावत पेश करें।

हज़रत उमर ने पुकार कर कहा : 'हे लोगो! तुम ला इला-ह-इल्लल्लाह' (अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं) को मान लो तो तुम्हारे

प्राण और तुम्हारे माल सुरक्षित होंगे।' उन्हों ने इन्कार कर दिया और तीर बरसाने लगे।

अब रसूलुल्लाह ने हुक्म दिया कि समस्त सैनिक एक साथ आक्रमण कर दें अतः कोई मुश्रिक भागने या बच निकलने में सफल न हो सका। १० व्यक्ति क़त्ल हो गये शेष बन्दी बना लिये गये। केवल एक मुसलमान शहीद हुआ, वह भी ग़लती से। क़बीले वालों ने सारी दौलत मुसलमानों के सामने डाल दी।[1]

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने पराजित व्यक्तियों के साथ सुव्यवहार किया अतः जब क़बीले का सरदार हारिस अपनी बेटी को लेने आया तो आप (सल्ल०) ने उसे वापस कर दिया। परन्तु बाद में आपने शादी का पैग़ाम भेजा जो स्वीकार कर लिया गया।

इस रिश्ते के पश्चात् लोगों ने रसूलुल्लाह की ससुराल के लोगों को बन्दी बनाना पसन्द न किया और सारे बन्दियों को मुक्त कर दिया। हज़रत जुवैरिया बिन्त हारिस सब से अधिक भाग्यवान निकलीं जिन की शादी के कारण बनू मुस्तलक़ के १०० परिवार मुक्त हो गये।

परन्तु इस सफलता तथा विजय को मुनाफ़िक़ों की गतिविधियों तथा साज़िशों ने कड़वा कर दिया तथा मुसलमान इस की ख़ुशी में भूल गये। हज़रत उमर (रज़ि०) का एक सेवक मुरैसी जल स्रोत से पानी लाता था जिस का बनू औफ़ ख़ज़्रजी के एक ग़ुलाम से झगड़ा हो गया तथा दोनों चश्मे पर लड़ पड़े, पहले ने मुहाजिरों को बुलाया और दूसरे ने अंसार को। जब इस शोर की आवाज़ अब्दुल्लाह बिन उबई ने सुनी तो उसे ग़ैर इस्लामी नारे लगाने तथा भड़काने का अवसर मिल गया। बोला: ये लोग (मुहाजिरीन) हमारे ही देश में हम पर प्रभुत्वशाली हो गये हैं, ख़ुदा की क़सम मदीना पहुंच कर इज़्ज़त वाला ज़िल्लत वाले को निकाल देगा।' फिर अपनी जाति के लोगों को बुरा भला कहने लगा और रसूलुल्लाह के ख़िलाफ़ उन्हें भड़काने लगा। हज़रत 'ज़ैद बिन अरक़म' सेवा में उपस्थित हुए और पूर्ण स्थिति से अवगत कराया। फिर अब्दुल्लाह बिन उबई भी सेवा में हाज़िर हुआ और क़समें खा कर कहने लगा कि मैं ने कुछ नहीं कहा। आप को ग़लत बताया गया है।

लोगों ने अब्दुल्लाह बिन उबई के स्थान को दृष्टि में रखते हुए कहा:

---

१. इब्ने हिशाम, इब्ने इस्हाक़।

'हे अल्लाह के रसूल ज़ैद अभी बच्चा है शायद इसे भ्रम हो गया है तथा जो बातें कही गयी हैं उन्हें याद नहीं रख सका है।'

परन्तु रसूलुल्लाह से वास्तविकता छिपी न रह सकती थी अतः आप स्थिति से बड़े रंजीदा हुए अतः आप ने इस के प्रभावों को समाप्त करने के लिए सोचा कि लोगों को किसी कार्य में व्यस्त कर दिया जाये। चुनांचे आप ने तत्क्षण प्रस्थान का आदेश दे दिया¹ तथा लोग दिन भर चलते रहे यहां तक कि शाम हो गयी फिर रात भर यात्रा की यहां तक कि प्रातः हो गयी तथा नए दिन का सूर्य चमका, जब धूप तेज हो गयी तो ठहरे।

पड़ाव करते ही लोग सो गये। फिर पुनः रसूलुल्लाह ने यात्रा की यहां तक कि मदीना पहुंच गए। सूरा मुनाफ़िक़ून नाज़िल हुई, 'वह्य' ने ज़ैद बिन अरक़म (रज़ि०) के बयान की तस्दीक़ की :

> 'कहते हैं: यदि हम मदीना वापस पहुंच गये तो जो अधिक प्रभुत्वशाली है वह (अपने से) अधिक हीन को निकाल बाहर करेगा, और प्रभुत्व तो अल्लाह ही के लिए है और उस के रसूल के लिए और ईमान वालों के लिए, परन्तु 'मुनाफ़िक़' जानते नहीं।'
>
> —अल-मुनाफ़िक़ून ८

कौन जानता था कि यह सामाजिक वापसी जल्द ही एक गन्दी तथा काल्पनिक कहानी को जन्म देगी जिसके ताने बाने अब्दुल्लाह बिन उबई बुनेगा फिर उसे आम लोगों में फैलायेगा जो महामारी के समान फैल जायेगी।

उस व्यक्ति ने अपने बयान से इन्कारी होने के पश्चात् झूठी क़सम भी खाई। यदि उस कायर तथा दुष्ट को अपनी नजात (मोक्ष) की चिन्ता होती तो यह उस के लिए हितकारी होता परन्तु उदारता एवं दोषों के बावजूद उस की उपेक्षा के कारण उस के कमीनेपन तथा शत्रुता में वृद्धि ही हुई। इस्लाम तथा रसूलुल्लाह से द्वेष रखने वाले विभिन्न कारकों में बड़ा अन्तर था। अबू जह्ल इस नए दीन में प्रवेश करने वाले प्रत्येक व्यक्ति का कठोर तथा खुला वैरी था। वह बड़ा सरकश एवं अत्याचारी था। जिस के आतंक असीम थे। वह उस खूनी तथा जंगली दरिन्दे के समान था जो टाल मटोल तथा मक्कारी से अनभिज्ञ होता है। उस ने दीन के प्रकाश में तलवार उठायी तथा प्रतिक्षण घात में लगा रहा यहां तक कि मारा गया।

---

१. यद्यपि यह समय नियमानुसार प्रस्थान का न था परन्तु यह तत्वदर्शिता थी, यदि लोग वहीं ठहरे रहते तो यह घटना अपना प्रभाव दिखाती और खाना जंगी हो सकती थी। —अनुवादक

में क्या क्या खतरे निहित हैं ?

यहां उन्हीं सतीत्ववान स्त्री

उस आरोप से बरी हो गयीं—इ

इफ़्क की घटना[1]

हज़रत आइशा रज़िअल्ला

हैं कि 'रसूलुल्लाह का नियम थ

निर्णय करते कि आप की पवि

बनी मुस्तलक़ के अवसर पर मे

---

1. 'इफ़्क' का अर्थ बोहतान या भ

2. हज़रत आइशा अबू बक्र की

आप की आयु लगभग १२ व

'वह कहती हैं कि उस समय स्त्रियां बहुत कम खाती थीं ताकि शरीर भारी न हो जाये। मेरा ऊंट बैठ जाता और मैं कजावा में बैठ जाती थी, फिर कुछ लोग आते और कजावा के निचले भाग को पकड़ कर उठाते और ऊंट पर रख कर बांधते और चल देते। वह कहती हैं, जब वापसी में हम ने मदीना के निकट एक स्थान पर रात के समय पड़ाव किया और अभी रात कुछ बाक़ी थी, कि कूच की तैयारियां शुरू हो गयीं, मैं शौच हेतु चली गयी, जब लौटने लगी तो पड़ाव स्थान के निकट पहुंचकर मुझे ज्ञात हुआ कि मेरी माला टूट कर कहीं गिर गयी है, मैं उसे ढूंढ़ने में लग गयी, इसी बीच क़ाफ़िला चला गया। जो लोग हमारा कजावा ऊंट पर रखते थे वे समझे कि मैं उस में मौजूद हूं अत: उन्हों ने उसे ऊंट पर रख दिया और उन्हें लेशमात्र भी आभास न हुआ कि मैं उस में नहीं हूं तथा वे ऊंट की नकेल पकड़ कर चले गये।

जिस समय मैं हार लेकर लौटी तो वहां से सब जा चुके थे अत: मैं अपनी चादर ओढ़कर वहीं लेट गयी। सोचा कि जब वे लोग मुझे न पायेंगे तो तलाश करते हुए खुद ही आयेंगे। इसी दशा में मुझे नींद आ गयी। सहसा उधर से सफ़वान बिन मुअत्तल सुलमी निकले वह किसी कारण से पीछे रह गये थे तथा लोगों के साथ न जा सके थे। उन्होंने मेरा चेहरा देखा तो पहचान लिया क्योंकि पर्दे का आदेश आने से पहले वह मुझे देख चुके थे, जब उन्होंने देखा तो सहसा उन की जबान से ये शब्द निकले: 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन'[1] (हम अल्लाह ही के लिए हैं और हमें उसी की ओर लौटना है) रसूलुल्लाह की पत्नी यहीं रह गयीं? मैं उस समय चादर में लिपटी हुई थी।

सफ़वान बोले: 'अल्लाह आप पर दया करे, कैसे रह गयीं?' परन्तु मैं ने उन से कोई बात न की। उन्हों ने ऊंट लाकर मेरे पास बिठा दिया और दूर हट गये, मैं ऊंट पर सवार हो गयी और वह नकेल पकड़ कर चल दिये। मध्यान्ह के लगभग हम लश्कर से जा मिले, जबकि उस ने अभी पड़ाव किया ही था और लोगों को अभी पता भी न चला था कि मैं पीछे छूट गयी हूं। इस पर आरोप लगाने वालों ने आरोप लगाये और कलंकित किया परन्तु मैं अपरिचित थी कि मेरे विषय में क्या बातें फैल रही हैं?'

जब हम मदीना आये तो वहां मैं नई मुसीबत में फंस गयी। मुझे इस स्थिति की कुछ भी जानकारी नहीं थी। मामला मेरे पिता और रसूलुल्लाह

---

१. ये शब्द दुःख एवं कष्ट के अवसर पर कहे जाते हैं। —अनुवादक

उस व्यक्ति में जिस के विषय में आरोप लगाया गया है, वह तो मेरी अनुपस्थिति में कभी मेरे घर आया भी नहीं है।'

हज़रत आइशा कहती हैं कि आरोप लगाने तथा फैलाने में खज़्रज क़बीले का अब्दुल्लाह बिन उबई आगे-आगे था तथा मिस्तह और हम्ना बिन्त जह्श भी शरीक थे। हम्ना की बहन जैनब बिन्त जह्श रसूलुल्लाह की पत्नी थीं अतः हम्ना मुझ से जलती थी परन्तु जैनब को अल्लाह ने इस बुराई से दूर रखा उन्हों ने मेरी भलाई के अतिरिक्त कोई बात न कही जब कि हम्ना ने इसे खूब बढ़ा चढ़ा कर फैलाया। जब रसूलुल्लाह ने खुत्बा दिया तो उसैद बिन हुज़ैर रज़ि० ने उठ कर कहा : हे अल्लाह के रसूल ! यदि वह हमारे क़बीले का आदमी है तो हम उस की गर्दन मार दें ? या हमारे भाई खज़्रजियों में से हो तो आप आज्ञा दें हम पालन के लिए तैयार हैं।' यह सुन कर सईद बिन उबादा रज़ि० उठ खड़े हुए—हालांकि वह इस से पूर्व बड़े नेक थे—कहने लगे ! खुदा की क़सम ! झूठ कहते हो, तुम उसे कदापि नहीं मार सकते। तुम उसकी गर्दन मारने का नाम इस लिए ले रहे हो कि तुम जानते हो कि वह खज़्रज का आदमी है यदि वह तुम्हारे क़बीले का होता तो तुम कभी न कहते कि हम उस की गर्दन मार देंगे।'

उसैद बिन हुज़ैर रज़ि० ने पलट कर उत्तर दिया। 'तुम मुनाफ़िक़ हो अतः मुनाफ़िक़ों की हिमायत करते हो।'

इस पर लोगों में अशांति सी फैल गयी। यहां तक कि गुत्थम-गुत्था होने की नौबत आ गयी। रसूलुल्लाह मिंबर से उतर आये। आप ने अली रज़ि० और उसामा बिन जैद रज़ि० को बुलाया तथा उन से परामर्श लिया। उसामा रज़ि० ने मेरे विषय में सुविचार व्यक्त किया और कहा। हे अल्लाह के रसूल ! हम ने आप की पत्नी में भलाई के अतिरिक्त कोई बात नहीं पायी यह सब झूठ और मिथ्या है जिसे फैलाया जा रहा है।'

हज़रत अली ने कहा ! 'हे अल्लाह के रसूल स्त्रियों की कमी नहीं है, आप इसके स्थान पर दूसरी पत्नी कर सकते हैं और पूर्ण जानकारी तथा जांच करना चाहें तो सेविका को बुलाकर जानकारी प्राप्त कर लें वह आप को सच सच बता देगी।'

रसूलुल्लाह सल्ल० ने खादिमा को बुलाया, हज़रत अली ने उसे ज़ोर से मार कर कहा ! 'रसूलुल्लाह को सही बात बता दो' उस ने कहा : 'खुदा की क़सम ! मैं उन के विषय में अच्छाई जानती हूं मैं ने आइशा में कोई बुराई नहीं देखी जिस पर उंगली रखी जा सके, केवल इतनी कमी है कि मैं

मैं ने कहा : 'ख़ुदा की क़सम !
विश्वासहीनता पाई जाती हो
वह कहती है : 'जब दोनों
मैं ने कहा : ख़ुदा की क़सम मैं
आप ने ज़िक्र किया है। मैं
स्वीकार कर लूं---हालांकि
ऐसी बात होगी जो घटित न
तुम विश्वास नहीं करोगे।' ह
का नाम याद करने लगी पर
बात कहती हूं जो यूसुफ़ अलै
'अब श्रीमान सन्तोष
अल्लाह ही सहायक है

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अभी अपनी जगह से उठे भी न थे कि सहसा 'वह्य' के लक्षण प्रकट हुए। आप को कपड़ा उढ़ा दिया गया तथा शुभ सिर के नीचे एक तकिया रख दिया गया। यह सब देख कर मैं बिल्कुल परेशान न हुई क्यों कि मैं जानती थी कि मैं निर्दोष हूं और अल्लाह तआला मुझ पर ज़ुल्म नहीं करेगा, परन्तु क़सम है उस अस्तित्व की जिस के अधिकार में आइशा की जान है, मेरे माता पिता की भय से यह दशा थी कि मुझे शंका हुई कि वे प्राण न छोड़ दें। उन्हें डर था कि कहीं 'वह्य' आरोप लगाने वालों के पक्ष में नाज़िल न हो जाए फिर 'वह्य' आना बन्द हुआ, सर्दी के होते हुए भी रसूलुल्लाह के माथे से पसीना टपक रहा था। आप ने पसीना पोंछा और यह कहते हुए बैठ गये कि 'हे आइशा! तुम्हें शुभ सूचना है अल्लाह ने तुम्हारा निर्दोष होना नाज़िल कर दिया।'

मैं ने कहा: 'अल्लाह का शुक्र है' फिर आप निकल कर बाहर आये और लोगों के सामने अधिभाषण दिया तथा ये आयतें पढ़ कर सुनायीं:

> 'जो लोग यह झूठा कलंक (तोहमत) गढ़ लाये हैं ये तुम में से ही एक टोली है। इसे अपने हक़ में बुरा न समझो बल्कि यह तुम्हारे हक़ में अच्छा ही है। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति के लिए वही है जो कुछ उस ने गुनाह कमाया, और उन में से जिस व्यक्ति ने इस (झूठे कलंक) के बड़े हिस्से का ज़िम्मा अपने सिर लिया, उस के लिये बड़ी यातना है।' —अन्-नूर ११

बड़ी विचित्र बात है कि शरई क़ानून के अनुसार सज़ा उन्हें दी गयी जिनके विषय में 'क़ज़फ़' (झूठा आरोप लगाना) का अभियोग सिद्ध हो गया, इन में 'हस्सान बिन साबित,' 'मिस्तह बिन उसासा' और 'हम्ना बिन्त जह्श'[1] शामिल थे। परन्तु इस आरोपित तथा कलंकित करने की योजना का रचयिता तथा गुप्त कीटाणु अब्दुल्लाह बिन उबई दण्ड से बच गया। उसने दूसरों को तो फंसा दिया परन्तु स्वयं साफ़ बच निकला।

सीरत की पुस्तकों में 'इफ़्क' की घटना तथा बनू मुस्तलक़ की झड़प' का उल्लेख खन्दक़ के युद्ध के पश्चात् मिलता है परन्तु हम ने इब्ने क़य्यिम की राय को ग्रहण किया है जो इस युद्ध को ५ हिजरी की महत्वपूर्ण घटनाओं में गिनते हैं क्योंकि तर्कपूर्ण बात इन्हीं की है। आगामी पृष्ठों में हम पढ़ेंगे कि 'सअद बिन मुआज़' अह्ज़ाब के युद्ध में शहीद हुए थे जबकि बनू मुस्तलक़

---

१. रसूलुल्लाह की साली थीं और ज़ैनब रज़ि० की बहिन।

धर्म के विरुद्ध जंग करने के लिए और भी बहुत से क़बीले शामिल हो गये।

इस प्रकार यहूदी इस्लाम तथा मुहम्मद सल्ल० के विरुद्ध षडयन्त्र रचाने तथा मुश्रिकों को जमा करने में सफल हो गये। उधर मुसलमानों को इस नई चाल की जानकारी मिल गयी अतः उन्हों ने तुरन्त ही अपनी दावत और अपने देश की रक्षा हेतु नीति बनाई। यह नीति बिल्कुल नई एवं अनोखी थी जिसे अरबों से इस से पहले कभी सुना भी न था। वे तो केवल खुले मैदानों में जंग करना जानते थे।

इस बार मुसलमानों ने मदीना के चारों ओर 'खन्दक़' (खाई) खोदी जिस के कारण दोनों पक्षों के बीच काफ़ी फ़ासला हो गया।

समस्त विरोधी शक्तियां इकट्ठी हो गयीं। इस से पहले इस्लाम के विरुद्ध कभी इतनी बड़ी संख्या में शत्रु जमा नहीं हुए थे।

किनाना, तिहामा, ग़त्फ़ान और नज्द के क्षेत्र के समस्त क़बीलों तथा क़ुरैश सहित कुल संख्या दस हज़ार हो गयी थी!

मुसलमान अपनी स्त्रियों और बच्चों को एक क़िले में सुरक्षित कर नगर की सीमाओं में इस प्रकार फैल गये कि उन की पीठ 'सलाअ' पहाड़ की ओर थी। वे खाई के किनारे हथियारबन्द होकर बैठ गये। मुसलमानों की कुल संख्या ३००० थी।

रसूलुल्लाह ने अनुमान लगाया कि इतनी बड़ी काफ़िरों की सेना से खुले मैदान में युद्ध करना कठिन होगा तो फिर इस सैलाब से मुट्ठी भर मुसलमानों के मुक़ाबले का तरीक़ा क्या हो? अतः इस युद्ध विधि को अपनाया गया। रिवायतों में है कि हज़रत सलमान फ़ारसी ने इस का परामर्श दिया था तथा उसे स्वीकार कर लिया गया। अतः आप ने खाई खोदने का हुक्म दिया। रसूलुल्लाह सल्ल० स्वयं अपने हाथ से मिट्टी खोदते, ढोते और पत्थरों को कन्धों पर रख कर उठाते थे इस से उन बड़े लोगों का साहस बढ़ गया जिन्हों ने कभी यह काम नहीं किया था। मदीना में इस समय बड़ा संवेदनशील वातावरण था। प्रकाशमान चेहरे जिन में विभिन्न वंश, रंग तथा क्षेत्रों के लोग सम्मिलित थे, कुल्हाड़े, तथा कुदाल चला रहे, साज सज्जा एवं सौन्दर्य के वस्त्र उतार कर उन के स्थान पर धूल, पसीना, मिट्टी तथा थकावट के वस्त्र पहने जा रहे थे।

हज़रत बरा बिन आज़िब रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० खन्दक़ के दिन मिट्टी ढो रहे थे यहां तक कि आप का शुभ पेट मिट्टी से लिथड़ गया था आप ये कविता पढ़ते जाते थे :

— 'खुदा की क़सम यदि ईश्वर का सामर्थ्य न होता तो हम कभी हिदा- यत न पाते, न दान करते न नमाजें पढ़ते।
— हे अल्लाह हम पर सन्तोष तथा शान्ति नाज़िल कर और युद्ध के समय हमें धैर्य दे तथा दृढ़पग रख।
— इन लोगों ने हम पर बड़ा अत्याचार किया तथा जब कभी हम को फ़ित्ने में ग्रस्त करना चाहा तो हम ने उसे कभी स्वीकार नहीं किया।'

ये कवितायें अब्दुल्लाह बिन रवाहा रज़ि० की थीं। खन्दक़ खोदने वाले जब इन कविताओं को सुनते तो प्रसन्न एवं प्रफुल्लित हो जाते थे तथा अन्तिम शब्द को बार बार पढ़कर अपनी थकन दूर करते थे। और अल्लाह के रसूल भी उन के साथ मिल कर जोर ज़ोर से कहते 'अबैना, अबैना।' (अर्थात् हमने अस्वीकार किया हमने अस्वीकार किया।)

इस बात से हमारा जहन उन मजदूरों की ओर जाता है जो जंगलों में कुंआं खोदते समय या नगरों में इमारतों का निर्माण करते समय इसी प्रकार के शब्द दोहराते हैं।

मुश्रिकों की विजय के पश्चात् मुसलमानों को जिस फ़ित्ने की आशंका थी उस से सुरक्षित रहने और इस्लाम की रक्षा करने हेतु रसूलुल्लाह और आप के सहाबी यह कठिन कार्य कर रहे थे तथा इस मार्ग में आने वाली कठिनाइयों और कष्टों को सहन करने के लिए उन के हृदय सन्तुष्ट थे।

रसूलुल्लाह सल्ल० का खन्दक़ खोदने और मिट्टी ढोने के कार्य में शामिल होना आधुनिक युग के किसी उद्घाटन समारोह के समान न था जैसा कि आजकल नेताओं का तरीक़ा बन गया है।

इस युद्ध में रसूलुल्लाह के व्यवहार तथा कार्यपद्धति से श्रम एवं वीरता की उचित धारणा ग्रहण की जा सकती है। हजरत बरा बिन आज़िब हदीसोल्लेख करते हैं कि 'आप के पेट पर इतनी मिट्टी जम गई थी कि त्वचा न दिखाई देती थी जब कि आप के शरीर पर काफ़ी बाल थे।' (बुखारी) आप अपने साथियों सहित काम में व्यस्त थे। सच्ची वीरता, उपमा तथा उद्घाटन समारोह की कल्पना से अपरिचित होती है।

जाड़ों की ठन्डी हवाएं चल रही थीं, मदीना अकाल तथा सूखे की चपेट में था, शत्रु की ओर से घेराबन्दी की अवधि लम्बी होने का खतरा था। यह भय नहीं था कि इस स्थिति में निराशा का शिकार होकर क़त्ल हो जायेंगे वरन यदि घिरे हुए लोग अपने ठिकानों में ही घिर गये तो इस से पराजय की शंकायें बढ़ जाती हैं। इसी कारण रसूलुल्लाह ने अपने

साथियों को वास्तविक शक्ति को सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न किया ताकि उन्हें विश्वास हो जाए कि यह स्थिति बदली की छाया के समान है जो तुरन्त ही हट जायगी।

इस के पश्चात् इस्लाम नवीन ढंग से अपनी यात्रा शुरू करेगा तथा लोग समूहों के रूप में इस में प्रवेश करेंगे। अत्याचार, जुल्म तथा हिंसा के बादल छंट जायेंगे और किसी षडयन्त्र एवं फ़ित्ने की शंका न रहेगी।

राजनीति एवं शासन की मांग है कि कठोर परिश्रम के चरणों में इस प्रकार की असीम आशा बंधाई जाये।

अम्र बिन औफ़ रज़ि० कहते हैं कि मेरी, सलमान रज़ि०, हुज़ैफ़ा रज़ि०, नोमान रज़ि० तथा ६ अन्य अन्सार की ड्यूटी एक साथ लगाई गई, खोदी जाने वाली भूमि का ४० गज टुकड़ा हमें खोदने को दिया गया, हम खोदने लगे। यहां तक कि एक श्वेत शिला आ गयी जिस ने हमारी कुदालों को तोड़ दिया तथा हमारे लिए उसका खोदना कठिन हो गया, हज़रत सलमान रसूलुल्लाह के पास इस चट्टान को सूचना देने गये जिस ने उन का काम रोक दिया था तथा कुदालों को बेकार कर दिया था।

रसूलुल्लाह आये और हज़रत सलमान से कुदाल ले लिया फिर उसे चट्टान (शिला) पर इस ज़ोर से मारा कि उस का एक तिहाई अंश टूट गया। और उस में से चिंगारियां फूट पड़ीं जिस से आस पास का वातावरण प्रकाशमान हो गया। रसूलुल्लाह ने विजय का नारा लगाया तथा समस्त मुसलमानों ने जोश में आकर 'अल्लाहु अकबर' का नारा बुलन्द किया, फिर उस पर दूसरी चोट लगाई और फिर तीसरी भी लगा दी, इस प्रकार वह चट्टान रेत हो गयी।

दैवी शक्ति के वाहक उस शक्तिशाली व्यक्ति की चोटों से शिला टुकड़े-टुकड़े हो गयी। उस समय आप का शुभ चेहरा आत्म विश्वास तथा सुआशाओं से प्रकाशमान हो रहा था। आप ने कुदाल की धार तथा शिला के ताप के बीच से फूटने वाले प्रकाश के विषय में सहाबा से फ़रमाया :

> 'पहली चिंगारी में मेरे सामने 'हिरा' और 'क़िस्रा' के महल प्रकाशमान हो गये जैसे वे कुत्तों के दांत हैं और जिब्रील ने मुझे बताया कि मेरी उम्मत उन पर प्रभुत्व प्राप्त करेगी। तथा दूसरी चिंगारी में 'रोम' के सुर्ख महल जंगली कुत्तों के दांतों के समान प्रकाशमान हो गये और 'जिब्रील' ने मुझे बताया कि मेरी उम्मत (समुदाय) उन्हें पराजित करेगी।

यह है कि खाई खोदने में परे

में साहस भी नहीं है :

'याद करो जब मुना

था, कहने लगे : अल

नहीं किया था धोखा

अहज़ाब का युद्ध नुकसा

दोनों पक्षों के मारे गये व्यक्ति

में यह निर्णायक एवं महत्वपूर्ण

उस व्यक्ति के अन्जाम के सम

हो या रस्सी पर चल रहा हो,

के लिए बिगड़ जाये या उस के

हो जाये तो वह ऊंचाई से खा

ध्वस्त हो जायेगा और उसकी हड्डियां पसलियां एक हो जायेंगी।

मुसलमानों की दशा उस समय उस द्वीप जैसी थी जो तूफ़ान में घिरा हुआ हो तथा किसी भी समय उस के डूब जाने की आशंका हो। मुश्रिक मदीना के चारों ओर रोष एवं क्रोध से भरे हुए मंडरा रहे थे ताकि उन्हें कहीं कोई कमज़ोर मोर्चा दिखाई दे और वे मदीना में प्रवेश कर अपनी घृणा एवं द्वेष की आग को बुझा सकें तथा इस नये धर्म को समाप्त कर दें।

मुसलमान जानते थे कि इस घेराव के पीछे क्या चीज़ उन की प्रतीक्षा में है अतः उन्होंने तय किया कि वे साहस के साथ जमे रहेंगे, प्रत्येक आक्रमणकारी को तीरों की बौछार से पीछे धकेल देंगे। और इस भारी दल की सुरक्षा करेंगे फिर भी उनकी दशा बड़ी चिन्ताजनक तथा दयनीय थी जैसा कि क़ुरआन ने चित्रण किया है :

> जब वे तुम्हारे ऊपर की ओर और तुम्हारे नीचे की ओर से तुम पर चढ़ आये और जब आंखें डगने लगीं और हृदय घाटी तक आ गये, और तुम लोग अल्लाह के बारे में तरह-तरह के गुमान करने लगे। उस समय ईमान वाले आज़माए गए और बुरी तरह हिला मारे गये। —अल-अहज़ाब १०-११

क़ुरैश के सवारों ने इस प्रकार निरन्तर घेराव तथा पड़ाव डाले रखना पसन्द न किया क्योंकि घेराबन्दी करके नतीजे की प्रतीक्षा में रहना उन के तरीक़े के विरुद्ध था, अतः अम्र बिन अब्देवुद्द, इक्रमा बिन अबू जह्ल और ज़िरार बिन ख़त्ताब मुसलमानों के मुक़ाबले को निकले, वे आगे बढ़े तो खाई के किनारे आकर रुक गये और बोले कि ख़ुदा की क़सम! यह युद्ध विधि इस से पूर्व अरबों ने कभी नहीं अपनायी थी।

इस स्थान पर खाई की चौड़ाई कुछ कम थी, वहां से फांद कर दूसरी ओर आये और लड़ाई के लिये पुकारा। मुसलमानों ने ख़तरा देखकर आगे बढ़कर उन को रोका। हज़रत अली उन का नेतृत्व कर रहे थे।

हज़रत अली रज़ि० ने अम्र बिन अब्देवुद्द को ललकार कर कहा : 'हे अम्र! तू ने अल्लाह से प्रतिज्ञा की थी कि यदि कोई क़ुरैशी तुझे दो बातों में से किसी एक के लिए आमन्त्रित करेगा तो तू उसे स्वीकार करेगा।'

हम्र बोला : 'मैं तुझे अल्लाह, उस के रसूल तथा इस्लाम की ओर आमन्त्रित करता हूं।'

अली रज़ि० : 'हां! तुम ठीक कहते हो।'

अम्र : मुझे इसकी आवश्यकता नहीं!'

अली रज़ि० : 'तो मैं तुम्हें युद्ध और मुक़ाबले की दावत देता हूं।'

अम्र : 'परन्तु भतीजे ! मैं तुझ से लड़ना नहीं चाहता हूं।'

अली रज़ि० : 'परन्तु मैं तुम्हें क़त्ल करना पसन्द करता हूं।'

यह सुन कर अम्र को तैश आ गया और वह घोड़े से उतर आया। आगे बढ़कर हज़रत अली पर हमला किया जिसे उन्हों ने ढाल से रोका फिर भी मस्तक पर ज़ख्म आ गया। तत्क्षण हज़रत अली ने उस पर आक्रमण किया और उस दुष्ट का काम तमाम कर दिया। अन्य मुश्रिक पराजित होकर भाग गये।

बच्चे छतों से जिहाद का दृश्य देख रहे थे और इस्लामी दल की चलत फिरत का अवलोकन कर रहे थे। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर (रज़ि०) कहते हैं कि ख़न्दक़ के युद्ध के समय मैं बच्चों और स्त्रियों के साथ किले में था और मेरे साथ अम्र बिन अबी सल्मा भी थे। मैं उन की पीठ पर चढ़ कर जंग का दृश्य देखता था। वह कहते हैं कि मैं ने सहसा अपने पिता को देखा कि कभी इधर दौड़ रहे हैं कभी उधर। जब शाम हुई और वह हमारे पास आये तो मैं ने पूछा : पिता जी ! आज आप भाग-भाग कर क्या कर रहे थे। हम ने यहां से देखा था। वह बोले : मेरे बेटे ! तुम ने मुझे देखा था ?' मैं ने कहा : 'हां !' हज़रत ज़ुबैर ने गर्वपूर्ण कहा : मेरे माता पिता तुम पर निछावर हों।'

इसी चिन्ताजनक स्थिति में बनू क़ुरैज़ा की ओर से सूचना मिली कि उन्हों ने प्रतिज्ञा भंग कर दी है और वे आक्रमणकारियों के संयुक्त मोर्चे में सम्मिलित हो गये हैं।

इस का विवरण यह है कि बनू नज़ीर के सरदार हुई बिन अख़्तब ने क़ुरैश और समूचे अरब को इस्लाम के विरुद्ध भड़का कर खड़ा कर दिया, यह दुष्ट बड़ा उपद्रवी था। यह बनू क़ुरैज़ा के सरदार 'कअ़ब'[1] के पास आया और उस का द्वारा खटखटाया। कअ़ब ने सैनिक दलों के आने के कारण अपने द्वार बन्द कर लिये थे और गढ़ी के रास्तों पर पहरा बिठा दिया था तथा मुसलमानों से हुई प्रतिज्ञा को पूरा करने का निश्चय कर लिया था। हुई बिन अख़्तब खड़ा रहा और कअ़ब ने द्वार नहीं खोला।

हुई : 'तेरा बुरा हो द्वार तो खोल दे।'

कअ़ब : तू अशुभ आदमी है ! मैं मुहम्मद (सल्ल०) से प्रतिज्ञा

---

1. पूरा नाम 'कअ़ब बिन असद' है।

कर चुका हूं और इसे पूरा करूंगा क्योंकि हमने मुहम्मद में सच्चाई तथा प्रतिज्ञा निष्ठ होने के अतिरिक्त कुछ नहीं देखा।'

हुई : 'तेरा बुरा हो द्वार तो खोल दे!'

कअ्ब : यह नहीं हो सकता।

हुई : मैं समझता हूं कि तू द्वार इसलिए नहीं खोलता कि मैं तेरे साथ खाना खाने बैठ जाऊंगा।

यह सुन कर कअ्ब ने स्वाभिमान में आकर द्वार खोल दिया। हुई ने अन्दर प्रवेश करते ही कहा कि तेरा बुरा हो मैं तेरे लिए सदैव की इज्जत का सामान लाया हूं।

कअ्ब : 'वह क्या ?'

हुई : मैं कुरैश के सरदारों को ले कर आया हूं, उन्हें, दूमा और ग़त्फ़ान की सेनाओं को यहां उतारा है। उन्हों ने मुझे वचन दिया है कि वे मुहम्मद और उस के साथियों का उन्मूलन किये बिना न लौटेंगे।

कअ्ब : 'खुदा की क़सम तू सदा ज़िल्लत और अपमान ले कर ही आया है, ये वे बादल हैं जिन में अब पानी नहीं है केवल गरज और चमक है। मुझे मेरी दशा पर रहने दो, मैं ने मुहम्मद के अन्दर सत्यता और प्रतिज्ञा पूर्ति के अति-कुछ नहीं देखा।'

दूसरे लोगों ने हस्तक्षेप करते हुआ कहा, जब तुम्हें मुहम्मद की सहायता नहीं करनी है जैसा कि समझौते में है तो उन्हें और उन के शत्रुओं को निमटने दो।

परन्तु हुई बिन अख़्तब अपने दृष्टिकोण से समस्त यहूदियों को सन्तुष्ट करना चाहता था और इस चिन्ताजनक घड़ी में प्रतिज्ञा भंग करने को सुन्दर रूप में प्रस्तुत करना चाहता था और उन मुश्रिकों के साथ उन्हें युद्ध में शामिल करना चाहता था जो मुसलमानों को जड़ मूल से समाप्त करने के इरादे से चढ़ आये थे। दोनों इस ज़ालिमाना तरीक़े के विषय में वार्ता करते रहे यहां तक कि बनू क़ुरैज़ा ने उस लेख्य-पत्र को फाड़ दिया जिस में सन्धि लिखी हुई थी। जब रसूलुल्लाह ने अपने आदमियों को बनू क़ुरैज़ा की स्थिति की जानकारी हेतु भेजा तो उन लोगों ने कहा : कैसी सन्धि ! और कौन रसूलुल्लाह ? हमारी उन से कोई सन्धि नहीं है।

के आने से पहले ही वे उन का गला दबा देते हैं और उन की ज़बान पर ये शब्द होते हैं :

'मैं ने जीवन को पीछे छोड़ दिया है, मेरे लिए इस से उत्तम जीवन और क्या हो सकता है कि मैं आगे ही बढ़ता चला जाऊं —।'

कुछ लोग ऐसे भी होते हैं कि भय एवं विपत्तियों के समय उन की बुद्धि नष्ट हो जाती है और वे सिर पर पैर रख कर भागते हैं। जब भी जीवन की माँग तथा स्थायी प्रेम उन्हें अपनी ओर बुलाता है और मुक़ाबले के लिये उन्हें खड़ा करता है तो वे फ़रार होने का प्रयत्न करने लगते हैं।

अह्‌ज़ाब के युद्ध के अवसर पर इस कायर तथा डरपोक गिरोह ने जो व्यवहार अपनाया उस पर क़ुरआन ने उन्हें डांटा है :

('हे नबी !) कहो : यदि तुम मौत या क़त्ल से भागो तो यह भागना तुम्हारे कुछ भी काम न आयेगा, और फिर भी जीवन का सुख थोड़ा ही भोगने पाओगे।
कहो : कौन है जो तुम्हें अल्लाह से बचा सकता हो यदि वह तुम्हें हानि पहुंचाना चाहे, या वह तुम्हारे साथ दयालुता का इरादा करे (तो कौन उसे रोक सकता है) ये लोग अल्लाह के सिवा अपना कोई संरक्षक—मित्र और सहायक नहीं पा सकते।' —अल-अह्‌ज़ाब १६,१७

जब क़ुरैश ने खाई पार करने का प्रयत्न किया और रसूलुल्लाह के निवास कक्ष पर आक्रमण करना चाहा तथा कोई कमज़ोर मोर्चा देख कर मदीना नगर पर आक्रमण करना चाहा तो ये सुदृढ़ ईमान वाले मुसलमान आगे बढ़े और प्राण हथेली पर रख कर उन का मुक़ाबला किया ताकि शत्रु जान ले कि आगे बढ़ने में ख़तरे ही ख़तरे हैं।

इब्ने इस्हाक़ की रिवायत है कि मुसलमानों की माता हज़रत आइशा (रज़ि०) खाई वाली जंग (अह्‌ज़ाब युद्ध) के अवसर पर बनू हारिसा के क़िले में थीं। यह मदीना का सब से अधिक सुरक्षित क़िला था। उस अवसर पर उन के साथ सअ्‌द बिन मुआज़ (रज़ि०) की माता भी थीं। हज़रत आइशा कहती हैं कि यह घटना पर्दे का आदेश आने से पहले की है। सअ्‌द (रज़ि०) उधर से निकले, वह कसी हुई कवच पहने हुए थे जिस से उन का हाथ बाहर निकला हुआ था और हाथ में भाला लिए धीरे-धीरे चल रहे थे और कविता पढ़ते जाते थे :

'युद्ध का दृश्य देखने के लिए हम्ल बिन सअ्दाना[1] थोड़ी देर के लिए रुका, परन्तु मृत्यु को गले लगाने में क्या संकोच है जब कि निश्चित समय आ चुका हो—।'

उन की माता ने ललकार कर कहा: 'बेटे ! शीघ्रता करो तुम पीछे रह गए हो ।'

आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि मैं ने उन की माता से कहा: 'हे सअ्द की माता ! क्या अच्छा होता कि सअ्द की कवच कुछ चौड़ी होती, मुझे शंका है कि यदि तीर लग गया तो घाव बड़ा गहरा होगा ।' अत: इस युद्ध में सअद बिन मुआज़ को ऐसा तीर लगा जिस से उन के बाज़ू की नस कट गयी ।

लगता है कि हज़रत सअ्द (रज़ि०) का घाव बड़ा गहरा था, सअ्द मृत्यु से डरते न थे परन्तु उन्हें जिहाद करने की आकांक्षा उस समय तक थी जब तक इस्लाम प्रभुत्वशाली एवं सुदृढ़ न हो जाये तथा शत्रु पराजित न हो जायें । अत: उन्हों ने अल्लाह से दुआ की :

'हे अल्लाह अगर तूने क़ुरैश की लड़ाई बाक़ी रखी है तो उस के लिए मुझे भी बाक़ी रख, क्योंकि मुझे इस से अधिक कोई चीज़ प्रिय नहीं कि मैं उस जाति से 'जिहाद' करूं जिस ने तेरे रसूल को कष्ट पहुंचाया, उन्हें झुठलाया तथा पवित्र हरम से निष्कासित किया है । हे अल्लाह यदि तू ने हमारे और उन के बीच लड़ाई को समाप्त कर दिया है तो इस घाव को मेरे लिए शहादत का साधन बना दे और उस समय तक मुझे मृत्यु न दे जब तक बनू क़ुरैज़ा के अपमान, कुख्याति तथा रुसवाई से मेरी आंखें ठन्डी न हो जायें ।'

हज़रत सअ्द (रज़ि०) की दुआ के अन्तिम शब्द यहूदियों की गद्दारी तथा प्रतिज्ञा भंग के विरुद्ध उस रोष को प्रकट करते हैं जो मुस्लिम समाज में धधक उठा था ।

प्रतिज्ञा तथा समझौतों के विषय में बनी इसराईल का इतिहास बताता है कि वे दुष्टता एवं ऊपरीपन से कभी नहीं रुके तथा यदि प्रतिज्ञानिष्ठ रहे भी तो केवल उस समय तक जब तक उन के हित, स्वार्थ तथा उद्देश्य उन से जुड़े रहे परन्तु जब अपने हितों को खतरे में देखा तो उन्हें खजूर की

---

१. हम्ल बिन सअदाना बिन हारिसा बिन मोक़िल बिन कलीम बिन जिनाब अल-कल्बी से अभिप्रा: है ।

अलग रहे कि अरब स्वयं आक्रमण क

यहूदी मुसलमानों के किसी कि
बिन्त अब्दुल मुत्तलिब ने उसे दे
आश्चर्य की कोई बात नहीं, क्यों
तो थीं !

अबू सुफ़यान ने अपने चारों
स्थान न दिखाई दिया। वह भयभी
मौजूद थे।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) को मुि
मालूम थी। अतः आपने चाहा कि
और अपने हित में प्रयोग कर लें
सरदार नईम बिन मसऊद ने इस्ल

अपने इस्लाम को छिपाये रखने के लिए हिदायत की और उन्हें मुश्रिकों के बीच फूट डालने के लिए भेजा और फ़रमाया—

'तुम हमारी दृष्टि में अनुभवी व्यक्ति हो यदि तुम कोई उपाय कर सकते हो तो अवश्य करो क्योंकि युद्ध, छल तथा उपाय का नाम है।'

हज़रत नईम अपने अभियान पर सब से पहले बनू क़ुरैज़ा के पास पहुंचे जिन से इस्लाम से पूर्व इन की मित्रता थी। उन्हें समझाया।

नईम : 'तुम जानते हो कि हमारे और तुम्हारे बीच कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है!

बनू क़ुरैज़ा : 'तुम सत्य कहते हो हम आप पर कोई दोष नहीं लगा सकते।

नईम : तुम्हारी स्थिति क़ुरैश और ग़त्फ़ान से भिन्न है। यह नगर तुम्हारा है और यहां तुम्हारी सम्पत्ति है, तुम्हारी सन्तान, स्त्रियां यदि यहीं रहती हैं, तुम इन्हें कहीं और भेज नहीं सकते। क़ुरैश और ग़त्फ़ान, मुहम्मद (सल्ल०) और उन के साथियों से लड़ने आये हैं। और तुम ने उन की सहायता करने की घोषणा कर दी है। उन का नगर, उन की सम्पत्ति, उन की सन्तान और उन की स्त्रियां किसी अन्य स्थान पर हैं। तुम में और उन में बड़ा अन्तर है, यदि मौक़ा मिला तो वे लाभ उठायेंगे, अपितु अपने नगर लौट जायेंगे तथा तुम को इन लोगों की दया दृष्टि पर छोड़ जायेंगे फिर तुम इन लोगों का मुक़ाबला करने की शक्ति भी अपने अन्दर न पाओगे। अत: तुम लोग शान्त रहो और क़ुरैश से कहो कि वे तुम्हें असहाय छोड़ कर न जायें वरन् अपने कुछ आदमी 'यरग़माल'[1] के रूप में तुम्हारे पास भेज दें।

बनू क़ुरैज़ा : 'आप की बात बहुत उचित है और आप का परामर्श बिल्कुल ठीक है।' फिर नईम (रज़ि०) क़ुरैश के पास आये तथा अबू-सुफ़यान और उस के साथियों से कहा—

---

१. वह व्यक्ति जो किसी राज की ओर से दूसरे राज को ज़मानत में दिया जाए, ताकि वह राज्य अपनी प्रतिज्ञा भंग न कर सके। —अनुवादक

क़ुरैश तथा ग़तफ़ान हमारे
पड़े पड़े परेशान हो गये हैं
इरादा है तुम लोग भी तैया
शनिवार है और हम इस दि
ऐसा किया तो उस ने स्वयं
मुहम्मद सल्ल० के विरुद्ध उस
कुछ आदमी हमारे पास 'यरग़
बंधी रहे। हमें शंका है कि
परिणाम अनुकूल न निकला त
और हमें अकेले इस व्यक्ति क
में नहीं है।

जब सन्देशवाहक बनू क़ु
ग़त्फ़ान ने आपस में कहा कि

और बैठे ही बैठे कहा : 'हां, हे अल्लाह के रसूल !' आपने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए मेरा चयन किया और फ़रमाया : 'तुम सूचना लाओ कि शत्रु इस समय क्या कर रहे हैं ?' मैं गया यद्यपि मैं सब से अधिक कायर और दुर्बल था, आप ने मेरे लिए शुभ दुआ की और मैं चल पड़ा, सर्दी के कारण ऐसा लगता था कि मैं 'हम्माम' (स्नान गृह) में तैर रहा हूं।'

यह ईमान की गर्मी तथा आज्ञापालन की देन थी कि व्यक्ति अपनी अग्निवर्धक भावनाओं के द्वारा वातावरण की कठोरता को सहन कर लेता है।

हुज़ैफ़ा (रज़ि०) कहते हैं कि जब मैं चलने लगा तो रसूलुल्लाह ने मुझे आदेश दिया कि 'हे हुज़ैफ़ा ! कोई नई बात न करना।'

जब मैं शत्रु की सेना दल के निकट पहुंचा तो देखा कि आग जल रही है और एक भारी भरकम तथा मोटा ताज़ा व्यक्ति अपने हाथों को आग की ओर ले जाता है और गर्मी प्राप्त करने के लिए उन्हें अपनी कमर पर फेरता है और कहता है कि 'कूच करो ! यहां ठहरने का स्थान नहीं।'

इस से पहले मैं अबू सुफ़यान से परिचित न था। मैं ने अपनी कमान में तीर चढ़ाया और उसे चलाने का इरादा किया ही था कि मुझे रसूलुल्लाह का आदेश याद आ गया और मैं रुक गया। यदि मैं तीर चला देता तो उस का अन्त हो जाता।

मैं ने देखा कि सर्दी तथा हवा की तीव्रता के कारण आग जलने नहीं पा रही है, न हांडियां अपने स्थान पर ठहर रही हैं और न खेमे ही सुरक्षित हैं। फिर अबू सुफ़यान ने कहा : 'हे क़ुरैश के लोगो ! यह स्थान ठहरने के लिए उपयुक्त नहीं है, हमारे पशु मर गये, बनू क़ुरैज़ा ने हमें सहयोग नहीं दिया तथा उन्हों ने वचन भंग कर दिया है। हवा की तीव्रता से हमारी जो दशा हो गयी है उसे तुम देख रहे हो, हांडियां उलट गयी हैं, आग बुझ गयी है, खेमे उखड़ गये हैं और हमारा चलना फिरना तथा बैठना उठना दूभर हो गया है, अच्छा है कि तुरन्त लौट चलो, मैं वापस जा रहा हूं फिर वह अपने खेमे पर आया और अपने ऊंट पर सवार हो गया जब कि ऊंट अभी बंधा हुआ था।[1] वह उसे चलने के लिए मारने लगा। अन्ततः वह तीसरी बार उछल कर नीचे कूदा और जब तक उस ने रस्सी न खोली ऊंट नहीं खड़ा रहा।

---

१. इस से अबू सुफ़यान की बदहवासी और घबराहट का अनुमान लगाया जा सकता है।

—अनुवादक.

करने का दण्ड भोगने को अकेले
नाओं को प्रत्यक्ष कर दिया था।
के समान बीतने लगे जिस का
अप्रसन्नतापूर्ण 'क़िसास' चुकाने

इन यहूदियों के दिलों में मुस
पूर्ण भावनायें थीं। यही लोग थे
आक्रमण करने और मुसलमानों
जित किया था। इन को मक्का
फ़िक़त से मुसलमानों को जो हा
संघर्ष में उन पर जो मानसिक अ

१. बुख़ारी। २. बुख़ारी।

'हक़' से विमुख हो गया हो।
उलमा का एक गिरोह गु
फ़र्ज़ होने को नहीं मानता। उस
भी अवसर मिले नमाज़ पढ़ी जा
मन है तथा मेरे निकट भी यह
सम्बन्धित 'वाजिबात' का वह क
उद्देश्य को पूरा कराये बल्कि व
का सही विवेक भी प्राप्त नहीं क
इस्लाम विभिन्न शिक्षाओं
'फ़राइज़' भी हैं तथा 'नवाफ़िल'

---

१. बैहक़ी। २. अर्थात् गोद

सामग्री जमा करने से पूर्व ही
कर्त्तव्य है। अतः किसी मुसल
करे चाहे वह नमाज़ ही के क

नमाज़ के समय की सी
जाती हैं।

रसूलुल्लाह के आदेश के
के विषय में कोई निर्णय लिय
शिक्षा देने में ग़फ़लत करे, जो
बनाने से कतराए, तथा जो
प्रकार अन्जाम न दे तो अल्ला
बहाना बेवज़न होगा। चाहे
रक्अत नमाज़ें पढ़ना हो या

जब आप उन के क़िला

'हे बन्दरों के भाइयो
कर दिया ? और तुम
उन्हों ने उत्तर दिय
अपरिचित नहीं हैं ।'

यह यहूदियों का पुराना
मूर्खता पर उतर आते हैं, जब
जब वे भयग्रस्त होते हैं तो लो
ताकि वे अकेले ही लाभान्वि
तो जीवन में अन्तिम श्रेणी की
हो सकती । लेकिन उनकी मू
पहुंचाया ।

क़अ्ब : 'अच्छा,
अपने ब
हो जाओ
उस के स
अल्लाह
तुम अस
ग़म न ह
कमी न

बनू क़ुरैज़ा : 'यदि ह
का आन

क़अ्ब : 'यदि य
रात है,

बेखबर हों और हमारी ओर से इस लिए सन्तुष्ट हों कि यह दिन यहूदियों का पवित्र दिन है तथा वे आक्रमण नहीं कर सकते अतः मुसलमानों की इस बेखबरी से फ़ायदा उठाकर उन पर अकस्मात् आक्रमण कर दिया जाये।'

बनू क़ुरैज़ा : 'हे कअ्ब ! तुम जानते हो कि हमारे पूर्वज इस दिन का अनादर करने के कारण वानर और सूकर बना दिये गये। फिर भी तू हमें इस बात का आदेश देता है।'

कअ्ब : (झल्लाकर) 'जब से तुम्हें तुम्हारी माताओं ने जन्माया है तुम ने कभी कोई निश्चित निर्णय नहीं लिया !'

बनू क़ुरैज़ा ने बनू नज़ीर जैसा समझौता करना चाहा परन्तु मुसलमानों ने बिना किसी शर्त के बन्दी बनाने का आग्रह किया क्योंकि इन लोगों ने जो भयानक अपराध तथा ग़द्दारी की थी उस के कारण किसी उदारता तथा रियायत की समायी न थी। अब तो न्याय की तराज़ू ही को फ़ैसला करना था चाहे वह फ़ैसला उन के अनुकूल हो या प्रतिकूल।

यहूदियों ने 'अबू लुबाबा बिन अब्दुल मुन्ज़िर' रज़ि० से परामर्श किया, इन से उन के मित्रतापूर्ण सम्बन्ध थे। अबू लुबाबा से पूछा कि क्या हम मुहम्मद के फ़ैसले को स्वीकार कर लें ? उन्हों ने उत्तर दिया : 'हां मान लो।' परन्तु गर्दन की ओर इशारा करके कहा कि क़त्ल कर दिये जाओगे। परन्तु अबू लुबाबा रज़ि० को तुरन्त आभास हुआ कि 'मैं ने रसूलुल्लाह के साथ ख़ियानत की है।' अतः वह वहां से 'मस्जिदे नब्वी' पहुंचे और अपने को एक स्तम्भ से बांध दिया और क़सम खाई कि जब तक अल्लाह मुझे क्षमा न करेगा उस समय तक इस स्थान से न हटूंगा।

अल्लाह ने उनको क्षमा कर दिया और उनके विषय में यह आयत उतरी :

> 'कुछ और लोग हैं जिन्हों ने अपने गुनाहों का इक़रार कर लिया। उन्हों ने मिले जुले कर्म किये कुछ अच्छे और कुछ बुरे। हो सकता है कि अल्लाह उन पर मेहरबान हो जाए। निस्संदेह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है।'
>
> —अल्-तौबा १०२

२५ दिन तक घेराव जारी रहा। इसी बीच, जिन यहूदियों ने अहज़ाब

थे। उन की क़ौम ने उन्हें घ
शपथधारियों से सुव्यवहार कर
परन्तु हज़रत सअद इस बा
उस के अनुयायियों को, मदीना
मर्यादाओं की आक्रमणकारिय
(चमत्कार) ने बचाया था।
गये थे जिन्हों ने 'तौहीद' के उ
कर देने का ऐलान कर दिया
हज़रत सअ्द यह न भूल स
की थी और जब उन्हें प्रतिज्ञापू
भद्दे तरीक़े से उस का स्वागत
सचेत नहीं किया था कि उनका

उन्होंने सरकशी का उत्तर देते हुए उन के प्रस्ताव को ठुकरा दिया था।

इसी कारण जब उन के क़बीले के लोगों ने उन से आशायें जोड़ीं तो उन्हों ने कठोरता से डांटते हुए उत्तर दिया : 'सअद के लिए वह समय आ गया है कि वह अल्लाह के मामले में किसी मलामत करने वाले की मलामत से न डरें।

—o—

हज़रत सअद ने फ़ैसला सुनाया कि उन के पुरुष क़त्ल कर दिए जायें, महिलाओं और बच्चों को बन्दी बना लिया जाये और उनकी सम्पत्ति बांट दी जाए। रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : 'हे सअद ! तुमने अल्लाह के आदेशानुसार निर्णय लिया है जो सात आकाशों के ऊपर से आया है।'[1]

मदीना के पास गढ़े खोदे गये और यहूदियों के शवों को एक-एक करके उसमें डाल दिया गया ताकि वे अपनी ग़द्दारी और प्रतिज्ञा भंग का मज़ा चखे।

जब यहूदी अपने वधस्थल की ओर ले जाये जा रहे थे तो अपने सरदार कअब से बोले : आप के विचार में हम से क्या व्यवहार किया जायगा ?

क़अब ने कहा : किसी भी अवसर पर बुद्धि से काम ले लिया करो, तुम देखते नहीं कि तुम में से जो भी बुलाया गया वापस नहीं आया ? खुदा की क़सम ! हमारा अन्जाम क़त्ल के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा ?'

और उन्हें क़त्ल किया गया यहां तक कि विगत ग़द्दारियों और करतूतों का दण्ड उन्हें मिल गया। यदि कहीं इन के प्रयत्न कारगर सिद्ध होते और ये अपने उद्देश्यों में सफल हो जाते तो अरब द्वीप के कोने कोने से आये हुए सेना दलों के पांवों तले मुसलमान रौंद डाले जाते, यहूदी उन शत्रुओं की सहायता एवं सहयोग कर रहे थे।

प्राय: कुछ नेताओं का षड्यन्त्र पूरी क़ौम को विपत्तिग्रस्त कर देता है। बनू क़ुरैज़ा पर नाज़िल होने वाली यह विपत्ति कुछ सरदारों के व्यक्तिगत प्रयत्नों का परिणाम थी। यदि हुई बिन अख़्तब और उस जैसे सरदार इस्लाम की शरण में रहते और जो लाभ समेट रहे थे उसे पर्याप्त समझते तो उन्हें और उन की जाति को इस कुपरिणाम का सामना न करना पड़ता।

परन्तु क़ौमें अपने नेताओं की ग़लतियों के नतीजे में अपने खून की

---

१. इब्ने इस्हाक़।

वारिस बना दिया, औ
नहीं रखा । अल्लाह को

मुसलमानों को मुश्रिकों
जिन साथियों की जुदाई सहनी
थे । अल्लाह ने उन की प्रार्थना
शहादत का कारण बन गया ज
सअद रज़ि० बनू क़ुरैज़ा के
चुके थे उधर मक्का के मुश्रि
की दशा इतनी खराब हो चुकी
स्वयं उन्हीं पर आक्रमण किये

बनू क़ुरैज़ा की पराजय
समाप्त नहीं हुई । ग़ज्वा अहज़

में से कुछ लोगों ने भागकर 'खैबर' की गढ़ियों में शरण ले ली थी। इन में 'अबू राफ़ेअ बिन अबिल हुक़ैक़' का नाम प्रसिद्ध है। यह यहूदी मक्का के मुश्रिकों को मदीना पर चढ़ा लाने में 'हुई बिन अख़्तब' का सहयोगी था, इस ने आर्थिक सहायता भी की थी। यहूदी इस्लाम तथा उस के आवाहकों को कष्ट देने में किसी अवसर को हाथ से न जाने देते थे। रसूलुल्लाह ने यहूदियों की इस भावना को इस प्रकार प्रदर्शित किया है :

'किसी यहूदी ने किसी मुसलमान से एकान्त में मुलाक़ात नहीं की परन्तु उस के क़त्ल का इरादा अवश्य किया।'[1]

यहूदियों की इस्लाम से शत्रुता तथा बदले की भावना केवल इस लिए थी कि वो सत्यमार्ग से विचलित एवं विमुख हो गये थे। अतः मुसलमानों को इन से सावधान रहना ही चाहिए था उन के किसी ऐसे तत्व को पनपने के लिए न छोड़ते जो समय के साथ पलता रहता है।

इसी विचार से मदीना के ५ ख़ज़्रजी व्यक्ति अबू राफ़ेअ के क़त्ल के संकल्प से चले ताकि उस के सहयोगियों के दिलों पर रोब बैठ जाये। रसूलुल्लाह ने अब्दुल्लाह बिन उतैक़ रज़ि० को उनका 'अमीर' (प्रधान) नियुक्त किया और उन्हें निर्देश दिया कि किसी बच्चे या महिला को क़त्ल न करना।

अब्दुल्लाह रज़ि० अपने साथियों सहित खैबर रवाना हुए और शाम तक इब्ने अबिल हुक़ैक़ के क़िले तक पहुंच गये। अब्दुल्लाह रज़ि० ने अपने साथियों से कहा, 'तुम यहां ठहरो मैं क़िले के अन्दर जाने का कोई उपाय खोजता हूं।' हज़रत अब्दुल्लाह कहते हैं कि मैं ने देखा कि नौकर उस का गधा ढूंढ़ रहे हैं, उन के हाथ में मशाल थी, मुझे शंका हुई कि कहीं पहचान न लिया जाऊं अतः सिर पर कपड़ा डालकर मुख्य द्वार के पास इस प्रकार बैठ गया जैसे शौच के लिए बैठते हैं।

जब नौकर वापस आये तो दरबान (द्वारपाल) ने कहा : 'द्वार बन्द होने से पूर्व जिसे अन्दर जाना है वह चला जाये,' अतः मैं दाख़िल हो गया और द्वार के पास ही पशुओं के घेर में छिप गया।

अबू राफ़ेअ तथा उस के परिवारजन अपने बिस्तरों पर लेट गये तो

---

१. अर्थात यहूदी किसी मुसलमान से मुलाक़ात करता तो उसे क़त्ल करने का संकल्प अपने दिल में अवश्य छिपाए रखता। —अनुवादक

२. बुख़ारी

डाला हुआ अपने साथियों से ज

ये लोग मदीना एक दुष्ट

प्रकार इस्लामी दावत के मार्ग

इन प्रयासों के पश्चात् कु

सिद्धान्त स्थिर हो गये और

पांचवां वर्ष समाप्त होते होते

जिन्हों ने अपना स्थान मनवा

मजा चखा दिया।

इधर क़ुरैश और उस

मुसलमानों का मूर्तिपूजा की

यहूदियों ने भी भली भांति

तथा अन्तिम रिसालत से श

बाप अबू सुफ़यान को छोड़ा पि
दयनीय एवं असहाय दशा में भे
हिजरत को पसन्द किया। रसूल
की ओर से निकाह का वकील
भेज दिया।
इसी प्रकार आप ने 'ज़ैनब
इस विषय पर हम सविस्तार
विवाह तथा रसूलुल्लाह की प
जाता है कि इन्हीं दिनों अम्र बि
था। क्योंकि रसूलुल्लाह (सल्ल
हो कर अपने साथियों से बोले
बड़ी तेज़ी से आगे की ओर बढ़

अध्याय—६

नया दौर

- उम्रा-ए-हुदैबिया
- ख़ैबर का युद्ध
- हब्शा से मुहाजिरों की वापसी
- बद्दुओं की ताड़ना
- नरेशों से पत्र व्यवहार
- उम्रतुल क़ज़ा
- मौता का युद्ध
- ज़ातुस्सलासिल स्रोत पर !
- महान विजय
- हुनैन का युद्ध
- पराजय
- पुनर्गठन तथा विजय
- ग़नीमतें
- वितरण की तत्वदर्शिता
- हवाज़िन-प्रतिनिधिमण्डल की वापसी
- ताइफ़ का घेराव
- मदीना को वापसी
- मुनाफ़िक़ों का मोर्चा
- तबूक युद्ध
- पीछे रह जाने वाले ?
- मस्जिदे ज़िरार
- प्रतिनिधिमण्डलों का आगमन
- अबू बक्र (रज़ि०) का हज्ज
- उम्मियों का प्रतिनिधिमण्डल
- किताबधारियों का प्रतिनिधिमण्डल

मदीना के आस पास व

मक्का वाले मुहम्मद (सल्ल०)

अपने ऐलान के अनुसार '

स्वयं फ़ना हो जायेंगे या इन

'उम्रा' ख़तरों से भरा हुआ

फ़रार हो जाने को बेहतर सम

सफल हो जायें तो आप की

ज़्यादा आसान होगा :

'(हे नबी ! जो बद्दू

हमारे माल और हम

हमारे लिए क्षमा की

से ऐसी बात कहते हैं

था। अगर उन्हों न
कामना के अनुसार ह
प्रभुत्व प्रदान कर वि
और यदि उन्हें स्वीका
शक्ति भी होगी। न
क़सम उस चीज़ के
अवश्य जिहाद करता
प्रदान कर दे या यह ग
जंग से रुचिहीनता के वा
ने क़ुरबानी करने के उद्देश्य से
'कौन शत्रु के मार्ग से
दर्शन करेगा?'

और उन्हें शंका क्यों होती ज
सूचनाएँ सुनी थीं कि निकट
और अपने सिरों का मंडन क

क़ुरैश मुसलमानों की सं
कर लिया था कि उन्हें मक्का
पड़े। इस का कारण यह है
डाली थी तथा उन्हों ने सोच
कर गये तो जनसाधारण के
हो जायेगा।

दूसरी ओर क़ुरैश भ
उन के लिए बड़ा हानिकारक
लोगों तथा सहयोगियों के

क़ुरैश : 'तू बैठ ज

नहीं !'

हुलैश : (क्रोधित

इसकी प्र

के दर्शन

उस अस्

है, यदि त

तो समस्त

क़ुरैश : 'अच्छा आप स

राज़ी होंगे, तत्पश्चात् लोग

उर्वा नहीं चाहता था कि

कष्टदायक बातें सुनें अतः उस ने क़ुरैश से कहा :

'हे क़ुरैश के लोगो ! मैं देख रहा हूं कि तुम जिस व्यक्ति को इस उद्देश्य के लिए भेजते हो, उस की वापसी पर उस की निन्दा करते हो और बुरा भला कहते हो। तुम जानते हो कि मैं तुम्हारे लिए पिता के समान हूं और तुम मेरे लिए सन्तान की तरह हो इस समय जो स्थिति विद्यमान है इसे मैंने ख़ूब समझ लिया है यदि मेरी क़ौम मेरी बात माने तो मुहम्मद से वार्ता करूं।'

क़ुरैश : 'आपने सत्य कहा, हमें आपसे कोई बदगुमानी नहीं है।'

उर्वा रसूलुल्लाह की सेवा में हाज़िर हुआ और बोला :

उर्वा : हे मुहम्मद ! क्या तुम ने सुना है कि किसी ने अपनी क़ौम को ख़ुद हलाक और बरबाद किया हो ? क़ुरैश तुम्हारे मुक़ाबले में स्त्रियों और बच्चों सहित आये हैं, उन्होंने चीतों की खालें पहन ली हैं और यह प्रतिज्ञा की है कि तुम्हें मक्का में प्रवेश नहीं करने देंगे। ख़ुदा की क़सम ये विभिन्न क़ौमों के लोग जो आप के साथ जमा हो गये हैं, मुक़ाबले में आप को अकेला छोड़ कर भाग जायेंगे।'

हज़रत अबू बक्र जो रसूलुल्लाह के पीछे बैठे हुए थे, उर्वा के इस चोट करने का हास्य उड़ाते हुए बोले : 'अरे मूर्ख ! क्या हम आप को छोड़ कर भाग जायेंगे ?

उर्वा : 'हे मुहम्मद ! यह कौन व्यक्ति है ?'

रसूलुल्लाह : यह इब्ने अबी क़हाफ़ा हैं।'

उर्वा : 'हे अबू बक्र ! यदि तुम्हारा मेरे ऊपर अहसान न होता, जिस का मैं अभी तक बदला नहीं चुका सका हूं, तो मैं अवश्य उत्तर देता !'

उर्वा ने फिर वार्ता शुरू की, वह बात करते हुए रसूलुल्लाह की दाढ़ी को हाथ लगा दिया करता था। मुग़ीरा बिन शुअबा (उर्वा के भतीजे) रसूलुल्लाह के पीछे अंगरक्षक की हैसियत से तलवार लिये खड़े थे। मुशिरक चचा का यह व्यवहार सहन न हो सका, तुरन्त कहा:

मुग़ीरा : 'पहले इस के कि हम तेरा काम तमाम करें, रसूलुल्लाह के शुभ चेहरे से हाथ हटा ले !'

उर्वा : (रुष्ट हो कर) हे मुहम्मद ! यह कौन है ?

लिया है कि मुसलमानों का ...
परिणाम कुछ भी हो ?

इधर मुसलमानों ने मक्क...
खोजने का प्रयत्न शुरू किया ...
चाही परन्तु मुसलमानों ने ...
रखा तथा पूर्ण रूप से शान्त र...

इब्ने अब्बास कहते हैं कि ...
रसूलुल्लाह की सेना के चा...

---

१. इस्लाम लाने से पहले मुग़ीर...
मित्रता करके उन्हीं ने उस ...
२. बुखारी, इब्ने इसहाक़ ।

लगाते रहें तथा कोई मुसलमान हाथ आ जाए तो पकड़ लायें। ये लोग आए परन्तु पकड़ लिए गए तथा रसूलुल्लाह की सेवा में पेश किए गए परन्तु आप सल्ल० ने उन्हें क्षमा कर मुक्त कर दिया। हालांकि उन्होंने इस्लामी सेना दल पर पत्थर और तीर भी बरसाए थे।

क़ुरैश की संकीर्णहृदयता और मुसलमानों की उदार हृदयता के विषय में क़ुरआन की आयत नाज़िल हुई :

> 'जब कुफ़्र करने वालों ने अपने दिलों में पक्ष को जगह दी, अज्ञान के पक्ष को, तो अल्लाह ने अपने रसूल पर और ईमान वालों पर अपनी विशेष शान्ति उतारी और उन्हें परहेज़गारी की बात पर जमाए रखा, और वे इसी के हक़दार थे और इसी के योग्य और अल्लाह हर चीज़ का ज्ञान रखता है।'
>
> —अल-फ़त्ह २६

मुसलमानों पर शान्ति के उतरने का प्रत्यक्ष उदाहरण यह है कि क़ुरैश के प्रतिनिधि रसूलुल्लाह की सेवा में सुबह-शाम आ रहे थे परन्तु उन्हें कोई छेड़ता तक न था, इस के विपरीत मुसलमानों के सन्देश वाहकों के क़त्ल किए जाने की शंका रहती थी। यदि हब्शियों ने न बचाया होता तो 'खराश बिन उमैया खुज़ाई' (रज़ि०) को क़त्ल कर दिया जाता। वे इस दशा में लौटे थे कि क़ुरैश ने उन के ऊंट की कूंचे काट दी थीं। यद्यपि रसूलुल्लाह ने उन्हें क़ुरैश के पास यह बताने के लिए भेजा था कि मुसलमान लड़ने नहीं आए वरन् इबादत करने आए हैं।

सन्देशवाहकों, प्रतिनिधियों एवं राजदूतों को तो सुरक्षा एवं शरण प्राप्त होती है परन्तु क़ुरैश रोष एवं क्रोध में अपना बुद्धि सन्तुलन खो चुके थे।

व्यक्ति जब बुद्धि एवं विवेक से महरूम हो जाता है तो उसे आत्महत्या तक करने की परवाह नहीं होती। मक्का के सरदार सीधे मार्ग से विचलित हो चुके थे अतः मुसलमानों से टकरा जाने के फलस्वरूप जो घातक परिणाम होता उस की उन्हें कुछ भी चिन्ता न थी। न केवल उन की जान व सम्पत्ति असुरक्षित होती वरन् मक्का नगर का आदर सम्मान और पवित्रता भी नष्ट हो जाती :

> 'और यदि ये कुफ़्र करने वाले तुम से लड़ते तो तुम को पीठ दिखा देते, फिर वे न कोई यार पाते न मददगार।
> यह अल्लाह की रीति है जो पहले से चली आई है और तुम

रचना नहीं करेगा ?

उल्लेखनीय है कि मक्का

बन्दी बना रखा था जिन्हें

चिन्ता थी तथा उन के हृदय

थे।

शनैः शनैः इस्लाम अनेकों

दिन की प्रतीक्षा कर रहे थे

के प्रभुत्व से छुटकारा पायेंगे।

लगता है कि उस्मान (र

कर के निकट भविष्य में प्र

थी। कुरैश ने देखा कि हज़र

राजनैतिक बन्दी (Hostage

णाम स्वरूप मुसलमानों में

हत्या कर दी गयी।

जब यह सूचना रसूलुल्लाह को मिली तो आप ने फ़रमाया कि उस्मान का बदला लिए बिना यहां से टलूंगा नहीं! अतः एक घने पेड़ की छाया में लोगों से प्रतिज्ञा (बैअत) लेनी शुरू की। सहाबा कराम इस प्रतिज्ञा पर टूट पड़ते थे और कहते थे कि जब तक जान में जान है काफ़िरों से 'जिहाद' करेंगे और मुक़ाबले से भागेंगे नहीं।"[1]

हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ि०) अन्धे हो जाने के बाद कहा करते थे कि रसूलुल्लाह ने हम से हुदैबिया के दिन फ़रमाया : तुम भूमि पर बसने वालों में सब से श्रेष्ठ हो।' उस समय हमारी संख्या १४०० थी यदि आज मेरी आंखों में रोशनी होती तो मैं तुम्हें उस वृक्ष का स्थान दिखाता।[2]

हज़रत जाबिर से हदीसोल्लेख है कि 'हातिब' का एक गुलाम रसूलुल्लाह के पास उन की शिकायत लेकर आया और कहने लगा कि हातिब अवश्य आग में जलेंगे! रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : तुम झूठ कहते हो, वह आग में कभी दाखिल न होगा। वह तो बद्र युद्ध और उम्र-ए-हुदैबिया में शरीक था।[3]

यह बैअत, 'बैअते रिज़वान' के नाम से प्रसिद्ध है जैसा कि स्वयं अल्लाह ने फ़रमाया है :

> 'निश्चय ही अल्लाह ईमान वालों से राज़ी हुआ जब कि (हे मुहम्मद !) वे एक वृक्ष के नीचे (तुम्हारे हाथ में हाथ देकर) तुम से बैअत कर रहे थे, और उस ने जान लिया जो कुछ उन के दिलों में था, फिर उस ने उन (ईमान वालों) पर शान्ति उतारी, और बदले में उन्हें विजय दी जो जल्द ही प्राप्त होने वाली है।' —अल-फ़तह १८

उस वृक्ष को काट दिया गया और उस का स्थान समाप्त हो गया। यह ठीक ही हुआ, वरना उस स्थान पर गुंबद और गुम्टी बनाई जाती तथा उस की ओर यात्रा की जाती। जन साधारण उन चिन्हों तथा अंशावशेषों से जल्दी ही सम्बद्ध हो जाते हैं।

तारिक़ बिन अब्दुर्रहमान (रहमतुल्लाह अलैहि) बयान करते हैं कि

---

१. इब्ने इस्हाक़,

२. बुख़ारी

३. मुस्लिम,

एक बार मैं ने हज्ज के लिए यात्रा की। मार्ग में कुछ लोग मिले जो नमाज़ पढ़ रहे थे, मैं ने पूछा यह कौन सी मस्जिद है ? लोगों ने बताया कि यह उस वृक्ष का स्थान है जहां रसूलुल्लाह ने 'बैअते रिज़वान' ली थी। मेरी मुलाक़ात सईद बिन मुसय्यिब (रह०) से हुई, मैं ने पूर्ण स्थिति से अवगत कराया, वह कहने लगे, मुझे मेरे पिता ने बताया कि वे उन लोगों में से थे जिन्हों ने वृक्ष के नीचे बैअत की थी। वह कहते थे कि जब दूसरा वर्ष आया तो हम उसे भूल गये और उसे याद न रख सके। फिर सईद (रह०) ने कहा : 'हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के सहाबी उस वृक्ष से अपरिचित हो गये थे, तुम लोगों ने उसे कैसे जान लिया ? मानो तुम्हें उस का अधिक ज्ञान है !

रसूलुल्लाह ने मुसलमानों से बैअत लेते समय अपना एक हाथ दूसरे पर मारा और कहा : 'यह उस्मान के लिए है।'[1]

क़ुरैश ने हज़रत उस्मान (रज़ि०) को अधिक दिनों तक न रोका क्योंकि उन्हें शंका थी कि यदि उस्मान को कोई कष्ट पहुंचा तो मामला बिगड़ जाएगा। क्योंकि वह प्रतिष्ठित हैं। उन्होंने सुहैल बिन अम्र को तुरन्त सन्धि का सन्देश दे कर भेजा।

इस सन्धि में उन का आग्रह यह था कि मुसलमान इस साल चले जायें, फिर जब चाहें हज्ज तथा दर्शनों के लिए आ सकते हैं ताकि अरब द्वीप में क़ुरैश को जो सम्मान प्राप्त है उस पर प्रभाव न पड़े।

रसूलुल्लाह ने क़ुरैश के सन्देशवाहक का स्वागत किया क्योंकि आप सन्धि के सब से अधिक अभिलाषी थे। यद्यपि आप तलवार के बल पर फ़ैसला करने पर भी सामर्थ्यवान थे और विरोधी पक्ष को अपनी राय मनवाने पर विवश भी कर सकते थे। सुहैल ने बड़ी लम्बी वार्ता की तथा उन शर्तों को प्रस्तुत किया जिन के आधार पर सन्धि होनी थी। रसूलुल्लाह ने सहमति व्यक्त की। अब उन्हें केवल किसी लेख्य-पत्र में सुरक्षित करना था जिस पर दोनों पक्षों के हस्ताक्षर होते !

मुसलमानों में इस रीति पर आश्चर्य व्यक्त किया जाने लगा जो रसूलुल्लाह ने शत्रुओं और मित्रों के साथ अपनायी थी। शत्रुओं के साथ आप (सल्ल०) ने बड़ी विनम्रता तथा सफ़ाई का मामला किया जब कि उन के साथ कठोरता बरतना अधिक उचित था और अपने साथियों के साथ ऐसा व्यवहार अपनाया जिस के वे आदि न थे। इस प्रस्तावित

---

१. बुख़ारी।

सन्धि के विषय में आप ने अपन साथियों से परामर्श भी नहीं लिया। जब कि विगत जंगों और सन्धियों के विषय में आप उन से परामर्श लेते रहे थे। प्राय: आप ने अरुचि के साथ उन की राय पर अमल किया था परन्तु आज मामला बिल्कुल दूसरा था। आज आप उस चीज को स्वीकार कर रहे थे जिसे आप के साथी कभी स्वीकार करने को तैयार न थे :

हम ने अपनी एक पुस्तक 'इस्लाम तथा राजनैतिक दमन' में उम्रा-ए-हुदैबिया के अवसर पर रसूलुल्लाह के दृष्टिकोण की व्याख्या की है और बताया है कि इन मामलों को साधारण सोच-विचार के हवाले नहीं किया बल्कि 'इल्हाम' के प्रकाश में उन का सही स्पष्टीकरण तथा उचित व्यवहार किया।

जिस खुदा ने ऊंटनी को आगे बढ़ने से रोक दिया था वह इस्लामी सेना दल को जंग की अनुमति कैसे दे सकता था ? जब कि सन्धि की ओट में उस ने स्पष्ट विजय को निश्चित कर दिया था।

इमाम जुह्री बयान करते हैं कि जब सन्धि हो गयी और उस का लिखना बाक़ी रह गया तो हज़रत उमर से सहन न हो सका और वे दौड़ कर हज़रत अबू बक्र के पास गए और उन से पूछा : हे अबू बक्र क्या आप सल्ल० अल्लाह के रसूल नहीं है ?

अबू बक्र (रज़ि०)	: 'क्यों नहीं ? निस्सन्देह वह अल्लाह के रसूल हैं ?
उमर	: 'क्या हम मुसलमान नहीं हैं।'
अबू बक्र	: 'हां, हम मुसलमान हैं।'
उमर	: 'क्या ये शत्रु मुश्रिक नहीं हैं ?
अबू बक्र	: 'निस्सन्देह, ये मुश्रिक हैं।'
उमर	: 'फिर हम अपने दीन में यह अपमान क्यों सहन करें ?'
अबू बक्र	: 'उमर ! रसूलुल्लाह के आदेश का पालन करो, मैं गवाही देता हूं कि आप (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं।'
उमर	: 'और मैं भी गवाही देता हूं कि आप (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं।'

फिर वह रसूलुल्लाह की सेवा में उपस्थित हुए और वहां भी यही बात चीत की :

हज़रत उमर	: 'क्या आप अल्लाह के रसूल नहीं हैं ?'

'रसूलुल्लाह

---

1. मुहम्मद,
2. अल्लाह के नाम से (शुरू)
3. अर्थात हे अल्लाह तेरे नाम

वह वापस किया जाएगा, और जो व्यक्ति मुसलमानों में से क़ुरैश के यहां जाएगा वह वापस न होगा।

हमारे बीच पूर्ण शान्ति स्थापित रहेगी, तथा इस अवधि में कोई किसी पर तलवार न उठाएगा न ख़ियानत तथा प्रतिज्ञा भंग करेगा, जो व्यक्ति या क़बीला मुहम्मद की सन्धि तथा समझौते में दाख़िल होना चाहे दाख़िल हो जाए और जो क़ुरैश के समझौते तथा सन्धि में शामिल होना चाहे तो उसे भी इजाज़त है।

आप इस वर्ष वापस हो जायें और मक्का में दाख़िल न हों अगले वर्ष हम मक्का से निकल जायेंगे और आप अपने साथियों सहित मक्का में प्रवेश कर सकेंगे, वहां केवल तीन दिन ठहरेंगे और आप के साथ म्यान में तलवारों के अतिरिक्त और कोई हथियार न होगा।'

रसूलुल्लाह अभी सन्धि-पत्र लिखवा ही रहे थे कि स्वयं सुहैल के पुत्र 'अबू जंदल' (रज़ि०) बेड़ियां पहने क़ैद से निकल कर आप (सल्ल०) की सेवा में उपस्थित हो गए जो इस्लाम ग्रहण कर चुके थे और ख़ानदान वालों की ओर से भांति भांति की यातनाएं सह रहे थे। इस समय भी लोहे की ज़ंजीरों में जकड़े हुए थे।

मुसलमानों को मक्का विजय में कोई सन्देह न था क्योंकि रसूलुल्लाह ने उन्हें अपना स्वप्न बताया था कि वे मक्का विजय में प्रवेश कर चुके हैं और काबा का दर्शन किया है। परन्तु जब उन्हों ने मामला यह देखा कि वापसी, सन्धि तथा समझौते की बात हो रही है तथा सुहैल के हवाले उस के पुत्र 'अबू जन्दल' को कर रहे हैं तो उन्हें बड़ा सदमा हुआ और उन का धैर्य जवाब देने लगा।

सुहैल ने अपने बेटे को देखा तो उन के चेहरे पर नज़र मारने लगा और रसूलुल्लाह से कहा कि इस व्यक्ति के आने से पहले हमारे और आप के बीच सन्धि हो चुकी है अतः इसे हमारे हवाले किया जाना चाहिए। रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : 'तुम ठीक कहते हो।' यह सुन कर सुहैल अपने बेटे को मक्का वापस ले जाने के लिए घसीटने लगा। अबू जन्दल (रज़ि०)

ने निराशापूर्ण शब्दों में मुसलमानों को पुकारा :

'हे इस्लाम के अनुयायियो ! अफ़सोस, मैं मुश्रिकों के हवाले किया जा रहा हूं। ये लोग मुझे दीन के मामले में फ़ित्ने में फंसा देंगे ।'

यह सुन कर लोगों का सदमा तथा शोक और बढ़ गया । आप (सल्ल०) ने अबू जन्दल (रज़ि०) को सान्त्वना बंधायी और फ़रमाया :

'हे अबू जन्दल ! धैर्य से काम लो, और अल्लाह से आशा करो वह तुम्हारे कमजोर साथियों के लिए छुटकारे का कोई उपाय पैदा कर देगा हम ने शत्रु से सन्धि कर ली है और हम ने उन से, उन्हों ने हम से ईश्वर की प्रतिज्ञा कर ली है। और हम प्रतिज्ञा के विरुद्ध कुछ करना नहीं चाहते हैं ।

प्रतिज्ञा लागू हो गयी, बनू खुज़ाआ मुसलमानों के साथ प्रतिज्ञा में शरीक हो गए तथा 'बनू बक्र' ने क़ुरैश के समझौते में सम्मिलित होने का ऐलान कर दिया तथा सन्धि की शर्तें तय हो गयीं ।[1]

इन शर्तों को एक दृष्टि में देखने से भ्रम होता है कि मुसलमानों को दबाया गया है और क़ुरैश की घृणा, घमण्ड तथा अज्ञानता पूर्ण पक्षपात की भावना का विचार किया गया है । अतः सहाबियों ने आश्चर्य पूर्ण रसूलुल्लाह से पूछा :

'हे अल्लाह के रसूल ! इस शर्त पर कैसे समझौता किया जाये कि यदि मुसलमान क़ुरैश की ओर चला जाए तो उसे वापस न किया जाए और जो उन की ओर से हमारे पास आ जाए उसे हम वापस कर दें ?'

रसूलुल्लाह ने इस शर्त की व्याख्या इस प्रकार की कि जो व्यक्ति मुर्तद हो कर कुफ़्र की दशा में उन के पास चला जाए, हमें उस की क़तई आवश्यकता नहीं है। अल्लाह इस की गन्दगी से मुसलमानों को बचाए । परन्तु जो कमजोर मुसलमान क़ुरैश के वश में हैं तो क़ुरैश स्वयं ही उन से परेशान हो जायेंगे जिस प्रकार इन से पूर्व वे लोगों से परेशान हो चुके हैं और अन्ततः मुसलमानों को ही इस से लाभ होगा ।

क्या यह वास्तविकता नहीं है कि रसूल और उस के साथी कमज़ोर थे फिर अल्लाह ने उन की सहायता की और क़ुरैश को उन के सामने अपमानित कर दिया ?

मुसलमानों को एक बार फिर अपनी आशाओं का चिराग़ बुझता

---

१. इब्ने इस्हाक़, अहमद, बुखारी ।

दिखाई दिया। उन से मस्जिदे हराम में दाखिले के लिए कहा गया था जब कि वे वापस लौट रहे थे। परन्तु रसूलुल्लाह ने स्पष्टीकरण करते हुए कहा कि तुम दोबारा प्रवेश करोगे जैसा कि तुम से वायदा है। तुम से यह नहीं कहा गया था कि इसी वर्ष तवाफ़ करोगे !

इस समझौते से मुसलमानों में निराशा फैल गयी और वे साहसहीन तथा ग़मगीन हो जाए। जब समझौते पर हस्ताक्षर हो गए तो रसूलुल्लाह ने सहाबियों को क़ुरबानी करने का आदेश दिया ताकि उम्रा खुल जाए और मदीना वापसी हो सके, आप ने सिर मुंडाने के लिए भी कहा परन्तु कोई भी न उठा यहां तक कि आप ने तीन बार हुक्म दिया। जब आप ने यह दशा देखी तो आप 'उम्मे सल्मा' के पास गए और पूरी बात बताई। मोमिनों की माता हज़रत 'उम्मे सल्मा' (रज़ि०) ने परामर्श दिया कि यदि आप को क़ुरबानी करनी है तो आप कर डालें और सिर मुंडा लें लोग स्वतः ही आप की पैरवी करेंगे।

अतः आप बाहर निकले और किसी से कोई बात किये बिना आप ने क़ुरबानी की और सिर मुंडाया।

'जब मुसलमानों ने देखा तो उन की ग़फलत दूर हो गयी और उन्हें होश आ गया तथा अवज्ञा के खतरे का उन्हें आभास हुआ। वे तुरन्त ही क़ुरबानी करने दौड़ पड़े तथा एक दूसरे का सिर मूंडने लगे उस समय ऐसा लगने लगा मानो ग़म की अधिकता में एक दूसरे की गर्दन मार देंगे।"[1]

हुदैबिया समझौते में बुरी या अच्छी जो नीयतें काम कर रही थीं शीघ्र ही उन को उन के अच्छे या बुरे परिणाम मिलने लगे। इस सन्धि को हुए अभी अधिक समय न बीता था कि मुश्रिकों का कठोर रवैया स्वयं उन्हीं के लिए हानिकारक सिद्ध होने लगा। अतः उन्हें उन वाक्यों और लेखों से शिकायत होने लगी जिन्हें उन्हों ने स्वयं तय किया था या उन के घमण्ड ने उन्हें तय करने पर विवश किया था।

मुसलमानों ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) के द्वारा किए गए समझौते के सुपरिणामों को चकित हो कर देखा। उस की दूरदर्शी बरकतों से उन की निगाहें चकाचौंध होने लगीं और दिल तथा ज़बान से अल्लाह के शुक्र और उस की प्रशंसा के तराने निकलने लगे।

इस सन्धि के होते ही समूचे अरब में कुफ़ की व्यवस्था अस्त व्यस्त होने लगी थी। क़ुरैश नए दीन के विरोधी एवं शत्रु और कुफ़ के ठेकेदार

---

१. बुख़ारी।

फेरना चाहते हैं ?'

उन के बार बार कहने पर आप ने कुछ न कहा और उन्हें दोनों क़ुरैशियों के हवाले कर दिया तथा वे उन्हें ले कर मक्का चले गये।

'अबुल बसीर' इस भयंकर परिणाम के सामने झुकने को तैयार न हुए। उन्होंने मार्ग में एक क़ुरैशी की तलवार छीन ली और उसे क़त्ल कर दिया दूसरा डर कर भाग गया तथा रसूलुल्लाह की सेवा में उपस्थित हो कर पूर्ण स्थिति से अवगत कराया। इस के पश्चात् अबुल बसीर भी गर्दन में तलवार लटकाये पहुंच गये और अर्ज़ किया : 'हे रसूलुल्लाह ! आप ने अपनी प्रतिज्ञा को पूरा कर मुझे शत्रुओं के हवाले कर दिया और मैंने अपने दीन को फ़ित्ने में पड़ने से बचा लिया।'

रसूलुल्लाह ने फ़रमाया :

'यदि उत्पीड़ित के साथ कुछ और लोग मिल जायें तो युद्ध भड़क उठता है।'[1]

अबुल बसीर समझ गये कि अब मदीना में रहने का मौक़ा नहीं है और मक्का में तो शान्ति का प्रश्न ही नहीं है, अतः 'ईज़' नामक स्थान पर जो लाल सागर के तट पर है—ठहर गये। इस स्थान से क़ुरैश के व्यापारिक क़ाफ़िले सीरिया की ओर से आते जाते थे। जब मक्का के उत्पीड़ितों को इस की जानकारी हुई और रसूलुल्लाह के शुभ कथन के विषय में भी ज्ञात हुआ तो वे छिप छिपाकर मदीना की बजाय अबुल बसीर के पास पहुंचने लगे यहां तक की उन की संख्या ७० तक पहुंच गयी। इन में सन्धि करने वाले सुहैल बिन अम्र का पुत्र अबू जन्दल भी था।

इन सताये हुए तथा उत्पीड़ित मुसलमानों ने एक छोटी सी सेना का रूप ग्रहण कर लिया और क़ुरैश का जीना दूभर कर दिया। जिस काफ़िर को देखते क़त्ल कर देते और जो व्यापारी दल गुज़रता उसे लूट लेते।

क़ुरैश ने विवश होकर रसूलुल्लाह की सेवा में दूत भेजे कि हम आप से प्रार्थना करते हैं कि इन लोगों को मदीना बुला लें और जो व्यक्ति हममें से आप के पास जायेगा हम उस की मांग नहीं करेंगे।

इस प्रकार क़ुरैश उस शर्त से स्वतः ही विरक्त हो गये जिसे मुसलमान नापसन्द करते थे।

'अबू बसीर, अबू जन्दल तथा उन के साथियों के इस क़िस्से में बड़ी इन्क़लाबी शिक्षायें निहित हैं। यह शत्रुओं की कमीनी हरकतों और

---

१. बुख़ारी,

बर्बरतापूर्ण व्यवहार के विरुद्ध अक़ीदे के युद्ध की एक कहानी है। इससे ज्ञात होता है कि उन के दिलों में ईमान किस गहराई तक बैठ चुका था तथा 'इख़्लास' (विशुद्ध हृदयता) से उन के सीने भर चुके थे। वे उस रूहानी सहयोग से वंचित थे जो रसूलुल्लाह् की संगति तथा मुस्लिम समाज से प्राप्त होता था परन्तु इस के बदले अल्लाह् की किताब (क़ुरआन) से सम्बन्ध तथा उस पर कार्यान्वित होने से उन के चिन्तन तथा कर्म प्रकाशमान थे। अतः वे लोग सत्य की हिदायत, अत्याचार व बर्बरता के इन्कारी और कुफ़्र की बग़ावत में लड़ते हुए इस्लाम का उत्तम आदर्श थे।

हज़रत अबू बसीर फिर रसूलुल्लाह् की सेवा में उपस्थित न हो सके। मदीना आने की आज्ञा उस समय मिली जब उन का अन्तिम समय था। हज़रत मूसा बिन उक़्बा की रिवायत है कि अबू बसीर के साथियों ने एक व्यापारिक क़ाफ़िले पर आक्रमण किया जिसमें 'अबुल आस,' रसूलुल्लाह् के दामाद भी थे जो अभी मुसलमान नहीं हुए थे। उन्होंने अबुल आस को छोड़कर सब को बन्दी बना लिया, अबुल आस अपनी पत्नी हज़रत ज़ैनब के पास गये और इस दुर्घटना की शिकायत की साथ ही उस सम्पत्ति के विषय में भी बताया जो लूटी गयी थी, हज़रत ज़ैनब ने रसूलुल्लाह् से इस का ज़िक्र किया। आप सल्ल० ने लोगों के सामने ख़ुत्बा दिया :

> 'हमने कुछ लोगों से ससुराली नाता किया है, 'अबुल आस' हमारे दामाद हैं और वह हमारे अच्छे दामाद हैं, वह क़ुरैश के कुछ लोगों के साथ सीरिया से आ रहे थे कि अबू जन्दल और अबू बसीर ने उन पर आक्रमण कर दिया और उनका माल छीन लिया, ज़ैनब बिन्त रसूलुल्लाह् ने मुझ से प्रार्थना की है कि मैं उन्हें शरण दे दूं तो हे मुसलमानो! क्या तुम लोग अबुल आस और उस के साथियों को छोड़ने को तैयार हो ?'

मुसलमानों ने कहा : हम तैयार हैं।

यह बात धीरे-धीरे 'अबू जन्दल' तक पहुंच गई अतः उन्होंने तमाम बन्दियों को मुक्त कर दिया और उन का समस्त माल भी उन्हें वापस कर दिया, यहां तक कि रस्सी का एक टुकड़ा तक वापस कर दिया।

इसके पश्चात् रसूलुल्लाह् सल्ल० का एक पत्र अबुल बसीर के पास पहुंचा जिसमें उन्हें आदेश दिया गया था कि इस स्थान को छोड़ दें और जहां जी चाहे रहें। उस समय अबुल बसीर अपने जीवन के अन्तिम क्षणों में थे अतः उन की मृत्यु इस दशा में हुई कि रसूलुल्लाह् का आदर पत्र उन के सीने पर था और अबू जन्दल ने उन्हें दफ़्न किया।

अबुल आस समस्त माल लेकर मक्का आये और उस के स्वामियों को उन का माल हवाले किया जब फ़ारिग़ हो गये तो पूछा :

'हे क़ुरैश के लोगो ! क्या किसी का कोई माल रह गया है ? जिसे मैं ने वापस न किया हो ?'

लोगों ने कहा : 'नहीं ! अल्लाह तुम्हें सुप्रतिफल दे, हम ने तुम्हें प्रतिज्ञानिष्ठ तथा सज्जन पुरुष पाया है।'

अबुल आस : 'ख़ुदा की क़सम ! मक्का लौटने से पूर्व मैं ने इसलिए इस्लाम ग्रहण नहीं किया कि कदाचित् तुम समझो कि मैं ने माल लौटाने हेतु नया दीन ग्रहण किया है। अतः मैं अब गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा और कोई पूज्य नहीं, और मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं।'

इस के पश्चात् अबुल आस मदीना चले आये और रसूलुल्लाह ने उन की पत्नी ज़ैनब रज़ि० को उन्हें वापस कर दिया क्योंकि धर्म-विरोध के कारण दोनों में जुदाई हो गयी थी परन्तु पुनः 'निकाह' नहीं पढ़ाया गया।

सन्धि के पश्चात् जो स्त्रियां मुसलमान होकर मदीना पहुंचीं, मुसलमानों ने उन्हें उन के अभिभावकों को लौटाने से इन्कार कर दिया। इस का कारण या तो यह था कि उन की दृष्टि में सन्धि केवल पुरुषों के लिए थी या इन नव मुस्लिम औरतों के विषय में उन्हें शंका थी कि वे यातनाओं तथा कष्टों का मुक़ाबला नहीं कर पायेंगी क्योंकि उन में अबू जन्दल और अबू बसीर के समान काफ़िरों का जीवन दूभर करने की क्षमता नहीं थी।

कारण जो भी हो मुसलमान औरतों को मक्का वापस नहीं किया गया और मुसलमानों की यह ज़िम्मेदारी निश्चित कर दी गयी कि वे उन्हें मुश्रिक पतियों को न लौटायें वरन् उन्हें क्षतिपूर्ति के लिए धन दे दें ताकि वे अन्य विवाह कर लें। और यदि वे इस्लाम में प्रवेश कर अपनी पत्नियों को ले लें तो अति उत्तम है। अल्लाह फ़रमाता है :

'हे ईमान लाने वालो ! जब तुम्हारे पास ईमान वाली स्त्रियां हिजरत करके आयें, तो तुम उन की परीक्षा कर लो—अल्लाह उन के ईमान को भली-भांति जानता है—फिर यदि वे तुम्हें ईमान वाली मालूम हों, तो उन्हें काफ़िरों की ओर वापस न करो। न तो वे उन (काफ़िरों) के लिये 'हलाल' हैं और न वे उन (स्त्रियों) के लिए हलाल हैं।' —अल-मुम्तहना १०

यह आयत आदेश व अनुज्ञा के साथ उस मानसिक स्वतन्त्रता तथा

चुके थे फिर भी वे भ्रम पैदा
भी हटने को तैयार न थे।

इस्लाम की शत्रुता में मूर
गये अतः जब आक्रमणकारी
और बनू क़ुरैज़ा को अपनी ग़
ख़ैबर के यहूदी ख़ामोश न
करने के बजाय बनू 'ग़त्फ़ान'
लगे ताकि इस्लाम के विरुद्ध
तथा आप के साथियों के वि
षड्यन्त्रों से पूर्णरूप से सचे
हुदैबिया' से वापस होकर ७
कूच कर दिया गया ताकि यहू

मुसलमानों ने यहूदियों और बनू ग़त्फ़ान के संयुक्त मोर्चे के मुक़ाबले से बचने के लिए यह उपाय किया कि क़बीला ग़त्फ़ान को धोखे में डाल दिया। उन्हें इस बात का भ्रम हो गया कि मुसलमानों की सेना का रुख़ उन्हीं की ओर है। इब्ने इस्हाक़ की रिवायत है कि जब बनू ग़त्फ़ान को मालूम हुआ कि रसूलुल्लाह ख़ैबर में पड़ाव डाले हुए हैं तो वे यहूदियों की सहायता हेतु चले, जब एक मंज़िल पूरी कर ली तो उन्हें भ्रम हो गया कि रसूलुल्लाह ने यहूदियों को छोड़ उन्हीं की ख़बर लेने का इरादा कर लिया है अतः वे तत्क्षण वापस लौट गये और अपने परिवारजनों की रक्षा कर रसूलुल्लाह को ख़ैबर के यहूदियों से निमटने के लिये छोड़ दिया।

इस प्रकार ख़ैबर के यहूदियों को उन के मुश्रिक सहयोगियों से काट देने की यह नीति सफल हो गयी। जब रसूलुल्लाह ख़ैबर के क़िलों के निकट पहुंच गये तो सहाबा को ठहरने का आदेश दिया और यह दुआ मांगी :

> 'हे अल्लाह ! आकाशों और उन समस्त चीज़ों के 'रब' जिन पर वह छाया किये हुए है, धरती और उन समस्त चीज़ों के 'रब' जिनको वह उठाये हुए है, शैतानों और उन समस्त चीज़ों के 'रब' जिनको वह गुमराह कर सकते हैं, हवाओं और उन समस्त चीज़ों के 'रब' जिनको वे उठाये फिरती हैं, हम तुझ से इस बस्ती और इसके निवासियों, और इस की समस्त चीज़ों की 'ख़ैर' (कल्याण) की मांग करते हैं और तेरे द्वारा इसकी बुराई से, इस के निवासियों के शर से और इसकी समस्त चीज़ों के शर से पनाह चाहते हैं।"

फिर आपने आदेश दिया : 'अल्लाह का नाम लेकर आगे बढ़ो !'

लगता है कि यहूदी समझे थे कि मुसलमानों की सेना बनू ग़त्फ़ान की ओर जा रही है अतः वे निश्चिन्त हो गये और अपने फावड़े व कुदाल लेकर खेतों की ओर जाने लगे परन्तु मुसलमानों की सेना को अपनी ओर बढ़ते देखकर क़िला बन्द हो गये और चिल्लाना शुरू कर दिया : 'मुहम्मद अपनी सेना के साथ आ गये !'

यहूदी मुसलमानों के तरीक़े के विरुद्ध खुले मैदान में उतरना पसन्द न करते थे। वे इस प्रकार के युद्धों के विरोधी थे। वे केवल दीवार की ओट से गोलाबारी और तीरंदाज़ी करने के आदी तथा अभ्यस्त थे।

---

१. इब्ने हिशाम

क्या यह भौतिकता का मोह, जीवन से प्रेम तथा मृत्यु से भय का परिणाम था ?

जब रसूलुल्लाह ने देखा कि वे अपने क़िलों में बन्द हो रहे हैं तो उन्हें आतंकित और भयभीत करने के लिए ज़ोर से ललकारा :

'अल्लाहु अकबर'[1] ! ख़ैबर हलाक हो गया । हम जब किसी क़ौम के घर में प्रवेश करते हैं तो उन भयभीत लोगों की प्रातः बड़ी ख़राब होती है ।'[2]

दुष्कर्मी बस्तियां शीघ्र ही या विलम्ब से नष्ट हो जाती हैं । हदीस में है कि रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : 'जब किसी बस्ती में ब्याज तथा ज़िना आम हो जाता है तो वह अपने को ईश्वर के प्रकोप के लिये हलाल बना देती है ।'[3]

यहूदियों के यहां ये बुराइयां आम हो चुकी थीं और आज तक विश्व स्तर पर ये लोग महाजन की हैसियत से परिचित हैं, दुष्कर्मों तथा बेहयाई के आवाहक हैं । इन की स्त्रियां किसी अपरिचित व्यक्ति के साथ एकान्तवास को बुरा नहीं समझतीं फिर भी इन में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो नैतिकता एवं सुशीलता से भलीभांति परिचित हैं परन्तु इनकी संख्या नाम मात्र की है :

'और मूसा की जाति में एक गिरोह ऐसा भी है जो हक़ के अनुसार मार्ग दिखाता और उसी के अनुसार इन्साफ़ करता है ।'

—अल-आराफ़ १५६

परन्तु स्पष्ट है कि न्यूनता की बजाय अधिकता किसी क़ौम के भाग्य और उस के अन्जाम को निश्चित करती है ।

मुसलमानों ने यहूदियों के सुदृढ़ एवं सुरक्षित क़िलों पर आक्रमण कर दिया और एक के बाद दूसरा क़िला छीनते चले गए और अपना प्रभुत्व सुदृढ़ करते चले गए । यहूदियों ने सुरक्षा की पूरी कोशिश की क्योंकि ख़ैबर का क्षेत्र सब से अधिक उपजाऊ, हरा भरा तथा रक्षा की दृष्टि से सुरक्षित क्षेत्र था ।

एक दिन रसूलुल्लाह ने फ़रमाया कि कल मैं उस व्यक्ति को झण्डा दूंगा जो अल्लाह और रसूल से प्रेम करता है और अल्लाह व रसूल उस से प्रेम करते हैं, लोगों ने रात इस प्रतीक्षा में बिताई कि यह सौभाग्य किसको मिलता है ?

---

१. अल्लाह ही सब महान है, २. बुख़ारी, ३. हाकिम,

प्रातः सब लोग इसी आकांक्षा और शौक़ में उपस्थित हुए। रसूलल्लाह ने हज़रत अली रज़ि० को बुलाया और उन्हें झण्डा प्रदान कर दिया। हज़रत अली रज़ि० ने अर्ज़ किया :

'हे अल्लाह के रसूल ! मैं उन से युद्ध करूंगा यहां तक कि वे पस्त हो जायें।'

आप ने फ़रमाया : 'ठहरो ! पहले उनके क़िले में प्रवेश करना, फिर उन्हें इस्लाम की ओर बुलाना तथा अल्लाह के हक़ूक़ बताना, ख़ुदा की क़सम ! यदि तुम्हारे द्वारा एक व्यक्ति को भी अल्लाह हिदायत दे दे तो यह तेरे लिए सुर्ख़ ऊंटों से अति उत्तम है।'[1]

रसूलुल्लाह के इस उपदेश का अभिप्राय यह था कि ग़नीमत के माल तथा भौतिक लाभों से मुसलमानों की रुचि हट जाए क्योंकि पराजित करने के पश्चात् यहूदियों से मिलने वाली सम्पत्ति बहुत अधिक थी फिर भी यदि उन्हें हिदायत मिल जाती तो मुस्लिम सैनिकों को जो सुप्रतिफल मिलता वह उस माल से कहीं अधिक होता।

यदि यहूदी ईश्वरीय आदेशों को मान लेते और उन हीन तथा ऊपरी हरकतों को छोड़ देते जिन में वे घिरे हुए थे और जिन के द्वारा लोगों से व्यवहार करते थे तो दूसरों को भी राहत मिलती तथा उन्हें भी शान्ति प्राप्त रहती। परन्तु उन्होंने युद्ध के अतिरिक्त किसी अन्य तरीक़े को पसन्द ही न किया। अतः हज़रत अली ने बड़ा शक्तिशाली आक्रमण किया कि क़िले में दराड़ें पड़ गयीं और मुसलमानों ने अधिकार कर लिया।

यहूदियों का प्रसिद्ध पहलवान 'मरहब' अपने 'कुल' की श्रेष्ठता बयान करता हुआ मुक़ाबले के लिए निकला—

— ख़ैबर के लोग भली-भांति जानते हैं कि मैं 'मरहब' हूं सशस्त्र, साहसी और अनुभवी हूं—

— क़भी भाला चलाता हूं और कभी तलवारों के करतब दिखाता हूं जब शेरों को क्रोधित किया जाता है।

एक रिवायत में है कि हज़रत अली बिन अबी तालिब ने उस को क़त्ल कर दिया तथा एक दूसरी रिवायत में है कि मुहम्मद बिन मुस्लिमा ने उसे क़त्ल किया। मुहम्मद के भाई महमूद बिन मुस्लिमा के ऊपर घेराबन्दी के दौरान ऊपर से चक्की का पाट गिरा दिया गया था अतः वे शहीद हो

---

१. बुख़ारी, मुस्लिम।

गये थे। मुहम्मद बिन मुस्लिमा ने मरहब का क़त्ल कर के भाई का बदला लिया था। मरहब के क़त्ल के बाद उस का भाई 'यासिर' सामने आया। इधर से हज़रत ज़ुबैर बढ़े, ज़ुबैर रज़ि० की माता हज़रत सफ़िया रज़ि० उन महिलाओं में से थीं जो यहूदियों के विरुद्ध युद्ध में सहायता के लिए इस्लामी सेना के साथ आयी थीं, उन्हें शंका हुई कि उन का बेटा शहीद हो जायेगा तो रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : 'घबराओ नहीं ! इन्शा अल्लाह तुम्हारा बेटा उसे क़त्ल करेगा।' अतः हज़रत ज़ुबैर ने यासिर को क़त्ल कर दिया।

यहूदियों ने निराश हो कर अन्य गढ़ियों की सुरक्षा का यत्न किया परन्तु मुसलमानों ने आक्रमण तेज़ कर दिया, वे इस युद्ध से शीघ्र ही निवृत्त होना चाहते थे क्योंकि खाद्य-सामग्री की समस्या खड़ी हो चुकी थी तथा अधिक दिन ठहरना कठिन हो गया था। अधिकांश मुसलमान भूख की तीव्रता तथा पानी की गदलाहट से विभिन्न रोगों में ग्रस्त हो गये थे। किसी ने रसूलुल्लाह को आकर सूचना दी कि यहूदी इस घेराबन्दी से तनिक भी परेशान न होंगे क्योंकि उन के अधिकार में गुप्त पानी के स्रोत हैं वे रात को निकलते हैं और पानी ले कर क़िले में सुरक्षित हो जाते हैं। अतः रसूलुल्लाह ने उन के जलस्रोतों को बन्द करने का आदेश दिया ताकि वे युद्ध करने या हथियार डालने पर विवश हो जायें। अन्ततः विवश हो कर यहूदी बाहर निकल आये अतः मुसलमानों से भयंकर युद्ध शुरू हो गया जिस में मुसलमानों को क़िला तोड़ने में काफ़ी क़ुर्बानियां देनी पड़ीं। इसका नाम 'क़िल-ए-ज़ुबैर' था और यह 'नतात' क्षेत्र का अन्तिम क़िला था जिस पर मुसलमानों ने अधिकार कर लिया। इस से पहले वे 'नाइम', 'सअ्ब', 'वतीह' और 'सलालिम' के क़िलों पर क़ब्ज़ा कर चुके थे।

दुर्गों की एक शृंखला शेष रह गयी थी जिस पर आक्रमण करने का इरादा किया गया। अतः रसूलुल्लाह सल्ल० 'सम्वान' नामक क़िले पर खड़े हो गये और उस पर अति भयंकर युद्ध हुआ। क़िले से एक 'अजवल' नामक व्यक्ति मुक़ाबले के लिए ललकारता हुआ निकला, जिस पर 'हुबाब बिन मुंज़िर रज़ि० ने आक्रमण कर दायां हाथ बाज़ू से अलग कर दिया। तलवार हाथ से छूट गयी और वह वापस भागने लगा। हज़रत हुबाब ने झपट कर उस का सफ़ाया कर दिया। इस के पश्चात एक अन्य यहूदी निकला जिस के मुक़ाबले के लिए एक मुसलमान मुजाहिद आगे बढ़ा परन्तु यहूदी ने मुसलमान को क़त्ल कर दिया। यह देखते ही अबू दुजाना रज़ि० ने आगे बढ़ कर शत्रु का काम तमाम कर अपने साथी का बदला

आत्मसमर्पण कर दिया। बा
हमें यहीं रहने दिया जाये
करेंगे। अतः आप ने उन की
सुविधा सदा के लिए नहीं दी
चाहेंगे तुम्हें निकाल देंगे।"

युद्ध के बीच एक घटना

---

१. गोकिन के समान एक यन्त्र
परत्थरों के टुकड़े रखकर फ़
थी।

२. बैहक़ी, अबूदाऊद,

३. बुख़ारी, मुस्लिम, अबूदाऊद अ

लड़ाई हुई और यह हब्शी ग़ुलाम
हो गया उस का शव खेमे में लाया
शवों वाले खेमे में झांका और
फ़रमाया—

'अल्लाह ने इस ग़ुलाम को
की क्षमता दी, मैं इस के
वाली स्त्रियां) देख रहा हूं
सज्दा भी नहीं किया है।"[1]

इस युद्ध में रसूलुल्लाह ने औरत

---

१. इब्ने कसीर,

थी। इब्ने इस्हाक़ की रिवायत है कि खैबर के युद्ध में रसूलुल्लाह के साथ स्त्रियां भी थीं। आप सल्ल० ने उन्हें भी ग़नीमत के माल में से कुछ प्रदान किया था परन्तु उन के लिए हिस्सा निश्चित नहीं किया।[1]

इमाम अहमद ने हश्रिज बिन ज़ियाद से रिवायत की है कि वह अपनी दादी से रिवायत करते हैं कि उन की दादी ने बताया कि खैबर की लड़ाइयों में हम भी रसूलुल्लाह के साथ थीं मैं ६ स्त्रियों में से छटी थी। जब रसूलुल्लाह को हमारे साथ होने की सूचना मिली तो आप ने हमें बुलाया। हम ने रसूलुल्लाह के शुभ चेहरे पर क्रोध के चिन्ह देखे, आप ने पूछा तुम लोग किस के हुक्म से और क्यों निकली हो ? हम ने उत्तर दिया कि हम तीर उठा कर देती हैं, सत्तू पिलाती हैं, हमारे साथ घायलों के लिए दवा भी है और हम बाल गूंथती हैं और उस के द्वारा ईश्वर के मार्ग में सहायता करती हैं।' आप ने फ़रमाया : 'तुम लोग वापस चली जाओ।'

वह कहती हैं कि जब खैबर विजय हुआ तो रसूलुल्लाह ने पुरुषों के समान हमारे हिस्से भी लगाये। हश्रिज ने अपनी दादी से पूछा हे दादी अम्मा ! 'आप लोगों को खैबर की ओर किस चीज़ ने जाने पर विवश किया ? उन्होंने बताया : 'खजूर ने !'[2]

इब्ने कसीर का मत है कि उन्हें रसूलुल्लाह ने पुरुषों के समान भूमि के उत्पादन में से दिया था परन्तु भूमि में पुरुषों के समान हिस्से लगाये हों यह उचित नहीं है। तथा यही राय सही है।

अबू दाऊद की हदीस में है कि क़बीला बनी गिफ़ार की औरतों ने कहा : 'हे अल्लाह के रसूल ! हम आप के साथ इस यात्रा में चलना चाहती हैं, हम घायलों की मरहम-पट्टी करेंगी और यथा सामर्थ्य मुसलमानों की सहायता करेंगी।' आप ने फ़रमाया : 'अल्लाह की बरकत सम्मिलित होगी।'[3]

यहूदी सरदार हुई बिन अख़्तब की पुत्री 'सफ़िया' भी खैबर के बन्दियों में सम्मिलित थीं। वह किसी सहाबी के हिस्से में आयीं, रसूलुल्लाह ने उन्हें वापस ले मुक्त कर दिया फिर उन से विवाह कर लिया तथा उन

---

१. इब्ने इसहाक़,

२. अल-मुस्नद, अबूदाऊद,

३. अबूदाऊद, अहमद, इब्ने हिशाम,

की स्वतन्त्रता को मेह़ क़रार दिया।[1]

विजय के पश्चात कुछ दिन तक आप वहां ठहरे रहे तो सलाम की पत्नी ने एक भुनी हुई बकरी (का गोश्त) आप की सेवा में उपहार स्वरूप भेजा। उस ने रान के मांस में विष मिला दिया था क्योंकि वह जानती थी कि रसूलुल्लाह इस भाग को पसन्द करते हैं।

रसूलुल्लाह ने चखते ही हाथ रोक लिया और फ़रमाया : 'यह हड्डी तबाही (विनाश) है इस में विष मिला है।' आप के साथ बिश्र बिन बरा रज़ि० भी थे उन्हों ने कुछ गोश्त खा लिया था।

औरत बुलाई गयी तो उस ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। उस ने कहा कि : 'मैं ने सोचा कि यदि आप सच्चे नबी हैं तो अल्लाह आप को अवश्य सूचित कर देगा और यदि आप राजा बनना चाहते हैं तो हम आप से छुटकारा पा जायेंगे। आप ने उसे क्षमा कर दिया। परन्तु बिश्र बिन बरा के शरीर में विष प्रविष्ट हो गया था अतः उस के प्रभाव से उनकी मृत्यु हो गयी।[2] एक रिवायत में है कि उस औरत को क़िसास में क़त्ल कर दिया गया और एक रिवायत में है कि उस ने इस्लाम ग्रहण कर लिया था अतः क्षमा कर दिया गया।

ख़ैबर के यहूदी आधे उत्पादन की शर्त पर खेती करने हेतु रुक गये परन्तु मुसलमानों से उन की घृणा ने उन्हें कुछ अपराधों पर प्रेरित किया। अतः अन्सार का एक व्यक्ति क़त्ल कर दिया गया और हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ि० के शासनकाल में उन के सुपुत्र हज़रत अब्दुल्लाह के दोनों हाथ तोड़ दिये गये। जब यह सूचना हज़रत उमर को मिली तो आप ने भाषण दिया कि,

> 'रसूलुल्लाह ने ख़ैबर के यहूदियों से इस शर्त पर समझौता किया था कि हम जब चाहेंगे उन्हें निकाल देंगे उन्होंने अब्दुल्लाह बिन उमर पर आक्रमण कर उस के दोनों हाथ तोड़ दिये हैं। और इस से पूर्व एक अन्सारी को क़त्ल कर चुके हैं जो तुम्हें मालूम है। अतः जिस का माल ख़ैबर के निवासियों के पास हो वह ले ले मैं उन्हें निकालने वाला हूं।' और फिर उन्हें वहां से निकाल भगाया।

---

१. बुख़ारी, मुस्लिम।

२. इब्ने हिशाम, बुख़ारी, मुस्लिम।

निस्सन्देह खैबर में यहूदियों की जो पराजय हुई उस ने पूरे द्वीप में यहूदियों की सैनिक हैसियत को समाप्त कर दिया अतः 'फ़दक' के यहूदियों ने भी शरण की प्रार्थना कर दी।

वादी 'अल-क़ुरा' के यहूदियों को इस्लाम का सन्देश दिया गया और कहा गया कि यदि वे इस्लाम में प्रवेश करेंगे तो उन की जान तथा माल सुरक्षित रहेंगे और उन का हिसाब अल्लाह के जिम्मे होगा। परन्तु उन्होंने इन्कार कर दिया। उन के इस्लाम को रद्द करने के परिणामस्वरूप एक हल्की सी झड़प हुई तथा अगले दिन प्रातः उन्हें विवश हो कर हथियार डालने पड़े।

'तैमा' के यहूदियों ने भी आत्मसमर्पण कर दिया।

अब इस्लाम की किरणें उन क्षेत्रों पर पड़ने लगीं जहां कभी यहूदियों का प्रभुत्व था और वे मनचाहा जीवन व्यतीत कर रहे थे।

इन समस्त लड़ाइयों तथा देश परित्याग की घटनाओं से यह रहस्य हमारी समझ में आया है कि धरती का वास्तविक स्वामी अल्लाह है वह जिसे चाहता है उस का वारिस बनाता है। वह अकारण एक समुदाय से छीन कर दूसरे समुदाय को नहीं देता बल्कि वह क़ौम नेमत पाकर बिगड़ जाती है अतः उसे वंचित कर दिया जाता है फिर वह नेमत उस क़ौम को दी जाती है जो उस की गुणज्ञ होती है तथा अल्लाह का शुक्र अदा करती है।

जो जाति अभिमान तथा अहंकार ग्रस्त हो जाती है और इतराने लगती है वह अपना अधिकार, स्वामित्व और अपना प्रभुत्व सब कुछ खो देती है ताकि दूसरों की दासता में चली जाये और दूसरी क़ौमें जैसे चाहती हैं उन के मामलों को चलाती हैं।

यह क़ानून बनी इस्राईल पर बड़ी कठोरता से लागू हुआ। जब उन्होंने 'तौरात' के आदेशों को मिथ्या कर दिया और मनोकामना के अधीन बन गये फिर यही क़ानून मुसलमानों पर लागू हुआ, जब उन्हों ने अपने हिदायत के भण्डार को ठुकरा दिया और गुमराही में डूब गये—

> 'और तेरे रब की पकड़ ऐसी ही होती है जब वह किसी जालिम बस्ती को पकड़ता है। निस्सन्देह उस की पकड़ दुःख देने वाली और सख़्त है।' —हूद १०२

प्रतिष्ठा एवं पतन और उन्नति एवं अवनति का नाम जीवन है। मानव इतिहास पर एक दृष्टि डालिये आप को मालूम हो जायेगा कि अग्रगण्यता तथा नेतृत्व के स्थान से कोई क़ौम उस समय हट जाती है जब उसे छीनने की योग्यता एवं क्षमता कोई अन्य क़ौम अपने अन्दर उत्पन्न

कर लेती है।

सत्ताधारी क़ौमों का उदाहरण समुद्र में उठने वाली उन लहरों जैसा है जो कभी बुलन्द होती हैं फिर तुरन्त ही शनैः शनैः क्लांत हो जाती हैं और समुद्रतट पर पहुंचते-पहुंचते कमज़ोर तथा महत्वहीन हो जाती हैं परन्तु इस बात में कोई चीज रुकावट नहीं बनती कि वे फिर ज्वार के साथ वापस हों और उन्नति तथा श्रेष्ठता को प्राप्त कर लें। फिर जब उन से शक्ति के साधन पृथक हो जायें तो फिर से पतनग्रस्त हो जायें।

अल्लाह ने बनी इस्राईल को विकास प्रदान किया तथा वे शासन एवं सम्मान के स्वामी बन गये फिर वह सम्मान तथा शासन छीन लिया गया ताकि इस्लाम का नवोत्थान प्राप्त शासन उन का मालिक बने तथा यह परिवर्तन समूचे मानव विश्व की भलाई के लिए हुआ।

इस्लाम के विरुद्ध मूर्तिपूजक यहूदियत ने क्यों मोर्चा लगाया? किस के हित के लिये यह लड़ाइयां लड़ी गयीं? बनी इस्राईल अपने निजी स्वार्थों के लिये धर्म तथा संसार पर नजर डालते थे। इसी कारण उन्हों ने इस्लाम का कठोरता से विरोध किया परन्तु अल्लाह के प्रारब्ध का फ़ैसला कुछ और ही था। वह एक नई उम्मत को सर्वांग परिवर्तन का आवाहक बनाना चाहता था। क्योंकि समूचा विश्व फ़साद से भर चुका था। तथा उस की सभ्यता की सड़ांध तथा दुर्गन्ध प्रत्यक्ष हो चुकी थी। जब बद्दुओं और यहूदियों ने इस इन्क़िलाब से टकराना चाहा और प्राचीन घृणा तथा माल व सम्पत्ति के मोह एवं प्रेम के कारण इस परिवर्तन को रोकना चाहा तो ये लोग स्वतः ही अपराधी बन गये क्योंकि वे तूफ़ान में डूब चुके थे।

यदि यहूदियों को एक वर्ष और न निकाला जाता तो अरब द्वीप को गुटबंदी के अतिरिक्त कुछ भी प्राप्त न होता। तथा उन के अस्तित्व से कभी कोई लाभ न मिलता। यह तो सम्भव था कि कुछ दाने और फल आदि तो मिल जाते परन्तु इस अधिकता के साथ फ़साद और फ़ित्ने का तत्व भी सम्मिलित होता जो बनी इस्राईल का विशेष कारनामा है। उन के ब्याजपूर्ण कारोबार, दुष्कर्म तथा बेहयाई और प्रत्येक धर्म से आस्था के झूटे दावे ने दुनिया को परेशान कर रखा था। परन्तु इस्लाम इन चीज़ों से बहुत दूर है वह प्रारम्भ ही से ईमान और सुधार का आवाहक रहा है। वास्तविकता, सत्यता और हित एवं कल्याण की रूह रखने के कारण इस्लाम का हक़ है कि वह विजयी हो और धरती के कोने-कोने में फैल जाये।

जब मुस्लिम उम्मत शिथिलता, पतन तथा गुमनामी के अकारणों का

शिकार हुई जिन का प्रथम काल में यहूदी शिकार हुए थे तो यह उम्मत भी उन ही के समान जिलावतन की गयी और आज इधर-उधर की ठोकरें खाती फिर रही है। यही क़ौमों के उत्थान एवं पतन का रहस्य है और उन के प्रताप, दबदबा और अपमान तथा हीनता के भेद इसी में निहित हैं।

हब्शा से मुहाजिरों की वापसी

खैबर की विजय, जाफ़र बिन अबी तालिब रज़ि० और उनके साथियों की हब्शा से वापसी के समय हुई। रसूलुल्लाह् को इन लोगों की वापसी से बड़ी प्रसन्नता हुई थी। ये लोग मक्का से इस दशा में निकले थे कि उन का दीन फ़ित्नाग्रस्त था और आज इस स्थिति में वापस हुए हैं कि इस्लाम विजयी तथा प्रभुत्वशाली था और उस का शासन अरब के उत्तर और दक्षिण में फैल चुका था अब उसे किसी दमन, हिंसा तथा आतंक का भय न था।

जब ये लोग मदीना में दाखिल हुए तो रसूलुल्लाह् ने फ़रमाया : 'खुदा की क़सम मैं नहीं जानता कि मुझे खैबर विजय की प्रसन्नता अधिक है या जाफ़र के आने की ?'[१]

हज़रत जाफ़र और उन के साथी मक्का में दस-बारह वर्ष रहे। इस बीच क़ुरआन का बड़ा हिस्सा उतर चुका था, काफ़िरों से अनेकों झड़पें हुई थीं और आम हिजरत से पूर्व और उस के पश्चात भी विभिन्न परि-स्थितियों में विभिन्न प्रयास करने पड़े। कुछ मुसलमान इन हब्शा के मुहाजिरों को मानानुसार नीचा समझने लगे क्योंकि वे उपरोक्त बातों से वंचित रहे थे। हज़रत 'अबू मूसा अशअरी' भी हज़रत जाफ़र के साथ आये थे, वह रिवायत करते हैं : 'कुछ लोग हम से कहते थे कि हम मदीना की हिजरत के कारण तुम से आगे निकल गये।' हज़रत अस्मा बिन्त उमैस रज़ि० हज़रत हफ़सा को देखने आयीं। अस्मा उन मुहाजिरों में से थीं जिन्हों ने हब्शा के नरेश नजाशी की ओर हिजरत की थी। इसी समय हज़रत उमर रज़ि० भी आ गये। जब उन्होंने अस्मा को देखा तो पूछा : 'यह कौन हैं ?' पुत्री ने कहा : 'अस्मा बिन्त उमैस !'

उमर रज़ि० : 'कौन ? हब्शा वाली ! समुद्र पार करने वाली !'

अस्मा रज़ि० : 'हां !'

---

१. हाकिम, तबरानी,

उमर रज़ि० : 'हम मदीना हिजरत के कारण तुम से आगे निकल गये अतः हम रसूलुल्लाह की निकटता के अधिकारी हैं ।'

अस्मा रज़ि० : '(रुष्ट हो कर) कदापि नहीं ! तुम लोग रसूलुल्लाह के साथ थे वह तुम्हारे भूखों को खाना खिलाते थे, तुम में से अज्ञानों को नसीहत करते थे परन्तु हम हब्शा जैसे सुदूर इलाक़े में थे और यह दूरी केवल अल्लाह और रसूल के लिए ही थी। खुदा की क़सम मैं उस समय तक न खाना खाऊंगी और न पानी पिऊंगी जब तक रसूलुल्लाह से तुम्हारी बात के विषय में पूछ न लूं। खुदा की क़सम ! न मैं झूठ बोलूंगी और न परिवर्तन करूंगी।'

अतः जब वह रसूलुल्लाह के पास गयीं तो पूछा—

'हे अल्लाह के रसूल ! उमर इस प्रकार की बातें कर रहे थे।'

रसूलुल्लाह : 'तुम ने क्या उत्तर दिया ?'

अस्मा : 'मैं ने इस प्रकार कहा।'

रसूलुल्लाह : 'वह तुम से अधिक मेरे समीप नहीं है उन्हें और उन के साथियों को एक हिजरत मिली है परन्तु तुम नाव वालों को दो हिजरतें मिली हैं !'[1]

कुछ ही समय के पश्चात ये मुहाजिर भी क़ुरआन का ज्ञान सीख गये और जिहाद के विभिन्न क्षेत्रों में उन्हों ने अपने कारनामे दिखाये और उन लोगों के बराबर हो गये जो संयम (तक़्वा) तथा उपकार (अहसान) में आगे निकल गये थे।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने हुदैबिया वालों के साथ खैबर के माले ग़नीमत में से उन्हें भी हिस्सा दिया तथा उन के अतिरिक्त किसी का हिस्सा न लगाया। क्योंकि अल्लाह ने खैबर की भूमि और माले ग़नीमत उन लोगों को बदले के रूप में प्रदान किया था जो मक्का की ओर चले थे तथा रिज़्वान वृक्ष की छाया तले मृत्यु की प्रतिज्ञा (बैअत) की थी।

बद्दुओं को खबर ली गयी

मूर्तिपूजक बद्दुओं की ओर मुसलमानों ने यहूदियों को दण्ड देने के

---

१. बुखारी, मुस्लिम।

पश्चात ही ध्यान दिया। पहले हम इशारा कर चुके हैं कि हुदैबिया की सन्धि के पश्चात बद्दू साहसहीन हो चुके थे। कल तक वे संगठित हो कर 'दारुल-इस्लाम' को घेर लेते थे परन्तु अब परिस्थितियां बदल चुकी थीं। बनी इस्राईल छिन्न-भिन्न हो चुके थे तथा मक्का वाले हथियार डाल चुके थे अतः अब मुसलमानों के लिए एक के बाद दूसरे क़बीले को दण्ड देना सम्भव हो गया था। मुसलमान उनकी अराजकता, आतंक तथा उग्रवादिता पर बन्ध लगाने में कभी असफल नहीं रहे। बद्दू बड़े कठोर हृदय और कठोर जान लोग हैं। हमें नहीं भूलना चाहिये कि गत शताब्दी तक बद्दू हाजियों के क़ाफ़िले लूट लेते थे और थोड़ी सी दौलत के बदले उन्हें क़त्ल कर देते थे।

इस्लाम ने उन्हें दुनिया के मामलों और आख़िरत के विषय में याद दिलाया और उन के भौतिक एवं नैतिक स्तर को ऊंचा उठाने का प्रयत्न किया। परन्तु जब 'क़ुर्रा' का एक पूरा समूह शहीद कर दिया गया तो इस्लाम ने उन का शक्ति पूर्वक दमन किया और सैनिक अभियानों के द्वारा उन के फ़ितनों व उपद्रवों का उन्मूलन कर दिया।

जब सफ़र ७ हिज्री में मुसलमान खैबर से लौटे तो उन का सब से प्रथम कार्य नज्द के जंगलों में सैनिक टोलियों का भेजना था यहां तक कि 'उम्रतुलक़ज़ा' के लिए उन्होंने मक्का की ओर यात्रा की जिस का वायदा हुदैबिया सन्धि के समय किया गया था।

हम इन 'सराया' तथा सैनिक टुकड़ियों की बहस में जाना नहीं चाहते हैं, क्योंकि यदि इस से मुसलमानों की सैन्यशक्ति तथा दबदबे में वृद्धि हुई तो दूसरी ओर शत्रुओं का साहस भी टूट गया था।

इन 'सराया' का महत्वपूर्ण उद्देश्य शान्ति स्थापित करना और मदीना की लूट-पाट का सिलसिला बंद करना था और यह कि 'दीन' के आवाहकों को संसार की व्यापकताओं में रिसालत की शिक्षाओं को फैलाना सम्भव हो सके और कहीं उन के साथ ग़द्दारी और ख़ियानत न की जा सके।

ये क़बीले हमारी जागीरदारी व्यवस्था के समान थे। बस्ती का सरदार एक आवाज़ में हज़ारों व्यक्तियों को जमा कर लेता था। ऐसे वातावरण में राजनैतिक स्वतन्त्रता की वार्ता निरर्थक थी। इसी प्रकार प्रथम युग के क़बीलों के सरदार अपने आस-पास अपने कुटुम्ब तथा नातेदारों की बड़ी भीड़ रखते थे ताकि सरदारों की इच्छानुसार युद्ध एवं सन्धि में एक दूसरे की सहायता कर सकें।

इन सरदारों में जब मूर्ख लोगों का बहुमत हो जाये और ये मूर्ख लूट-

पाट तथा मार-काट में व्यस्त हो जायें जैसा कि दुरैदा बिन सम्म: ने अपनी कविता में कहा है —

— हम पर प्रतिकार की भावना से आक्रमण किया जाता है हमारे खून से प्यास बुझाई जाती है, यदि हम कमज़ोर पड़ जायें या फिर हम प्रति-शोध भावना से आक्रमण करते हैं—

— इस प्रकार हम ने युग को अपने बीच दो भागों में बांट दिया है। कोई भी युग समाप्त होता है हम उसके आधे पर प्रभुत्वशाली रहते हैं।

तो क्या आप समझते हैं कि जिस वातावरण में जान-माल और विचारधारायें एवं विश्वास उचक लिये जाते हों दीन के आवाहक उन से पृथक रह कर काम कर सकते हैं ?

शान्ति एवं व्यवस्था बनाये रखने के लिए प्रयत्न करना एक अलग चीज़ है और ईमान एवं अक़ीदों के लिए किसी को विवश करना दूसरी चीज़ है। प्रथम का उद्देश्य समाज से फ़ित्नों तथा उपद्रवों को दूर करना है ताकि शान्ति का वातावरण तैयार हो सके और सब सुरक्षित रह सकें और उन को कोई सताने न पाये। परन्तु दूसरी चीज़ का सम्बन्ध कोड़े और तलवार के बल पर एक निश्चित अक़ीदा मानने पर लोगों को बाध्य करना है।

रसूलुल्लाह जब विभिन्न क्षेत्रों में सैनिक टुकड़ियां भेजते तो वे अपने साथ खुदा का कलाम (क़ुरआन) भी ले जाती थीं ताकि उस का पाठ होता रहे—

> '(हे नबी !) कह दो : हे लोगो ! मैं तो बस तुम्हारे लिए एक प्रत्यक्ष सचेत करने वाला हूं। तो जो लोग ईमान लाये और अनुकूल कर्म किये, उन के लिए क्षमा और सम्मानित आजीविका है, और जिन लोगों ने हमारी आयतों के बारे में हमें हराने के लिए विरोध-भाव से दौड़-धूप की, वही भड़कती आग (जहन्नम में रहने) वाले हैं।' —अल-हज्ज ४९-५१

अल्लाह की आयतों को अक्षम करने का प्रयत्न बड़ा खतरनाक अपराध है यदि यह अपराध मौखिक होता तो अधिक चिन्ता की बात न थी, परन्तु यहां तो स्वतन्त्र विवाद की ओट में खुराफ़ात को सत्य पर प्रभुत्वशाली बनाने का प्रयत्न किया जाता था और यह अपराध प्रभुत्व तथा शासित होने की नीयत से किया जाता था—

> 'और जब उन्हें हमारी प्रत्यक्ष आयतें सुनायी जाती हैं, तो तुम कुफ़ करने वालों के चेहरों पर नागवारी देखते हो, ऐसा जान पड़ता है कि अभी वे उन लोगों पर टूट पड़ेंगे जो उन्हें हमारी

आयतें सुनाते हैं।' —अल-हज्ज ७२

इस न्यायिक बुनियाद पर मुसलमानों ने अरब द्वीप में प्रचार एवं प्रसार का काम प्रारम्भ किया। जब से हुदैबिया सन्धि पर हस्ताक्षर हुए थे वे प्रचार कार्य में व्यस्त थे अत: इन्हें इस क्षेत्र में पूर्ण सफलता मिली। उन के युग में अनेकों क़बीले प्रवेश कर गये जबकि इस के विपरीत क़ुरैश के समय में किसी क़बीले ने प्रवेश नहीं किया। इस दिशा में परिस्थितियों की गति और उन का मोड़ इस्लाम के प्रभुत्वशाली होने तथा मक्का विजय की भूमिका बन गया।

अरब द्वीप में इस्लाम की ओर आह्वान ने रसूलुल्लाह को दूसरे कार्य से न रोका, वह दूसरा कार्य एवं ज़िम्मेदारी तमाम मानव जाति तक इस्लाम के सन्देश को पहुंचाना थी तथा अरब से बाहर के विश्व में इस्लाम का पैग़ाम देना थी।

अब प्रकाशमान द्वीप को और ऊंचा उठाना था ताकि उस की किरणें उन सुदूर क्षेत्रों तक पहुंच सकें जो दीर्घकाल से गुमराही में डूबे हुए थे —

'और यह क़ुरआन मेरी ओर 'वह्य' किया गया है ताकि मैं इस से तुम्हें और जिस किसी को यह पहुंचे सब को सचेत कर दूं। क्या वास्तव में तुम गवाही देते हो कि अल्लाह के साथ दूसरे इलाह (पूज्य) भी हैं? कहो: मैं तो इस की गवाही नहीं देता। कहो: वह तो बस अकेला इलाह है और तुम जो शिर्क करते हो मैं तो उस से विरक्त हूं।' —अल-अन्-आम १९

अब ईसाइयों और 'मजूसियों' (ईरान के अग्निपूजकों) की ओर ध्यान देना था ताकि उन तक एकेश्वरवाद का संदेश पहुंचाया जाये, इस्लाम उन के सामने पेश किया जाये और अल्लाह के आदेशों के सामने समर्पण कर देने की मांग की जा सके।

नरेशों से पत्रव्यवहार

अरब द्वीप के दक्षिणी क्षेत्रों के बड़े इलाक़े पर ईरानियों का प्रभुत्व था तथा उत्तरी भाग पर रूमी अधिकार जमाये नाग बने बैठे थे। और इन दोनों का धर्म अपने-अपने अधिकृत क्षेत्रों में फैल रहा था। इस प्रकार की बुनियाद बौद्धिक स्वतन्त्रता पर रखना निरर्थक है। फिर भी मजूसियत ईरानी अधिकृत क्षेत्रों पर शासित थी और ईसाइयत रोम के अधिकृत क्षेत्रों पर शासन कर रही थी। इन क्षेत्रों के अमीर शासित सरकारों की ओर से नियुक्त होते थे तथा उन्हों के आदेशों से पदच्युत किये जाते थे।

तथा अनादर भली-भांति महसू

संभव है कि किसी समय उ
की ओर आने की आकांक्षा की
क्योंकि इस से शासन कार्य
निकट शासन करना हर चीज़

क़ैसर की राजनैतिक बाज़ी
चाहा और उन के सामने स्वी
उपहार दिये तथा सादर मदीन

हज़रत दहिया ये समाचा
तो रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : र

---

१. बुखारी, मुस्लिम ।

नहीं है।' तथा उन दीनारों को गरीबों में बांटने का आदेश दिया।'[1]

रोम के अधीन अरब अमीरों (राजाओं) के सामने रसूलुल्लाह् ने जब अल्लाह का सन्देश भेजा और एकेश्वरवाद ग्रहण करने का निमन्त्रण दिया तो उन का उत्तर स्वयं क़ैसर के उत्तर से अधिक कठोर तथा कटु था।

दमिश्क़ के अमीर ने रसूलुल्लाह् के पत्र को पढ़ा जिस में लिखा था :

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'मुहम्मद अल्लाह् के रसूल की ओर से हारिस बिन अबीशिम्र ग़स्सानी के नाम। सलामती है उस व्यक्ति पर जो हिदायत की पैरवी करे, अल्लाह पर ईमान लाये और उस की तस्दीक़ करे। मैं तुझे आमंत्रित करता हूं कि अल्लाह जो अकेला तथा बिना साझी है, पर ईमान ले आ तो तेरा शासन बाक़ी रहेगा।'

जब उसने यह पत्र पढ़ा तो रोष में आकर पत्र ज़मीन पर फेंक दिया और चिल्लाने लगा : कौन मेरा शासन मुझ से छीन सकता है ?' और मुसलमानों से युद्ध की तैयारी करने लगा।

हारिस स्वयं सम्राट नहीं था जो इतना अभिमान कर रहा था। वह तो रूमियों का एक छोटा सा गवर्नर था ताकि उन के हितों की रक्षा करे और उन की आकांक्षाओं की पूर्ति करे तथा उन की छाया में निर्वाह करे। उस की हैसियत हमारे युग के किसी पूर्वी देश जैसी है जिसे साम्राजियों ने अपने हितों के लिए पाला पोसा हो ताकि वे उसे कमज़ोर क़ौमों के शोषण का माध्यम बना सकें। परन्तु उसकी ओर से उपहारों का भेजना यह बताता है कि वह शिष्ट व्यक्ति था।

रुम के एक अन्य प्रान्त 'बुस्रा' के गवर्नर के पास भी रसूलुल्लाह् ने पत्र भेजा था। पत्र वाहक हज़रत हारिस बिन उमैर अज़्दी थे। मार्ग ही में शुरह्बील बिन अम्र ग़स्सानी से भेंट हो गयी उस ने पूछा : क्या तुम मुहम्मद के पत्रवाहक हो ?' हज़रत हारिस ने कहा : 'हां !' और शुरह्बील ने उन की हत्या करने का आदेश दे दिया था।

जब यह सूचना मदीना में पहुंची तो मुसलमानों को बड़ा धक्का लगा उनके सामने यह बात खुल कर आ गयी कि रोम से न्यायिक एवं आदर सम्मान के सम्बन्ध स्थापित होने में बड़े कष्टदायक प्रयत्न करने होंगे।

मुक़ौक़िस ने रसूलुल्लाह् के पत्र के साथ अच्छा व्यवहार किया न वह ईमान लाया न उस ने दुर्व्यवहार किया। जब उस ने हज़रत हातिब रज़ि०

---

१ अल-अम्वाल

से आप सल्ल० का पत्र लिया तो उन से पूछा : यदि वह सच्चे नबी हैं तो उन्होंने अपनी क़ौम के विरुद्ध बद्दुआ क्यों नहीं की जब उस ने उन का विरोध और देश परित्याग किया ? हज़रत हातिब ने कहा : जब हज़रत ईसा को उन की क़ौम ने क़त्ल करने का इरादा किया था तो उन्हों ने श्राप क्यों नहीं दिया कि वह हलाक हो जाती ?

मुक़ौक़िस ने कहा निस्संदेह तू तत्वदर्शी है और तत्वदर्शी के पास आया है। उस ने रसूलुल्लाह के पत्र का उत्तर इस प्रकार दिया :

> 'यह पत्र मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह के नाम मुक़ौक़िस क़िब्त के सरदार की ओर से। सलाम हो आप पर। इस के बाद, मैं ने आपका पत्र पढ़ा तथा इस में जो लिखा था खूब समझ कर ध्यानपूर्वक पढ़ा। मैं विश्वास रखता हूं कि एक नबी आना शेष है मेरा विचार था कि कदाचित वह सीरिया में प्रकट हो। मैंने आप के पत्रवाहक का आदर सम्मान किया। दो दासियां जिन का क़िब्तियों में बड़ा सम्मान है, कुछ कपड़े तथा सवारी के लिये खच्चर उपहार स्वरूप भेज रहा हूं। वस्सलाम'

रसूलुल्लाह इन उपहारों को लेकर क्या करते ? आप ने उस की भावनाओं का आदर करते हुए उपहार स्वीकार कर लिये। यद्यपि आप की विचारधारा यह थी कि ईमान ही सब से उत्तम उपहार तथा श्रेष्ठ वायदा की हुई तथा प्रतीक्ष्य चीज़ है।

उचित होगा कि हम मुक़ौक़िस और हज़रत हातिब के मध्य हुई वार्ता का यहां वर्णन कर दें ताकि पाठकों को जानकारी हो सके कि ये प्रतिदिन समझ, विवेक, प्रतिभा, ज्ञान तथा बुद्धिमत्ता के विचार से कितने सशस्त्र थे ?

हज़रत हातिब ने नरेश को सम्बोधित करते हुए कहा :

> '....इस नबी ने लोगों को अल्लाह की ओर बुलाया, इस विषय में क़ुरैश सब से अधिक कठोर, यहूदी सबसे अधिक बैरी तथा 'नसारा' (ईसाई) सबसे अधिक निकट सिद्ध हुए। खुदा की क़सम ! हज़रत मूसा के द्वारा हज़रत ईसा की शुभ सूचना देना बिल्कुल वैसा ही है जैसे ईसा अलै० ने हज़रत मुहम्मद सल्ल० के आगमन की शुभ सूचना दी, दोनों में कोई अन्तर नहीं है। और हमारा तुम्हें क़ुरआन की ओर बुलाना ऐसा है जैसे तुम तौरात वालों को बाईबिल की ओर बुलाते हो। जो क़ौम किसी नबी को पाए वह उसकी उम्मत है उस का उत्तर-

आप सल्ल० ने देखा कि

चिकने तथा सपाट हैं तो आप

'यह दोनों इस प्रकार

वे बोले : 'हमारे 'रब' ने

सम्राटों को पूज्य समझन

तो 'इलाह' (पूज्य या उपास्य

अल्लाह के लिए विशेष हो ग

गुमराही के लक्षण लौट आये

---

१. बुखारी,
२. इब्न जरीर
३. यह शब्द अल्लाह के लिए बो
   करते हैं ।

नहीं देते ।

यदि कार्ल मार्क्स वर्तमान की सीमाओं में घिर जाता—जब कि उस के अनुयायी जेलों में डाले जा रहे थे—तो उस पर 'फ़ालिज' (**Paralysis**) का आक्रमण हो जाता और उस का तथा उस की विचार धारा का गला घुट गया होता। परन्तु वह अपने उद्देश्य के लिए इस आशा से काम करता रहा कि एक दिन अवश्य हुकूमतें उस के चिन्तन को समझेंगी।

यदि मिथ्या एवं झूठे चिन्तन तथा विचारधाराओं के मानने वालों की यह स्थिति हो सकती है तो इस बात पर आश्चर्य नहीं करना चाहिए कि 'वह्य' से सुशोभित ईश सन्देष्टाओं को सम्राटों और नरेशों से पत्र व्यवहार करते समय यह विश्वास प्राप्त होता है कि उन के द्वारा लाया हुआ 'हक़' (सत्य) एक दिन अवश्य प्रभुत्वशाली हो कर रहेगा। यही आशा रसूलुल्लाह के मन को प्रकाशमान किए हुए थी जब आप (सल्ल०) एक ओर जंगल के बद्दुओं को संमार्ग पर लाने का प्रयत्न कर रहे थे और दूसरी ओर अन्य जाति के लोगों के नेताओं और अग्रणी व्यक्तियों को इस बात पर तैयार कर रहे थे कि वे इस नव धर्म को समझें और उसे लगायें।

जिन खुराफ़ातों और हिमाक़तों ने 'नज्द' के बद्दुओं को बुद्धिहीन बना दिया था ठीक इन्हीं खुराफ़ातों ने ईरानियों के सम्राट किस्रा का दिमाग विकृत कर रखा था।

इस से क्या अन्तर पड़ता है कि बुखार सम्राट को आये या फ़क़ीर को! चिकित्सक एक ही प्रकार की औषधि तथा परहेज़ देगा।

रसूलुल्लाह ने समस्त मानव जाति को उन के मन एवं हृदय के रोगों से मुक्ति दिलाने का प्रयत्न किया और सब को वह उपचार बताया जिस से वे आरोग्य हो सकें और उन का स्वास्थ्य पुनः प्राप्त हो जाये :

> 'और हम उतारते हैं वह क़ुरआन जो ईमान वालों के लिए शिफ़ा और दयालुता है परन्तु ज़ालिमों का उस से घाटा ही बढ़ता है।'
> —बनी इस्राईल ८२

अतः आश्चर्य की बात नहीं यदि रसूलुल्लाह ने अपने उपचार गृह में काले तथा गोरे वर्ण वालों, स्वामी और गुलामों आदि सभी रोगियों को भरती कर लिया था! प्रायः ऐसा होता है कि सम्राट निर्णयों के पृष्ट पीछे रहते हैं और उन के आस पास सेवक, नौकर, चाकर, सेना, वैभव तथा दबदबा का चकित कर देने वाला दृश्य होता है परन्तु समस्त आँखें इन दृश्यों से धोखा नहीं खा सकती हैं। उपचारक या चिकित्सक

तथा राजदूतों के समाचार
परिणामों की प्रतीक्षा करें।
चला तो बड़े प्रसन्न हुए अं
व्यक्ति के कष्टों से बच जाअं
गया है। यह अफ़वाह मक्का
कुछ दिनों पश्चात् ही
दिलों तथा देशों को विजय
रसूलुल्लाह के प्रचारकों को
कि यमन, उम्मान और बह
कर मुश्रिकों की प्रसन्नता दुःख
ने अपने को समर्पित करने औ
कर दिया। विशेष रूप से

सिकुड़ता चला गया यद्यपि अनेकों क़बीले अपनी अज्ञानता पर अड़े रहे :

> 'वल्कि हम ने इन्हें और इन के पूर्वजों को जीवन सामग्री दी यहां तक कि आयु इन पर दीर्घ हो गई। तो क्या ये देखते नहीं कि हम भूमि को उस के किनारों से घटाते चले आते हैं। तो क्या ये जीतने वाले हैं? कह दो! मैं तो केवल 'वह्य' के द्वारा तुम्हें सचेत करता हूं। और वहरे पुकार को सुनते नहीं हैं जब कि उन्हें सचेत किया जाए।' —अल-अंबिया ४४-४५

उम्रतुल क़ज़ा

हिजरत का सातवां वर्ष समाप्त होने को था। अव समय आ गया था कि मुसलमान मक्का जा कर उम्रा करें जिस से उन्हें गत वर्ष रोक दिया गया था। एक वर्ष अनिच्छापूर्वक इंतिजार किया था, परन्तु इस बीच दीन की दावत के प्रयत्नों ने उन की आकांक्षाएँ पूरी कर दी थीं अव वे दोबारा क़ुरवानी के जानवर ले कर मक्का की ओर जा रहे थे। तथा अपने पीछे स्पष्ट विजय की शुभ सूचनाऐं लिए हुए थे।

मक्का वालों से यह दृश्य न देखा गया और वे हुदैविया सन्धि के अनुसार मक्का छोड़ कर पहाड़ों पर चले गये। रसूलूल्लाह् (सल्ल०) और आप के साथी उम्रा का 'अह्राम' बांधे मक्का में दाखिल हुए। क़ुरैशियों ने यह अफ़्वाह उड़ा दी कि मुसलमान बहुत कमज़ोर हो गये हैं और थकान से निढाल हैं।

> हज़रत इब्ने अब्वास से हदीसोल्लेख है कि 'वे लोग दारुन्नद्वा के निकट पंक्तिवद्ध हो कर खड़े हो गये ताकि आप को और आप के साथियों को देख सकें। जव रसूलुल्लाह् ने प्रवेश किया और अपनी चादर वग़ल से निकाली और दायां हाथ वाहर कर लिया और फ़रमाया : 'अल्लाह् उस व्यक्ति पर रहम करे जिस ने इन लोगों को आज स्वयं शक्ति दिखाई है।' फिर आप ने 'रुक्न' का चुम्बन किया और धीमे-धीमे दौड़ने लगे, आप के साथ सहाबीगण भी चुम्बन कर दौड़ने लगे यहां तक कि 'कावा' उन से छिप गया।

इस तीव्रता के साथ 'तवाफ़' (परिक्रमा) करने का उद्देश्य मुसलमानों की शक्ति का प्रदर्शन करना तथा उन की कमज़ोरी से सम्वन्धित अफ़्वाहों

---

१. इब्ने हिशाम।

को भुठलाना था। तत्पश्चात् यह तरीक़ा नियमानुसार 'सुन्नत' में दाखिल हो गया।

इब्ने हिशाम में है कि जब रसूलुल्लाह ने मक्का में प्रवेश किया तो अब्दुल्लाह बिन रवाहा रजि० आप सल्ल० की ऊंटनी की नकेल पकड़े हुए थे। वीरता सम्बन्धी कविता गाते जा रहे थे—

— काफ़िरों के बेटो! आप सल्ल० के मार्ग से हट जाओ कि प्रत्येक भलाई उस के रसूल में है—

— हे रब! मैं इस के कथन पर विश्वास रखता हूं मैं इस के स्वीकार करने में खुदा के हक़ का पालन समझता हूं।'

मुसलमान तीन दिन ठहरे। अन्ततः क़ुरैश के कुछ आदमी आये और उन्होंने निश्चित अवधि की समाप्ति की याद दिलाई और कहा कि आप तुरन्त चले जायें। आप सल्ल० ने फ़रमाया: 'यदि तुम लोग मुहलत दो तो मैं तुम्हारे बीच विवाह तथा वलीमा की दावत (विवाह भोज) कर लूं और तुम्हें सम्मिलित करूं।' —इब्ने हिशाम

उन्होंने उत्तर दिया—

'हमें आप के विवाह-भोज की आवश्यकता नहीं है, आप तुरन्त चले जायें।'

रसूलुल्लाह के चचा अब्बास ने मैमूना बिन्त हारिस रजि०, अब्दुल्लाह बिन अब्बास की खाला से आप का निकाह पढ़ा दिया। यह निकाह मक्का में हुआ परन्तु सुहाग रात 'सरिफ़' के स्थान पर बिताई। इस उम्रा के विषय में क़ुरआन की यह आयत उतरी—

'निःसन्देह अल्लाह ने अपने रसूल को सच्चा स्वप्न दिखाया जिस में हिकमत थी। तुम मस्जिदे हराम में ज़रूर दाखिल होगे—यदि अल्लाह ने चाहा—बे-खटके, अपने सिर के बाल मूंडे हुए और कतरे हुए, तुम्हें कोई डर न होगा। हुआ यह कि वह जानता था जो कुछ कि तुम नहीं जानते थे, तो उस ने उस के अतिरिक्त एक जल्द ही प्राप्त होने वाली विजय ठहरा दी।'

—अल-फ़त्ह २७

मौता का युद्ध

बुसा के गवर्नर ने रसूलुल्लाह के पत्रवाहक को क़त्ल कर के भयानक अपराध किया था, इस से भयंकर ग़लती और क्या हो सकती थी? अतः

सफलताएं मिली हैं अतः उन्हों
कर दी।

हज़रत अबू हुरैरा जो इस
'मौता' के युद्ध में सम्मिलित
हथियार, युद्ध की तैयारी, दीव
के जैसे आभूषण देखे वैसे पहले
गयीं। 'साबित बिन अरक़म'
सेना दल को देख रहे हो ? मैं

हज़रत अबू हुरैरा ने हुदैबि
हज़रत साबित ने उन से कहा
भी संख्याधिक्य के आधार पर

दोनों सेनाएं आमने-सामने

ये तीन हज़ार वीर खुले मैदान में मुक़ाबला करें और अपने से सत्तर गुना[1] अधिक शत्रुओं पर भारी हों तो यह एक निरर्थक बात होगी।

हज़रत ज़ैद बिन हारिसा ने रसूलुल्लाह का झण्डा ले कर युद्ध शुरू किया परन्तु शत्रुओं के तीरों से घायल हो कर शहीद हो गये। तत्पश्चात झण्डा हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब ने उठा लिया और उन्होंने शेरों के समान आक्रमण शुरू किया।

अबू दाऊद ने एक प्रत्यक्षदर्शी की गवाही रिवायत की है, मानो मैं हज़रत जाफ़र को आज भी देख रहा हूं कि उन्होंने अपने घोड़े को कूंचें काट दीं और शत्रु से साहसपूर्ण मुक़ाबला करते रहे यहां तक कि शहीद हो गये। युद्ध के समय उन की ज़ुबान पर ये कविताएं थीं—

— 'जन्नत और उस की निकटता कितनी पवित्र और रुचि कर है, और उस का पेय कितना शीतल एवं सुखदायी है—? रूमियों का प्रकोप निकट आ लगा है, वे इन्कारी हैं उन की वंशावलियां हम से अति दूर हैं—।

— मुक़ाबले के समय उन्हें मारना मेरे लिए अति आवश्यक है।'

कहा जाता है कि किसी रूमी ने उन पर इतना कड़ा वार किया कि उनके शरीर के दो अंश हो गये।

एक रिवायत में है कि जब लड़ते-लड़ते सीधा हाथ कट गया तो झण्डा बायें हाथ में ले लिया। जब बायां हाथ भी कट गया तो झण्डा गोद में ले लिया। अन्ततः शहीद हो गये। हज़रत जाफ़र ने यह शहादत केवल ३३ वर्ष की आयु में पायी।

जब वह शहीद हो गये तो अब्दुल्लाह बिन रवाहा ने झण्डा उठा लिया और आगे बढ़े। घोड़े पर सवार थे। जब देखा कि दबाव बढ़ गया है और घेराव तंग हो गया है तो कुछ संकोच हुआ फिर अपने दोनों साथियों की शहादत से दिल सन्तुष्ट हो गया और ये कविताएं गाने लगे—

— हे नफ़्स! यदि तू क़त्ल न हुआ तो भी तेरी मृत्यु अवश्य होगी। यह मृत्यु का वह स्नानगृह है जिसमें तुझे अवश्य दाखिल होना है—

— जिस चीज़ की तू ने कामना की थी वह तुझे मिल गयी अर्थात् शहादत का अवसर! यदि तू ने अपने पिछले दोनों साथियों का अनुकरण

---

१. शायद सत्तर गुना अधिकता के लिये प्रयोग किया है वरना संख्या के अनुसार ३३ गुना अधिक सेना थी अर्थात एक और ३३ का मुक़ाबला था।

—अनुवादक

किया तो तुझे शहादत अवश्य मिलेगी।'

ये गाते हुए घोड़े से उतर पड़े और उन के चचेरे भाई ने उन्हें एक गोश्त का टुकड़ा दिया कि 'इसे खा लो ताकि शक्ति प्राप्त हो तुम्हें कई दिन से खाने को कुछ नहीं मिला है। अब्दुल्लाह ने वह टुकड़ा ले लिया और उसे चूसने ही वाले थे कि युद्ध की हाहाकार की ओर ध्यान गया तुरन्त गोश्त का टुकड़ा फेंक दिया और कहा : 'हे नफ़्स ! (मन) लोग जिहाद कर रहे हैं और तू दुनिया में व्यस्त है ?'

तत्क्षण तलवार लेकर आगे बढ़े और लड़ते हुए शहीद हो गये।

इन तीनों वीरों के शहीद हो जाने के पश्चात् साबित बिन अक़रद ने झण्डा उठा लिया और उच्च स्वर से पुकारा, हे मुसलमानो ! अपने में से किसी अमीर (अध्यक्ष) पर सहमत हो जाओ।' लोगों ने कहा 'आप ही हमारे सेनाध्यक्ष हैं।' उन्हों ने उत्तर दिया : 'मैं इस के योग्य नहीं हूं।' अतः हज़रत खालिद बिन वलीद के सेनाध्यक्ष होने पर सब सहमत हो गये।

हज़रत साबित ने नेतृत्व स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। इस का कारण कायरता नहीं वरन् यह अहसास था कि हमारे बीच सुयोग्य व्यक्ति मौजूद हैं। इस भयानक मोर्चे पर इस्लामी झण्डे को गिरने न देना हज़रत साबित की वीरता तथा साहस का प्रमाण है। क्या ही अच्छा हो कि लोगों को जानकारी हो जाये कि उनकी योग्यता उन्हें वह स्थान तथा सम्मान प्रदान करती है जिस के वे पात्र होते हैं। यह उचित नहीं है कि उम्मत के ऊपर किसी बिवश, निरुपाय तथा निःसहाय व्यक्ति को लाद दिया जाये।

हज़रत खालिद ने झण्डा उठा लिया और युद्ध करने लगे और इस भयानक एवं चिन्ताजनक स्थिति से निकलने का प्रयत्न करने लगे।

पराजय का युद्ध बड़ा कष्टदायक, खतरनाक तथा भयानक होता है विशेष रूप से उस समय जब हज़रत खालिद रूमियों को इस नीति से सचेत नहीं करना चाहते थे। बुखारी ने स्वयं खालिद बिन वलीद से रिवायत की है कि मौता के युद्ध में मेरे हाथ से ९ तलवारें टूटी थीं।

हज़रत खालिद ने इस प्रकार की नीति अपनायी कि रूमियों को अधिक से अधिक हानि उठानी पड़े। तथा इस्लामी सेना को आम युद्ध न करना पड़े। हज़रत खालिद ने अपनी नीति से मुसलमानों को इस स्थिति से बचा लिया और बड़ी शक्तियों के साथ इस प्रथम जंग में उन की कीर्ति को बट्टा न लगने पाया।

विचित्र बात यह है कि रूमी इस युद्ध विधि से थक गये और उन्हें भारी हानि उठानी पड़ी बल्कि उन के कुछ दलों को मुंह फेर कर भागना

इस युद्ध में जो चीज़ सर्वाधिक

साफ़ था कि मुसलमानों की वीर

थी जिस से समकालीन क़ौमें प्र

प्रयास करने पर तत्पर किया कि

हास में दीर्घकाल से युद्ध करते

टिक न पाता था वे आज भी

मृत्यु से प्रेम और क़ुरबानी

पता न थी वरन् यह प्रभुत्व प्रा

बच्चों में भी पायी जाती थी

वाली उम्मत थी। उदाहरणस्व

वापस आयी तो बच्चों ने उन्हें

अल्लाह के मार्ग से भाग खड़े हु

'वाल बच्चों के विषय में तुम डरती हो ? जब कि मैं दुनिया तथा आखिरत में इनका अभिभावक हूं।' —अहमद

'मौता' के युद्ध के परिणामों से मुसलमानों की बदले की भावना ठण्डी पड़ गयी क्योंकि उत्तरी अरब के ईसाइयों ने उनसे युद्ध के लिए रूमियों से सहायता ली थी तथा इस युद्ध के द्वारा मुसलमानों ने हारिस बिन उमैर रजि० का बदला ले लिया था तथा अरब ईसाइयों के अत्याचारों और आतंकों से उन्हें छुटकारा मिल गया था। क्योंकि इस से उन के दिलों में अवश्य रौब बैठा होगा और उन्हें पता चल गया होगा कि इस्लाम के राजदूतों तथा पत्रवाहकों से यह व्यवहार मंहगा पड़ेगा अतः मुसलमानों की सैनिक गतिविधियां एक नये तथा व्यापक क्षेत्र की ओर मुड़ गयी हैं।

जातुस्सलासिल स्रोत पर

मौता का युद्ध जमादिलऊला ८ हिज्री में हुआ। इसके पश्चात् मुसलमानों को शान्ति प्राप्त न हो सकी क्योंकि सीरिया के इलाक़ों में शत्रुओं से भिड़न्तें होती रहीं। अतः हज़रत अम्र बिन आस रजि० को वहां के क़बीलों की दमनकारी गतिविधियों तथा उग्रवादिता को समाप्त करने के लिए भेजा गया परन्तु शत्रुओं की अधिक संख्या के कारण रसूलुल्लाह से अतिरिक्त सहायता मांगी तथा सहायता आने तक वह जातुस्सलासिल जलस्रोत पर ठहरे रहे।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने पहले मुहाजिरों की एक टुकड़ी हज़रत अबू उबैदा बिन जर्राह रजि० के नेतृत्व में अम्र बिन आस रजि० की सहायतार्थ भेजी जिस में हज़रत अबू बक्र और हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अनहुम भी थे। आप सल्ल० ने रवाना करते समय ताकीद कर दी थी कि आपस में मतभेद न करना।

जब ये लोग वहां पहुंचे, तो अम्र बिन आस ने हज़रत अबू उबैदा रजि० से कहा : 'आप लोग हमारी सहायतार्थ आये हैं अतः अमीर मैं हूं।'

अबू उबैदा : 'नहीं !' मैं अपनी टुकड़ी का अमीर हूं और आप अपनी टुकड़ी के।'

अम्र बिन आस : 'आप हमारी सहायता के लिए आये हैं ?'

अबू उबैदा कोमल हृदय तथा दुनिया के मामलों से रुचिहीन व्यक्ति थे, बोले :

'अम्र ! रसूलुल्लाह ने चलते समय मुझे ताकीद की थी कि आपस में मतभेद न करना। यदि तुम मेरी अवज्ञा करोगे तो भी

मैं तुम्हारा आज्ञापालन ही करूंगा।'

अतः उन्हों ने अम्र बिन आस का नेतृत्व स्वीकार कर लिया। हज़रत अम्र बिन आस ने नमाज़ पढ़ायी और समूची सेना का नेतृत्व अपने हाथ में ले लिया।

हज़रत अम्र बिन आस ने रोम के सहयोगी क़बीलों का पीछा किया और बल्ली, उज़रा, बिलक़ैन तथा 'तय' के क्षेत्रों में घुसते चले गये। मुसलमान जहां भी जाते तो उन से कहा जाता कि अमुक स्थान पर क़बीले एकत्र हो रहे हैं परन्तु उन लोगों को जब मुसलमानों की सूचना मिलती तो वे भाग खड़े होते। इन क़बीलों के समूहों में से केवल एक समूह से मुसलमानों की मुठभेड़ हो गयी। वे पराजित होकर भागे और भागते ही चले गये।

यद्यपि हज़रत अम्र ने इन बद्दुओं को काफ़ी दंडित कर दिया और उन के आतंक को समाप्त कर उन के जत्थों को तितर बितर कर दिया था परन्तु फिर भी किसी भयानक युद्ध का सामना नहीं करना पड़ा। इस प्रकार इस झड़प से मुसलमानों का दबदबा बैठ गया और उन की कीर्ति को जो धब्बा लग गया था वह धुल गया।

इसी यात्रा में हज़रत अम्र बिन आस को एक घोर सर्दी की रात में स्वप्नदोष (अहतलाम) हो गया। उन्हें शंका हुई कि नहाने से बीमार पड़ सकते हैं तो उन्हों ने 'तयम्मुम' करके नमाज़ पढ़ायी। कुछ सहाबा को भ्रम हुआ अतः उन्हों ने मदीना आकर रसूलुल्लाह से ज़िक्र किया कि अम्र ने 'जनाबत' (अपवित्रता) की दशा में नमाज़ पढ़ायी है ? रसूलुल्लाह ने उन से पूछा : 'हे अम्र! तुम ने अपने साथियों को अपवित्रता की दशा में नमाज़ पढ़ायी है ?' हज़रत अम्र ने वह कारण बता दिया जिस के कारण उन्हों ने स्नान नहीं किया था। अति तीव्र ठण्ड के कारण उन्हें बीमार पड़ने की आशंका थी और अल्लाह का यह कथन अपने तर्क में पेश किया :

> 'और अपने आप की हत्या न करो' निस्संदेह अल्लाह तुम पर दयावान है।'
> —अन-निसा २६

यह सुनकर रसूलुल्लाह हंस पड़े और उन से कुछ न कहा।

—अबू दाऊद, दारक़ुत्नी, हाकिम, बैहक़ी

इस मामले में हज़रत अम्र का 'इज्तिहाद' सही था क्योंकि पानी के सेवन से यदि हानि की शंका हो तो 'तयम्मुम' जायज़ है।

महान विजय

हुदैबिया सन्धि के पश्चात् मुसलमान इस्लाम की तब्लीग एवं प्रचार व प्रसार में लग गये। क़ुरैश से रुचिकर एवं अरुचिकर मामलों में उन से समझौता हो चुका था जिसके कारण जनसाधारण को स्पष्ट शिक्षाएं सीखने और समझने का अवसर मिल गया था।

परन्तु क़ुरैश अपनी नीति और पुराने ढंग पर अड़े हुए थे। वे इन महत्वपूर्ण घटनाओं को कोई महत्व देने के पक्ष में न थे जिन्हों ने अरब द्वीप की काया पलट दी थी तथा उसे समूचे विश्व में एक विशेष स्थान प्रदान कर दिया था।

इस निर्बुद्धिता तथा विवेकहीनता ने बड़ी-बड़ी मूर्खताऐं दिखायीं। जिसके पश्चात् हुदैबिया सन्धि निरर्थक होकर रह गयी। इसकी व्याख्या यह है कि क़ुरैश ने अपने सहयोगी बनू बक्र के साथ 'खुज़ाआ' क़बीले पर आक्रमण कर दिया। जो मुसलमानों का सहयोगी था। उन के कई आदमी क़त्ल कर दिये। बनू खुज़ाआ ने 'हरम' में शरण ले ली क्योंकि वे युद्ध के लिए तैयार न थे। परन्तु इन उपद्रवकारियों ने हरम का भी विचार न किया और बनू बक्र ने वहां भी उन के आदमी क़त्ल कर दिये। क़ुरैश बराबर बनू बक्र की हथियारों से सहायता करते रहे तथा उन्हें इस आतंक तथा हिंसा पर उत्तेजित करते रहे।

बनू खुज़ाआ ने हरम में शरण ले ली जहां उपद्रव तथा हिंसा करना जायज़ नहीं है। अतः बनू बक्र के सरदार नौफ़ल बिन माविया से बक्र खुज़ाआ ने कहा : 'हे बनू बक्र ! आज कोई नहीं है, तुम जी भरकर बदला ले लो।'

बनू खुज़ाआ बहुत परेशान हुए अतः उन्होंने अम्र बिन सालिम खज़ाई को रसूलुल्लाह की सेवा में मदीना भेजा ताकि पूर्ण स्थिति से अवगत करायें और सहायता मांगें। जब वह मदीना पहुंचा तो उस समय रसूलुल्लाह 'मस्जिदे नबवी' में मुसलमानों के बीच बैठे थे अम्र ने जाते ही आप के सामने यह कवितायें कहीं :

— हे रब ! मैं मुहम्मद (सल्ल०) को अपने पिता और उन के पिता 'अब्दुल मुत्तलिब' के बीच पुरानी प्रतिज्ञा याद दिलाने आया हूं—
— आप सन्तान के समान हैं और हम पिता के समान, हम सदा आप के आज्ञापालक रहे और कभी अवज्ञा या विमुखता न बरती—

इसके पश्चात् वह हज़रत अबू बक्र के पास इस मामले की सिफ़ारिश कराने गया तो उन्होंने इन्कार कर दिया। फिर उमर रज़ि० से मिला। उन्हों ने उत्तर दिया : 'मैं, और तुम्हारी सिफ़ारिश करूंगा ? ख़ुदा की क़सम ! यदि मुझे एक भी साथी न मिला तो मैं अकेला जिहाद करूंगा।'

तत्पश्चात् हज़रत अली रज़ि० की सेवा में गया तो उन्हों ने उत्तर दिया :

> 'ख़ुदा की क़सम ! इस विषय में रसूलुल्लाह ने कुछ निर्णय कर लिया है अतः अब किसी का साहस नहीं है कि इस विषय में कोई आप से कुछ कह सके ?' तथा उसे वापस लौट जाने की सलाह दी।

उधर अबू सुफ़्यान ने वापस जाकर क़ुरैश को अपनी असफलता की कहानी सुनाई और इधर रसूलुल्लाह ने सहाबा को गुप्त रूप से मक्का की यात्रा की तैयारी और हथियार ठीक-ठाक करने का आदेश दे दिया और आग्रह किया कि इसे गुप्त रखा जाये और इसका प्रकटन तथा उद्घोषण न किया जाये जब तक कि सेना उन के नगर में प्रवेश न कर जाये।

—इब्ने इस्हाक़

मुसलमानों ने आज्ञा पाते ही तैयारी शुरू कर दी। उन्हें अनुमान हो गया कि मक्का वालों से निर्णायक युद्ध का समय आ चुका है।

इस चिन्ताजनक स्थिति में एक विकट समस्या खड़ी हो गयी। प्रथम कालीन मुसलमानों में से एक साहब ने क़ुरैश को पत्र द्वारा सूचना दे दी कि हज़रत मुहम्मद तुम पर आक्रमण करने वाले हैं।

अभी आप ने अध्ययन किया है कि मुसलमान युद्धनीति को गुप्त रखने के कितने अभिलाषी थे। क्या इस नीति से उन की सफलता निकट न आ जाती ? और क्या उन की हानि कम से कम नहीं हो जाती ? बल्कि सम्भव था कि बिना रक्तपात के क़ुरैश आत्मसमर्पण कर देते।

क़ुरैश से पत्र व्यवहार करने का अर्थ यह था कि ख़ुदा और रसूल से युद्ध करने को तैयार किया जा रहा है तथा मुक़ाबले के साधनों तथा सामग्री में वृद्धि की जा रही है।

हज़रत अली रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह ने मुझे, ज़ुबैर रज़ि० को और मिक़दाद रज़ि० को भेजा कि तुम लोग निरन्तर चलते रहना यहां तक कि 'रौज़ा-ए-ख़ाख़' में तुम्हें एक औरत ऊंट पर सवार मिलेगी उस के पास मक्का के मुश्रिकों के नाम एक पत्र है, उसे छीन लाओ। वह कहते हैं कि हम चले और घोड़ों को बराबर दौड़ाते रहे यहां तक कि 'रौज़ा-ए-

ख़ाख़' में पहुंच गये और उस औरत को पा लिया। हम ने उस से ख़त मांगा तो उस ने कहा मेरे पास कोई पत्र नहीं है। हम ने कहा पत्र दे दे अपितु, हम तुझे वस्त्रहीन कर के तेरी तलाशी लेंगे तब उस स्त्री ने अपने बालों के जूड़े में से ख़त निकाल कर दिया और हम उसे ले कर रसूलुल्लाह की सेवा में उपस्थित हो गये।

पत्र देखा गया तो पता चला कि वह हज़रत हातिब बिन अबी बलतआ की ओर से मक्का के मुश्रिकों के नाम था जिस में उन्होंने रसूल्लाह की सैनिक तैयारियों की सूचना दी थी।

रसूलुल्लाह ने पूछा—

'हातिब क्या मामला है ?'

हातिब : 'हे अल्लाह के रसूल ! पकड़ में जल्दी न करें, क़ुरैश से मेरा कोई नाता नहीं है केवल सहयोगी सम्बन्ध हैं। मेरे परिवार जन आजकल मक्का में हैं जिन का कोई सिरधरा तथा पृष्ठ पोषक नहीं है इस के विपरीत मुहाजिरों की नातेदारियां हैं जिस के कारण उन के परिवारजन सुरक्षित हैं तो मैं ने सोचा क़ुरैश के साथ कोई उपकार कर दूं ताकि वे मेरे परिवार की सुरक्षा करें। ख़ुदा की क़सम ! मैं ने दीन से फिर कर (मुरतद हो कर) तथा इस्लाम के पश्चात कुफ़ से राजी हो कर यह कार्य क़तई नहीं किया है।'

रसूलुल्लाह : 'इस व्यक्ति ने सही कहा'।

हज़रत उमर रज़ि० : 'हे अल्लाह के रसूल मुझे आज्ञा दीजिए कि इस मुनाफ़िक़ की गर्दन उड़ा दूं।'

रसूलुल्लाह : 'यह व्यक्ति बद्र के युद्ध में मौजूद था और तुझे क्या मालूम कि अल्लाह ने बद्र में सम्मिलित होने वालों से फ़रमा दिया हो कि जो चाहो करो, मैं ने तुम्हें क्षमा कर दिया है।'

अल्लाह ने यह आयत उतारी—

'हे ईमान वालो ! तुम मेरे दुश्मनों को और अपने दुश्मनों को

करने जा रहे थे जिस में वे प

पुराने कौटुम्बिक नाते काम दे

न था अतः उन्होंने भविष्य में

बढ़ाने की कोशिश की।

परन्तु हातिब रज़ि० की

में किसी रिश्ते, नाते या वंश

शोभनीय है कि हम मित्रता

लिए शत्रुता की है और हम ने

और मालों को निःसंकोच बलि

यदि मुश्रिकों की ओर मि

तरीक़ा क्यों अपनाया जाता

है और जिस के कारण इस्ला

सकती है?

और रसूलुल्लाह रहमते आलम

'आज तुम्हारी कोई एक

सब दया करने वालों से

अबू सुफ़्यान ने उज़्र में कुछ

— 'क़सम है आप के जीवन क

था कि 'लात' (बड़ी मूर्ति

प्रभुत्वशाली हो जाये—

— तब मैं अन्धकारमय रात में

था, और अब ईश्वर की कृ

गया है कि मुझे हिदायत (

— एक मार्गदर्शन करने वाले

नहीं पाया और अल्लाह क

थे ताकि मामला पोशीदा रहे औ
समर्पण के सिवा उन के सामने
इन व्यक्तियों को आहट मिली
तीनों को पकड़ लिया गया । औ
चले । हज़रत अब्बास इन बन्दिय
लोग मेरी शरण में हैं । जब ये
ही में उन के सीने इस्लाम के लि
लगाई और प्रातः होते ही उस ने

इन लोगों ने क़ुरैश के लिए
दिया कि जो व्यक्ति अबू सुफ़या
दी गई, जो मस्जिदे हराम में प

---

१. इब्ने जरीर, हाकिम ।

अपने द्वार बन्द कर घरों में रहे उन्हें भी सुरक्षा दी गई।

—इब्ने हिशाम, इब्ने इस्हाक़

रसूलुल्लाह ने अबू सुफ़यान को यह सम्मान उस की सगर्व भावना की सन्तुष्टि के लिए प्रदान किया तथा इस से किसी को हानि भी न थी, न कोई परिश्रम की बात थी न इस मूल्यवान व्यक्ति के क़रीब करने से कोई नुक़सान था। रसूलुल्लाह ने रक्तपात तथा युद्ध से बचने के लिए अबू सुफ़यान के साथ यह नीति अपनाई। और हज़रत अब्बास से कहा कि अबू सुफ़यान को पहाड़ की चोटी पर खड़ा कर दो कि इस्लामी लश्कर की शान एवं प्रताप अपनी आंखों से देख लें ताकि मुक़ाबले की भावना बाक़ी न रहे।

हज़रत अब्बास कहते हैं कि मैं अबू सुफ़यान को ले कर पहाड़ की चोटी पर गया और उस स्थान पर खड़ा कर दिया जहां के लिए रसूलुल्लाह ने कहा था। प्रत्येक क़बीला अपना-अपना झण्डा ले कर चलने लगा। जब भी कोई क़बीला निकलता तो अबू सुफ़यान पूछता : 'यह कौन लोग हैं ?' मैं बताता : 'ये बनू सुलैम क़बीले के सिपाही हैं।'

अबू सुफ़यान : 'मुझे सुलैम से क्या मतलब ?' फिर दूसरा क़बीला निकला तो फिर पूछा : 'हे अब्बास ! यह कौन-सा क़बीला है ?' मैं ने कहा : 'ये मुज़ैना के लोग हैं, वह बोला मुझे मुज़ैना से क्या रुचि ?' यहां तक कि एक के बाद एक क़बीला गुज़रता रहा और प्रत्येक के विषय में वह पूछता था और जब मैं बताता तो कहता 'मुझे इस से क्या मतलब ?' यहां तक कि रसूलुल्लाह अपनी हरी टुकड़ी के साथ निकले जिसमें मुहाजिर और अन्सार दोनों सम्मिलित थे। इनमें से प्रत्येक लोहे में डूबा हुआ था। अबू सुफ़यान ने भयभीत हो कर पूछा : सुब्हानल्लाह ! (अल्लाह पाक है) ये कौन लोग हैं ?

मैंने कहा : 'ये मुहाजिरों और अंसार के बीच रसूलुल्लाह हैं।'

अबू सुफ़यान : 'इन लोगों को इस से पूर्व यह शक्ति प्राप्त न थी, ख़ुदा की क़सम हे अबुलफ़ज़्ल ! तुम्हारे भतीजे का शासन बहुत फैल गया है।'

अब्बास रजि० : 'हे अबू सुफ्यान ! यह तो नुबूव्वत का चमत्कार है ।'

अबू सुफ्यान : 'फिर तो कितनी अच्छी बात है ?'

—इब्ने हिशाम, इब्ने इस्हाक़

अबू सुफ्यान ने मक्का में विस्मयतापूर्ण एवं चकितावस्था में प्रवेश किया उसे अहसास था कि पीछे जो तूफ़ान आ रहा है वह अपने मार्ग के घास-फूस को बहा ले जायेगा। कोई चीज़ उन का मुक़ाबला न कर सकेगी। मक्का वालों ने दूर से विजेता सैनादल को आते देखा तो वे अपने सरदारों की ओर आदेशों की प्रतीक्षा में देखने लगे, सहसा अबू सुफ्यान की आवाज़ उच्च स्वर में गूंजी—

'हे क़ुरैश के लोगो ! यह मुहम्मद इतनी बड़ी सेना के साथ तुम्हारी ओर आ रहे हैं। इस से पूर्व तुम ने इतनी बड़ी सेना कभी न देखी होगी। अतः जो अबू सुफ्यान के घर में प्रवेश कर लेगा उसे शरण मिलेगी।'

उस की पत्नी 'हिन्द बिन्त उत्बा' मौजूद थीं। जब उस ने अपने पति से यह वाक्य सुने तो उछल पड़ी और उन की मूंछें पकड़ कर ऐंठने लगी और ज़ोर से चिल्लाई—

'इस मोटे और पतली पिंडली वाले को मारो ! इस ने क़ौम का ग़लत मार्गदर्शन किया है।'

अबू सुफ्यान ने अपनी पत्नी की ग़लतियों का कोई उत्तर न दिया और उसे पुनः डांटा : 'तेरा बुरा हो, धोखा न खा, वह तुम्हारे पास इतना बड़ा लश्कर ला रहे हैं कि कभी तूने ऐसा लश्कर न देखा था, जो व्यक्ति अबू सुफ्यान के घर में चला जायेगा उसे शरण मिल जाएगी।'

लोगों ने कहा : 'तेरा बुरा हो ! तेरे घर से हमें क्या लाभ पहुंचेगा।'

अबू सुफ्यान निरन्तर चिल्लाते रहे, 'और जो अपने घर के द्वार बन्द कर लेगा वह भी सुरक्षित रहेगा। और जो काबा में दाख़िल हो जाएगा उसे भी शरण मिलेगी।' अतः लोग अपने घरों और 'ख़ाना काबा' की ओर दौड़ पड़े।

देखते ही देखते 'उम्मुलक़ुरा' (केन्द्रीय बस्ती अर्थात मक्का) की गलियों में सन्नाटा छा गया। लोग निश्चित स्थानों की ओर चले गए। पुरुष द्वार बन्द कर के उन के पीछे छिप कर बैठ गए या मस्जिदे हराम (काबा) में भीड़ की भीड़ एकत्र हो गई कि देखें अब क्या होगा ?

जब यह विजेता लश्कर नगर में प्रवेश कर रहा था उस समय

रसूलुल्लाह अपनी ऊंटनी पर सवार थे आप ने अपना सिर विनम्रतापूर्ण ईश्वर से विनय करते हुए झुका दिया था लगता था कि कजावे से लग जाएगा। आजज़ी और नम्रता से आप बिछे जा रहे थे। आप की दाढ़ी कजावे के बीच के हिस्से से लग रही थी।'

विजय का वह आदर्श मक्का में दाख़िल हो रहा था जिस के एक इशारे से मक्का की कोई चीज़ सुरक्षित न रह सकती थी। इस स्पष्ट विजय के नायक को भूतकाल की जंगें याद आ रही थी। किस प्रकार अपने देश से निकाला गया ? और आज किस प्रकार वह विजेता के रूप में प्रवेश कर रहा था। कितनी सम्मानपूर्ण तथा प्रतिष्ठित थी आज की प्रातः जो अल्लाह ने उन्हें प्रदान की थी। वे समस्त नेमतें जितनी याद आ रही थीं कजावे पर आप का सिर उतना ही अधिक झुकता जा रहा था। कुछ लोगों के सीनों में कुछ दूसरे प्रकार की भावनाएं भी उबल रही थीं।

'औस' क़बीले के सरदार हज़रत सअ्द बिन उबादा रज़ि० को मक्का वालों की शत्रुता याद आने लगी तथा उन के अत्याचार उन की अवज्ञापूर्ण हरकतें मन में ताज़ा हो गयीं फिर यह भी सोचा कि आज मुझे शक्ति प्राप्त है तो निःसंकोच ज़ुबान से निकला : 'आज युद्ध का दिन है, आज काबा हलाल कर दिया जाएगा, आज अल्लाह ने क़ुरैश को अपमानित किया है।'

जब यह बात रसूलुल्लाह को मालूम हुई तो आप ने फ़रमाया—

'नहीं ! वरन् आज अल्लाह ने काबा को आदर तथा महानता प्रदान की है। आज अल्लाह ने क़ुरैश को सम्मानित किया है।'

फिर आदेश दिया कि झण्डा सअ्द बिन उबादा से ले कर उन के पुत्र क़ैस बिन सअ्द रज़ि० को दे दिया जाए ताकि लोगों के बीच उन्हें शक्ति न मिले।

रसूलुल्लाह ने मक्का में ऊपरी भाग से प्रवेश किया (बुख़ारी) तथा अन्य सेना दलों के कमाण्डरों को आदेश दिया कि जो तुम से युद्ध करे तुम केवल उसी से लड़ो। (इब्ने हिशाम) अतः समस्त क़बीले मक्का की अन्य दिशाओं से दाख़िल हुए।

हज़रत ख़ालिद बिन वलीद ने मक्का के निचले भाग से प्रवेश किया। उधर क़ुरैश के कुछ लोग मौजूद थे जिन्हें यह आत्मसमर्पण किसी प्रकार भी स्वीकार न था अतः वे 'ख़न्दमा' के स्थान पर एकत्रित हो गए। जिन

---

१. इब्ने इस्हाक़, इब्ने हिशाम।

का नेतृत्व इक्रमा बिन अबू जहल, सहल बिन अम्र और सफ़वान बिन उमैया ने किया। परन्तु इस महान वास्तविकता ने उन्हें छिन्न-भिन्न कर दिया तथा हज़रत ख़ालिद को देख कर वे भाग गए।

एक रुचिकर घटना यह घटी कि क़बीला बनू बक्र का एक व्यक्ति हिमास बिन खालिद मुसलमानों से युद्ध हेतु हथियार जमा करता रहा था। जब उस की पत्नी उसे हथियार सजाते देखती तो पूछती : 'यह सब किस लिए है ?' वह कहता : 'मुहम्मद और उस के साथियों से लड़ने के लिए।' एक दिन उस की पत्नी बोली : 'ख़ुदा की क़सम ! मुहम्मद और उस के साथियों के मुक़ाबले में कोई चीज़ ठहर नहीं सकती है।' हिमास बोला, ख़ुदा की क़सम ! मुझे आशा है कि मैं कुछ न कुछ तेरी आशंका पूरी कर दूंगा।' तथा ये कविताएं भी हैं—

> 'यदि ये लोग पराजय मान लें तो मुझे कोई परवाह नहीं, ये पूर्ण हथियार हैं, ये भाले हैं, ये तेज काट करने वाली द्विधारी तलवारें हैं।'

जब विजय का दिन आया तो यही हिमास, इक्रमा के साथियों के साथ मिल कर मुसलमानों से लड़ा, जब देखा कि मुश्रिक हज़रत खालिद की टुकड़ी के सामने से भाग रहे हैं तो यह भी भाग खड़ा हुआ और अपने घर में घुस गया और पत्नी से बोला कि द्वार बन्द कर ले।

पत्नी ने उस से व्यंगपूर्ण कहा : 'कहां गयी तुम्हारी प्रतिज्ञा ? और बढ़-चढ़ कर जो हांकते थे वह साहस कहां गया ?' तब उस ने लज्जित हो कर ये कविताएं कहीं—

— क्या ही अच्छा होता कि तुम देखतीं कि 'ख़न्दमा' के युद्ध में से सफ़्वान भाग गया और इक्रमा भी भाग गया।

— अबू यज़ीद (सुहैल बिन अम्र) शोक से बेसुध खड़ा था और मुसलमानों की तलवारें उन का स्वागत कर रही थीं।

— वे प्रत्येक पिंडली और खोपड़ी का सफ़ाया कर रही थीं और केवल भय तथा आतंकपूर्ण आवाज निकल रही थी।

— चारों ओर हाहाकार मची थी कोई चीज इस कायरता को समाप्त नहीं कर सकती।'

मक्का शान्त हो गया। उस के सरदारों तथा उन के अनुयायियों ने सिर झुका दिया। उस की गलियों में अल्लाह का कलिमा बुलंद हुआ और अल्लाह के रसूल खाना-काबा का तवाफ़ करने निकले। आप ने समस्त मूर्तियों को तोड़ दिया और अपनी कमान से उन्हें उलट-पलट कर दिया

तथा वे धरती पर औंधे मुंह गिर पड़ीं।

कुछ ही क्षण पहले ये मूर्तियां 'माबूद' (पूज्य) बनी बैठी थीं और अब मिट्टी पत्थर और टुकड़ों के ढेर थे जिन्हें रसूलुल्लाह तोड़ रहे थे और क़ुरआन की यह आयत पढ़ते जाते थे—

> 'सत्य आ गया और असत्य मिट गया। वास्तव में असत्य तो मिटने वाला ही होता है।' —बुख़ारी, मुस्लिम

फिर आपने मूल 'काबा' के खोलने का आदेश दिया। उसमें चारों ओर चित्र ही चित्र थे। जिन में हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम के दो चित्र शकुन लेते हुए भी थे। रसूलुल्लाह ने मुश्रिकों पर शोक एवं रोष व्यक्त करते हुए फ़रमाया : अल्लाह इन्हें बर्बाद करे, ख़ुदा की क़सम! इन दोनों ने कभी तीरों से शकुन नहीं लिया।[1] और इस प्रकार की समस्त चीज़ों को मिटा दिया।[2] यहां तक कि जब ख़ाना-काबा मूर्तियों से पाक हो गया तो क़ुरैश की ओर ध्यान दिया जो पंक्तिबद्ध खड़े थे और अपने परिणाम की प्रतीक्षा कर रहे थे। आपने चौखट के दोनों पट पकड़े और फ़रमाया—

> 'एक अल्लाह के अतिरिक्त कोई पूज्य नहीं, उसने अपना वायदा सच्चा कर दिया, अपने बन्दे की सहायता की और अन्य समस्त दलों तथा गिरोहों को अकेले पराजित किया।'

फिर फ़रमाया :

> 'हे क़ुरैश के लोगो! क्या तुम जानते हो कि मैं तुम्हारे साथ क्या व्यवहार करने वाला हूं?'

उन्होंने तुरन्त कहा :

> 'आप सुशील भाई हैं तथा सुशील पिता के पुत्र हैं।'

आप ने फ़रमाया :

> 'मैं तुम्हें वही उत्तर देता हूं जो यूसुफ़ अलै० ने अपने भाइयों को दिया था : 'आज तुम्हारी कोई पकड़ नहीं, जाओ तुम सब मुक्त हो।''[3]

जिस समय रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ख़ाना काबा में मूर्तियों को नष्ट कर रहे थे, फ़ुज़ाला बिन उमैर आप को अवसर पाते ही क़त्ल कर देने की ताक में लगा हुआ था।

रसूलुल्लाह की उस पर नज़र पड़ी, आप ने तत्क्षण उस के इरादे को

---

१. बुख़ारी। २. अहमद। ३. इब्ने इस्हाक़।

भांप लिया परन्तु जो विजय अल्लाह ने आप को प्रदान की थी उस से आप इतना उन्मत्त थे कि उस के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं कि बल्कि उस से बुला कर पूछा : 'तुम्हारे मन में क्या बात चल रही है ?' उस ने कहा : 'कुछ नहीं, मैं अल्लाह का स्मरण कर रहा था।' यह सुन कर रसूलुल्लाह को हंसी आ गयी और फ़रमाया : 'अल्लाह से क्षमा याचना करो। 'आप ने उस से अत्यन्त दया पूर्ण व्यवहार किया और उस के सीने पर अपना हाथ रख दिया। वह व्यक्ति यह कहते हुए वहां से चला गया : 'जैसे ही रसूलुल्लाह ने मेरे सीने से हाथ हटाया तो मेरा हृदय आप के प्रेम से इतना भर चुका था कि अल्लाह की सृष्टि में आप सल्ल० से अधिक मुझे कोई चीज़ प्यारी नहीं थी।' —इब्ने हिशाम

हज़रत फ़ुज़ाला का इस्लाम प्रवेश से पूर्व एक स्त्री से प्रेम था, जब वह वापस जा रहे थे तो मार्ग में उस से भेंट हुई उस ने कहा : आओ फ़ुज़ाला बैठें, मन बहलाने के लिए कुछ बातें करें। आप यह कहते हुए चले गए :

— 'वह कहती है, आओ ! बैठें बातें करें, मैं ने कहा 'नहीं' ! अल्लाह और इस्लाम अब इस की अनुमति नहीं देते—।'

— 'यदि तू ने मुहम्मद सल्ल० और उन के क़बीले को विजय के समय देखा होता जब कि समस्त मूर्तियां तोड़ी जा रही थीं—।'

— 'तो तुझे जानकारी होती अल्लाह कि दीन कितना प्रकाशमान है ?' और शिर्क के चेहरे पर कितनी कलौंस छायी हुई है—।'

हज़रत बिलाल काबा को छत पर चढ़ गये और 'नमाज़' के लिए 'अज़ान' दी। मक्का वालों ने इस नयी आवाज़ को बड़े उत्कर्ण के साथ सुना जैसे वे निद्रावस्था में हों। ये शब्द अन्तरिक्ष में गूंज कर शैतानों के दिलों को सन्त्रस्त कर रहे थे। इस आवाज़ को सुन कर उन के सामने दो ही मार्ग थे या तो पलायन कर जायें या ईमान ले आयें।

'अल्लाहु अक्बर, अल्लाहु अक्बर, अल्लाहु अक्बर, अल्लाहु अक्बर,' की पुकार अन्तरिक्ष में राग उत्पन्न कर रही थी।

ये उच्च स्वर की आवाजें मनुष्य को उस का सर्वप्रथम जीवन लक्ष्य और मरणोपरान्त लौटने के स्थान का स्मरण करा रही थीं। मानवता कितने छोटे छोटे तथा हीन उद्देश्यों की ओर भटक गयी थी ? जिन्हों ने उसे जंगली जानवर के समान बना दिया था तथा उस को सर्वां अपनी ओर आकर्षित कर लिया था तथा वह छिलकों की ओर दौड़ रही थी और ये उद्देश्य उस की समस्त भावनाओं तथा अनुभूतियों पर आच्छादित थे।

जाये इसी कारण मुअज्जिद पुनः अभिप्रेत तथा निश्चित कार्य प्रणाली की ओर आकृष्ट करते हुए कहता हूं :

अल्लाहु अक्बर, अल्लाहु अक्बर (अल्लाह सब से महान है)
ला इलाह-इल्लल्लाह (अल्लाह के सिवा कोई उपास्य नहीं)

अजान के ये शब्द सुधार सन्देश के द्योतक हैं। इसी कारण हदीस में है कि जब मुसलमान अजान की आवाज सुनें तो अन्त में इस प्रकार कहें :

'हे इस पूर्ण सन्देश तथा क़ायम नमाज के रब ! मुहम्मद (सल्ल०) को 'वसीला' तथा श्रेष्टता प्रदान कर और उन्हें उस 'मुक़ामे महमूद' (प्रशंसित स्थान) पर खड़ा कर जिस का तू ने उन से वायदा किया है और तू वचन भंग नहीं करता है।'

—बुखारी

मक्का विजय के दिन हमें उन महापुरुषों को न भूलना चाहिए जो यह महान् विजय न देख सके। काबा की छत पर दी जाने वाली हज़रत बिलाल की अजान न सुन सके, मूर्तियों को मिट्टी में लथड़ा हुआ न देख सके तथा इन के पुराने पुजारियों का हथियार डालना और इस्लाम में प्रवेश का दृश्य न देख सके। कुफ्र तथा इस्लाम के बीच इस लम्बे संघर्ष के दौरान या तो वे मृत्युग्रस्त हो गए या शहीद कर दिये गए थे। परन्तु आज जो विजय प्राप्त हुई है इस में उन का भी हिस्सा शामिल है तथा उन्हें उस अल्लाह के यहां भरपूर प्रतिफल मिलेगा जो अन्याय नहीं करता।

यह आवश्यक भी नहीं कि सत्य एवं असत्य के बीच इस संघर्ष में प्रत्येक सैनिक अन्तिम परिणामों तक जीवित रहे। प्रथम चरण ही में मृत्यु हो सकती है तथा अस्थायी पराजय में वह शहीद भी हो सकता है जैसा कि हज़रत हम्ज़ा (रज़ि०) और उन के साथियों के साथ हुआ।

सत्य के आवाहकों को क़ुरआन बताता है कि उन्हें दुनिया के बजाये आख़िरत में पूरा बदला मिलेगा। वहां तो मोमिनों तथा काफ़िरों को पूरा पूरा बदला दिया जायेगा :

तो (हे नबी !) तुम धैर्य से काम लो। निश्चय ही अल्लाह का वायदा सच्चा है। फिर जिस (बुरे परिणाम की हम इन्हें धमकी दे रहे हैं उस में से कुछ तुझे दिखा दें, या (इस से पहले) हम तुम्हें उठा लें, इन्हें तो हमारी ओर पलटना होगा।'

—अल-मोमिन ७७

रसूलुल्लाह सल्लल्लहु अलैहि व सल्लम ने रमज़ान के महीने में मक्का

अपनी युद्ध नीति से क़ुरैश को बे-
उन्हें उन के घरों में जा दबाया। उ
वे न तलवार के करतब दिखा
जब उन की आंख खुली तो साम
लोग सोचने लगे कि सफलता इ
उस से पृथक न होगी।

---

१. मक्का में नमाज़ क़स्र करना प्र
दिन रहे और दो रकअ़त नमा
प्रमाणित है।

हुनैन का युद्ध

मक्का के आस पास के बड़े बड़े क़बीलों ने 'मक्का विजय' के विषय में बड़ी तीव्र प्रक्रिया व्यक्त की। वे मुसलमानों के विरुद्ध जमा होने लगे। उन में 'बनू हवाज़िन' और 'बनू सक़ीफ़' आगे आगे थे जिन का नगर 'ताइफ़' मक्का और मदीना के पश्चात् बड़ा नगर समझा जाता था।

इन क़बीलों के सरदार हवाज़िन के सरदार मालिक बिन औफ़ के पास एकत्र हुए और सर्वसहमति से तय किया कि मुसलमानों को इस विजय के पश्चात् व्यवस्थित होने से पूर्व ही उखाड़ फेंकें तथा मूर्तिपूजा के जो चिन्ह शेष हैं उन्हें मुसलमानों के नष्ट करने से पहले ही हम उन पर धावा बोल दें और उन्हें छिन्न भिन्न कर दें।

मालिक बिन औफ़ वीर एवं साहसी होने के साथ कमज़ोर राय और ग़लत सलाहकार था। अतः युद्ध को जाते समय उस ने अपनी क़ौम को आदेश दिया कि अपनी स्त्रियों, बच्चों और दौलत को साथ ले कर चलो ताकि तुम इन की सुरक्षा के कारण भागने न पाओ और जान तोड़ युद्ध करो।

दुरैद बिन सम्मा नामक व्यक्ति ने—जो बड़ा साहसी तथा अनुभवी था आपत्ति उठायी और कहा, यदि पांव उखड़ जायें तो कोई चीज़ रोक नहीं सकती है। रणक्षेत्र में केवल भाले और तलवारें काम देती हैं। यदि पराजय हुई तो स्त्री, बच्चों और दौलत के कारण अधिक अपमान सहना पड़ेगा।

मालिक ने इस आपत्ति पर कोई ध्यान नहीं दिया और अपनी राय पर जमा रहा।

जब मुसलमानों को अपने शत्रुओं की बग़ावत की सूचना मिली तो उन्हों ने अपने गुप्तचर भेजे। अबू दाऊद कि रिवायत है कि एक व्यक्ति रसूलुल्लाह की सेवा में उपस्थित हुआ और बोला: 'मैं आप के पास से गया और अमुक पहाड़ पर पहुंचा तो देखा कि बनू हवाज़िन अपनी स्त्रियों, माल सम्पत्ति तथा सेना दल के साथ हुनैन के स्थान पर जमा हैं।' यह सुन कर रसूलुल्लाह मुस्कुराये और फ़रमाया:

> 'यदि अल्लाह ने चाहा तो ये समस्त चीज़ें मुसलमानों के लिए ग़नीमत का माल होंगी।' —अबू दाऊद

मक्का अति सरलता से विजय हो गया। आम मुसलमानों का विचार था कि कुफ़ अन्तिम क्षणों का मेहमान है अतः कोई उल्लेखनीय बाधा न

होगी उधर इस्लाम में नवीन प्रवेशकर्ता सोच रहे थे कि इस्लाम के मार्ग में अब कोई चीज बाधक न बन सकेगी फिर भी आवश्यक तैयारी के साथ मुसलमान युद्ध के लिए निकले परन्तु वे नियमानुसार तैयारी न कर सके थे।

मुसलमानों ने अल्पसंख्या में होते हुए भी बड़े बड़े युद्ध जीते थे। परन्तु आज उन की संख्या इतनी अधिक थी कि इस से पूर्व कभी देखी न गयी थी तो वे कैसे पराजित हो सकते थे? कहा जाता है कि जब अबूबक्र (रजि०) ने मुस्लिम सेना की ओर देखा तो कहने लगे : 'आज हम अल्प-संख्या के कारण पराजित नहीं हो सकते !'

उस समय मुसलमानों की संख्या मक्का वालों सहित १२ हजार के लगभग थी।

पराजय

आत्मशक्ति तथा आत्म विश्वास के बल पर मुसलमानों की सेना हुनैन की घाटी में पहुंची। मालिक बिन औफ़ और उस के साथी पहले ही घाटी के सैनिक ठिकानों तथा मोर्चों पर अधिकार कर चुके थे। तथा घाटियों और सुरक्षित स्थानों पर मुसलमानों के स्वागत के लिए तैयार थे।

अग्रणी सेना दल घाटी की ओर बढ़ा चला जा रहा था, उसे घाटी में छिपे शत्रु के विषय में कोई जानकारी न थी। घाटी नीचे को ओर ढलवां थी अतः जैसे जैसे व्यक्ति उस में जाएगा उस के पग शीघ्रता से बढ़ते जायेंगे मानो किसी खड्ड में गिरा जा रहा हो।

जब मुसलमानों की सेना घाटी में जमा हो गयी तो सहसा उन पर सुरक्षित स्थानों से तीरों की वर्षा होने लगी। जब अंतरिक्ष मेघाच्छादित हो तो प्रातः का झुटपुटा देर तक रहता है। इस संकटीय स्थिति से सेना का अग्रणीत दल आतुर हो गया तथा रात के अंधेरे और वास्तविक स्थिति की जानकारी न होने के कारण उन्हें पीछे हटने के अतिरिक्त और कोई उपाय न सूझा।

भय की यह लहर बड़ी तेजी से फैली और सुव्यवस्थित पंक्तियों को अस्त-व्यस्त कर दिया।

मालिक बिन औफ़ के सेनानियों ने इस स्थिति से लाभ उठाते हुए बढ़ कर आक्रमण कर दिया और उस के सवारों ने मुसलमानों को बुरी तरह खदेड़ दिया। परिणामस्वरूप मुसलमान पराजित हो कर इस प्रकार भागे कि एक को दूसरे से खैरियत पूछने तक का होश न रहा।

मक्का के सरदार इस पराजय से प्रसन्न हो गए। कुछ लोग पुनः कुफ़ की ओर लौट गए। अबू सुफ़यान तुरन्त बोल पड़ा : 'इन की पराजय समुद्र से पहले नहीं लौटेगी।' कोई आश्चर्य की बात नहीं है यदि उस ने ऐसा कहा हो ? क्योंकि कुफ़ के जमाने के वे तीर जिन से वह शकुन लेता था अब भी उस के त्रोण में रखे थे।

कल्दः बिन जुनैद ने कहा : 'ठीक है ! आज सारा नशा उतर गया।' सफ़वान बिन उमैया ने यह सुनते ही, यद्यपि वे मुस्लिम नहीं थे—कहा : 'खामोश हो ! अल्लाह तेरे मुंह को बन्द करे, मेरे निकट हवाज़िन क़बीले से प्रशिक्षण प्राप्त करने से अधिक प्रिय है कि क़ुरैश का कोई व्यक्ति मेरा पृष्ठपोषक तथा अभिवावक हो।'

रसूलुल्लाह ने अपने दाहिने ओर देखा और इस भागने से क्रोधित होकर पुकारा :

'हे लोगो ! कहां हो, मेरे पास आओ, मैं अल्लाह का रसूल हूं,
मैं मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह हूं।'
कहीं से कोई उत्तर न मिला। दशा यह थी कि ऊंट एक दूसरे पर चढ़े जा रहे थे और अपने सवारों को ले कर भाग रहे थे।
—इब्ने हिशाम

रसूलुल्लाह ने देखा कि हवाज़िन क़बीले का एक व्यक्ति लाल ऊंट पर सवार लम्बा भाला तथा काला झण्डा लिए इन भागने वालों का पीछा कर रहा है और हवाज़िन उस का साथ दे रहे हैं। जब वह किसी भागने वाले को पाता तो अपने नेज़े (भाले) से उस का काम तमाम कर देता यदि वह बच जाता तो पीछे वाले मार देते। इस खेद जनक पराजय में जिन लोगों का हाथ था उन में मक्का के 'तुलक़ा' (मुक्त किये हुए लोग) तथा बद्दू चरवाहे थे।

रसूलुल्लाह अपने स्थान पर सन्तुष्ट एवं दृढ़ता पूर्ण खड़े रहे। मुहाजिरों तथा आप के परिवार जन आप को घेरे हुए थे। आप ने इस्लाम के दामन से इस धब्बे को मिटाने का उपाय खोजना शुरू किया। तथा अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब को आदेश दिया कि मुहाजिरों और अंसारियों को पुकारें उन्हों ने उच्च स्वर में पुकारा :

'हे अंसार के गिरोह !'
'हे हुदैबिया में बैअत करने वालो !'

अल्लाह ने उनके मन में यह बात उतार दी कि वह अक़ीदे के आवाहकों को बुलायें क्योंकि यही लोग संघर्ष कर सकते थे और उन्हीं के द्वारा विचार

रसूलुल्लाह ने ग़नीमत को
समझा ताकि बन्दियों के नातेदा
जाये और जो कुछ उन्हों ने खो
आपने कई दिन प्रतीक्षा क
मक्का के बड़े-बड़े नेता ह
उन के दिल परखने हेतु ग़नी
अधिक दिया।
अबू सुफ़यान को १०० ऊं
उसने कहा : मेरा बेटा माविय
माविया को भी दिया गया। फि

प्रेमी मुसलमानों ने अपने जान-तं

टुकड़े कर दिया था।

परन्तु आज इस्लाम स्वीकार

रसूल उन के लिए दुनिया के खज़ा

कि मैं अपने लिए कुछ भी बचा क

दौलत से भरी होतीं तो वे भी उन्

सत्य तो यह है कि इन लोगों

मोहित करने हेतु आप ने रोष ए

शीलता का तरीक़ा अपनाया।

---

१. इब्ने हिशाम

२. अहमद, बैहक़ी, बुखारी तथा हा

यदि 'हुनैन' ही के अवसर पर इन की 'कारगुज़ारी' की जांच की जाती तो उन्हें बड़ी हानि पहुंच सकती थी।

इमाम अह्मद की रिवायत के अनुसार मुस्लिम सवार अबू तल्हा रज़ि० ने उम्मे सुलैम से मुलाक़ात की, उस समय उनके हाथ में एक खंजर था, पूछा : 'यह किस लिये है ?' बोलीं : यदि कोई मुश्रिक मेरे पास आया तो उसका पेट फाड़ दूंगी।'—यह घटना हुनैन युद्ध की है—अबू तल्हा ने रसूलुल्लाह से अर्ज़ किया कि आप ने सुना नहीं कि उम्मे सुलैम क्या कह रही थीं ? यह सुन कर रसूलुल्लाह हंस पड़े। उम्मे सुलैम ने अर्ज़ किया :

> 'हे अल्लाह के रसूल ! इन 'तुलक़ा' को क़त्ल कर दीजिये,
> जिन्हों ने आप को पराजित कराया है।'

आप ने फ़रमाया :

> 'हे उम्मे सुलैम ! अल्लाह काफ़ी है और उसने जो कुछ किया है अच्छा किया है।'

अनोखी बात यह है कि जो लोग युद्ध में सब से पीछे थे वे ही ग़नीमत लेने के लिए आगे-आगे थे।

रसूलुल्लाह ने सोचा कि इन के साथ प्रेमभाव तथा सौहार्द का व्यवहार किया जाये और भूतकाल की बातों को भुला दिया जाये।

इस के अतिरिक्त और इलाज हो भी क्या सकता था ? विश्व में ऐसी अनेकों जातियां हैं जो बुद्धि एवं विचारधारा के अनुसार नहीं वरन् पेट की खातिर सत्य की ओर लपकती हैं। जैसे पशु चारा देखकर लपकते हैं। ठीक यही दशा मनुष्यों की है वे लोभ तथा प्राप्ति के आकांक्षी होते हैं ताकि ईमान से परिचित हो सकें।

अनस बिन मालिक रज़ि० से हदीसोल्लेख है कि मैं रसूलुल्लाह के साथ चल रहा था आप सल्ल० एक नजरानी चादर ओढ़े हुए थे जिसका किनारा बहुत खुरदुरा था। मार्ग में एक बद्दू ने इतनी ज़ोर से चादर खींची कि मैं ने देखा कि आप के कन्धे पर निशान पड़ गया है और कहने लगा, 'मुहम्मद ! मुझे भी इस माल में से दे जो तेरे पास है।' आप उस की ओर आकृष्ट हुए और हंसने लगे और उसे प्रदान कर ने का आदेश दिया।'[1]

इस बद्दू की मीठी और प्रेमपूर्ण बातें तथा दया का व्यवहार इतना प्रभावित न कर सकता था जितना वह दान उस को प्रसन्न करता जो उस की जेबों को भर देता और उस की इच्छाओं की सन्तुष्टि कर देता।

---

१. मुस्लिम, बुखारी।

अरब क़बीलों में बांट दिया है और उन्हें उस में से कुछ भी नहीं मिला।'

रसूलुल्लाह : 'तुम्हारा क्या विचार है, हे सअ्द।'

सअ्द रज़ि० : 'मैं भी अपनी जाति का एक व्यक्ति हूं।'

रसूलुल्लाह ने समस्त अंसार को एकत्र करने का आदेश दिया और कहा कि जब लोग आ जायें तो मुझे सूचित करो।

हज़रत सअ्द निकले और सब लोगों को बुलाया तथा एक घेर में जमा कर लिया। जब समस्त अंसार आ गये तो रसूलुल्लाह को सूचित किया कि हे अल्लाह के रसूल! उस घेर में सारे लोग जमा हैं जिस में आप ने जमा होने का आदेश दिया था।

रसूलुल्लाह वहां पधारे और उन के सामने ख़ुत्बा दिया। अल्लाह की प्रशंसा के पश्चात फ़रमाया—

'हे अंसार के गिरोह! क्या यह सत्य नहीं है कि तुम पहले गुमराह थे, ख़ुदा ने मेरे द्वारा तुम्हें हिदायत दी, तुम दरिद्र थे ख़ुदा ने मेरे द्वारा तुम्हें समृद्धशाली बनाया? तुम एक दूसरे के शत्रु थे, अल्लाह ने मेरे द्वारा तुम्हारे दिलों को जोड़ दिया?'

अंसार : 'हे अल्लाह के रसूल! हम क्या उत्तर दें अल्लाह और रसूल का अहसान सब से अधिक है।'

रसूलुल्लाह : 'नहीं! तुम यह उत्तर दो कि हे मुहम्मद! जब आप को लोगों ने झुटलाया तो हम ने तस्दीक़ की, आप को लोगों ने निकाल दिया था तो हम ने आप को शरण दी, आप दरिद्र थे तो हम ने आप की हर प्रकार से सहायता की, आप भयभीत थे तो हम ने शान्ति दी, आप निःसहाय थे तो हम ने आप की सहायता की?'

अंसार : 'ख़ुदा और रसूल का अहसान सब से बढ़ कर है।'

रसूलुल्लाह : 'हे अंसार के गिरोह! क्या तुम्हें इस बात का शोक है कि मैं ने दुनिया (भौतिकता) की कुछ मात्रा दिल परचाने हेतु बांट दी है और तुम्हें तुम्हारे इस्लाम तथा ईमान पर भरोसा कर के छोड़ दिया है परन्तु हे अंसार के गिरोह क्या तुम इस बात से सन्तुष्ट नहीं हो कि लोग ऊंट और बकरियां ले जायें

और तुम रसूलुल्लाह् को अपने साथ ले कर घरों को लौटो ?'

क़सम है उस अस्तित्व की जिस के अधिकार में मेरी जान है ! यदि लोग एक घाटी में चलें और अंसार दूसरी घाटी में तो मैं अंसार की घाटी में जाना पसन्द करूंगा और यदि हिजरत न होती तो मैं भी अंसार में से होता ?

हे अल्लाह् ! तू अंसार पर दया कर, उन की संतान और उन की सन्तान की संतान पर दया कर ।'

यह सुन कर अंसार रो पड़े और रोते-रोते उन की दाढ़ियां भीग गयीं और सब पुकार उठे : 'हम अल्लाह् को अपना रब मानने और रसूल को अपने हिस्से में पाने से प्रसन्न तथा सन्तुष्ट हैं ।'

फिर आप वहां से चले आये और लोग तितर-बितर हो गये ।'[1]

'दावतों' तथा आन्दोलनों के इतिहास में अंसार उन व्यक्तियों का अतुल्य आदर्श हैं जिन के बल पर बड़ी-बड़ी 'दावतों' की स्थापना हुई । यहां तक कि जब वे आन्दोलन अपने तनें पर खड़े हुए, परिश्रम तथा परीक्षा काल बीते तथा उन पर मीठे एवं स्वादिष्ट फल आने लगे तो दूसरे हाथ आगे बढ़े और जी भर कर फल तोड़े और इतने पर ही सन्तुष्ट न हुए वरन् पौधा लगाने वालों को तमाचे भी मारे कि वे गिरे-पड़े फल भी न उठायें ।

हम इस समय माले ग़नीमत के वितरण की समीक्षा नहीं कर रहे हैं । इस सुरक्षित वितरण में बुद्धि एवं विवेक का प्रकटन हो चुका है । परन्तु हम अंसार के यशोगान का, धर्म के मार्ग में भौतिकता से दूर रहने का और लोगों के दिल जोड़ने में उन की विशेषता तथा गुणों का उल्लेख कर रहे हैं । शासन सम्बन्धी मामले उन से दूर ही रहे, वे दूसरों के अधिकार में रहे यद्यपि वे इस की योग्यता रखते थे और अभी ३० वर्ष भी न गुज़रे थे कि शासन, 'तुलक़ा' और इस्लाम में नव प्रवेशकर्ताओं के हाथों में पहुंच गया ।

निस्सन्देह ये पुण्यात्मा अपना भरपूर प्रतिफल पायेंगे । सांसारिक मामले इस से बहुत निम्नतम हैं कि इन के द्वारा किसी अक़ीदे तथा दृष्टि-कोण रखने वाले की तस्कीन की जाए ।

---

१. अहमद, इब्ने हिशाम, इब्ने जरीर, अल-बिदाया आदि ।

इस विषय में वे खानदानी सरदार जिनका शासन इस्लाम आने से कमज़ोर पड़ गया था या समाप्त हो गया था तथा वे मरुस्थलीय बद्दू दोनों समान थे जो पशुओं जैसा जीवन व्यतीत कर रहे थे मानो कोई बात समझते ही न हों !

मुनाफ़िक़ों की गुमराही तथा इस्लाम और उस के आवाहकों के विषय में उन की दुर्भावना को इस विषय ने और बढ़ावा दिया कि मुसलमानों और रूमियों के बीच युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो चुकी है और रूमी शासन जितना शक्तिशाली था उसके सामने इन 'मूर्खों' की अज्ञानता का प्रकटन हो चुका है।

अरब रूमी राज्य को वही स्थान देते थे जो आधुनिक युग में अफ़्रीक़ी राज्य यूरोप तथा अमेरिकी को देते हैं। यह वह शक्ति थी जिसे न पराजित किया जा सकता था न युद्ध करने का किसी में साहस ही था।

यदि रूमियों को यह उच्च स्थान प्राप्त था तो मुहम्मद सल्ल० भी शक्ति से भयभीत होने वाले न थे जैसा कि आप के चरित्र से विदित था। आप की रिसालत ने मार्ग की समस्त बाधाओं को साफ़ कर दिया था। मूर्तिपूजा आप के मार्ग से सर्वथा हट चुकी थी, यहूदियत का देश निकाला हो चुका था और अब रूमियों से आत्मविश्वास तथा वीरता के साथ संघर्ष जारी था।

मुनाफ़िक़ इस नई शत्रुता से बड़े प्रसन्न थे। वे समझ रहे थे कि 'रोम' इस्लाम की समाधि स्थल सिद्ध होगा। इसी कारण जब रसूलुल्लाह् ने 'तबूक' की ओर कूच करने की घोषणा की तो मुनाफ़िक़ों का एक टोला जमा हो गया और मुसलमानों का मनोबल गिराने तथा उन्हें साहसहीन बनाने के लिए उन से कहने लगा कि 'क्या तुम ने रूमियों से युद्ध करने को अरबों के आपसी युद्ध के समान समझा है ? खुदा की क़सम मैं देख रहा हूं कि तुम कल जंजीरों में जकड़े हुए होंगे ?'

तबूक का युद्ध

रसूलुल्लाह सल्ल० ने इस्लाम तथा ईसाइयत के बीच सम्बन्ध सुदृढ़ बनाये रखने का भरसक प्रयत्न किया परन्तु वे इस बात पर तैयार न हुए कि इस्लाम के आवाहक जनसाधारण के सामने इस्लाम पेश करें और यदि उन्हें पसन्द हो तो ग्रहण कर लें अन्यथा इन्कार कर दें।

जनसाधारण जिस चीज़ को समझना चाहते हैं उस के लिए उन्हें समुचित अवसर उपलब्ध कराये जाने चाहियें। परन्तु यदि इस्लाम के

कारण इसे 'कठिनाइयों की सेन

क़ुरआन में इस 'कठिनाई

अन्य समस्त मुद्दों से संख्या में अ

आरम्भ में ईसाइयों के अ

और इस कर्तव्य के पालन में

और स्पष्ट कहा गया कि अ

अपने नबी की सहायता के विष

और कठिनाइयों तथा आपत्तिय

से फिर जाना) तथा 'निफ़ाक़'

'हे ईमान लाने वालो !

---

१. उर्दू में 'लश्करे उस्रत' कहते हैं

इस कठिनाइयों के सेना दल

उल्लेख मिलता है। जहां क़ुरआन

उस की वर्णन शैली से ज्ञात होत

को शुभ सूचना सुनाने तथा प

किसी प्रकार की नर्मी नहीं बरती

है क्योंकि ईसाइयों के विषय में

भविष्य आधारित था।

या तो मुसलमानों को गिरफ़

रहना था या उस की आग में उ

दीन (इस्लाम) का नाम निशान

इस कठोर तथा निःसंकोच

ने ऐसी तैयारी की जिस का उदा

था। वे लोग उत्तर की ओर बढ़े

इस युद्ध की तैयारी में दिलों की दशा स्पष्ट हो गयी। तथा प्रत्येक की शुद्धहृदयता, उदार हृदयता और क्रियाशीलता का अनुमान हो गया। ऐसे निःस्पृह भी थे जिन्होंने जंगी तैयारी में अपनी दौलत लुटा दी तथा सवारियां, घोड़े और हथियार खरीद कर दिये। इन में से एक हज़रत उस्मान बिन अफ़्फ़ान थे जो अल्लाह के मार्ग में खर्च करने में बहुत आगे थे। रसूलुल्लाह इन की 'इन्फ़ाक़' भावना से अति प्रसन्न हुए और फ़रमाया—

'हे अल्लाह तू उस्मान से राज़ी हो जा, मैं भी राज़ी हूं।'

—इब्ने हिशाम

इन में ऐसे मुहताज तथा दरिद्र लोग भी थे जो अल्लाह के मार्ग में 'इन्फ़ाक़' (खर्च) करने का सामर्थ्य न रखने के कारण परेशान थे। उन के पास रणक्षेत्र में जाने के लिए साधन न थे अतः इस सौभाग्य से महरूमी के कारण उन के नेत्र सजल तथा अश्रुवर्षक हो गये।

उल्या बिन यज़ीद से रिवायत है कि वह रात में तहज्जुद की नमाज़ के लिए उठे, नमाज़ पढ़ी और रोने लगे और कहा—

'ऐ अल्लाह! तूने ही जिहाद का हुक्म दिया है और इस के लिए प्रेरित किया है परन्तु मुझे वह सम्पत्ति नहीं दी जिस से मैं शक्ति प्राप्त करता और जिहाद करता।

तूने अपने रसूल को इतना भी सामर्थ्य न दिया कि वह मुझे सवारी देते। मैं समस्त मुसलमानों को जिन्होंने मेरे शरीर, माल अथवा मान के विषय में मेरा स्वत्वहरण किया हो सदक़ा करता हूं। (अर्थात क्षमा करता हूं)।

फिर नियमानुसार अगले दिन लोगों के साथ उठने बैठने लगे। अल्लाह के रसूल ने एकत्र जनसमूह से पूछा: 'इस रात सदक़ा करने वाला कौन है?' कोई नहीं उठा। आप ने फिर पूछा: 'सदक़ा करने वाला कौन है?' वह खड़ा हो जाये।' यह सुनते ही हज़रत उल्या रज़ि० खड़े हो गये और पूरा क़िस्सा सुनाया तो अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया—

'प्रसन्न हो जाओ, खुदा की क़सम! जिस के अधिकार में मेरे प्राण हैं, वह स्वीकार कर लिया गया।' —इब्ने इस्हाक़

ऐसे लोग भी थे जो फ़रार होने के बहाने खोज रहे थे तथा इस्लाम से घृणा के कारण किसी प्रकार के सहयोग से भी रुचि न रखते थे। स्पष्ट है, कि ऐसे लोग युद्ध की तैयारी क्या करते तथा युद्ध पर जाने वालों की वापसी की कामना क्यों करते?

इस्लामी सम्प्रदाय के संस्थापक
बैठे। उस दिन भीषण गर्मी थी
लगाया, ठण्डा पानी पेश किया
किया। यह दृश्य देख कर उन के
कहा—

'अल्लाह के रसूल तो धू
ठण्डी छाया में हों, स्वा
स्त्रियां उस के पास हों
नहीं है।'

फिर अपनी पत्नियों से कहा

'ख़ुदा की क़सम मैं तुम
नहीं हो सकता जब तक

तत्क्षण उठ बैठे, पानी और

हो गये। बड़ी तेजी से यात्रा की यहां तक कि तबूक में रसूलुल्लाह से जा मिले।

—०—

'तबूक' की ओर तेज़ी से जाते हुए इस सेनादल को कठिनाइयों तथा विपत्तियों का सामना करना पड़ा। इमाम अहमद ने निम्नलिखित आयत की टीका में लिखा है—

'अल्लाह नबी पर मेहरबान हो गया, और मुहाजिरों और अंसार पर जिन्होंने कठिन समय में नबी का साथ दिया।'

—अत-तौबा ११७

तबूक यात्रा में दो-दो, तीन-तीन व्यक्ति एक ही सवारी पर गये थे। सख़्त गर्मी का दिन था, प्यास से गले सूख रहे थे यहां तक कि लोग ऊंटों को ज़िब्ह कर के उन का पानी पी लेते थे। उस समय पानी की परेशानी थी, खाद्य पदार्थ को परेशानी थी तथा दोपहर की गर्मी की भी परेशानी थी।

अब्दुल्लाह बिन अब्बास से रिवायत है कि उमर बिन ख़त्ताब रज़ि० से पूछा गया कि हमें मुसीबत की घड़ी के विषय में कुछ बताइये, उन्होंने फ़रमाया : हम तबूक की ओर प्रचण्ड गर्मी में निकले, एक स्थान पर पड़ाव किया, हमें प्यास लगी और ऐसा प्रतीत होने लगा कि गर्दन सिर से अलग हो जायेगी। स्थिति यह थी कि लोग अपने ऊंटों को ज़िब्ह करते और उन की लीद का पानी निचोड़ कर पी लेते थे। और गोबर को सीने पर मल लेते थे। अबू बक्र ने अर्ज़ किया : हे अल्लाह के रसूल ! अल्लाह ने आप की दुआ को शुभ बनाया है तथा उस में ख़ैर है अतः आप हमारे लिए दुआ फ़रमायें।' आप सल्ल० ने पूछा : 'क्या तुम इसे पसन्द करते हो ?' अबू बक्र ने कहा : 'हां'। रसूलुल्लाह ने अपने दोनों हाथ आकाश की ओर उठा दिये और उन्हें उस समय तक नीचे नहीं किया जब तक कि वर्षा न होने लगी। वर्षा ख़ूब हुई। और लोगों ने अपने बर्तन पानी से भर लिये। फिर हम ने आगे बढ़ कर देखा तो पता चला कि वर्षा सेनादल से आगे नहीं हुई।

इब्ने इस्हाक़ कहते हैं कि सेनादल में एक मुनाफ़िक़ भी था, लोगों ने कहा : 'तेरा बुरा हो ! क्या अब भी पानी की आवश्यकता है ?' उस ने कहा : 'यह तो गुज़रती हुई बदली थी।'

मार्ग में 'समूद' की जाति का क्षेत्र मिला। केवल कुछ खंडहर तथा भग्नावशेष थे जो उन लोगों पर ईश्वर के प्रकोप का स्मरण करा रहे थे

जिन्होंने उस के रसूलों को झुठलाया तथा उस के अज़ाब के पात्र बने।
रसूलुल्लाह ने फ़रमाया : 'जिन लोगों ने अपनी जानों पर ज़ुल्म किया उनके क्षेत्रों से जब भी गुज़रो, तो रोते हुए निकल जाओ, कदाचित वह प्रकोप तुम्हें भी अपनी लपेट में लेले जिस में वे ग्रस्त हुए थे।'

लगता है कि रसूलुल्लाह चाहते थे कि मुसलमान शिक्षा-स्थानों से ग़फ़लत न बरतें तथा अतीत में जो घटनाएं हुई हैं उन्हें साधारण समझ कर न निकल जायें। उदाहरण के लिए यदि किसी व्यक्ति को जेलों में घूमने का अवसर मिले तथा वह फांसी-घर को भी देखे तो उस के लिए ठीक नहीं है कि वह फांसी के फंदे से उपहास तथा ठट्ठा करता हुआ निकल जाये। अपराधियों के विषय में जानकारी तथा फांसियों से कुछ तो हृदय में पिघलाहट होनी ही चाहिये।

अहमद ने हज़रत जाबिर रज़ि० से हदीसोल्लेख की है कि जब रसूलुल्लाह उन पहाड़ियों से गुज़रे जिन में हज़रत 'सालेह' की जाति आबाद थी तो आप ने फ़रमाया : मोजज़े न मांगो, सालेह अलैहिस्सलाम की जाति ने मोजज़े मांगे थे तो अल्लाह ने उन के उत्तर में एक ऊंटनी भेज दी। वह इसी दर्रे से आती जाती थी उन लोगों ने सरकशी की और उस की कूंचें काट दीं। वह एक दिन अकेली उनका पानी पीती थी और ये एक दिन उस का दूध पीते थे परन्तु उन्होंने उसे मार डाला तो अकस्मात उन्हें एक धमाके ने आ दबाया और खुले आकाश के नीचे अल्लाह ने उन्हें बुझा कर रख दिया।'

'मोजज़े' मांगने से लोगों को साधारण परिस्थितियों की ओर लौटने का सन्देश देना है। क्योंकि साधारण नियमों के विरुद्ध बग़ावत करने से कोई लाभ नहीं होता तथा मोजज़े मांगने वालों के लिए उत्तम यही है कि वे अपने उत्तरदायित्व पूरे करें और अपने दिलों में नम्रता पैदा करें ताकि अल्लाह के आदेशों के सामने आर्द्रता उत्पन्न हो सके।

अतीत में लोगों ने मोजज़े तथा चमत्कार देखे परन्तु मन की कठोरता ने उन्हें खिल्ली उड़ाने पर आमादा किया अतः अल्लाह की लानत ने उन्हें घेर लिया।

जब मुसलमान 'तबूक' पहुंचे तो वहां उन्हें कोई युद्ध की चाल न दिखाई दी न उन्हें शत्रुओं का मुक़ाबला करना पड़ा।

---

१. अहमद, बुख़ारी, मुस्लिम।

२. मुस्नद अहमद, हाकिम आदि।

रोम ने निश्चित रूप से अपनी सीमाओं में इस नई शक्ति को छिपाये रखा होगा। अतः इस क्षेत्र के ईसाई अरब शासकों ने रसूलुल्लाह से सन्धि के सम्बन्ध स्थापित कर लिये।

आप सल्ल० के साथ 'ऐला', 'अज्रा' 'तैमा' तथा दूमतुल जन्दल के शासकों ने सन्धि की तथा सहयोगी सम्बन्ध स्थापित किये और रूमियों के शासनाधीन इन क़बीलों ने देख लिया कि अब पुराने 'आक़ा' पर विश्वास करना व्यर्थ है।

तबूक का युद्ध अह्‌ज़ाब के युद्ध के समान है। आरम्भ में मुसलमानों की कड़ी परीक्षा हुई और अन्त में सन्तोष, शांति एवं प्रभुत्व मिला। रसूलुल्लाह वहां कुछ दिन ठहरे रहे कि कहीं जंगलों में रूमी छिपे न हों और वे कोई हानि पहुंचायें। परन्तु जब आप ने देखा कि युद्ध की कोई सम्भावना नहीं है तो विजेता के रूप में मदीना लौटने का निर्णय लिया।

रसूलुल्लाह मदीना आ गये। दूर ही से उस की झलक दिखाई दी और फ़रमाया : 'यह पवित्र नगर मदीना है और यह ओहुद है हम इस से प्रेम करते हैं और यह हम को चाहता है।' (बुखारी, मुस्लिम) जब लोगों को आप के आने की सूचना मिली तो बच्चे, बच्चियां और स्त्रियां गाती हुई बाहर निकल आयीं—

> "वदाअ' की पहाड़ियों से हम पर पूर्णिमा का चांद निकल आया। जब तक अल्लाह को पुकारने वाला कोई बाक़ी है हम पर शुक्र अनिवार्य है।

'कठिनाइयों के इस सेनादल' का लौटने पर भव्य स्वागत हुआ। रसूलुल्लाह के साथ निकलने वाली यह सब से बड़ी सेना थी जिसमें लगभग ३० हज़ार सैनिक थे। इस आगमन को वे महान हृदय वाले तथा दरिद्र सहाबी भुला न सके जो रसूलुल्लाह के साथ अपनी असमर्थता के कारण जिहाद में शरीक न हुए थे तथा उन के नेत्र अश्रुपात कर रहे थे।

हज़रत अनस बिन मालिक से हदीसोल्लेख है कि रसूलुल्लाह सल्ल० जब तबूक युद्ध से लौटे और मदीना बिल्कुल निकट आ गया तो आप सल्ल० ने फ़रमाया : 'मदीना में कुछ ऐसे व्यक्ति भी हैं कि तुम ने जिस मार्ग तथा घाटी को पार किया है वे भी तुम्हारे साथ-साथ रहे हैं।' लोगों ने पूछा : 'यद्यपि वे मदीना ही में रहे थे ?' आप ने फ़रमाया : हां ! यद्यपि वे मदीना ही में थे। उन्हें वास्तविक असमर्थता ने रोक दिया था।

—बुखारी

इस सान्त्वना के द्वारा रसूलुल्लाह ने उन लोगों को सम्मान प्रदान

'ख़रीदी थी

अनुवाद : 'हे अल्लाह् के

व्यक्ति के सा

अवश्य बातें

परन्तु आप

बोल कर आ

कि कल अल्

सत्य कह दूंग

मुझे अल्लाह्

मुझे क्षमा क

सामने कोई

जिस समय

अधिक धनवान एवं समृद्धशाली कभी नहीं था।'

रसूलुल्लाह : 'इस व्यक्ति ने सत्य कहा जाओ, और उस समय तक प्रतीक्षा करो कि अल्लाह तुम्हारे विषय में कोई निर्णय दे।'

और कअ्ब उठ कर चले आये।

कअब कहते हैं कि बनू सलमा के कुछ लोग मेरे पास आये और कहने लगे : खुदा की कसम ! हमें नहीं मालूम कि इस से पूर्व तुम ने कोई पाप किया हो ? तुम ने अन्य पीछे छूट जाने वालों की भांति क्यों न बहाने कर दिये ? रसूलुल्लाह की दुआ तुम्हारे गुनाहों पर आच्छादित होने के लिए पर्याप्त होती ! कअब रजि० कहते हैं ये लोग मुझे निरन्तर विचलित करते रहे यहां तक कि मैं ने सोचा कि पुनः जा कर विवशता तथा असमर्थता प्रकट कर दूं।'

मैं ने उन से पूछा कि क्या इस विषय में मेरे साथ और भी कोई व्यक्ति है, वे बोले 'हां ! दो व्यक्ति और हैं उन्होंने यही बात कही है जो तुम ने कही है और उन्हें भी वही उत्तर मिला है जो तुम्हें मिला है। मैं ने पूछा : 'वे दोनों कौन हैं ?' बताया गया कि मुरारा बिन रबीअ आमरी और हिलाल बिन उमैया वाकिफ़ी रज़ियल्लाहु अन्हुम हैं।' उन लोगों ने दो ऐसे व्यक्तियों के नाम लिए जो बद्र युद्ध में सम्मिलित हो चुके थे और उन का जीवन एक आदर्श जीवन था। अतः जब ये दोनों नाम मेरे सामने आये तो मैं अपने इरादे पर दृढ़ हो गया।

रसूलुल्लाह ने हम तीनों व्यक्तियों से सलाम तथा बातचीत न करने का आदेश दे दिया।

लोग कतराने लगे। हमारे लिए हमारे मित्र तथा नातेदार पराये बन गये, धरती अपरिचित हो गयी तथा अब वह धरती न थी जिसे मैं जानता था।

५० दिन इसी परेशानी में बीत गये। मेरे दोनों साथी वृद्धावस्था के कारण अपने घर में एकान्तवासी हो गये तथा दिन-रात रोने-धोने में बिताने लगे। मैं सशक्त युवक था मुसलमानों के साथ नमाज़ में सम्मिलित होता। बाज़ारों में चक्कर लगाता परन्तु कोई मुझ से बात करने को तैयार न होता। मैं रसूलुल्लाह के पास जाता आप नमाज़ के पश्चात लोगों के बीच बैठे होते मैं सलाम करता। मैं अपने आप से पूछता कि आप सल्ल० ने अपने होंठों को मेरे सलाम का उत्तर देने के लिए हिलाया या नहीं ? फिर मैं आप के निकट ही नमाज़ पढ़ता और आप को नज़रें गड़ा कर

देखता। जब मैं नमाज़ में लीन हो जाता तो आप सल्ल० मेरी ओर देखते और जब मैं आकृष्ट होता तो मुंह फेर लेते।

जब मुसलमानों की विमुखता अधिक बढ़ गयी तो मैं अपने चचेरे भाई तथा प्रिय मित्र अबू क़तादा की दीवार पर चढ़ गया और मैं ने सलाम किया परन्तु, खुदा की क़सम! उस ने मेरे सलाम का उत्तर न दिया।

मैं ने कहा : 'हे अबू क़तादा! मैं तुम्हें खुदा की क़सम दे कर पूछता हूं कि क्या तुम जानते हो कि मुझे अल्लाह और रसूल से प्रेम है?' वह चुप रहे। मैं ने पुनः प्रश्न किया और उसे क़सम दिलायी तब भी वह चुप रहे। मैं ने तीसरी बार क़सम दिला कर पूछा तो उन्हों ने केवल इतना उत्तर दिया कि अल्लाह और उस के रसूल अधिक जानते हैं।

मेरे नेत्रों से जल की धारा बह पड़ी। मैं उस समय दीवार से फांद कर वापस चला आया।

एक दिन मैं मदीना के बाज़ार में घूम रहा था। इसी दिन एक 'शामी' 'नब्ती' को अपना पता पूछते हुए देखा लोगों ने मुझे बता दिया। जब वह मेरे पास आया तो उस ने ग़स्सान के नरेश का एक पत्र मेरी ओर बढ़ाया जिस में लिखा था—

> 'मुझे जानकारी मिली है कि तुम्हारे श्रीमान ने तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार किया है यद्यपि अल्लाह ने आप को हीनता तथा बरबादी के घर में सीमित नहीं किया है आप हमारे पास चले आयें हम आप की संतुष्टि करेंगे।'

मैं ने उसे पढ़ कर सोचा कि यह भी एक परीक्षा है और पत्र को तंदूर में डाल दिया जब ४० रातें बीत गयीं तो एक दिन अल्लाह के रसूल के सन्देशवाहक ने आकर कहा कि रसूलुल्लाह ने आदेश दिया है कि अपनी पत्नी से भी अलग हो जाओ। मैं ने पूछा क्या तलाक़ दे दूं? उस ने कहा तलाक़ न दो केवल उस से अलग रहो।

यही सन्देश मेरे दोनों अन्य साथियों के पास भेजा गया उन्होंने अपनी पत्नी से कहा कि अपनी माता के घर चली जाओ और वहीं रहो यहां तक कि अल्लाह इस विषय का कोई निर्णय उतार दे।

हिलाल बिन उमय्या की पत्नी रसूलुल्लाह के पास आयीं और प्रार्थना की कि 'हे अल्लाह के रसूल! मेरे पती अत्यधिक बूढ़े हैं और उन के पास कोई सेवक नहीं है तो क्या मेरा उन की सेवा करना अनुचित है? आप ने फ़रमाया : 'नहीं! परन्तु वह तुम्हारे निकट न हो। उन्हों ने कहा : खुदा की क़सम उन में तनिक भी हरकत नहीं है और जिस दिन से यह मामला

हुआ है वह निरन्तर रोते रहे हैं।

हज़रत कअ्ब कहते हैं कि मेरे परिवारजनों ने मुझे परामर्श दिया कि तुम भी अपनी पत्नी से सेवा लेने के विषय में इसी प्रकार आज्ञा लेती जिस प्रकार हिलाल की पत्नी ने ले ली है। मैं ने कहा : नहीं, खुदा की क़सम मैं रसूलुल्लाह से इस विषय में अनुमति नहीं मांगूंगा। मुझे नहीं मालूम कि जब मैं अनुमति लूंगा तो रसूलुल्लाह क्या समझेंगे जब कि मैं युवक हूं।

इस के पश्चात् १० रातें ऐसे ही बीतीं यहां तक कि ५० दिन पूरे हो गये। पचासवीं रात की प्रातः को जब मैं ने अपने मकान की छत पर फ़ज्र की नमाज़ पढ़ी और मेरी दशा वह थी जिस का ज़िक्र स्वयं अल्लाह ने किया है मुझे घुटन हो रही थी और धरती विस्तृत होते हुए भी मेरे लिए संकुचित हो गयी थी। अकस्मात 'सलअ' पहाड़ से यह प्राणवर्धक सूचना सुनाई दी—

'हे कअ्ब ! शुभ सूचना मुबारक हो।'

यह सुनते ही मैं सजदे में गिर पड़ा और समझ गया कि ये विपत्ति समाप्त हो गयी। नमाज़ फ़ज्र के समय रसूलुल्लाह ने हम लोगों की तौबा की स्वीकृति की घोषणा की। लोग हमें शुभ सूचनाएं सुनाने आ गये और मेरे दोनों साथियों को भी शुभ सूचना सुनाने गये। एक व्यक्ति घोड़े पर सवार मेरी ओर आया और उस ने पहाड़ी की चोटी पर से पुकारा। उस की आवाज़ घोड़े की गति से भी तेज़ सिद्ध हुई। जब वह व्यक्ति मंगल सूचना ले कर आया, मैं ने अपने दोनों वस्त्र उतार कर उसे पहना दिये और रसूलुल्लाह के पास गया। लोगों के समूह के समूह मुझ से मिले और मुबारक दी। उन के शब्द ये थे, 'तुझे तेरी 'तौबा' (पश्चाताप) की स्वीकृति मुबारक हो।' हज़रत क़अ्ब (रज़ि०) कहते हैं कि, यहां तक कि मैं मस्जिद में दाखिल हुआ। रसूलुल्लाह वहां मौजूद थे और आप के पास लोग बैठे थे। मुझे देखते ही तल्हा बिन उबैदुल्लाह (रज़ि०) दौड़ कर मेरे पास आये, मुझ से मुसाफ़ा किया (हाथ मिलाये) और मुझे मुबारकबाद दी। खुदा की क़सम ! मुहाजिरों में से और कोई नहीं उठा। मैं तल्हा का यह एहसान कभी नहीं भूल सकता।

रसूलुल्लाह का चेहरा प्रसन्नता से चमक रहा था। मैं ने आगे बढ़ कर सलाम किया, आप ने फ़रमाया—

'मुबारक हो तुझे वह दिन जो उन समस्त दिनों से उत्तम है
जब से तेरी माता ने तुझे जना है।'

मैं ने पूछा : 'हे अल्लाह के रसूल यह क्षमा आप की ओर से है

से बअत (प्रतिज्ञा) ली और
हमारे मामले को स्थगित कर
आ गया।

इसी की ओर अल्लाह ने
मेहरबान हुआ जो पीछे छोड़ दि
छोड़ दिये जाने' में अभिप्राय: यु
हमारे म मले को उन लोगों से
खायीं थीं, असमर्थताएँ पेश की
को क़बूल कर लिया था।

मस्जिदे ज़िरार

इस्लाम की श्रेष्ठता का दम

तथा चश्मपोशी की नीति अपनाई। उन के बहानों को क़बूल कर लिया और उन्हें बदनाम होने से बचा लिया यद्यपि वे सुनने तथा पालन करने के बन्धनों से स्वतन्त्र होने का प्रयत्न कर रहे थे। यदि इन में से कोई ऐसा अपराध कर देता जिस से उस का क़त्ल वैध हो जाता तो भी आप उपेक्षा कर जाते ताकि कोई यह न कह सके कि मुहम्मद (सल्ल०) अपने साथियों को क़त्ल कर रहे हैं। यद्यपि आप के सहाबियों के विषय में ऐसी कोई शंका न थी परन्तु जन साधारण के विषय में यह भय अवश्य था।

यदि इन मुनाफ़िक़ों में 'ख़ैर' का कुछ भी अंश होता तो रसूलुल्लाह की सहनशीलता तथा सहिष्णुता उन्हें अवश्य प्रभावित करती। वे अपनी छल-कपट नीति से अवश्य रुक जाते और इस्लाम की ओर शुद्ध हृदयता के साथ बढ़ते परन्तु इस उदार हृदयता तथा महामना ने उन की गुस्ताख़ी तथा अपवित्र दुस्साहस में और वृद्धि कर दी। उनकी शरारतें बढ़ गयीं तथा मन में गन्दगियां तथा दुष्टताएँ कर्म के द्वारा प्रत्यक्ष हो गयीं और सर्वसाधारण ने उन की नीयतों को भांप लिया।

सूरा तौबा की अन्तिम आयतों ने इन मुनाफ़िक़ों को कड़ी चेतावनी दी उन के उस पर्दे को चाक कर दिया जिस के पीछे वे छिप रहे थे। तबूक युद्ध से पहले भी और बाद में भी दीर्घकाल तक उन्हें ढील मिलती रही परन्तु उन्होंने इस मुहलत की क़द्र न की, तब रसूलुल्लाह को आदेश मिला कि इन के भ्रम स्पष्ट कर दें और इन के बहानों को स्वीकार न करें और इन के मरणोपरान्त इन की क़ब्र पर जनाज़े की नमाज़ भी न पढ़ें बल्कि स्पष्ट कर दिया गया कि यदि आप (सल्ल०) इन के लिए मग़्फ़िरत की दुआ भी करेंगे तो क़बूल नहीं की जायेगी फिर समस्त मुसलमानों से आह्वान किया गया कि इन का पूर्ण बहिष्कार कर दें।

मुनाफ़िक़ों ने यह चाल चली कि एक मस्जिद बनायी जिस में वे एकत्र हो कर इबादत की आड़ में इस्लाम के विरुद्ध षडयन्त्र बना सकें और तबूक युद्ध को जाने से पूर्व रसूलुल्लाह से आग्रह किया कि हम ने बीमारों और कमज़ोरों के लिए एक मस्जिद बनाई है आप चल कर एक समय की नमाज़ पढ़ा दें। आप ने अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए कहा कि इस समय तो यात्रा सामने है। यदि अल्लाह ने चाहा तो वापस आ कर नमाज़ पढ़ा देंगे।[1]

जब आप तबूक से वापस आ गये और मुनाफ़िक़ों का भंडा फूट गया

---

१. इब्ने इस्हाक़, इब्ने हिशाम।

और अब वे स्वेच्छा पूर्ण इस्ल
घेराव उठते ही सलाह मश्विरे त
दिलों में इस्लाम के लिए समायी
अभी तक मूर्तिपूजक था तथा इस्

उन के सरदार उर्वा बिन
वार्ता करने का प्रयत्न किया।
जाहिली तथा काफ़िराना द्वेष ने
उन को इस्लाम की दावत दी।
गया।

बुद्धिजीवी लोग अपनी आ
सक़ीफ़ आस पास के वातावरण
राज प्रत्येक स्थान से समाप्त हो

कर रहा था।

अम्र बिन उमय्या, अब्दयालल बिन अम्र के पास गया और उस से कहा कि मामला अब इतना आगे बढ़ चुका है कि अब इस की उपेक्षा नहीं की जा सकती। उस व्यक्ति का प्रभुत्व जितना सुदृढ़ होता जा रहा है तुम देख ही रहे हो, समस्त अरब नत मस्तक हो चुका है। तुम समूचे अरब से मुक़ाबला करने की शक्ति नहीं रखते अत: सोचो कि अब क्या करना है।

अन्तत: सक़ीफ़ के लोगों ने रसूलुल्लाह के पास एक प्रतिनिधिमण्डल में समस्त खानदानों के लोग सम्मिलित थे ताकि जो शर्तें तय हों वे सब को स्वीकार्य हों।

प्रतिनिधिमण्डल बहुत देर तक रसूलुल्लाह से वाद विवाद करता रहा ताकि कुफ़्र के कुछ चिन्हों को बाक़ी रखने की अनुमति मिल जाये परन्तु रसूलुल्लाह सख्ती से इन्कार करते रहे। उन्होंने अनुरोध किया कि वे तीन वर्षों में 'लात'[1] को छोड़ देंगे फिर उसे तोड़ डालेंगे, फिर दो वर्ष पर राज़ी करना चाहा फिर एक वर्ष पर और अन्त में एक मास की सौदेबाज़ी का अनुरोध किया परन्तु रसूलुल्लाह दृढ़ता पूर्वक कहते रहे कि अविलम्ब उसे विध्वस्त करना है।

जब वे निराश हो गए तो प्रार्थना की कि वे अपने हाथों से अपनी ही मूर्तियों को नहीं तोड़ सकते अत: कुछ लोगों को भेज दिया जाये जो उन्हें तोड़ सकें। इस पर आप राज़ी हो गये।

उन्हों ने नमाज़ से मुक्ति चाही तो आप ने फ़रमाया, 'जिस धर्म में नमाज़ नहीं है उस में कोई भलाई नहीं है।'[2]

जब प्रतिनिधिमण्डल मदीना से ताइफ़ लौटा तो मुग़ीरा बिन शअबा और अबू सुफ़्यान रज़ि० भी लात को तोड़ने हेतु आये। लात को दिन के दिन के प्रकाश में तोड़ा गया तथा सक़ीफ़ की औरतें अपने बाल नोचती और शोकालाप करती हुई घरों से निकल आईं। जब उन्हों ने अपने माबूदों (पूज्यों) तथा देवियों पर कुल्हाड़ी की चोटें पड़ती देखीं तो वे चिल्लाने लगीं। दीर्घकाल से वे उन के सामने झुकती आयी थीं, भेंटें चढ़ाई थीं और मिन्नतें मानी थीं। उल्लेख किया गया है कि जब भी मुग़ीरा (रज़ि०) कुल्हाड़ी उठाते तो अबू सुफ़्यान खिल्ली उड़ाते हुए या बनू सक़ीफ़ की औरतों से सहानुभूति करते हुए 'हाय, हाय' कहते।

---

१. 'लात' नाम की एक बड़ी मूर्ति थी।

२. इब्ने हिशाम।

का विरोध करने तथा उन से ल
ओर से लोग इस्लाम ग्रहण करने
फ़रमाया :

'जब अल्लाह की मदद आ
कि लोग अल्लाह के दीन में
तस्बीह करो अपने रब की
से क्षमा की प्रार्थना करो। व
क़बूल करने वाला।'

कितने वर्षों में रसूलुल्लाह ने
प्रभाव वाली दावत, निरन्तर अनुस
और बग़ावत के मुक़ाबले में २२ व
यदि अब भी ग़फ़लत और अज्ञा

थे, अराजकता एवं अव्यवस्था का जीवन व्यतीत कर रहे थे तो इन गन्दगियों तथा बुराइयों से बलपूर्वक रोकने के प्रयत्न से कोई बुद्धिमान व्यक्ति मतभेद नहीं कर सकता है। इसी कारण इस्लाम ने समूचे अरब द्वीप को मूर्तियों की गन्दगियों से पवित्र करने की ठान ली और मुश्रिकों को सचेत कर दिया कि इस के लिए उन्हें अति सीमित मोहलत है तथा उन्हें यह भी बता दिया गया कि जो मूर्तियां 'काबे' के आस पास रखी गयीं थीं उन्हें सदा के लिए हटा दिया गया है तथा 'काबा' को पवित्र कर उसे उस 'क़िले' का स्थान प्राप्त हो गया है जिस की ओर मुसलमान संकल्प करेंगे। अब यह अज्ञान लोगों के लिए परिक्रमा स्थल नहीं रहा जहां वे पत्थरों से बरकतें प्राप्त करें। वे समस्त रीतियां, तरीक़े तथा प्रथायें जो इस्लाम से पहले फैली हुई थीं तथा जिन के कारण 'काबा' अश्लीलताओं का केन्द्र बना हुआ था, अब उन्हें इस्लाम ने समाप्त कर दिया है अब इस्लामी दौर में इन खुराफ़ातों के लिए कोई स्थान नहीं है।

९ हिज्री में हज्ज का जमाना आया। मुश्रिक अभी तक अपनी पुरानी प्रथाओं तथा रुढ़ियों को अपनाए हुए थे। वे काबा की ओर आते परन्तु उन मूर्तियों के दुष्परिणामों से कोई शिक्षा ग्रहण न करते थे जिन्हें तोड़ फोड़ कर फेंक दिया गया था, वे झूठे पूज्य जिन की इबादत में उन्हों ने अपना पूरा जीवन बिता दिया था ? अब वे चूर-चूर कर दिये गये थे फिर भी मुश्रिक अपनी रीति पर क़ायम थे। वे काबे को मूर्तियों से पाक किये जाने पर अफ़सोस करते थे।

मुसलमानों का दायित्व था कि इन खुराफ़ातों तथा हास्यास्पद रुढ़ियों पर रोक लगाते और मानव सम्मान व श्रेष्ठता से इस अपमान तथा हीनता को समाप्त करते।

अबू बक्र (रजि०) का हज्ज

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने हजरत अबू बक्र को अमीरे हज्ज (अध्यक्ष) नियुक्त कर मक्का भेजा ताकि मुसलमानों को हज्ज के तरीक़े सिखायें और हज्ज का फ़र्ज़ अदा करें। आप मदीना से क़ुरबानी के जानवरों सहित मस्जिदे हराम की ओर चल पड़े। हजरत अबू बक्र के प्रस्थान के पश्चात् सूरा तौबा का प्रारम्भिक अंश नाज़िल हुआ और रसूलुल्लाह को इशारा मिला कि इन आयतों को मक्का में हज्ज के समय सुना दिया जाये।

अत: आप ने हजरत अली को ये आयतें दे कर मक्का भेजा और उन से कह दिया कि 'इस का ऐलान मेरे खानदान के व्यक्ति द्वारा होना

चाहिए।' क्योंकि अरबों में यह प्रथा थी कि वह ख़ून और माल के समझौतों को खानदान ही के किसी व्यक्ति की ओर से स्वीकार करते थे।

हिजरत से पूर्व भी अमानतें लौटाने का उत्तरदायित्व हज़रत अली को ही सौंपा गया था। इन मामलों में खानदानी रिश्तों का पूर्ण सहयोग मिलना चाहिए। हज़रत अली ने अमानतें अदा कीं, मानो स्वयं रसूलुल्लाह ने अदा कीं। इसी प्रकार हज्ज के अवसर पर हज़रत अली जो कुछ सुनाने वाले थे मानो रसूलुल्लाह ने स्वयं ही उन्हें सुनाया।

इस साधारण नियम की समायी आवश्यक नहीं है। परन्तु रसूलुल्लाह ने सावधानी बरतते हुए यह उपाय किया।

इब्ने इस्हाक़ की रिवायत है कि फिर आप ने हज़रत अली बिन अबी तालिब (रज़ि०) को बुलाया और फ़रमाया :

'सूरा 'बरअत' (तौबा) की प्रारम्भिक आयतें ले कर जाओ और क़ुरबानी के दिन जब लोग 'मना' स्थान पर एकत्र हों तो उन्हें पढ़ कर सुना दो कि जन्नत में कोई काफ़िर प्रवेश न करेगा, इस वर्ष के बाद कोई मुश्रिक 'ख़ाना काबा' का हज्ज न कर सकेगा, न बैतुल्लाह' (अल्लाह का घर) का नग्न तवाफ़ (परिक्रमा कर सकेगा तथा जिस से रसूलुल्लाह का समझौता है उस की अवधि पूरी होने तक पालन किया जाएगा।'

हज़रत अली रसूलुल्लाह की ऊंटनी पर सवार हो कर रवाना हो गये और मार्ग में हज़रत अबू बक्र से जा मिले। जब हज़रत अबू बक्र रज़ि० ने उन्हें देखा तो पूछा : 'अध्यक्ष हो कर आये हो अथवा अधीन ?' कहा : 'अधीन हो कर'। फिर दोनों आगे बढ़े।

हज़रत अबू बक्र आदेशानुसार लोगों को हज्ज को करवा रहे थे तथा हज़रत अली अवाम में ऐलान कर रहे थे और अरबों के सामने सूरा तौबा का शुरू का अंश सुना रहे थे जिसमें उन के विषय में स्पष्ट निर्णय कर दिया गया था और मूर्ति पूजा के विरुद्ध संघर्ष छेड़ दिया था।

हज़रत अली की सहायतार्थ कुछ अन्य व्यक्ति भी हज़रत अबू बक्र ने भेजे थे जो चारों ओर उन का सन्देश दोहराते फिर रहे थे कि इस वर्ष के बाद कोई मुश्रिक हज्ज न करेगा, ख़ाना काबा का 'नग्न तवाफ़' न करेगा, न अगले वर्ष से काफ़िर और मुस्लिम दोनों एक साथ एकत्र होंगे और जिस से रसूलुल्लाह की प्रतिज्ञा है वह प्रतिज्ञावधि तक पूरी की जायेगी और जिस से रसूलुल्लाह की कोई प्रतिज्ञा नहीं है उसे चार महीने की मोहलत है।

—अहमद, तिर्मिज़ी

परन्तु जब यह स्पष्ट हो ग

उड़ाने पर तुले हुए हैं और वहाँ

उपद्रव, अत्याचार तथा उग्रता की

उन की उपेक्षा करने का कोई औ

पागल कुत्ता आज़ाद नहीं छो

छूट जाये तो उस को मार देना

क़त्ल को अपराध समझना भूल है

जिन लोगों को भ्रम है या

का देश निकाला किया तो उस

दिया । ऐसे लोग मात्र भ्रम ग्रस्त

मुसलमानों को २४ वर्ष तक

अनुभवों के प्रकाश में इस क्रोधातु

ने मामले को उत्तेजित कर दिय

ये आने वाले प्रतिनिधिमण्डल

झलक देख चुके थे।

पूरे अरब द्वीप में नई रिसाल

तथा शिक्षाएं जन-जन तक पहुंच

मित्रों तथा शत्रुओं ने जीवन

संघर्ष जारी रखा था और इस्ल

पूरी शक्ति झोंक दी थी यहां त

थी।

हम इस तथ्य से परिचित है

सहयोगियों के द्वारा प्रयत्नशील हो

सुदृढ़ हो जाता है तो उस की ओ

और यदि शत्रुओं का सफ़ा

हो जायें तो उस की सफलता का

यही कारण है कि मदीना में इस दीन को ग्रहण करने वालों या इस से समझौता करने वालों का तांता बंध गया।

पूर्व एवं पश्चिम से आने वाले प्रतिनिधिमण्डलों का हम सविस्तार उल्लेख नहीं करना चाहते हैं। फिर भी हम दो प्रतिनिधिमण्डलों का उदाहरणस्वरूप बयान करेंगे। इन में से एक मूर्तिपूजकों का इस्लाम ग्रहण करने आया था तथा दूसरा ईसाइयों का था जो पूरी स्थिति से अवगत होने तथा वाद विवाद एवं विचार विनिमय के पश्चात् सन्धि करने आया था।

उम्मियों का प्रतिनिधिमडण्ल

क़बीला सअ्द बिन बक्र ने ज़माम बिन सालबा को अपना प्रतिनिध-मण्डल बना कर रसूलुल्लाह की सेवा में भेजा। ज़माम ने अपने ऊंट द्वारा यात्रा की और मदीना पहुंचा। 'मस्जिदे नबवी' के द्वार पर ऊंट बिठाया और उसे बांध कर मस्जिद में गया जहां रसूलुल्लाह अपने सहाबियों सहित उपस्थित थे।

ज़माम बड़े हृष्ट-पुष्ट तथा लम्बे बालों वाले थे। आगे बढ़ कर रसूलुल्लाह के विषय में पूछा :

'तुम में से अब्दुल मुत्तलिब के पुत्र कौन हैं ?'

रसूलुल्लाह : 'मैं अब्दुल मुत्तलिब का पुत्र हूं।'

ज़माम : 'क्या मुहम्मद हैं ?'

रसूलुल्लाह : 'हां।'

ज़माम : 'हे अब्दुल मुत्तलिब के बेटे ! मैं आपसे कुछ तीखे प्रश्न करना चाहता हूं, आप उत्तेजित न हों।'

रसूलुल्लाह : 'जो पूछना है पूछो ! मैं नाराज़ न हूंगा।'

ज़माम : 'मैं आप के ख़ुदा की, आप से पहले के ख़ुदा की और आप के बाद वालों के ख़ुदा की क़सम दे कर पूछता हूं कि क्या अल्लाह ने आप को हमारी ओर 'रसूल' बना कर भेजा है ?'

रसूलुल्लाह : 'हां ! हे अल्लाह ! तू गवाह रह !'

ज़माम : मैं आप के ख़ुदा की तथा आप से पूर्व और आप के पश्चात् के लोगों के ख़ुदा की क़सम दे कर पूछता हूं कि क्या अल्लाह ने आप को हमारी ओर आदेश दे कर भेजा कि हम केवल अल्लाह की इबादत करें और उस के साथ किसी को साझी न बनायें और उन

दूसरों से अलग हो जायें जिन की इबादत हमारे पूर्वज खुदा के साथ करते थे ?'

रसूलुल्लाह : 'हां ! हे अल्लाह तू गवाह रह ।'

एक अन्य रिवायत में है कि उन्होंने पूछा :

'हे मुहम्मद ! आप का सन्देशवाहक हमारे पास आया और उस ने हमें बताया कि आप अल्लाह के रसूल होने का दावा करते हैं ?'

रसूलुल्लाह : हां, उस ने सत्य कहा

ज़माम : तो आकाश किस ने बनाये ?

रसूलुल्लाह : अल्लाह ने ।'

ज़माम : इन पहाड़ों को किस ने जमाया और इन में विभिन्न प्रकार की नेमतें किसने रखीं ?

रसूलुल्लाह : अल्लाह ने !

ज़माम : क़सम है उस अस्तित्व की जिस ने आकाश बनाये, धरती रची तथा पहाड़ों को जमाया ! क्या अल्लाह ने आप को रसूल बनाया है ?

रसूलुल्लाह : हां !

ज़माम : आप के सन्देशवाहक ने बताया कि दिन रात में पांच समय की नमाज फ़र्ज़ है ?

रसूलुल्लाह : हां ! उस ने सही कहा !

ज़माम : उस अस्तित्व की क़सम जिस ने आप को रसूल बनाया है क्या अल्लाह ने आप को इस की अनुज्ञा दी है ?

रसूलुल्लाह : 'हां !'

फिर वह इस्लाम के अन्य फ़र्ज़ों तथा आदेशों के विषय में सविस्तार प्रश्न करते रहे यहां तक कि जब प्रश्न कर चुके तो अन्त में कहा :

'मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई उपास्य नहीं ! और गवाही देता हूं कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं ।'

'मैं इन फ़र्ज़ों का पालन करूंगा और जिन चीज़ों को आप ने वर्जित कर दिया है उन से दूर रहूंगा । मैं इस में किसी प्रकार की घटाबढ़ी न करूंगा ।'

फिर वह वापस जाने के लिए अपने ऊंट के पास चले गये ।

बचा जो इस्लाम में प्रवेश न कर ग

यह उम्मियों का वह प्रतिनि

विवाद में उन के सौम्य स्वभाव

उन गुत्थियों तथा पेचीदा बातों से

होती है।

इतने तीव्र परिणामों का साम

तथा प्रयत्नों का प्रभाव था। स्व

वस्त्रों के परिवर्तन के समान को

विन सालवा रज़ि० के सामने र

---

१. लात और उज्जा दोनों मूर्तियां थी

२. अबू दाऊद, हाकिम, अहमद आदि

जाति से सम्बोधन करते समय यह बात थी कि नया दीन परीक्षाओं, फ़ित्नों तथा विभिन्न चरणों से गुज़रा है और इस की सादगी तथा सौम्य स्वभाव प्रकट हो चुका था। अतः उन की जाति का ईमान थोड़ी देर की बात चीत का परिणाम था।

यह था अम्मियों का प्रतिनिधिमण्डल !--यह समस्त छोटे बड़े प्रतिनिधिमण्डलों का एक एक उदाहरण था। प्रतिनिधिमण्डल मदीना आते थे ताकि नबी से भेंट करें तथा उन्हें देखें और उन से बैअत करें फिर अपनी जाति में जा कर ख़ैर (भलाई) तथा हिदायत के आवाहक होते थे।

परन्तु किताबों वालों का मामला सर्वथा भिन्न था। उन के बहुत थोड़े लोग सत्य के विषय में सन्तुष्ट हो सके थे और उन्होंने तुरन्त उसे स्वीकार कर उस के सहयोग तथा सहायता का निश्चय कर लिया था परन्तु उनका बहुमत शत्रुता पर तुला हुआ था।

यहूदियों ने इस्लाम के उन्मूलन का निश्चय कर रखा था वे नीयत की दुष्टता में ग्रस्त थे परन्तु अभीष्ट लक्ष्य तक पहुंचने से पूर्व ही उन का राजनीतिक तथा सैनिक प्रभुत्व समाप्त हो गया।

इस्लाम ने अपने राज्य में उन्हें जीवित रहने का अधिकार स्वीकार किया था। वे जब तक चाहते अपने धर्म पर क़ायम रहते परन्तु षड्यन्त्रों तथा आतंकों और अत्याचारों की अनुमति नहीं दी जा सकती थी।

यह एक ऐसा तथ्य था जिस में शंका न थी।

इस्लाम के अधीन रहते हुए किसी यहूदी के अधिकारों का हनन नहीं किया गया। एक उदाहरण से यह बात और स्पष्ट हो जाती है कि एक बार स्वयं रसूलुल्लाह ने एक यहूदी से ऋण लेने हेतु अपनी कवक्ष उस के पास रहन रख दी थी (बुख़ारी) परन्तु आपने यह कभी न सोचा कि शासन मेरे हाथ में है तो इसे परेशान किया जाये।

यहूदियों की तुलना में ईसाई कम द्वेष रखते थे, वे कलीसा का राजनीति से दूर थे। अतः उन में से कुछ ने इस्लाम की सादगी तथा सहूलत से प्रभावित हो कर उसे ग्रहण भी कर लिया था तथा अन्य अपने धर्म पर क़ायम थे।

दोनों धर्मों से इसी ढंग से सम्बन्ध स्थापित रहे जैसा कि हम ने संकेत किया है यहां तक कि मुसलमानों और रूमियों के बीच भयंकर युद्ध छिड़ गये।

रूमियों की प्रबलता के कारण ईसाइयत अरब के उत्तर तथा दक्षिण में शासन कर रही थी।

इस बीच कि अभी रोम से युद्ध चल रहा था मुसलमानों ने सोचा कि दक्षिणी अरब के ईसाइयों के विषय में अपनी स्थिति स्पष्ट कर दें। विशेष रूप से जब कि रूमी उस क्षेत्र में अपनी मिशनरियों को उपहार दे रहे थे, उन के लिए कलीसा का निर्माण करा रहे थे और उन के सम्मान तथा अधिकार को थोप रहे थे और उन लोगों को ईसाइयत फैलाने पर मुबारक-बाद देते रहे थे।

अतः रसूलुल्लाह ने नजरान वालों के पास एक पत्र भेजा जिस में लिखा था :

'इब्राहीम, इस्हाक़ और याक़ूब के ख़ुदा के नाम !
मैं तुम्हें आमन्त्रित करता हूं कि तुम बन्दों की दासता से निकल कर अल्लाह की दासता ग्रहण कर लो। और तुम्हें बन्दों की मित्रता से निकल कर अल्लाह की मित्रता में आने की तलक़ीन करता हूं।
यदि तुम इन्कार करोगे तो तुम्हें 'जिज़्या' देना होगा और यदि जिज़्या देने से भी इन्कार करोगे तो मैं तुम्हारे विरुद्ध युद्ध की घोषणा करता हूं।' —'वसल्लम'

किताब वालों का प्रतिनिधिमण्डल

दक्षिण में स्थित नजरान में ईसाइयों का काबा था। उन्होंने अपना एक प्रतिनिधिमण्डल मदीना भेजा ताकि वे रसूलुल्लाह से भेंट कर के कोई सन्धि कर लें। वह मण्डल सायं अस्त्र के पश्चात् मदीना पहुंचा और मस्जिद से दाख़िल हुआ।

उस ने प्रथम कार्य यह किया कि बैतुल मक़्दिस की ओर रुख़ कर के ईसाई उपासना पद्धति के अनुसार नमाज़ पढ़ी, लोगों ने रोकना चाहा तो रसूलुल्लाह ने फ़रमाया कि 'पढ़ने दो'। (इब्ने हाशिम) यहां तक कि वे अपनी इबादत से फ़ारिग़ हो गये।

रसूलुल्लाह ने देखा कि आप सल्ल० से मुलाक़ात करने के लिए उन्होंने ज्योतिषियों की बहुमूल्य तथा शाही चादरें ओढ़ीं। चांदी और सोने की अंगूठियां पहनीं तथा रेशमी वस्त्र पहन कर आये तो उन की टोपियों तथा चादरों के बीच कृत्रिमता बनावटीपन का अन्तर स्पष्ट था।

आप ने उन से उस समय तक मुलाक़ात करने से इन्कार कर दिया जब तक वे सादा तथा यात्री वस्त्र न पहन लें और इन वस्त्रों तथा शृंगार को छोड़ न दें ?

उस की सुरक्षा करता है और उसे रोजी देता है ?

प्रतिनिधिमण्डल : 'हां, हमें मालूम है।'

रसूलुल्लाह : क्या ईसा इन में से किसी भी कार्य पर सामर्थ्य रखते थे ?

प्रतिनिधिमण्डल : 'नहीं।'

रसूलुल्लाह : क्या तुम नहीं जानते कि धरती और आकाश की कोई चीज़ अल्लाह से छिपी नहीं है ?

प्रतिनिधिमण्डल : हां ! मालूम है।

रसूलुल्लाह : तो क्या ईसा को वे समस्त बातें मालूम थीं जो अल्लाह को मालूम है ?

प्रतिनिधिमण्डल : 'नहीं' !'

रसूलुल्लाह : क्या तुम्हें नहीं मालूम कि हमारे रब ने गर्भाशय में ईसा की सूरत बनाई जैसी उस ने चाही, और यह कि हमारा 'रब' न खाना खाता है न पानी पीता है और न उसे 'हदस' (अपवित्रता) होता है ?

प्रतिनिधिमण्डल : 'हां ! हम जानते हैं ?'

रसूलुल्लाह : क्या तुम जानते हो कि ईसा की माता गर्भवती हुई थीं ? जिस प्रकार अन्य स्त्रियां गर्भवती होती हैं फिर उन्होंने अन्य स्त्रियों के समान बच्चा जना फिर दूध पिलाया जिस प्रकार अन्य स्त्रियां पिलाती हैं फिर वह खाना खाने, पानी पीने तथा पाखाना पेशाब करने लगे ?

प्रतिनिधिमण्डल : 'हां ! हम लोग जानते हैं।'

रसूलुल्लाह : फिर जिस बात का दावा करते हो वह किस प्रकार संभव है ?

प्रतिनिधिमण्डल : क्या आप ईसा के विषय में नहीं मानते कि वह अल्लाह कलिमा थे जिसे उस ने मरयम के अन्दर डाला था और उस

की ओर से रूह थे ?

रसूलुल्लाह : हां मैं इसे स्वीकार करता हूं।

जब रसूलुल्लाह ने देखा कि ये लोग वाद विवाद एवं तर्क वितर्क पर तुल गये हैं। और ईसा को पूज्य तथा खुदा के बराबर मनवाने पर अड़े हुए हैं तो आप ने फ़रमाया कि कल तक ठहरो, मैं फिर बात करूंगा।

अतः अल्लाह ने 'मुबाहिला'[1] की आयतें उतारीं :

> निस्सन्देह अल्लाह के नज़दीक ईसा की मिसाल आदम की सी है, कि उसे मिट्टी से बनाया, फिर उसे कहा : हो जा ! तो वह हो गया।' यही बात तुम्हारे रब की ओर से सत्य है तो तुम सन्देह न करने वालों में से न बनो। इस के पश्चात् कि तुम्हारे पास ज्ञान आ चुका है अब जो तुम से इस बारे में हुज्जत करे, तो तुम कहो : आओ ! हम और तुम अपने-अपने बेटों और स्त्रियों को बुला लें, और हम अपने आप को इकट्ठा करें और तुम भी अपने आप को इकट्ठा करो, फिर प्रार्थना करें और झूठों पर अल्लाह की लानत भेजें। —आले इम्रान ५९-६१

सुबह हुई तो आप मुबाहिला के लिए तैयार थे। हज़रत हसन, हज़रत हुसैन और हज़रत फ़ातिमा रज़ि॰ को ले कर आप स्वयं तशरीफ़ लाये और इस के लिए तैयार हो गए कि नजरान प्र॰ मण्डल के साथ मुबाहिला करें और दोनों पक्ष झूठ बोलने वालों पर अल्लाह की लानत करें।

प्रतिनिधि मण्डल ने जब यह सुझाव सुना तो मानने में उन को बड़ा संकोच हुआ। कौन जानता था कि मुहम्मद सच्चे हों और ईसा अलै॰ उन के ही समान इन्सान हों और हम ईश्वरत्व को उन से सम्बद्ध करने में ग़लती पर हों ? फिर वे अल्लाह से क्यों दुआ करें कि वह उन्हें तबाह कर दे ? उन्हों ने मुहम्मद सल्ल॰ उन के दोनों नवासों तथा उन की पुत्री को देखा तो उन के होश उड़ गये कि अकेला झूठ बोलने वाला हलाक न होगा वरन् उस के साथ उस का परिवार भी नष्ट हो जायेगा। अतः उन्हें अपने परिवार के विनाश की शंका होने लगी यदि उन्हों ने इस सुझाव को मान लिया ?

आपस में कहने लगे : यदि यह व्यक्ति सम्राट है तो हम इस के आक्रमणों से सुरक्षित न होंगे क्योंकि इस के राज्य में वृद्धि हो रही है। हो सकता है कि हमारी क़ौम का घेराव कर डाले।

---

१. मुबाहिले का अर्थ है एक दूसरे को शाप देना या बद्दुआ करना।

और यदि यह व्यक्ति भेजा हुआ नबी है तो कष्ट की कोई बात नहीं है इस मुबाहिले के पश्चात धरती पर हम में से कोई न बचेगा, बताओ क्या कहते हो ?

उन के नेतृत्व के लिए शुरहबील बिन वुदाआ आप के पास आया और कहने लगा कि मुबाहिले से अच्छी हम ने तज्वीज सोची है ?

आप ने पूछा : वह क्या ?

शुरहबील : 'आप स्वतः निर्णय कर दें, आप का निर्णय उत्तम होगा।'

रसूलुल्लाह : 'क्या अल्लाह तुम्हारे पीछे कोई अन्य व्यक्ति तो नहीं है जो तुम्हारी निन्दा करे ?'

शुरहबील : मुझ से जो पूछना हो तो पूछें !

जब रसूलुल्लाह ने उस से प्रश्न किये तो उस ने बताया कि घाटी के लोग उस की राय के बिना कोई निर्णय नहीं करते।

अन्ततः रसूलुल्लाह ने मुबाहिले का सुझाव वापस ले लिया और उन से सन्धि कर ली जिस के कारण वे इस्लामी राज्य की जनता बन गये।

इस सन्धि की निम्नलिखित शर्तें थीं—

— अल्लाह और उस का रसूल नजरान के ईसाइयों की जान-माल की रक्षा के उत्तरदायी हैं।

— उन के माल, जायदाद, उन की भूमि, मिल्कियतें, उन के अधिकार उन का धर्म, समुदाय, उन के परिवार, अनुयायी व सहयोगी, उन के उपस्थित तथा अनुपस्थित सब सुरक्षित होंगे, उन के पदों में कोई परिवर्तन नहीं किया जायेगा, न उन के हुक़ूक़ तथा धर्म में कोई संशोधन होगा, न किसी पादरी या राहब को बदला जायेगा। उनके थोड़े या अधिक अनुयायियों (उप-अधिकारियों) को बदला जायेगा। इस्लाम से पूर्व के किसी खून की मांग नहीं की जायेगी न वे जिहाद के तारित होंगे, न उन्हें ज़कात देनी होगी न उन के भू-भाग में कोई सेना प्रवेश करेगी।

— जो व्यक्ति उन से अधिकार प्राप्ति की मांग करेगा तो अत्याचारी एवं उत्पीड़ित के बीच न्याय किया जायेगा।

— जो व्यक्ति ब्याज खायेगा तो वह मेरी जिम्मेदारी से बाहर है, कोई व्यक्ति किसी दूसरे अपराध में पकड़ा जायेगा,

— इस लेख्य पत्र पर अल्लाह और रसूल का जिम्मा है जब तक वे इस पर क़ायम हों और बिना जुल्म के उपदेश एवं सुधार कार्य करते रहें

यहां तक कि अल्लाह का फ़ैसला आ जाये।'

इस सन्धि पत्र पर गवाही के हस्ताक्षर अबू सुफ़्यान बिन हर्ब, ग़ीलान बिन अम्र, मालिक बिन औफ़, अक़्रा बिन हाबिस और मुग़ीरा बिन शअबा ने किये।

इन अधिकारों के उत्तर में ईसाइयों को किस चीज का जिम्मेदार ठहराया गया? केवल वर्ष में एक बार २ हजार हुल्ला उन्हें देना होगा। यह उस ज़कात का साधारण-सा बदला था जिसे मुसलमान अकेले अदा करते हैं तथा जिहाद न करने के बदले में था जिस का पालन केवल मुसलमान करते हैं।

यह थी वह चीज जो नजरान पर लागू की गयी।

इस के द्वारा इस्लाम ने उन ईसाई अरबों तथा रोम की हुकूमत से विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध स्थापित किये जिन की ओर से इस्लाम पर युद्ध थोपा जा रहा था जबकि उन को धार्मिक स्वतन्त्रता दी गयी थी और उन की सुरक्षा को व्यवस्था की गयी थी।

हम चुनौती स्वरूप पूछना चाहते हैं कि क्या मसीही सम्प्रदायों ने एक दूसरे से इतनी उदारता का प्रमाण दिया है? या यह वह तरीक़ा है जिस के द्वारा केवल इस्लाम ने अतीत के शताब्दियों के अन्धकार को समाप्त किया?

हम पुनः प्रश्न करते हैं कि क्या किताब धारियों ने अपने उत्तरदायित्वों का विचार किया? और क्या उन्होंने उस धर्म के साथ न्याय किया जिस ने उन के अधिकारों की ज़मानत ली थी?

मूर्तिपूजा के मुक़ाबले में इस्लाम को अपनी तब्लीग़ करते हुए दसवां साल बीत चुका था कि दक्षिण में कुछ क़बीले उस के विरुद्ध में खड़े हो गये। उन के विचारानुसार क़ुरैश का कोई व्यक्ति 'नबी' होने का दावा कर के सम्राट बन बैठा है अतः वे भी स्वप्न देखने लगे कि जिस प्रकार मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह को शासन मिल गया है उन्हें भी मिल जायेगा।

अरब द्वीप के दक्षिणी ईसाइयों ने इन तत्वों को उत्तेजित करने और उन की सहायता करने में बढ़ चढ़कर भाग लिया और नजरान के ईसाइयों ने अस्वद ग़ासी से पत्र व्यवहार कर उसे नबी होने पर उकसाया। फिर वह उन के पास गया और वहां से यमन चला गया जहां उस ने अपना शासन स्थापित कर लिया परन्तु वहां उस की पत्नी ने उसे क़त्ल कर दिया तथा धरती पर बसने वालों को उस से नजात दिलायी।

क्या ये फ़ित्ने दक्षिणी ईसाइयों के षड़यन्त्रों तथा गुप्त कार्यवाहियों के

सहायतार्थ थे ? या केवल इस्लाम से नफ़रत एवं द्वेष का प्रकटन होना था ? अस्वद ग़सी के समर्थन में नजरानी ईसाइयों ने जो कुकृत्य किये वही नुबूव्वत के झूठे दावेदार मसीलमा कज्जाब के समर्थन में किये तथा यही कुकृत्य तग़लब के ईसाइयों ने भी किये। तग़लब तथा नजरान के ईसाइयों का इस्लाम में प्रवेश न करना तथा अपने पैतृक धर्म पर जमे रहना तो समझ में आता है परन्तु यह बात अबोधगम्य है कि एक व्यक्ति 'वह्य' द्वारा भेजी गयी अल्लाह की पुस्तकों का तो इन्कार कर दे परन्तु हास्यपूर्ण क़िस्सों का अनुरोध करे।

यह स्थिति उस समय उपस्थित होती जब वे मसीलमा तथा अस्वद पर वास्तव में ईमान लाये होते परन्तु जब मामला इस्लाम के विरुद्ध कार्य-वाहियों की सहायता करना हो चाहे किसी के साथ भी सहयोगी सम्बन्ध स्थापित करना पड़े तो यह समस्या ऐसी है जिस का इलाज मानसिक चिकित्सक ही कर सकते हैं।

अध्याय—७

मोमिनों की माताएं

- रसूलुल्लाह की पवित्र पत्नियां
- राजनैतिक स्थिरता
- हज्जतुल वदाअ
- मदीना वापसी

रसूलुल्लाह की पवित्र पत्नियां

कुछ लेखकों ने बहु-पत्नी विवाह पर कीचड़ उछाली है तथा इस्लाम द्वारा प्रदत्त संख्या को सीमित करने या रोकने का प्रयत्न किया है। कभी कहा जाता है कि इस्लाम में वास्तविक रूप में बहुपत्नी विवाह की इजाज़त नहीं है, कभी तर्क दिये जाते हैं कि जीवन में होने वाले नित्य नये परिवर्तन तथा समाज एवं समुदाय के हित केवल एक ही पत्नी की मांग करते हैं अतः दूसरे या तीसरे विवाह की इच्छा न करें। क्योंकि एक ही पत्नी से आनन्दित होना तथा उस से सन्तान की शिक्षा-दीक्षा कराना पर्याप्त है।

निस्सन्देह हमारे समाज में इस विचारधारा के जनक वे विभिन्न कारक हैं जो संवेदन शक्ति तथा दोषों को ग़लत प्रमाणित करने की शक्ति के ह्रास का शिकार हैं। कुछ वर्षों से बहुपत्नी विवाह के विरोध में क़ानून पास कराने का प्रयत्न किया गया है परन्तु उलमा की नाराज़ी तथा इस्लामी मामलों से रुचि रखने वाली जमाअतों की प्रतिक्रिया से उन के प्रयत्नों पर पानी फिर गया।

उस समय मैं ने बहु पत्नी विवाह पर जो लेख लिखा था उस का यहां दोहराना आवश्यक है क्योंकि विचाराधीन विषय का उस से घनिष्ट सम्बन्ध है।

जीवन के कुछ अकाट्य नागरिकता सम्बन्धी तथा आर्थिक सिद्धान्त हैं जो समस्त मानवता पर स्वतः ही लागू होते हैं। लोग उन की जानकारी प्राप्त कर उन का मुक़ाबला करने को तैयार हो जाते हैं अथवा उन से अपरिचित रहते हैं और उन के लक्षण उन के बीच स्पष्ट होते रहते हैं।

एक व्यक्ति का कई पत्नियों से सम्बन्ध भी उन्हीं विषयों से सम्बन्धित है जिन में सामूहिक तथा सामाजिक मामले अस्त-व्यस्त हो जाते हैं। और उन से अनजाने में मुक़ाबला अकारथ होता है।

इस की व्याख्या यह है कि स्त्रियों तथा पुरुषों की संख्या का अनुपात या तो समान होगा या उस का किसी एक ओर को झुकाव होगा। यदि अनुपात समान है या स्त्रियों की संख्या अनुपात में कम है तो बहुपत्नी रीति स्वतः ही समाप्त हो जायेगी। तथा प्रकृति स्वयं उस के न्यायिक वितरण पर बाध्य कर देगी। तथा प्रत्येक व्यक्ति चाहे या न चाहे एक ही पत्नी से सन्तुष्ट होगा।

परन्तु यदि स्त्रियों की संख्या पुरुषों की तुलना में तीव्रता से बढ़ रही

हो तो हमें निम्नलिखित स्त्रियों में से एक का चयन करना होगा।

(१) या तो कुछ स्त्रियों को आजन्म महरूम रहना होगा।

(२) या रखैल तथा दाश्ताओं की अनुमति देनी होगी और व्यभिचार (जिना) को वैध करना होगा।

(३) या बहुपत्नी विवाह की इजाजत देनी होगी।

हमारे विचार से पुरुष के मुक़ाबले स्वयं स्त्री ही अभाव के जीवन से घृणा करती है और जुर्म, अपराध तथा अवज्ञा के बिस्तर पर जाना पसन्द नहीं करती। अतः उस के सामने एक ही मार्ग रहता है कि वह किसी अन्य स्त्री के साथ स्वेच्छा से उस के पति की पत्नी बन जाये और उस के बच्चों का सम्बन्ध उस पुरुष से हो जाये। इस स्थिति में बहुपत्नी विवाह को स्वीकार किए बिना कोई उपाय नहीं है जिस की इस्लाम ने अनुमति दी है।

एक अन्य समस्या यह है कि पुरुषों की कामवासना में अत्यधिक मतभेद पाया जाता है। अनेकों पुरुष जितने हृष्ट-पुष्ट, स्वस्थ, विलासित प्रिय, समृद्धिशाली तथा धनवान होते हैं उतने अन्य व्यक्ति नहीं होते! इसी प्रकार वह व्यक्ति जो युवावस्था के प्रारम्भ ही से ठण्डा तथा निरावेग है तथा एक दूसरा व्यक्ति बड़ी शक्ति एवं तीव्रावेग रखता है, दोनों समान कैसे हो सकते हैं? क्या यह अन्याय की बात नहीं है? क्या हम स्वस्थ व्यक्ति को उस की आकांक्षानुसार उतना ही खाना देते हैं जितना एक रोगी को देते हैं?

यही स्थिति बहुपत्नी विवाह की है।

एक तत्वदर्शिता और भी है वह यह कि कभी-कभी पत्नी रोगी तथा बीमार होती है, बांझ होती है अथवा अधिक आयु की हो जाती है तो इन असमर्थताओं के कारण उसे क्यों छोड़ दिया जाये?

पहली पत्नी का हक़ है कि वह पति की सरपरस्ती में रहे और उस के साथ एक और पत्नी भी आ जाये जो पत्नीत्व के कर्त्तव्यों का पूर्ण रूप से पालन करे।

बहुपत्नी विवाह की वैधता के तर्कों के आधिक्य के बावजूद इस्लाम जो इसे सही मानता है, इस बात का कठोर विरोधी है कि इसे कुछ लोगों की कामवासनाओं की तृप्ति का साधन बनाया जाये।

लाभ की तुलना में कुछ प्रतिबन्ध, कुछ अधिकार तथा कुछ कर्त्तव्य भी होते हैं। अतः बहुपत्नी विवाह के समय न्याय एवं समता का विचार रखना अनिवार्य होगा। परन्तु यदि व्यक्ति अपने ऊपर, अपने बच्चों अपनी

पत्नियों पर जुल्म करे तो इस स्थिति में बहुपत्नी विवाह की इजाज़त न होगी। क्योंकि जो व्यक्ति आवश्यक तथा वांछित भरण पोषण पर भी सामर्थ्यवान न हो और कई विवाह भी करे ?

जब शरीअत के विधान निर्माता भरण पोषण की मजबूरी को एक शादी के लिए विश्वस्त क़रार देते हैं तो एक से अधिक शादियों में इस का विचार बहुत अधिक किया जायेगा।

शरीअत अविवाहित युवकों को उस समय तक रोज़ा रखने का उपदेश देती है जब तक वे विवाह न कर सकें तथा एक शादी का सामर्थ्य न रखने वाले को सतीत्व का जीवन व्यतीत करने की नसीहत करती है—

> 'और जिन्हें विवाह का अवसर प्राप्त न हो उन्हें चाहिए कि अपने आप को बचाये रखें (संयमपूर्वक रहें) यहां तक कि अल्लाह अपने अनुग्रह से उन्हें सम्पन्न कर दे।' —अन-नूर ३२

फिर आप सोचिए कि उस व्यक्ति के विषय में ताकीद की क्या दशा होगी जो एक पत्नी रखता है ? वह सब्र करने का अधिक पात्र है और सतीत्व एवं संयम का ज़्यादा अधिकारी है।

सामान्यतः अधिक पत्नियां होने के कारण सन्तान भी अधिक होती है। और इस्लाम प्रशिक्षण, सम्मान तथा जीवन के साधनों में औलाद के साथ न्याय और समता का विचार रखने को अनिवार्य करता है चाहे उन की माताएं एक से अधिक हों। हदीस में है—

> 'लानत हो उस व्यक्ति पर जिस ने अपनी औलाद को अवज्ञाकारी बनने को छोड़ दिया।'

अधिक सन्तान वाले पिता की जिम्मेदारी है कि वह कामवासना की ओर आकृष्ट होने से अति सावधानी बरते।

इस प्रकार इस्लाम पत्नियों के मामले में न्याय एवं समता को अनिवार्य करता है।

यद्यपि हार्दिक कामना पर क़ाबू पाना मनुष्य के लिए बहुत कठिन है फिर भी ऐसे व्यवहार तथा कर्म हैं जिन में पति शरीअत की सीमाओं की रिआयत कर सकता है तथा अपने अधिकारों को न्याय एवं समता के पैमाने से परख सकता है तथा आल एवं औलाद के मामले में ईश्भय का विचार कर सकता है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया—

> 'अल्लाह प्रत्येक व्यक्ति से उन चीज़ों के विषय में पूछताछ करेगा जिन पर उसे संरक्षक तथा देखभाल करने वाला बनाया

'गया है कि उस ने उन की रक्षा की या उन्हें नष्ट कर दिया।'

—नसई, इब्ने हिब्बान

एक अन्य हदीस में है—

'मनुष्य के अपराधी होने के लिए काफ़ी है कि वह उन लोगों को नष्ट कर दे जो उस की अभिभावकता तथा संरक्षण में दिये गये हैं।'

—अबू दाऊद

ये हैं उस न्याय तथा समता की सीमाएं जिन्हें अल्लाह ने शर्त क़रार दिया है। जो व्यक्ति इन उत्तरदायित्वों के पालन का सामर्थ्य रखता हो वह दो, तीन और चार पत्नियां कर सकता है वरना एक ही पत्नी को पर्याप्त समझे—

'और यदि तुम्हें इस का भय हो कि उस के साथ समता का व्यवहार न कर सकोगे तो फिर एक ही पर बस करो।'

—अन-निसा ३

मैं ने बहुपत्नी विवाह पर कई पत्रकारों के एतराज़ पढ़े हैं जिन का कहना है कि जब पुरुष कई पत्नियां रख सकता है तो स्त्री भी कई पति कर सकती है ?

जब मैंने इन आपत्तिकर्ताओं की खोज की तो पता चला कि वे सब गन्दे तथा दुष्ट स्वभाव के हैं या फिर वे नेतागण हैं। आश्चर्य इस बात पर हुआ कि वे सब व्यभिचार तथा दुष्कर्मों की दुनिया में रह रहे हैं तथा वे सतीत्व एवं संयम की बुनियाद पर पारिवारिक व्यवस्था को अवांछनीय समझते हैं।

इस रोगी एतराज़ का उत्तर यह है कि इस यौन सम्बन्धों का सर्वप्रथम तथा सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य परिवार का निर्माण तथा साफ़ व स्वच्छ वातावरण में बच्चों का पोषण है। तथा यह किसी ऐसी स्त्री से सम्भव नहीं है जिस के पास लोगों की एक भीड़ अपनी कामवासनाओं की पूर्ति के लिए आती हो, वह सब की आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन बने तथा यह भी पता न चल सके कि नवजीवित बच्चा किस का है।

यह पहलू भी विचार योग्य है कि उक्त वर्णित स्थिति में स्त्री का कितना बुरा अंजाम होगा ? यह बात तो मानने योग्य है कि एक इन्जन चार गाड़ियों को खींच ले परन्तु यह बात अमान्य है कि एक गाड़ी चार इन्जनों से चले। 'पुरुष स्त्रियों के सिर धरे हैं', इस वास्तविकता का इंकार स्पष्टतः प्राकृतिक नियमों से बग़ावत है।

यह वास्तविकता अफ़सोसनाक है कि लोग इन सीमाओं का विचार नहीं करते और न्याय एवं समता के अर्थ को समझे बिना बहुपत्नी विवाह

वह बहुपत्नी को हराम ठहराती है।' और हर व्यक्ति को एक पत्नी के लिए बाध्य करती है। इस के पश्चात समाज को अधिकार देती है कि वह अन्य साधनों को प्रयोग कर स्त्रियों की अधिकता का इलाज करे और लोगों के मन में अशान्ति एवं आवेश उत्पन्न करे।

आधुनिक युग में अधिकांश वर्गों में बहुपत्नी विवाह को एक बुराई माना जाता है तथा व्यभिचार को मात्र तफ़रीह तथा साधारण-सा अपराध समझा जाता है। कितनी चिन्ताजनक बात है? पूरा दीन, पूरी नैतिकता खतरे में है! इस्लाम के विरुद्ध तथा क़ानून के नाम पर यह साज़िश चल रही है ताकि समूचा समाज इस की लपेट में आ जाये।

समस्त नबियों ने एक विवाह भी किया एक से अधिक भी किये परन्तु उन के संयम पर कोई कुप्रभाव न पड़ा। Old Testament के वर्तमान ग्रन्थों में ऐसे उदाहरण पाये जाते हैं जिन से इस की पुष्टि होती है।

इस्लाम राहिबों के समान स्त्रियों से सम्बन्ध विच्छेद को इबादत नहीं समझता और न ईसाइयत की तरह चार पत्नियों से विवाह को पाप बताता है।

इस्लाम के निकट पाप यह है कि स्वतन्त्रतापूर्ण जहां चाहे व्यक्ति अपनी वासनाओं की सन्तुष्टि करे और यह भी पाप है कि उस की इस कामना का दमन कर दिया जाये ताकि वह धीरे-धीरे अपना मार्ग स्वयं खोज ले जिस प्रकार पानी अपना मार्ग बना लेता है।

—o—

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुरक्षित जीवनी (सीरत) बताती है कि आप ने २५ वर्ष की आयु में हज़रत ख़दीजा रज़ि० से विवाह किया जबकि हज़रत ख़दीजा चालीस वर्ष की हो चुकी थीं। आप ने उन्हीं के साथ निर्वाह किया किसी अन्य स्त्री की ओर आकृष्ट न हुए यहां तक कि हज़रत ख़दीजा की आयु पैंसठ (६५) वर्ष हो गयी।

जिस समय हज़रत ख़दीजा रज़ि० का निधन हुआ उस समय रसूलुल्लाह की आयु पचास वर्ष से ऊपर निकल चुकी थी।

आप के कट्टर से कट्टर दुश्मन को यह दुस्साहस न हो सका कि आप पर कीचड़ उछाले या आप के चरित्र पर किसी प्रकार का आरोप लगाये।

---

(१) हमारा विश्वास है कि बहुपत्नी विवाह का आदेश सभी दीनों में अल्लाह ने दिया था जिस में ईसाइयत भी सम्मिलित है। इसके विपरीत मनगढ़न्त क़ानूनों को हम कोई महत्व नहीं देते।

—लेखक

मानव आयु के इस प्रफुल्लित, आनन्दित तथा यौवनपूर्ण चरण में आप के मस्तक से शिष्टता एवं सतीत्व का प्रकाश फूटता था। यदि आप दूसरी पत्नी करते तो शरीअत, अक़्ल तथा रीति किसी भी ओर से कोई रुकावट न थी। क्योंकि बहुपत्नी विवाह अरबों का सुप्रसिद्ध तरीक़ा था तथा नबियों के पिता हज़रत इब्राहीम अलै० की शरीअत में मान्य था परन्तु आप ने एक ही को पर्याप्त समझा और उन्हीं से शान्ति एवं सन्तुष्टि प्राप्त की यद्यपि वह आयु में काफी बड़ी थीं तथा आप शक्ति एवं मर्दानापन में पूर्ण थे।

हज़रत ख़दीजा के स्वर्गवास के पश्चात आप ने विवाह करना चाहा तो जीवन साथी के चयन में सौन्दर्य को सामने न रखा यद्यपि आप ऐसा करते तो आप की शिष्टता पर कोई दाग़ न आता। बल्कि आप ने इस चयन में यह विचार रखा कि जिन लोगों ने आप का साथ दिया है और आप के सन्देश को शक्ति प्रदान की है उन से सम्बन्ध अधिक घनिष्ठ तथा सुदृढ़ हो जायें।

अतः अल्पायु के बावजूद अबू बक्र रज़ि० की पुत्री हज़रत आइशा रज़ि० तथा हज़रत उमर रज़ि० की पुत्री हज़रत हफ़सा जो सुन्दर न थीं, का चयन किया।

फिर हज़रत उम्मे सल्मा रज़ि० से विवाह किया जो आप के एक घनिष्ठ साथी की विधवा थीं तथा उन्होंने हब्शा और मदीना की ओर हिजरत करने में अपने पूर्व पति का भरपूर साथ दिया था।

हज़रत सौदा रज़ि० से आप ने विवाह का नाता जोड़ा जिन की वयोवृद्धा के कारण पुरुष रुचि समाप्त हो गयी थी।

इन चारों पत्नियों के साथ आप की संगति तथा सहवास किसी उल्लेखनीय मज़ा उड़ाने या दुनिया से मोह के कारण न था और यदि इस असम्भवता को मान भी लिया जाये तो रसूलुल्लाह के लिए इसमें कोई गुनाह न था क्योंकि प्रत्येक मुसलमान को चार पत्नियों की स्वतन्त्रता थी जबकि रसूलुल्लाह के जीवन में न्याय, समता तथा सरलाचार विश्वसनीय था।

प्रश्न किया जा सकता है कि जब रसूलुल्लाह का स्वर्गवास हुआ तो उस समय आप की नौ पत्नियां मौजूद थीं अतः यह कैसे उचित होगा कि आप ने इतनी पत्नियां रखीं जबकि दूसरों को इस की इजाज़त न थी ?

क्या संख्या की वृद्धि कामवासना का मार्ग खोलने के लिए न थी ? तथा इस के पीछे मज़ा लेने के प्रेरक कार्यशील न थे ?

हम उत्तर देंगे कि जिस व्यक्ति को निरन्तर संघर्ष तथा जान तोड़

जिहाद ने एक दिन भी शान्तिपूर्वक बढ़ने का अवसर न दिया हो उसे भोग-विलास करने की समाई कहां से निकल आई।

सीमित मानव हितों के आवाहकों की दशा यह होती है कि जीवन की चिन्ताएं तथा क़ौमों की समस्याएं उन्हें थका कर चूर कर देती हैं और उन्हें क्षण भर के लिए भी आराम तथा राहत प्राप्त नहीं हो पाती ताकि आराम ले कर पुनः चलत-फिरत के लिए खड़े हो जायें। जब यह दशा साधारण तथा आम नेताओं की है तो महानतम रिसालत के आवाहक तथा 'अमीन की क्या दशा होगी ? तथा जो कुछ इस मार्ग में आप को सहना पड़ा आप भली-भांति इस से परिचित हैं।

हम यह जवाबी प्रश्न भी करेंगे कि जिस व्यक्ति ने अपनी युवावस्था, मजा उड़ाने, विलासता तथा कामवासनाओं से दूर रह कर विताई, अब वह सहसा वृद्धावस्था में कैसे उन में विभ्मन हो जायेगा ?

रसूलुल्लाह सल्ल० द्वारा अन्य पांच स्त्रियों से विवाह किये जाने की परिस्थितियों तथा उद्देश्यों पर विचार करें तो ज्ञात होगा कि व्यक्तियों तथा समुदायों के प्रति आप के राजनैतिक विवेक, खैर की स्थापना तथा शर और बुराई के दमन एवं उन्मूलन की जिम्मेदारियां पूरी करने हेतु ये विवाह किये गए थे।

उदाहरणस्वरूप हज़रत जैनब बिन्त जहश रज़ि० से आप के विवाह को लीजिये। यह विवाह रसूलुल्लाह के लिए बड़ी कठिन परीक्षा थी। अल्लाह ने आप को अरबों में प्रचलित एक ग़लत रीति के उन्मूलन का आदेश दिया। और आप ने उस का पालन किया यद्यपि आप कठिन परिस्थितियों, शर्म तथा ग्लानि का सामना कर रहे थे।

हज़रत जैनब रज़ि० रसूलुल्लाह की नातेदार थीं। बाल्यकाल ही से आप उन से परिचित थे। आपने हज़रत जैद बिन साबित से उनके विवाह की इच्छा प्रकट की परन्तु उन्होंने अप्रसन्नता व्यक्त की तथा उन के भाई ने भी इन्कार कर दिया था क्योंकि हज़रत जैनब उच्च कुल की थीं, उन का सम्बन्ध क़ुरैश क़बीले से था परन्तु हज़रत की कोई हैसियत न थी।

यद्यपि वह एक ग़ुलाम थे फिर भी रसूलुल्लाह ने उन्हें यह सम्मान दिया कि उन्हें अपने वंश में सम्मिलित कर लिया और लोग उन्हें जैद बिन मुहम्मद कहने लगे।

इधर ज़ैनब ने सोचा कि रसूलुल्लाह के आदेश का पालन करना अनिवार्य है। आप ने वंश तथा ख़ानदान के गौरव को प्राप्त करने हेतु ज़ैद से मेरा रिश्ता करना तय किया है। यह सोच कर अप्रसन्नता की

समाप्त करना अभिप्रेत था अतः
बिना रसूलुल्लाह पर इस आदेश

अल्लाह के इस आदेश को
मटोल से काम लिया कि कदाचि
बचा दे ! बल्कि आप ने इस से
हज़रत ज़ैद रज़ि॰ अपनी पत्नी
तलाक़ का संकल्प किया तो रसू
रोके रखो और अल्लाह से डरो

उस समय 'वह्य' उतरी औ
आप को इस व्यवहार पर डा
देने दो और फिर स्वयं विवाह

अपने बेटे की पत्नी से विवाह रचा लिया है और तुम्हारा नुबूव्वत का दावा एक भ्रम है।' अरबों को उस समय 'हक़' मालूम हो जायेगा तथा वे इस अनुचित प्रथा से रुक जायेंगे। रसूलुल्लाह का कर्म तथा व्यवहार कुफ़्र तथा अज्ञानता के चिन्हों को समाप्त करने में आगे-आगे होना चाहिए।

यह है वह वृत्तांत जिसे क़ुरआन ने निम्न प्रकार प्रस्तुत किया है—

> 'और (हे नबी !) याद करो जब तुम उस व्यक्ति से कह रहे थे जिस पर अल्लाह ने एहसान किया था और तुम ने भी जिस पर एहसान किया : अपनी पत्नी को अपने पास रहने दे (उसे न छोड़), और अल्लाह से डर। और तुम अपने जी में वह बात छिपाये हुए थे जिसे अल्लाह खोलने वाला था। तुम लोगों से डर रहे थे हालांकि अल्लाह इस का ज्यादा हक़ रखता है कि तुम उस से डरो। फिर जब ज़ैद को उस से कोई सरोकार न रहा, तो हम ने तुझ से उस स्त्री का विवाह कर दिया ताकि ईमान वालों पर अपने मुंह बोले बेटों की पत्नियों के मामले में कोई तंगी न रहे, जबकि उन का उन स्त्रियों से कोई सरोकार न रह जाये। और अल्लाह का हुक्म पूरा होकर ही रहता है।'
>
> —अल-अहज़ाब ३७

इस क़िस्से का विचित्र पहलू यह है कि मूर्खों ने इस में कामवासना तथा सस्ते प्रेम का समावेश उत्पन्न कर दिया। और कहने लगे कि रसूलुल्लाह को ज़ैनब से प्रेम हो गया था जिसे उन्होंने अपने दिल में छिपा लिया था जब मामला स्पष्ट हो गया तो तलाक़ की अवधि समाप्त होने पर विवाह कर लिया। अतः आयत के शुरू में इस प्रेम भावना के दबाने पर प्रकोप किया गया है।

हमें इस भयानक ग़लती तथा सत्य को असत्य के साथ गड़मड करने पर बड़ा आश्चर्य होता है।

आख़िर शुरूआत ही में ज़ैनब से विवाह करने को किस ने रोका था ? जबकि वह आप की फूफीज़ाद बहन होती थीं तथा आप ही ने उन्हें एक ऐसे व्यक्ति से विवाह करने पर राज़ी किया था जिस से उन्हें ज़रा भी रुचि न थी तथा इस रिश्ते को स्थिर रखने में आप ने काफ़ी दिलचस्पी भी ली थी।

क्या आप सल्ल० उन से उस समय रुचि लेने लगे थे जब उन्हें दूसरे के सामने प्रस्तुत कर चुके थे ?

आइये अब इस आयत पर भी ग़ौर कर लें तथा इस में वर्णित प्रकोप

तथा निन्दा (मलामत) को समझने का प्रयत्न करें।

लोग कहते हैं कि जिस चीज को आप ने अपने जी में छिपा रखा था और जिस के विषय में अल्लाह के स्थान पर लोगों से डर रहे थे, वह जैनब रजि० से आप की रुचि थी। अर्थात उन के विचार में अल्लाह ने इस लिए आप की निन्दा की कि उस निहित रुचि को स्पष्ट क्यों न कर दिया ?

हम पूछते हैं कि क्या नैतिकता इसी का नाम है कि जब व्यक्ति किसी स्त्री से प्रेम करे तो सब के सामने उस की घोषणा भी करता फिरे ? विशेष रूप से जिस ने किसी दूसरे की पत्नी से प्रेम किया हो ?

क्या अल्लाह किसी ऐसे व्यक्ति की निन्दा करेगा जिस ने किसी स्त्री से प्रेम कर के उसे छिपाया क्यों है ? और यदि वह अपने प्रेम के विषय में प्रशंसा काव्य रचे तो क्या इस से उस का मान तथा श्रेणी ऊंची हो जायेगी ?

खुदा की क़सम ये तो बड़ी मूर्खता, नादानी और बुद्धिहीनता की बातें हैं।

इसी नादानी के द्वारा कुछ बुद्धिहीनों ने क़ुरआन की व्याख्या करने का प्रयत्न किया है। अल्लाह तआला किसी व्यक्ति को प्रेम के छिपाने के कारण निन्दा नहीं कर सकता। यहां वस्तु स्थिति वह है जिस का मैंने आरम्भ में उल्लेख किया है।

रसूलुल्लाह ने जो बात अपने जी में छिपाई थी वह इस विवाह के परिणाम स्वरूप उत्पन्न स्थिति अल्लाह के आदेश के क्रियाशील होने में विलम्ब और बेटा बनाने की अरबों की इस प्रथा की समाप्ति से उत्पन्न हंगामा तथा अशान्ति की स्थिति का भय था।

अल्लाह ने अपने नबी को समझाया कि उस के आदेश का कार्यान्वयन किसी चिन्ता तथा शंका के कारण टाला नहीं जा सकता है और कष्ट तथा सन्ताप के बावजूद सुनने और पालन करने के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं है। आप सल्ल० से पूर्व अन्य नबियों की भी यही दशा थी।

आयत के आखिरी टुकड़े पर ग़ौर करेंगे तो आप देखेंगे कि उसमें कहा गया है कि : 'अल्लाह का हुक्म तो पूरा हो कर ही रहता है। अर्थात ईश्वरीय आदेश प्रत्येक दशा में कार्यान्वित होना ही था।

फिर बाद की आयतें इस अर्थ को और अधिक स्पष्ट कर देती हैं—

> 'नबी पर किसी ऐसे काम में कोई रुकावट नहीं जो अल्लाह ने उसके लिए नियत कर दिया हो। यह अल्लाह का नियम उन सब (नबियों) के मामले में रहा है जो पहले गुजर चुके हैं—और

अल्लाह का हुक्म (पहले से) सोच समझ कर तै किया हुआ होता है।
(यह नियम उन लोगों के लिए है) जो अल्लाह के सन्देश पहुंचाते हैं और उस से डरते हैं, और अल्लाह के सिवा किसी से नहीं डरते। और अल्लाह हिसाब लेने के लिए काफ़ी है।'

—अल-अहज़ाब ३८, ३९

आप किसी के मन में साहस पैदा करना चाहेंगे तो उस से कहेंगे कि अल्लाह के सिवा किसी से न डरो। यह बात आप इस लिए नहीं कहते वह अवज्ञाग्रस्त है बल्कि इस लिए कि वह एक ऐसे महान कार्य को करने जा रहा है जो समस्त रीति एवं प्रथाओं से हट कर है अतः आप उस के हृदय को सान्त्वना देते हुए कहते हैं कि केवल अल्लाह से डरना चाहिए।

इन समस्त आयतों से जो बात प्रदर्शित होती है वह यही है कि अल्लाह अपने रसूल को किसी स्त्री प्रेम करने को प्रेरित नहीं कर रहा है वरन एक अनुचित प्रथा को समाप्त करने के लिए आप की ढारस बंधा रहा है कि मेरे हुक्म पर कार्यान्वित हो और किसी से न डरो। यही कारण है कि जब रसूलुल्लाह इस कुरीति को समाप्त कर रहे हैं तो अल्लाह प्रत्यक्ष रूप से कहता है—

'मुहम्मद तुम्हारे पुरुषों में से किसी के पिता नहीं हैं, परन्तु वे अल्लाह के रसूल और नबियों के समापक हैं और अल्लाह हर चीज़ का ज्ञान रखने वाला है।' —अल-अहज़ाब ४०

अन्य स्त्रियां जिन से आप ने विवाह किये श्रेष्ठ तथा उच्च कुल की स्त्रियां थीं यहां तक कि उन्हें राजकुमारियां समझा जाता था। जब वे इस्लाम में दाखिल हुईं तो परिस्थितियों ने उन्हें बहुत नीचे कर दिया जिन की उपेक्षा करना तहरीक के नायक के लिए उचित न था।

उदाहरण स्वरूप अबू सुफ़यान की पुत्री उम्मे हबीबा रज़ि० को लीजिये। वह कुरैश के उस सरदार की पुत्री थीं जो इस्लाम के विरुद्ध २० वर्ष तक संघर्ष करता रहा परन्तु उस की पुत्री इस्लाम की गोद में आ गई। अल्लाह के लिए पिता और क़ौम को छोड़ दिया। मक्का छोड़ कर हब्शा को हिजरत कर गयीं यद्यपि मक्का में उन के पिता की सरदारी क़ायम थी जिस का बोल-बोला था।

इस प्रकार की त्यागप्रिय एवं प्राण अर्पित कर देने वाली स्त्री का जिस का पति मर चुका था—क्या किसी ऐसे व्यक्ति से विवाह कर दिया जाता जो उस के सम्मान तथा पद को ठेस पहुंचा देता ?

रसूलुल्लाह ने उन के आत्म सम्मान के श्रेष्ठ बनाये रखने के लिए तथा उन के द्वारा कीर्तियों को आदर प्रदान करने हेतु उन्हें अपनी पत्नियों में सम्मिलित कर लिया।

'हुई' की पुत्री हज़रत सफ़िया को लीजिए। उन का पिता यहूदियों का राजा था। इस्लाम और बनी इस्राईल के संघर्ष में उन के भाई, पिता और पति सब हताहत हो चुके थे और आप एक सैनिक के हिस्से में आयीं थीं जो केवल इतना जानता था कि वह एक युद्ध-बन्दी हैं और उन्हें अपनी मिल्क (स्वामित्व) में लेना उस का हक़ था और जैसा चाहता उन से व्यवहार कर सकता था।

जब रसूलुल्लाह को उन की दशा पर करूण आयी और आप ने उन्हें मुक्त कर दिया तथा उन के भूतकाल की क्षतिपूर्ति कर दी और उन के सम्मान तथा आदर हेतु उन से विवाह कर लिया तो क्या आप के इस प्रयास की निन्दा की जा सकती है?

हारिस की पुत्री हज़रत जुवैरिया का उदाहरण लीजिए। इन के पिता क़बीला बनू मुस्तलक़ के सरदार थे। मुसलमानों से इन के युद्ध की समाप्ति भयंकर पराजय पर हुई। और इस पराजय के बाद इन के क़बीले को बड़ा अपमान सहना पड़ा। परन्तु रसूलुल्लाह ने पराजित नेता का दिल रखने के लिए उस से ससुराली नाता जोड़ा और उस की पुत्री से विवाह कर लिया। ताकि मुसलमानों को मालूम हो जाये कि उन की सहायता एवं सम्मान वाजिब है। अत: रसूलुल्लाह का इरादा पूरा हो गया। क़बीले के समस्त बन्दी बनाये गये पुरुष एवं स्त्री मुक्त कर दिये गए। क्योंकि अब उस क़बीले से दुर्व्यवहार करना अनुचित था जिस की पुत्री से रसूलुल्लाह ने विवाह कर लिया था।

—o—

रसूलुल्लाह की पवित्र जीवनी से अनभिज्ञ लोग सोच सकते हैं कि रसूलुल्लाह का निजी जीवन खान-पान की सम्पन्नता तथा अन्य आमोद-प्रमोदों पर आधारित था।

ऊपरी दृष्टि में बहुपत्नी रखने वाले व्यक्ति के विषय में यह विचार होता है कि वह भौतिक रूप से सम्पन्न तथा समृद्धशाली होगा। उस के दस्तरख्वानों पर फलों और गोश्त की ज्यादती होती होगी। वे पेय उस की बैठकों में गर्दिश करते होंगे जो उन्माद तथा आनन्द व मस्ती उत्पन्न करते हों। और वह उन परियों जैसी सुन्दर युवतियों के बीच सुरक्षित होता होगा जो उसे सांसारिकता से नि:स्पृह बना देती होंगी तथा वह दुनिया से

आंखें बन्द कर लेता होगा ?

यह लगभग वह दशा है जो सम्राटों तथा राजाओं के महलों में पायी जाती है।

परन्तु रसूलुल्लाह के घर में इस आमोद-प्रमोद तथा आनन्द के कण मात्र अंश का विचार भी नहीं किया जा सकता है।

इसी क्षण कठिनाइयों तथा कष्टपूर्ण जीवन के अन्य पहलू पर भी दृष्टि डाल लीजिये जिस से आप के सामने उस व्यक्ति का चित्र आ सके जिस ने अपने आप को 'हक़' (सत्य) से सम्बद्ध कर रखा था। और वह उसी का भार उठाये फिरता था और लोगों को उस के पास लाने का प्रयत्न करता रहता था। उस की आंखों की ठंडक उस प्रयास में थी जो उसे उस के उद्देश्य से निकट कर दे। दुनिया तथा भौतिकता की आकांक्षा उस के पैरों के नीचे और कानों के पीछे होती थी।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० के निर्मल तथा प्रतापवान हृदय के निकट भौतिक मोह हो सकते थे परन्तु वे ऐसे महानुभाव व्यक्ति थे जिन का चयन अल्लाह ने विशेष रूप से किया था। उन का वातावरण ही दूसरा था। वह कहते थे—

> 'मुझे दुनिया से क्या लेना ? मेरा उदाहरण तो उस व्यक्ति जैसा है जो एक वृक्ष की छाया तले आराम हेतु (कुछ देर को) ठहरे और फिर उसे छोड़ दे। (अर्थात चल दे)।'[1]

आप सल्ल० मानव संकल्पों को उच्च आदर्शों से तथा अल्लाह के यहां सुप्रतिफल पाने से सम्बद्ध कर देते हैं। आप फ़रमाते हैं—

> 'जन्नत में एक कोड़े का स्थान दुनिया और दुनिया की हर चीज़ से बेहतर है तथा अल्लाह के मार्ग में यात्रा करना दुनिया और दुनिया की हर चीज़ से उत्तम है।'[2]

अपनी पत्नियों के साथ आप ने जो कठिनाइयों से पूर्ण तथा सरल जीवन निर्वाह किया वह किसी अन्य के वश की बात नहीं है। इमाम बुख़ारी ने हज़रत अनस बिन मालिक से हदीसोल्लेख की है कि 'मुझे नहीं मालूम कि रसूलुल्लाह ने कभी मुलायम चपाती खायी हो यहां तक कि अल्लाह से जा मिले, और आप के शुभ नेत्रों ने कभी बकरी का भुना हुआ गोश्त नहीं देखा।'

---

१. तिर्मिज़ी, इब्ने माजा, हाकिम तथा अहमद।

२. बुख़ारी, मुस्लिम।

हज़रत आइशा कहती हैं कि 'हम दो महीनों में तीन चांद[1] इस दशा में देखते थे कि रसूलुल्लाह के घर में आग तक न सुलगती थी।' हज़रत उर्वा बिन ज़ुबैर रज़ि० ने पूछा, 'फिर आप लोगों का निर्वाह किस चीज़ से होता था ?' फ़रमाया : 'खजूर और पानी से !'

हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं कि जिस समय रसूलुल्लाह का स्वर्गवास हुआ तो हमारे घर में खाने की कोई चीज़ न थी, केवल कुछ जौ थे जो मेरे कमरे में पड़े हुए थे।

रसूलुल्लाह जिस बिस्तर पर आराम करते थे वह चमड़े का था और उस में पत्तियां भरी हुई थीं।[2] उस पर आप रात को कुछ देर आराम करते कि मुर्ग़ा बोलने की आवाज़ आती और फ़ज्र की तैयारी हेतु उठ जाते।'

इस का अर्थ यह नहीं है कि इस्लाम हलाल और पवित्र चीज़ों के सेवन को बुरा समझता है अथवा यह कि रसूलुल्लाह ने उन से वंचित रहने का तरीक़ा क़ायम किया।

कदापि नहीं ! इस्लामी शरीअत तो दीप्त एवं स्पष्ट है। हम ने यहां उस व्यक्ति के निजी जीवन की एक झलक पेश की है जिसे लोग आरोपित करते हैं। प्रायः व्यक्ति अपने बच्चों का दिल बहलाने के लिए खिलौने डाल देता है और वे आपस में झगड़ने लगते हैं क्योंकि उस व्यक्ति का स्वभाव इस बच्चों के खेल से बहुत दूर होता है।

कुछ विचारक तथा दर्शनशास्त्री उस स्वादिष्ट भोजन की ओर से ग़ाफ़िल रहते हैं जो उन के लिए उपलब्ध कराया जाता है। उन्हें इस की कोई चिन्ता नहीं होती क्योंकि वे अपने विचारों में लीन रहते हैं।

लगता है कि मैं कल्पना जगत में देख रहा हूं कि रसूलुल्लाह सल्ल० लोगों की भीड़ को भौतिकता पर मोहित और टूट पड़ते देख रहे हैं और अफ़सोस के साथ सिर हिला कर कह रहे हैं—

> 'यदि तुम उस चीज़ को जानते जिसे मैं जानता हूं तो तुम हंसते कम और रोते ज़्यादा।' —बुखारी

फिर आप रोते हुए अल्लाह से दुआ करते हैं—

---

१. तीन चांद पहली तारीख़ को देखने का अर्थ दो मास पूरे गुज़र जाने से है। दो मास तक कुछ पकने के लिए न होता था उपहार या दूध व खजूर पर निर्वाह किया जाता था। —अनुवादक

२. बुखारी।

'हे अल्लाह तू मुहम्मद की सन्तान के लिए पर्याप्त आजीविका प्रदान कर !'[1]

यह बुद्धि के साथ अन्याय तथा इतिहास के साथ बड़ा जुल्म होगा कि एक व्यक्ति रास्ते से मुड़ कर इधर आ जाये और यह देखे अथवा उस से कहा जाये कि हजरत मुहम्मद सल्ल० की अनेकों पत्नियां थीं, और उस से वह यह समझे कि आप को बहुपत्नी का सम्बन्ध कामवासना की ज्यादती तथा भौतिकता एवं माल-दौलत की वृद्धि का प्रमाण प्रस्तुत करता है।

—०—

यह समझना भी उचित नहीं है कि यह सादगी और दुर्दशा इस लिए थी कि आप के पास कुछ न था परन्तु यदि आप सल्ल० के लिए खजाने खुल जाते और जीवन की सम्पन्नता प्राप्त हो जाती तो आप आनन्दित जीवन बिताते तथा बचत करने की चिन्ता करते और आप की पत्नियां भी इस स्वर्ण अवसर से लाभान्वित हुए बिना न रहतीं ?

कदापि नहीं ! स्थिति यह नहीं थी। आप इस बात पर सामर्थ्यवान थे कि जो दौलत आप के यहां गर्दिश कर रही है उसे रोक लें और जिस प्रकार का चाहें प्रयोग करें। परन्तु आप इन छोटे स्वार्थों से बहुत दूर थे। आप की दृष्टि महानतम उद्देश्यों पर थी। और यदि भूमि के खजाने भी आपके सामने आते तो आपको सर्वप्रथम यह चिन्ता होती कि उन्हें शीघ्रता-शीघ्र लोगों में वितरित कर दें।

हजरत अबू जर रजि० से हदीसोल्लेख है कि मैं रसूलुल्लाह के साथ मदीना के मरुस्थलीय क्षेत्र में चल रहा था कि हमारे सामने ओहुद पहाड़ आ गया। आप ने फ़रमाया : 'हे अबू जर !' मैं ने कहा : 'हे अल्लाह के रसूल मैं उपस्थित हूं।'

रसूलुल्लाह : 'मुझे इस से खुशी नहीं होती कि मेरे पास ओहुद पहाड़ के बराबर सोना आ जाये और मेरे ऊपर तीन रातें इस प्रकार गुजर जायें कि मेरे पास एक दीनार रह जाये। मगर यह कि मैं आदेश दूं कि इसे अमुक-अमुक अल्लाह के बन्दों में आगे से, पीछे से, दायें से और बायें से वितरित कर दिया जाये।'

फिर आगे बढ़े और फ़रमाया—

'आज जो लोग धनवान हैं कल क़ियामत में निर्धन होंगे। परन्तु

---

१. बुखारी, मुस्लिम।

जहालत बरतूं या कोई मेरे साथ जहालत बरते ।'

—०—

दुआ में फ़रमाते थे—

'हे अल्लाह ! मैं तुझ से हिदायत, तक़्वा, आफ़ियत (क्षेम) तथा सम्पन्नता मांगता हूं ।' —मुस्लिम, तिर्मिज़ी

जीवन की इस कठोर तथा अनिवार्य पद्धति के कारण आप की पत्नियों ने मांग की कि वे इन कठिनाइयों को कैसे सहन करें जिन से वे पहले अनभिज्ञ थीं । वे तो बड़े-बड़े परिवारों से आयी थीं ।

उन का बहुमत आरम्भ जीवन से सम्पन्नता, समृद्धि तथा राहत और आराम का आदी था । या तो अपने माता-पिता के साथ या अपने गत पतियों के साथ आराम का जीवन यापन कर रही थीं ।

अतः आश्चर्य की बात नहीं यदि इस नवीन जीवन से उन्हें कठिनाई हुई हो ? उन्हों ने सम्पन्नता तथा आराम की मांग की हो और आपसी मतभेद के बावजूद एक मत हो गयी हों कि रसूलुल्लाह के पारिवारिक पोषण बढ़ाने की प्रार्थना की जाए ।

वे अरब के सब से महान व्यक्ति के घर में थीं । उन का जीवन स्तर उन के स्थान तथा पदानुसार होना चाहिए था । हज़रत आइशा और हज़रत हफ़्सा रज़ि० ने इन मांगों को रसूलुल्लाह के सामने रखा शेष साथ में थीं ।

रसूलुल्लाह को इस प्रदर्शन से कष्ट हुआ । समूचे विश्व में सब से उत्तम तथा पूर्ण आदर्श आप की ज़ात में था । मोमिन पुरुषों तथा स्त्रियों की निगाहें प्रत्येक दिशा से आप पर पड़ती थीं । आप को उस उम्मत का निर्माण करना था जो घात में लगे हुए सहस्त्रों शत्रुओं के बीच में थी ।

यदि आप का परिवार ही कठिनाइयों तथा मुजाहिदाना जीवन को न बिता सकता तो आप इस संघर्ष को कैसे जारी रखते ? तथा अपनी उम्मत (समुदाय) के हज़ारों स्त्री पुरुषों को यह उत्तरदायित्व कैसे सौंपते कि वे प्रत्येक चीज़ से बे-परवाह हो कर दीन पर जमे रहें यहां तक कि ठिकाना और शरण स्थान उपलब्ध हो जाये । और नाव किनारे से लग जाए ?

चुनांचे रसूलुल्लाह ने आजीविका में वृद्धि की मांग ठुकरा दी और उन के इस काम को नापसन्द किया तथा उन से अलग-अलग रहने लगे यहां तक कि लोगों में यह अफ़वाह फैल गयी कि रसूलुल्लाह ने अपनी पत्नियों को तलाक़ दे दी है ।

हज़रत अबू बक्र तथा हज़रत उमर को इस ख़बर से बड़ी चिन्ता हुई ।

क्योंकि इन दोनों की पुत्रियां रसूलुल्लाह् की पत्नियां थीं। दोनों सेवा में उपस्थित हुए ताकि वस्तुस्थिति का पता लगा सकें। जब दोनों पहुंचे तो देखा कि आप मौन हैं और पत्नियों का जमघटा लगा हुआ है।

हज़रत उमर : 'हे अल्लाह् के रसूल ? क्या आप ने अपनी पत्नियों को तलाक़ दे दी है ?'

रसूलुल्लाह : 'नहीं !'

वातावरण शोकग्रस्त था अतः हज़रत उमर रज़ि० ने सोचा कि कुछ कहूं ताकि आप को हंसी आये और यह शोकपूर्ण स्थिति समाप्त हो।

हज़रत उमर : 'हे अल्लाह् के रसूल ! क्या ज़ैद की बेटी (अर्थात उमर रज़ि० की पत्नी) मुझ से आजीविका मांगे तो मैं उस की गर्दन उड़ा दूं ?'

रसूलुल्लाह् को हंसी आ गयी और आप के दांत दिखाई देने लगे। और फ़रमाया ये सब मुझ से आजीविका मांग रही हैं। अतः हज़रत अबू बक्र अपनी पुत्री आइशा रज़ि० को समझाने लगे और हज़रत उमर रज़ि० अपनी पुत्री हफ़सा को ऊंच-नीच बताने लगे। दोनों ने यही कहा कि तुम नबी से वह कुछ मांगती हो जो आप के पास नहीं है ?

रसूलुल्लाह् ने दोनों बापों को अपनी पुत्रियों से कुछ कहने से रोक दिया। पत्नियां लज्जित हुईं और कहने लगीं—

'ख़ुदा की क़सम ! हम इस बैठक के बाद कभी भी रसूलुल्लाह् से वह चीज नहीं मांगेंगी जो आप के पास नहीं है।

रसूलुल्लाह् ने एक महीने तक उन से सम्बन्ध विच्छेद किये रखा ताकि उन्हें इस हरकत की भयंकरता का आभास हो जाये और अल्लाह् की ओर से 'तख़ईर'[1] की आयतें नाज़िल हुईं। जिन में पत्नियों को हक़ दिया गया कि चाहें तो सादा जीवन व्यतीत कर के आख़िरत की सफलता प्राप्त करें अथा अपने परिवार में जा कर शानदार वस्त्र तथा उम्दा खानों का सेवन करें।

यह शिक्षा उन के भौतिक तथा सांसारिक जीवन के मोह को समाप्त करने के लिए पर्याप्त थी। अतः उन सब ने रसूलुल्लाह् के साथ रहने को प्रमुखता दी। और आप के सिद्धान्त 'जो थोड़ा और पर्याप्त हो वह उस

---

१. 'तख़ईर' एक पारिभाषिक शब्द है जिस का अर्थ है कि पत्नी को इस बात का अधिकार देना कि वह पति के साथ रहने या न रहने का निर्णय स्वयं करें।
—अनुवादक

'अधिक से उत्तम है जो बहुत हो परन्तु ग़ाफ़िल कर दे' को अपना नियम बना लिया। तथा आप के साथ जिहाद, तहज्जुद, दान, समानता, प्रदान, सहानुभूति, नम्रता तथा सेवा से पूर्ण बिताना पसन्द कर लिया :

> 'हे नबी ! अपनी पत्नियों से कहो, यदि तुम सांसारिक जीवन और उस की शोभा चाहती हो, तो आओ ! मैं तुम्हें कुछ दे दिला कर भली भांति रुख़सत कर दूं और यदि तुम अल्लाह और उस के रसूल और आख़िरत का घर चाहती हो तो निस्सन्देह अल्लाह ने तुम में से उत्तमकार स्त्रियों के लिए बड़ा बदला तैयार कर रखा है।' —अल्-अह्ज़ाब २८,२९

अतः आप की पत्नियों ने अल्लाह, उस के रसूल और आख़िरत के घर को प्रमुखता दी और नबी के साथ सत्य की सहयोगी तथा आख़िरत के सुप्रतिफल की आकांक्षा में जीवन व्यतीत करती रहीं।

—o—

रसूल की सेवा में अपने को नष्ट कर देने की भावना तथा 'नफ़्स' की मांगों से विरक्त हो जाने का त्याग ही था जिस के द्वारा अल्लाह ने उन को उच्च श्रेणियां प्रदान कीं। अतः अब वे उस व्यक्ति की पत्नी मात्र न नहीं जिस के अधीन दुनिया की शोभा को खोजी हों वरन् उच्च, श्रेष्ठ तथा अनुपम जीवन में शरीक, शुभ चिन्तक तथा साथी बन गयीं और अल्लाह के इस कथन की पात्र हो गयी :

> 'नबी का सम्बन्ध ईमान वालों के साथ उससे अधिक है जितना उन लोगों का अपने-आप से है, और उसकी पत्नियां उन की मातायें हैं।' —अल-अह्ज़ाब ६

रूहानी माताओं के इस रिश्ते को और सुदृढ़ तथा प्रबल करने के लिए 'मोमिनों की माताओं' (उम्मुल मोमिनीन) को पर्दा करना अनिवार्य कर दिया गया तथा किसी अजनबी के लिए जायज़ न रहा कि उन से मुलाक़ात कर सके। चाहे साथ में कोई महरम ही क्यों न हो।

दीन तथा दुनिया से सम्बन्धित प्रश्न अब पर्दे के पीछे से होंगे। इस प्रकार रसूलुल्लाह के स्वर्गवास के पश्चात् किसी से उन का विवाह करना भी नाजायज़ ठहरा दिया गया।

इस निसंकोच निर्णय से उन चापलूसों तथा चाटुकारों की जड़ कट गयी जो नायकों, नेताओं तथा प्रमुखों के घरों में आवागमन जारी रखते हैं। इसी प्रकार उन अवसरवादियों की इच्छाओं पर ओस पड़ गयी जो

अल्लाह से जुड़ गया। अंतरिक्ष भेदी अजान से कान परिचित हो गये। 'क़ुर्रा' तथा क़ुरआन के 'हाफ़िज' उत्तर एवं दक्षिण में फैल गये। चारों ओर अल्लाह की किताब का पाठ होने लगा। अल्लाह के आदेश तथा क़ानून लागू होने लगे तथा अरबों को वह शिक्षा मिलने लगी जिस से उन के पूर्वज अपरिचित थे।

जब से आबादी हुई है, इस क्षेत्र ने कभी इतनी शुभ जागृति अब तक न देखी थी। तथा इस का इतिहास इस प्रकार के अनोखे तथा अजनबी दिनों से कभी परिचित न हुआ था।

रसूलुल्लाह मदीना में प्रतिनिधिमण्डलों का स्वागत करते थे उन के अन्दर रूह फूंकते थे तथा श्रेष्ठ तत्वदर्शिता का पाथेय उपलब्ध कराते थे। और वे प्रतिनिधमण्डल अपने-अपने क्षेत्रों में जा कर इस्लाम की बुनियाद डालते थे। तथा अपने इतिहास में सुनहरी अध्याय की वृद्धि करते थे।

रसूलुल्लाह ने प्रतिनिधिमण्डलों के स्वागत पर ही बस नहीं किया वरन् दक्षिण में अपने वरिष्ठ एवं प्रतिष्ठित सहाबा को भेजा ताकि वहां इस्लामी शिक्षाओं का प्रसारण तथा उन की स्थिरता हो सके।

यमन और उस के आस पास के क्षेत्रों में विभिन्न क़बीले आबाद थे। वहां किताबधारियों की पुरानी गतिविधियां थीं। वहां इस्लाम को उन्नति मिली तो ईरानियों की छाया घटती चली गयी।

> 'ये सुदूर क्षेत्र अधिक निगरानी, देख-भाल तथा सरपरस्ती के मोहताज थे। अतः रसूलुल्लाह ने खालिद बिन वलीद को वहां इस्लाम के प्रचार हेतु भेजा फिर मुआज बिन जबल (रज़ि०) तथा अबू मूसा अशअरी (रज़ि०) को भेजा फिर (अन्त में) अली बिन अबी तालिब (रज़ि०) को इस्लाम की दावत तथा तब्लीग़ का उत्तरदायी बनाकर भेजा।'
>
> —बुखारी

रसूलुल्लाह को पारलौकिक इशारा मिल गया था कि अब अन्तिम समय आने वाला है अतः मुआज बिन जबल (रज़ि०) को यह समझाकर कि वह अपने सम्बोधितों को किस प्रकार इस्लाम का सन्देश देंगे तथा कैसे उन्हें दीन की रूह एवं स्वभाव समझायेंगे। मदीना के बाहर उन के साथ साथ गये। हज़रत मुआज सवारी पर बैठे हुए थे तथा रसूलुल्लाह पैदल उन के साथ चल रहे थे। जब समझा चुके तो फ़रमाया :

> 'हे मुआज! इस वर्ष के पश्चात् हमारी तुम से मुलाक़ात न हो सके। कदाचित तुम मेरी मस्जिद तथा क़ब्र से गुजरो।'

यह सुन कर हजरत मुआज बिन जबल रसूलुल्लाह के वियोग का ध्यान कर रोने लगे और चीखें निकलने लगीं। फिर रसूलुल्लाह ने मदीना की ओर मुंह किया और फ़रमाया :

> 'मुझ से सब से अधिक निकट संयमी लोग होंगे चाहे वे कोई भी हों और कहीं भी रहते हों।' —अहमद

अन्ततः वही हुआ जिस की ओर रसूलुल्लाह ने इशारा किया था। हजरत मुआज अन्तिम हज्ज तक यमन में ठहरे रहे फिर 'हज्जे अकबर' के ८१ दिन बाद आप (सल्ल०) की मृत्यु हो गयी जब कि हजरत मुआज यमन ही में रहे।

यमन और उस के आस पास के क्षेत्रों पर कड़ी नजर रखने की आवश्यकता थी क्योंकि वहीं से और बनू हनीफ़ा में से दो छली तथा झूठे नबी होने के दावेदार उठे थे। तथा दोनों छलियों के पास कोई ऐसी चीज या निशानी न थी जिस के कारण कुछ लोग भी जमा होते। परन्तु बुरा हो पक्षपात का जिस ने चरवाहों के एक बड़े क़बीले को यह कहने पर बाध्य कर दिया कि हम जानते हैं कि 'मसीलमा' झूठा है परन्तु 'रबीआ' का झूठा 'मुजिर' के सच्चे से उत्तम है।

नुबूव्वत के इन झूठे दावेदारों ने एक ही समय में भीषण फ़ित्ने फैलाये परन्तु मुजाहिदों ने उन्हें रौंद डाला तथा मसीलमा व अन्य झूठे नबियों की नुबूव्वत समाप्त हो गयी तथा उन का नामोनिशान तक मिट गया।

हज्जतुल वदाअ् (अन्तिम हज्ज)

> रसूलुल्लाह ने हज्ज के संकल्प की घोषणा करते हुए कह दिया कि जो चाहे साथ चले। आखिरकार 'ज़ीक़अदा' के अन्त में आपने मदीना से प्रस्थान किया और अपने पीछे हजरत अबू दुजाना (रजि०) को मदीना का अमीर नियुक्त किया। —इब्ने हिशाम

यह हज्ज उन समस्त हज्जों से भिन्न था जिन से अरब के लोग परिचित थे मुशिरकों से की गयीं सन्धियां एवं प्रतिज्ञायें समाप्त हो चुकीं थीं तथा मस्जिदे हराम में उन का प्रवेश निषेध हो गया था और हज्ज का मौसम उन ऐकेश्वरवादियों के लिए विशेष हो गया था जो अल्लाह के अतिरिक्त किसी की इबादत नहीं करते। समस्त इलाक़ों से काबा का संकल्प कर के प्राणोत्सर्जक मण्डल निकल पड़े क्योंकि वे जानते थे कि इस वर्ष हज्ज के अमीर स्वयं रसूलुल्लाह हैं।

रसूलुल्लाह ने हज़ारों और लाखों के उस समूह को देखा जो 'तस्बीह' और 'तक्बीर' कह रहा था और अल्लाह के आज्ञापालन में गतिशील था। अतः जन साधारण में अल्लाह के आज्ञापालन और इस्लाम से मार्ग दर्शन प्राप्त करने की भावना को देख कर आप (सल्ल०) को सन्तुष्टि हो गयी और आपने निश्चय किया कि इन के दिलों में दीन के सारांश का बीजीरोपण कर दें तथा इस विशाल समूह के सामने वे शिक्षाएँ प्रस्तुत कर दी जायें जिन से 'जाहिलियत' (कुफ़्) की रही सही बुनियादें भी ढह जायें तथा इस्लाम की आवश्यक शिष्टताऐं, नैतिकताऐं तथा आदेश और क़ानून हृदयंगम हो जायें। अतः आप ने निम्नलिखित अभिभाषण दिया :

हे लोगो ? जो कुछ मैं कहूं उसे ध्यानपूर्वक सुनो, क्योंकि मुझे नहीं मालूम कि भविष्य में इस स्थान पर तुम से मिल सकूंगा ?

हे लोगो ? तुम्हारी जानें, तुम्हारे माल आपस में एक दूसरे पर 'हराम' (आदर योग्य) हैं जिस प्रकार यह दिन यह महीना और यह नगर 'हराम' है (लूटना व रक्तपात करना हराम है) यहां तक कि तुम अपने रब से जा मिलो तो वह तुम से तुम्हारे कर्मों के विषय में पूछ ताछ करेगा मैं ने बात पहुंचा दी है।

यदि तुम में से किसी के पास अमानत रखी जाये तो वह इस का पाबन्द है कि अमानत वाले की अमानत उसे लौटा दे, ब्याज गलत तथा अवैध है परन्तु तुम अपना मूलधन लेने के अधिकारी हो जिस में न तुम्हारी हानि है न दूसरों की।

अल्लाह ने नियत कर दिया है कि ब्याज की कोई समाई नहीं है और जहां तक अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब के ब्याज का सम्बन्ध है तो मैं इस समस्त ब्याज को समाप्त करता हूं। इस्लाम से पूर्व के खून के समस्त बदले निरस्त हैं और अपने परिवार के पहले बदले जिसे मैं क्षमा करता हूं यह हैं कि रबीआ बिन हारिसा के दूध पीते बच्चे को बनू हुज़ैल ने क़त्ल कर दिया था।

लोगो ! अब शैतान इस बात से निराश हो चुका है कि इस भू-भाग में उस की पूजा होगी परन्तु वह इस बात पर सन्तुष्ट है कि छोटी छोटी बातों में उसका आज्ञापालन होगा। अतः तुम अपने दीन तथा ईमान की सुरक्षा करो।

'(लोगो ! आदर के) महीने का हटाना केवल कुफ़् में एक वृद्धि है जिस से काफ़िर लोग गुमराह किये जाते हैं, किसी वर्ष

रसूलुल्लाह उन से कहते हैं कि कहो : 'हे लोगो ! रसूलुल्लाह फ़रमाते हैं : 'जानते हो यह कौन सा महीना है ?' वह लोगों से पूछते तो वे उत्तर देते : 'आदर का महीना है ।' फिर आप क्या हुक्म देते कि कहो : अल्लाह ने तुम्हारी जानें और तुम्हारे माल इसी महीने के समान आदरणीय ठहराये हैं यहां तक कि तुम अपने 'रब' से जा मिलो ।

फिर वह ऐलान करते : 'हे लोगो ! रसूलुल्लाह पूछते हैं : 'तुम्हें मालूम है कि यह कौन सा दिन है ?'

वह उद्‌घोषणा करते तो लोग उत्तर देते कि बड़े हज्ज का दिन है ।' तब रसूलुल्लाह कहते कि ऐलान कर दो कि अल्लाह ने तुम्हारी जानों और मालों को तुम पर इस दिन के समान आदर्णीय ठहराया है यहां तक कि अपने रब से जा मिलो ।'

—०—

रसूलुल्लाह चाहते थे कि रिसालत की तब्लीग़ की दीर्घ परीक्षाओं से गुज़रने के बाद जो निर्देश रह गये हैं उन्हें लोगों तक पहुंचा दें ।

आप का एहसास था कि यह क़ाफ़िला जीवन संघर्ष में अकेला रह जायेगा अत: आप इसी प्रकार ऐलान कर रहे थे जैसे पिता अपने बेटे को नसीहतें करता है । जब वह यात्रा पर जाता है तो पिता उसे पाथेय स्वरूप बहुत सी बातें समझाता है और ऐसे उपदेश देता है जो उसे आजीवन हितकारी सिद्ध होते हैं ।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जब भी शंका होती कि लोग शैतान से धोखा खा रहे हैं तो आप डरावे के साथ नसीहत करते तथा उसे दिल की गहराइयों में उतार देते । 'हिदायत' और 'इल्म' से वातावरण को प्रकाशमान कर देते और समस्त गढ़े हुए थे तथा झूठे पाखण्डों का उन्मूलन कर देते और लोगों को साक्षी बनाते कि उन्हों ने सुन लिया ? और मेरी बात पहुंच गयी ?'

तेईस वर्ष बीत चुके थे अल्लाह की 'वह्य' का पाठ हो रहा था । दूर तथा समीप के सभी इन्सानों को इस किताब 'क़ुरआन' की आयतें सुनाई जा रही थीं जिन्हें हज़रत जिब्राईल (अमानतदार फ़रिश्ता) के द्वारा उन के दिल पर नाज़िल किया गया था । जाहिलियत (कुफ्र) की गन्दगियों से लोगों को पवित्र किया जा रहा था तथा इन अरबों में एक ऐसी संतान परवान चढ़ रही थी जो तथ्यों को समझती थी और उन के प्रकाश में ब्रह्माण्ड पर नज़र रखती थी । इस काम में पूरे २३ वर्ष लग चुके थे ।

और, अब पहले हज्ज के अवसर पर अगणित इन्सानों के इस समूह का

नेतृत्व रसूलुल्लाह के हाथ में था। जहां से शिर्क (अनेकेश्वरवाद) की गन्दगियां साफ़ कर केवल एक ईश्वर की इबादत हो रही थी।

आप अपनी ऊंटनी 'अज़बा' पर सवार असीम इन्सान रूपी समुद्र को देख रहे थे ताकि उन तथ्यों को उन के दिलों में उतार दें जिन्हें दे कर आप (सल्ल०) को भेजा गया था, जिन से लोगों को परिचित कर रहे थे और अब आप जिन्हें पहुंचाने और स्पष्ट करने के दायित्व से भार मुक्त हो चुके थे।

नबियों के पिता हज़रत इब्राहीम की दुआ अल्लाह ने क़बूल कर ली थी जो उन्हों ने काबा निर्माण के समय दिल की गहराइयों से मांगी थी :

> 'हे हमारे रब ! उन लोगों में उन्हीं में से एक रसूल उठा जो उन्हें तेरी आयतें सुनाये, उन्हें किताब और हिक्मत (तत्व-दर्शिता) की शिक्षा दे और उन्हें शुद्धता एवं विकास प्रदान करे। निस्सन्देह तू प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है।'
>
> —अल-बक़रा १२९

प्रभुत्वशाली एवं तत्वदर्शी रब ने इस देश को दोनों गुणों का तेज प्रदान कर दिया था। अतः मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह (सल्ल०) को सम्मान तथा तत्वदर्शिता अथवा अन्य शब्दों में शक्ति एवं राजनीति प्रदान करती थी। और रसूलुल्लाह ने इन से काम ले कर समूची धरती की सरकश शक्तियों का उन्मूलन कर दिया। एक ओर आप ने सम्मान शक्ति व बल द्वारा 'बातिल' शक्तियों को परास्त किया और दूसरी ओर सहनशीलता तथा संयम के द्वारा शिष्टता सिखायी तथा प्रशिक्षित किया।

न्याय तथा रहमत की इस व्यापक पद्धति के द्वारा बातिल (असत्य) शनः शनः सिकुड़ता गया यहां तक कि 'जाहिलियत' और उस की अपवित्रताओं को भूमिगत होना पड़ा और इस्लाम ने बढ़ कर मैदान जीत लिया।

फिर समस्त अरबों के सामने 'हज्जतुल वदाअ' (अन्तिम हज्ज) में इस्लाम का अन्तिम ऐलान कर दिया गया।

इस 'बड़े हज्ज' में 'अरफ़ा' के दिन अल्लाह ने यह आयत उतारी :

> 'आज मैं ने तुम्हारे दीन को पूर्ण कर दिया और तुम पर अपनी नेमत पूरी कर दी, और मैं ने तुम्हारे लिए इस्लाम को दीन की हैसियत से पसन्द किया।' —अल-माइदा ३

जब हज़रत उमर (रज़ि०) ने यह आयत सुनी तो रो पड़े। पूछा गया कि इस में रोने की क्या बात है ? कहने लगे पूर्णता के पश्चात्

क्षति होती है। मानो उन्हों ने इस से रसूलुल्लाह की मृत्यु का अनुमान लगा लिया था।

सत्य यह है जीवन और जीवित व्यक्तियों को विदा करने की भावनायें उन भाषणों से विदित थीं जो रसूलुल्लाह की जबान पर जारी थे। विदायी हज्ज के अवसर पर इस प्रकार की कुछ बातें आप की जबान से निकल गयी थीं तथा कुछ वाक्य आप ने आस पास बैठने वाले लोगों और प्रतिनिधिमण्डलों की दीक्षा के समय कहे थे जैसे 'जम्र-ए-अक़्बा' के अवसर पर आप ने फ़रमाया था :

> 'मुझ से हज्ज के तरीक़े सीख लो, कदाचित इस वर्ष के बाद में हज्ज न कर सकूं।' —मुस्लिम

मदीना वापसी

हज्ज के संस्कार पूरे कर आप ने मदीना की ओर प्रस्थान किया। ताकि कुछ आराम कर सकें। बल्कि उचित शब्दों में अल्लाह के लिए प्रयत्न तथा परिश्रम का जीवन नये सिरे से आरम्भ कर सकें। दुष्टगण तथा दुष्कर्मी सत्य के आवाहकों को विश्राम लेने का अवसर नहीं देते। हालांकि दृष्टिकोण तथा सिद्धान्तों के मानने वाले बेकारी के दिनों में स्वतः ही स्फूर्ति एवं कर्मशीलता नहीं खोजते वरन् कर्त्तव्य परायणता के एहसास के कारण सुकर्मों तथा उत्तरदायित्वों से शक्ति प्राप्त करते हैं।

उन्हें पूर्णतः आराम उस समय प्राप्त होता है जब उन की खेती फल देने लगती है।

रसूलुल्लाह मदीना आये ताकि रूमियों से युद्ध करने के लिए एक सेना दल संगठित कर सकें।

रोम के शासक इस्लाम को जीवित रहने का हक़ देने को तैयार न थे अतः जो लोग इस्लाम ग्रहण कर लेते उन्हें वे क़त्ल करा देते थे।

फ़र्वा बिन उमर जज़ामी, 'मआन' तथा उसके आस-पास के रूमी क्षेत्र के गवर्नर थे। उन्हों ने इस्लाम ग्रहण कर रसूलुल्लाह को सूचित कर दिया।

रूमियों ने रोष में आ कर उस पर आक्रमण कर दिया तथा फ़र्वा रज़ि० को गिरफ़्तार कर बन्दी बना लिया और उन के 'क़त्ल' का फ़ैसला सुना दिया और उन्हें 'अफ़्रा' नामक जल स्रोत पर फांसी दे दी गयी तथा उन्हें फांसी पर लटका रहने दिया ताकि अन्य लोग शिक्षा लें। कहा जाता है कि जब उन्हें क़त्ल के लिए लाया गया तो उन्हों ने यह कविता पढ़ी :

यह सुनते ही लोग उसामा बिन ज़ैद (रज़ि०) के लश्कर में सम्मिलित होने की तैयारी में लग गये।

रसूलुल्लाह का रोग चिन्ताजनक होता जा रहा था अतः इन लोगों ने थोड़ी दूर जा कर पड़ाव डाल दिया कि देखें अल्लाह का फ़ैसला क्या होता है ?

अध्याय—८

आख़िरी समय

हज़रत आइशा (रज़ि०)
लगन में आप को विठा
डालना शुरू किया यहां
बस करो ! ।'

जब रसूलुल्लाह को सन्तो
तो फ़ज्ल बिन अब्बास को बु
पकड़ लो ।' सिर पर पट्टी ब
शुभ हाथ पकड़ लिया यहां त
बैठ गये । फिर फ़रमाया : लो
गये ।

मध्यान्ह का समय था लोग
परेशान थे । जो व्यक्ति उन्हें
निकाल कर प्रकाश में लाया

किया था, आज वही व्यक्ति थका थका सा है। आप के स्वस्थ शरीर में रोग के मुक़ाबले आराम पराजित हो चुका था।

फिर भी लोगों से वार्ता करने और उन को प्रशिक्षण करने के लिए चिन्तित थे। जब लोग चुप हो गये तो आप से एक अनोखी बात सुनी गयी। जब आप को एहसास हुआ कि मृत्यु का समय निकट आ गया है तो आप ने सोचा कि अल्लाह से भेंट इस दशा में हो कि वहां कोई व्यक्ति किसी क्षतिपूर्ति की मांग न कर सके। आप ने समस्त मामलों में न्याय एवं समता को सामने रखा फिर भी किसे मालूम कि कोई चूक हो गयी हो क्योंकि आप भी इन्सान ही थे। अतः अधिभाषण के लिए खड़े हुए तो सब से क्षमा की दरख़ास्त की ताकि आत्मा सन्तुष्ट हो जाये फिर फ़रमाया :

> 'हे लोगो ! मैं अल्लाह का शुक्र अदा करता हूं जिस के सिवा कोई पूज्य नहीं, मैं ने यदि किसी की पीठ पर कोड़े मारे हों तो यह मेरी पीठ हाज़िर है, वह अपना प्रतिकार ले ले, मैं ने किसी को बुरा भला कहा है या निन्दा की है तो वह भी अपना बदला ले ले मैं उपस्थित हूं।
>
> द्वेष और वैमनस्य मेरे स्वभाव में नहीं है और न यह मेरा काम है। मेरे निकट तुम में सब से अधिक प्रिय वह व्यक्ति है जो मुझ से अपना हक़ ले ले यदि उस का मेरे ऊपर कोई हक़ रह गया है तो मुझे इस से नजात दे दे ताकि मैं जब अल्लाह से मिलूं तो शुद्ध हूं।
>
> मेरे विचार में इतना काफ़ी न होगा जब तक कि मैं तुम्हारे बीच खड़ा न हो जाऊं।'

फ़ज़्ल बिन अब्बास कहते हैं कि फिर आप मिंबर से नीचे उतर आये और 'ज़ुह्र' की नमाज़ पढ़ी। इस के पश्चात् फिर मिंबर (मंच) पर बैठ गये और द्वेष एवं वैमनस्य के विषय में फिर चर्चा की।

चुनांचे: एक व्यक्ति खड़ा हुआ और उस ने कहा :

> 'हे अल्लाह के रसूल ! आप के ज़िम्मे मेरे तीन दिरहम हैं।'

आप ने फ़रमाया :

> 'फ़ज़्ल इसे अदा कर दो।'

फिर आप ने फ़रमाया :

> 'हे लोगो ! जिस के पास किसी की कोई चीज़ हो तो उसे वापस कर दे, और यह कदापि न सोचे कि दुनिया में बदनामी होगी सचेत रहो, दुनिया का अपमान आख़िरत के अपमान

से अच्छा है ।'

एक व्यक्ति खड़ा हुआ और उस ने कहा :

हे अल्लाह के रसूल ! मेरे पास 'अल्लाह के मार्ग' (फ़ी सबी-लिल्लाह) के तीन दिर्हम थे जिन्हें मैं ने प्रयोग कर लिया है ।

आप (सल्ल०) ने पूछा : 'क्यों प्रयोग किया है ।' उसने कहा : मुझे इस की आवश्यकता थी । आप ने फ़रमाया : 'फ़ज़्ल ! इस से इन दिर्हमों को ले लो ।'

एक व्यक्ति खड़ा हुआ । उस ने कहा :

'हे अल्लाह के रसूल ! मैं झूठ बोलता हूं, अश्लील बातें करता हूं तथा मुझे सोने की आदत अधिक है ।'

आप ने अल्लाह से दुआ कि :

'हे अल्लाह ! तू इसे सच्चाई दे, ईमान की दौलत प्रदान कर और इस से नींद को दूर कर दे ।

एक तीसरा व्यक्ति खड़ा हुआ और कहा :

'हे अल्लाह के रसूल ! मैं बहुत झूठा हूं, मैं मुनाफ़िक़ हूं, मैं ने बहुत से अपराध किये हैं ।'

हज़रत उमर (रज़ि०) यह सुन कर खड़े हो गये और फ़रमाया : तेरा बुरा हो ।'

रसूलुल्लाह ने फ़रमाया :

'हे उमर दुनिया की रुस्वाई (अपमान) आखिरत के अपमान से हल्की है । हे अल्लाह ! तू इसे सत्यता औरईमान प्रदान कर और इसे खैर का सामर्थ्य दे ।'

रसूलुल्लाह (सल्ल०) मस्जिद से मिले हुए अपने घर में पधारे ताकि बिस्तर पर आराम करें । इस बिस्तर पर सन्तोष पूर्वक लेटने या आराम करने का कम ही अवसर मिलता था ।

कार्य बहुत थे जो आप के स्वास्थ्य की बहाली के प्रतीक्षक थे परन्तु रोग की तीव्रता ने आप को अवसर ही न दिया कि उन की ओर ध्यान देते । यदि क्षणमात्र को निकलने का सामर्थ्य होता भी तो आप मस्जिद में तशरीफ़ ले जाते ताकि उस उम्मत पर अन्तिम दृष्टि डाल लें जिस का पोषण बड़ी कठिनाई और परिश्रम से किया था, और उन व्यक्तियों को देख लें जिन से आप को बेहद प्रेम था ।

हज़रत अबू सईद खुद्री से हदीसोल्लेख है कि रसूलुल्लाह एक दिन मिंबर पर चढ़े और फ़रमाया :

'अल्लाह ने अपने बन्दे को हक़ दिया है कि चाहे दुनिया की नेमतों (सुखसामग्री) को पसन्द करे चाहे अल्लाह के पास की नेमतों को प्रमुखता दे। तो उस ने अल्लाह के पास की नेमतों को पसन्द कर लिया।'

यह सुन कर अबू बक्र रोने लगे, फिर फ़रमाया :

'हे अल्लाह के रसूल ! हमारे माता पिता आप पर बलिदान हों।'

हज़रत अबू सईद कहते हैं कि हमें अबू बक्र पर आश्चर्य हुआ। लोगों ने कहा 'ज़रा इन बूढ़े को देखो, अल्लाह के रसूल हमें एक बन्दे के अधिकार की सूचना दे रहे हैं और यह कह रहे हैं कि हमारे माता पिता आप पर क़ुरबान हों ?'

हज़रत अबू सईद कहते हैं कि यहां अधिकार दिये जाने वाले बन्दे से अभिप्राय: रसूलुल्लाह (सल्ल०) ही थे और अबू बक्र (रज़ि०) हम में सब से अधिक इस के जानकार थे।

फिर अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया :

'जान, माल, तथा संगति के विचार से मुझ पर सब से अधिक एहसान अबू बक्र का है। यदि मैं किसी को घनिष्ट मित्र बनाता तो अबू बक्र को बनाता। परन्तु अब तो इस्लामी बन्धुत्व है।'

दूसरी रिवायत में है :

परन्तु अब संगति, बन्धुत्व और ईमान है यहां तक कि अल्लाह ने हम में सब से अधिक इन्हीं में जमा कर दिया है।

—बुख़ारी, मुस्लिम, इब्ने हिशाम

रोग के दौरान कई सन्तोषजनक चरण आये जिन से रसूल के प्रेमियों को उन की कुशलता तथा स्वास्थ्य की कामनाएँ पूरी होती प्रतीत हुईं। लोग समझे कि अब आप तुरन्त ही जिहाद करने के लिए पुन: स्वस्थ हो कर खड़े हो जायेंगे। तथा आप की प्रेम, दया तथा सहानुभूति की भावनाएँ अभी और आच्छादित रहेंगी।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन कअब बिन मालिक (रज़ि०) कहते हैं कि इब्ने अब्बास ने उन्हें बताया कि अली बिन अबी तालिब उस पीड़ा तथा कष्ट में निकले जिस में रसूलुल्लाह की मृत्यु हुई थी। लोगों ने पूछा : हे अब्दुल हसन ! रसूलुल्लाह की क्या दशा है ? उन्हों ने बताया कि अल्लाह का शुक्र है आप स्वस्थ्य हो गये।' अत: अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब ने उन का हाथ पकड़ा और कहा : 'क्या तू समझता है कि तीन दिन बाद तू

लाठी का गुलाम बनेगा ? खुदा की क़सम ! मैं समझता हूं कि रसूलुल्लाह की इस बीमारी में मृत्यु हो जाएगी। अच्छा है कि हम जाकर रसूलुल्लाह से पूछ लें कि 'ख़लीफ़ा' कौन होगा ? यदि हम में से होगा तो मालूम हो जायेगा और दूसरों में से होगा तो आप हमें इस विषय में उपदेश देंगे।'

हज़रत अली ने कहा :

'खुदा की क़सम ! यदि हम ने इस विषय में पूछा और आप ने हमारे लिए इन्कार कर दिया तो लोग सदा के लिए हमें 'ख़िलाफ़त' से वंचित कर देंगे। खुदा की क़सम ! मैं इस विषय में आप से एक शब्द भी न कहूंगा।' —बुख़ारी

इस से ज्ञात हुआ कि हज़रत अब्बास को विश्वास हो गया था कि रसूलुल्लाह मरण शय्या पर हैं। मिज़ाज तथा सरदारों की उपस्थिति को देख कर उन्हों ने ठीक ही अनुमान किया कि अब क्या घटित होने वाला है ?

हज़रत अब्बास रज़ि० बनू हाशिम के ज़िम्मेदार व्यक्ति थे अतः उन्हें चिन्ता हुई कि रसूलुल्लाह की मृत्यु के पश्चात् कैसी अवस्था होगी ?

हज़रत अली के पास मन की बात छिपाये हुए पहुंचे क्योंकि वह जानते थे कि अली रज़ि० --अपनी वाग्मता, सुचरित्रता, अपनी प्रतिष्ठा तथा रसूल के दरबार में सम्मान के कारण --बनू हाशिम में सब से अधिक ख़िलाफ़त के योग्य थे।

परन्तु हज़रत अली ने इस विषय पर बात करना पसन्द न किया और इसे मुसलमानों के अधिकार पर छोड़ दिया।

स्वयं रसूलुल्लाह ने सोचा कि एक प्रतिज्ञा-पत्र लिख दिया जाये ताकि हुकूमत के झगड़े सामने न आ सकें। परन्तु फिर आप ने इसे मुसलमानों की इच्छा पर छोड़ दिया कि अपने नेतृत्व के लिए जिसे चाहें मनोनीत कर लें। --बुख़ारी

—०—

रसूलुल्लाह का रोग बढ़ता गया। और आप का कष्ट बहुत अधिक हो गया। यहां तक कि आपकी सुपुत्री हज़रत फ़ातिमा रज़ि० ने आप के कष्ट को महसूस किया तो व्याकुल हो कर बोलीं : 'पिता जी ! आप को बड़ी तकलीफ़ है।

आपने फ़रमाया—

'हे पुत्री ! आज के बाद मुझे कभी तकलीफ़ न होगी।'

-- बुख़ारी

जब ये सूचनाएं हज़रत उसामा के सेनादल में पहुंचीं तो शोक एवं सन्ताप का वातावरण उत्पन्न हो गया। मुहम्मद बिन उसामा रज़ि० अपने पिता से रिवायत करते हैं कि जब रसूलुल्लाह की तबीयत बोझल हो गयी मैं और मेरे साथ अन्य लोग मदीना की ओर चले। हम रसूलुल्लाह की सेवा में उपस्थित हुए तो आप ख़ामोश थे, बात न करते थे। आप ने अपना हाथ आकाश की ओर उठाया मेरे ऊपर रख दिया। मुझे अनुमान हो गया कि आप मेरे लिए दुआ कर रहे हैं।[1]

एक बार आप बे-होश हो गए तो आप की पत्नी ने मुंह में दवा डाल दी। शान्ति होने पर आपने अप्रसन्नता व्यक्त की।[2]

आपके पास एक पानी का प्याला रखा हुआ था। आप उस में हाथ डालते और पानी के छींटे अपने मुंह पर मार कर कहते: 'हे अल्लाह मृत्यु के कष्ट में तू मेरी सहायता कर।'[3]

जब रसूलुल्लाह नमाज़ पढ़ाने के योग्य न रहे तो हज़रत अबू बक्र को नमाज़ पढ़ाने के लिए (इमामत करने) आगे कर दिया। हज़रत आइशा को शंका हुई कि लोग उन के पिता को न पसन्द करेंगे और उन्हें अशुभ समझेंगे। अत: हज़रत आइशा ने कहा: 'अबू बक्र करुणार्द्र हैं जब वह आप के स्थान पर खड़े होंगे तो ठहर न सकेंगे।'

रसूलुल्लाह : 'अबू बक्र से कहो कि वह लोगों को नमाज़ पढ़ायें।'

हज़रत आइशा ने अपना विचार पुन: व्यक्त किया तो आप अप्रसन्न हो गए। और फ़रमाया—

'तुम सब यूसुफ़ के साथ वालियां हो। अबू बक्र से कहो कि वही नमाज़ पढ़ायें।' —बुख़ारी, मुस्लिम

अत: हज़रत अबू बक्र ने १७ नमाज़ें पढ़ायीं।

जिन दिनों आप नमाज़ न पढ़ा सके, आप की बीमारी के सब से अधिक कठिन दिन थे। शुद्ध हदीस है कि आप ने फ़रमाया—

'मुझे इतना बुखार है जितना तुम में से दो को हो सकता है।'[4]

बुख़ार की तेज़ी के बावजूद आप का मन जाग्रत था। रिसालत की शिक्षाओं के लिए आप व्याकुल थे और नसीहत तथा सचेत करने के बड़े

---

१. तिर्मिज़ी, इब्ने हिशाम।
२. बुख़ारी।
३. तिर्मिज़ी।
४. बुख़ारी, मुस्लिम।

अभिलाषी थे।

आप को शंका थी कि कहीं ऐसा न हो कि उम्मत विपरीत चल पड़े। वह व्यक्तियों तथा क़ब्रों को पूजने लगे जिस प्रकार किताब वालों ने विपरीत उन्नति की थी।

एकेश्वरवाद में आपकी निष्ठा की दशा यह थी कि मृत्यु कष्ट के समय भी मुसलमानों को बुराइयों तथा खराबियों से सचेत कर गये।

हज़रत आइशा और हज़रत इब्ने अब्बास से हदीसोल्लेख है कि जब कष्ट बढ़ जाता तो कुर्ते से अपना चेहरा ढक लेते और जब चेहरा ढक जाता तो उसे खोल लेते इसी बेचैनी में आप ने फ़रमाया : 'यहूदियों और ईसाइयों पर अल्लाह की लानत और फिटकार पड़े उन्होंने अपने नबियों की क़ब्रों और समाधियों को पूजास्थल बना लिया।' आप अपनी उम्मत को उन के करतूतों से सचेत कर रहे थे।[1]

आप को आशंका थी कि कहीं ऐसा न हो कि आप की उम्मत पर गुमराही तथा घमण्ड की इच्छायें आच्छादित हो जायें।

जो लोग गुमराही की इच्छा की पैरवी करते हैं वे नमाज़ भूल जाते हैं और जो घमण्ड की इच्छाओं के अधीन हो जाते हैं वे अपने अधीन सेवकों, नौकरों तथा गुलामों पर अत्याचार करने लगते हैं।

और जो उम्मत इन इच्छाओं की पैरवी करने लगती है वह न तो स्वयं जीवित रहने योग्य रहती और न उस के द्वारा जीवन में सुधार आ सकता है।

फिर यह बात अनुचित नहीं रहती कि अल्लाह उसे अपने करतूतों तथा कुकर्मों का मज़ा चखने के लिए छोड़ दे अर्थात संसार में अपमानित हो और आख़िरत (मरणोपरान्त) अल्लाह का प्रकोप सहे।

इसी कारण जब रसूलुल्लाह अपने जीवन के अन्तिम क्षणों में थे आपने चाहा कि मुसलमानों को उपदेश देते जायें ताकि वे इसे दृढ़तापूर्वक पकड़ लें।

'हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० कहते हैं कि जब मृत्यु का समय निकट आ गया तो आप की वसीयत यह थी कि नमाज़ की रक्षा करो, तथा लौंडियों का ध्यान रखो यहां तक कि आप का सीना ग़र्रा रहा था और ज़बान पर ये शब्द थे।'[2]

---

१. बुख़ारी, मुस्लिम।

२. इब्ने माजा, अहमद।

अधिकांश समय आप जमाअत में शरीक होने तथा अपने साथियों (सहाबा) को देखने की इच्छा से निर्बल शरीर को घसीटते हुए कमरे से निकलते और मस्जिद में बैठे-बैठे नमाज पढ़ाते।

हजरत इब्ने अब्बास रजि० कहते हैं कि जब रसूलुल्लाह बीमारी के कारण निकल न सके तो अबू बक्र रजि० को नमाज पढ़ाने का हुक्म दिया फिर आराम हुआ तो कमरे से बाहर निकल आये।

जब हजरत अबू बक्र को रसूलुल्लाह के आगमन का आभास हुआ तो पीछे हटना चाहा। रसूलुल्लाह आगे बढ़े और अबू बक्र के बायें ओर पहलू में बैठ गये और उसी आयत से पढ़ना शुरू किया जहां तक अबू बक्र रजि० पढ़ चुके थे। अतः अबू बक्र रसूलुल्लाह की पैरवी कर रहे थे और लोग अबू बक्र रजि० की।[1]

रसूलुल्लाह की बीमारी के दिनों में अबू बक्र ही नमाज पढ़ाते रहे यहां तक कि उस दिन भी फ़ज्र की नमाज पढ़ायी जिस दिन आप की मृत्यु हुई। रसूलुल्लाह का दिल उम्मत के मामलों में उलझा हुआ था।

मानो अल्लाह ने आप को उम्मत के आज्ञापालन तथा पूर्ण अधीनस्त होने पर सन्तुष्ट करना चाहा और आखिरी बार आप को वह दृश्य दिखाया जब मुसलमान अपने घरों से उस मंगलवार को प्रातः नमाज पढ़ने आये थे जिस को आप की मृत्यु हुई थी। उन्होंने करूणाई तथा शुद्ध हृदय व्यक्ति की इमामत में विनम्रतापूर्ण नमाज पढ़ी। रसूलुल्लाह ने हजरत आइशा रजि० के कमरे का पर्दा उठाया, कमरा खोला और लोगों के सामने प्रकट हो गये।

सम्भव था कि लोग आप को देख कर अपनी नमाज खराब कर लेते और आप को स्थान देने के लिए इधर-उधर सरक जाते। तत्क्षण अपने हाथ से इशारा किया कि अपनी नमाज जारी रखो। आपने उन्हें नमाज की दशा में देख कर प्रसन्नतापूर्वक मुस्कान की। हजरत अनस बिन मालिक कहते हैं कि मैं ने इस से पहले कभी इतना सुन्दर तथा रूपवान न देखा था।[2]

आप घर में चले गए और लोग लौट गए। इस बात से लोगों ने समझा कि अब स्वस्थ हो चुके हैं। अबू बक्र रजि० को भी सन्तुष्टि हो गयी अतः वह अपनी एक पत्नी के घर मदीना से (एक मील) दूर चले गए। हजरत

---

१. अहमद, इब्ने माजा।

२. बुखारी, मुस्लिम, इब्ने हिशाम।

आइशा रज़ि० कहती हैं कि मस्जिद से वापस आ कर रसूलुल्लाह मेरी गोद में लेट गए।

हमारे पास अबू बक्र रज़ि० के परिवार का एक व्यक्ति हरी मिस्वाक (दांत साफ़ करने की पीलू की जड़ की लकड़ी) ले कर आया। आप ने उस के हाथ की ओर इस प्रकार से देखा मानो आप उसे लेना चाहते हैं।

मैं ने मिस्वाक ले ली और मुलायम कर के आप को दे दी। आप ने इतनी शीघ्रता से मिस्वाक की कि इतनी शीघ्रता से पहले कभी मैं ने न देखा था। फिर उसे रख दिया।

मैं ने महसूस किया कि रसूलुल्लाह का बोझ मेरी गोद में बढ़ता जा रहा है। मैं आप के चेहरे की ओर देखने लगी। सहसा आप की दृष्टि एक ओर टिक गयी और आप कहने लगे—

> 'नहीं ! मैं जन्नत के 'रफ़ीक़े आला' स्थान पर जाना चाहता हूं।'

मैं ने कहा आपको अधिकार दिया गया था तथा क़सम है उस अस्तित्व की जिस ने आपको सत्य के साथ भेजा था, आपने चुन लिया।

और इसी बीच रसूलुल्लाह ने प्राण छोड़ दिये।[1]

—०—

यह हृदय द्रावी तथा अत्यन्त खेदजनक घटना बड़ी तीव्रता से फैलती गयी। इस समाचार को सुनते ही कान बहरे हो गए, प्राण छुट गए, दृष्टि तथा अन्तः दृष्टि ने काम करना छोड़ दिया।

मुसलमानों को महसूस हुआ कि पूरा मदीना अन्धकार से भर गया है। वे विस्मित तथा क्षुब्द थे कि अब क्या होगा ?

हज़रत उमर बिन ख़त्ताब पर यह दुखित समाचार बिजली बन कर गिरा तथा वे बे-सुध हो गए कहने लगे : कुछ मुनाफ़िक़ यह समझते हैं कि रसूलुल्लाह की मृत्यु हो गयी है। रसूलुल्लाह मरे नहीं हैं वरन् अपने रब के पास इसी भांति गए हैं जिस भांति मूसा बिन इम्रान गए थे। वह अपनी क़ौम से ४० रातें अनुपस्थित रहे थे। फिर वापस आ गए थे जबकि यह अफ़वाह फैल गयी थी कि वह मृत्युग्रस्त हो गए हैं।

'ख़ुदा की क़सम ! रसूलुल्लाह अवश्य लौटेंगे और उन लोगों के हाथ पांव काट देंगे जो कहते हैं कि रसूलुल्लाह की मृत्यु हो चुकी है।'

---

१. इब्ने हिशाम, बुख़ारी।

हज़रत अबू बक्र रज़ि० को जब यह सूचना मिली तो आगे आये मस्जिद में प्रवेश किया तो देखा कि हज़रत उमर रज़ि० लोगों से सम्बोधित थे। उन्होंने किसी ओर ध्यान न दे कर सीधे हज़रत आइशा रज़ि० के कमरे में रसूलुल्लाह के पास पहुंचे। आप के शुभ शरीर पर एक चादर पड़ी हुई थी।

अबू बक्र रज़ि० ने आप का शुभ मुख खोला उसे चुम्बन किया और फ़रमाया—

'मेरे माता-पिता आप पर क़ुर्बान ! मृत्यु जो निश्चित थी आ कर रही। अब कभी आप मृत्युग्रस्त न होंगे।'

शुभ चेहरा ढक दिया और बाहर निकल आये, देखा कि हज़रत उमर लोगों से सम्बोधित थे। फ़रमाया—

'हे उमर ! ठहरो चुप हो जाओ।'

परन्तु हज़रत उमर अपने भाषण में ऐसे व्यस्त थे कि उन्हें कुछ होश न था।

जब हज़रत अबू बक्र ने यह स्थिति देखी तो लोगों के सामने आये और भाषण देने लगे। जब लोगों ने भाषण करते हुए सुना तो उमर रज़ि० से हट कर हज़रत अबू बक्र के पास जमा हो गए। हज़रत अबू बक्र ने अल्लाह की प्रशंसा की फिर फ़रमाया—

'हे लोगो ! जो मुहम्मद की इबादत करता था तो उसे मालूम हो कि मुहम्मद मर चुके हैं और जो अल्लाह की इबादत करता था तो अल्लाह जीवित है उसे कभी मृत्यु नहीं आती।'

फिर यह आयत पढ़ी—

'और मुहम्मद तो बस एक रसूल हैं, उन से पहले भी रसूल गुज़र चुके हैं। तो क्या यदि वे मर जायें या क़त्ल कर दिये जायें, तो तुम पीठ पीछे फिर जाओगे ? और जो पीठ पीछे फिरेगा वह अल्लाह का कुछ नहीं बिगड़ेगा और अल्लाह कृतज्ञता दिखाने वालों को जल्द बदल देगा।'

—आले इम्रान १४४

—०—

समाप्ति

अभी रसूलुल्लाह का स्वर्गवास हुए कुछ ही दिन बीते थे कि इस्लाम को उस मूर्तिपूजा से संघर्ष करना पड़ा जिस को पुनः जीवित होने का अवसर मिल गया था उधर उत्तर में ईसाइयत ने सिर उठाना शुरू कर दिया जो इस्लाम के मार्ग में बाधक बन गयी थी तथा शक्ति एवं बल द्वारा उस की तब्लीग़ व प्रचार को प्रभावहीन बनाने में लगी हुई थी।

स्वयं रसूलुल्लाह के समय में अरबों ने इतने भयंकर तथा पेचीदा युद्ध न देखे थे। इन युद्धों का क्षेत्र विस्तृत हो गया था। शक्ति में वृद्धि हो गयी थी। हानि एवं क्षति भी अधिक हुई साथ ही क़ुर्बानियां भी असंख्य देनी पड़ीं।

परन्तु जिन सत्य के आवाहकों ने रसूलुल्लाह से प्रशिक्षण प्राप्त किया था उन्होंने अल्लाह से अपना वायदा सच्चा कर दिखाया और समय की समस्त बातिल (असत्य) शक्तियों का मुक़ाबला करने खड़े हो गए।

उन्होंने मूर्तिपूजा पर ऐसी चोट लगायी कि वह सदा के लिए विनष्ट हो गयी फिर उसे पुनः सिर उठाने का मौक़ा न मिला।

रूमियों को उन सीमाओं से दूर भगा दिया गया जहां वे सरकशी किया करते थे। फिर मदीना वापस आये। इस लिए नहीं कि वहां आ कर बस जमा हो जायें वरन् इस लिए कि समूचे विश्व में अल्लाह के आदेशों तथा शरीअत के क़ानूनों को ले कर फैल जायें।

कुछ ही वर्षों में इस्लाम का सन्देश समस्त क्षेत्रों में फैल गया और उस ने दिलों तथा निगाहों को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया।

और अब, चौदह शताब्दियां बीत चुकी हैं!

एक अद्भुत काल की समाप्ति के पश्चात अब इस्लाम स्वयं अपनी ही उम्मत पर शासित न रहा तो विश्व का किसी उल्लेखनीय उपकार एवं कल्याण या प्रशंसनीय भलाई की ओर किस प्रकार मार्गदर्शन करता!

अन्य धर्म टिमटिमा रहे हैं।

प्रभुत्वशाली समस्याएं सत्ता की बागडोर इस्लाम को सौंपने को तत्पर नहीं हैं। भारत, सुदूर पूर्व तथा अन्य क्षेत्रों में मूर्तिपूजा जनसाधारण के जीवन तथा उस की प्रणाली के अन्धकारमय कोनों पर सत्तावान है।

यहूदियत एक ओर अपने सुपूतों को संगठित कर रही है ताकि उन के मन एवं हृदय में मानवता के विरुद्ध रोष एवं शोक का बीजारोपण करे तथा दूसरी ओर दम तोड़ती हुई मानवता में घुस कर इस्राईल के लिए बड़ से बड़ी सहायता प्राप्त करें।

तथा ईसाइयत भूमध्य रेखा में उगने वाली बेलों तथा पेड़ पौधों के समान विवश है। वह अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए प्रचलित दर्शन शास्त्रों तथा प्रभुत्वशाली व्यवस्थाओं का सहारा लेने को बाध्य है ताकि जो भी जीवन व्यवस्था परवान चढ़े उस के बुनियादी स्तंभ 'तस्लीस' और 'सलीब' हों।

मुसलमान ऊपरी चीजों, छिलको तथा परम्पराओं और प्रथाओं के चक्कर में फंसे हुये हैं।

कमजोरी, दुर्बलता तथा अज्ञानता के विकारों के कारण वे उस दुर्दशा में ग्रस्त हो गये हैं जिस में रसूलुल्लाह के युग में यहूदी और इसाई ग्रस्त थे।

सत्य के आवाहकों की थोड़ी सी संख्या बची है जो अभी तक कुफ़ से संघर्षित है और इस्लाम को सीने से लगाये हुये है।

यदि इस्लाम के ज्ञानात्मक रूप से क़ुरआन और रसूल के तरीक़े (सुन्नत) में सुरक्षित होने से आशा बंधती है तो यह सुरिक्षत ज्ञान, कर्म तथा प्रयास से तो निःस्पृह नहीं हो सकता है।

यह भी एक वास्तविकता है कि इस्लाम के लिए जो लोग प्रयत्न कर रहे हैं। वे भिन्न मोर्चों की ओर से कड़े मुक़ाबले का सामान कर रहे हैं। मेरा आशय उन मोर्चों से है जिन का नाता १४ शताब्दियों से जुड़ता है और जिन का इस्लाम विरोध एक दिन के लिए भी समाप्त नहीं हुआ।

—o—

प्रश्न किया जा सकता है कि क्या आज विश्व को इस्लाम की आवश्यकता है?

हम उत्तर देंगे कि विश्व को इस बात की आवश्यकता है कि वह ईश्वर का परिचय प्राप्त करे, मरणोपरांत की तैयारी करे तथा दुनिया में उस ने जो कुछ किया है उस की एक दिन जांच पड़ताल हो, तो उस के लिए इस्लाम की आवश्यकता है। भौतिक उन्नति ने इन महान वास्तविकताओं से जरा भी स्वतन्त्र नहीं किया है।

कहा जाता है: आप की बात उचित है परन्तु ऐसे लोग विद्यमान हैं जो किसी निःअवलंबित अस्तित्व वाले खुदा पर अथवा आखिरत के दिन

उन गुमराहियों के विषय में उस का रवैया बड़ा कठोर है जो व्यक्तियों तथा हथियारों की अधिकता रखते हैं। यदि यह नीति न होती तो आज तक उस के ज्ञानात्मक तथा मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त सुरक्षित न रह पाते।

इस से पूर्व जो धर्म कमज़ोर तथा शक्तिहीन सिद्ध हुए उन के शत्रुओं को उन के सिद्धान्तों से खिलवाड़ करने का पूर्ण अवसर मिल गया अतः वे सुरक्षित न रह सके।

परन्तु इस्लाम का मामला भिन्न है। आज यदि इस के आवाहकों में इस की पूर्ण झलक नहीं पाई जाती परन्तु इस की पुस्तक (क़ुरआन) में पूर्ण रूप रेखा मौजूद है।

—०—

यदि आप यह समझें कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० का इतिहास जन्म से मृत्यु तक पढ़ कर आप ने रसूलुल्लाह की जीवनी का हक़ अदा कर दिया है तो यह बड़ी भूल होगी। इस के लिए आप को क़ुरआन पाक तथा रसूल के तरीक़े (सुन्नत) का अध्ययन करना होगा।

और जितना आप इस 'सीरत' (पवित्र जीवनी) से प्राप्त करेंगे, रसूलुल्लाह से आप का सम्बन्ध उतना ही अधिक दृढ़ तथा घनिष्ट होगा।